लेखक—
श्री स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती.

ओ३म्

ईश्वर विचार ॥

—(-०*०-)—

प्रथम भाग ।

अर्थात् ईश्वर के होने का सबूत ॥

सम्पादित

श्री स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती:

और

पंडित शंकरदत्त शर्मा ने अपने शर्मा मेशीन प्रिंटिंग प्रेस

मुरादाबाद में छापकर प्रकाशित किया ।

सन् १९[illegible]

ओ३म्

ईश्वर विचार ॥

—(*)—०*०—(*०*)—

उस सर्वशक्तिमान् को अत्यन्त धन्यवाद है जिसकी कृपा कटाक्ष से हम लोगों को ऐसा समय प्राप्त हुआ कि हम आन्तरीय विचारों को स्वतन्त्रता से प्रकट कर सक्ते हैं जिसने कृपा करके हमको सत्य असत्य के विचारने की बुद्धि दी आज हमारा विचार सम्पूर्ण संसार के अभीष्ट परमात्मा का विचार करना है हम इसको तीन भागों में विभक्त करते हैं प्रथम ईश्वर के होने में प्रमाण, दूसरे में ईश्वर का स्वरूप, तीसरे में ईश्वरोपासना क्यों करनी चाहिये इसका व्याख्यान किया जायगा ॥

॥ ओ३म् ॥

ईश्वर विचार

प्रथम भाग

विचार शील महात्माओ ! प्रमाणादि से सत्य की परीक्षा करने वाले आप कृपा करके मेरे इस लेख पर दृष्टि देकर विचार करें यद्यपि मेरा विचार आप लोगोंके सामने बुद्धिमत्ताका न होगा तथापि आप अपनी सद्वृत्ति के अनुसार मेरे दोषों को मिटायेंगे महाशयो ! जब हम संसार में किसी पदार्थ को देखते हैं तो हमें उस में दो प्रकार के पदार्थ प्रतीत होते हैं एक परिणामी दूसरे अपरिणामी जितने साकार पदार्थ हैं वे सब परिणामी और जितने निराकार पदार्थ हैं वे अपरिणामी हैं। परन्तु जब हम इन साकार पदार्थों में प्रथम मनुष्य के शरीर को देखते हैं तो यह शरीर माता पिता के संयोग से उत्पन्न होता है बढ़ता है घटता है अन्त को नष्ट हो जाता है इससे हमें क्या अनुमान होता है जो पैदा हुआ है वह नष्ट होगा जिस में परिणाम है वह पैदा हुआ है जब परिणामी प-

विचारते हैं तो यह ही परिणाम प्रतीत होता है कि जिस अवयवी के अवयव परिणाम को प्राप्त होते हैं वह अवयवी भी परिणामी होता है क्योंकि सम्पूर्ण अवयवों का नाम अवयवी है जब हम इस प्रकार सूक्ष्म विचार करते हैं तो हमें जगत् परिणामी प्रतीत होने लगता है हम जगत् के परिणामी होने से उसकी उत्पत्तिका अनुमान कर लेते हैं यद्यपि मध्य अवस्था में उसकी उत्पत्ति का बोध अनुमान के विना नहीं होता तथापि शब्द प्रमाण से जगत् उत्पन्न हुआ और जगत्, संसार, सृष्टि, इसके पर्याय वाचक जितने शब्द दिये जाते हैं सब के अर्थ उत्पत्ति वाले के हैं जब हमने जगत् को उत्पत्ति वाला अनुभव किया तो हमारा विचार यह होता है कि यह उत्पत्ति स्वाभाविक है या नैमित्तिक दूसरे हम जिस पदार्थ की उत्पत्ति जिस पदार्थ से देखते हैं उसका लय भी उसी पदार्थ में होता है इस से कार्यरूप सब पदार्थों में अनित्यता और कारणरुप पदार्थों में नित्यता का बोध होता है जब हम पंच भूतों में अर्थात् पृथ्वी, जल अग्नि वायु और आकाश में सब पदार्थों का लय देखते हैं तो उन्ही पंच पदार्थों से इस जगत् की उत्पत्ति का विचार करते हैं यद्यपि कार्य्य

इन पदार्थों को अनित्य है परन्तु

कि जगत् भूतों के स्वभाव से उत्पन्न हुआ वा इसमें कोई निमित्त भी है अथवा जगत् पंचभूतों ही से उत्पन्न हुआ वा इन के विना कोई और भी पदार्थ है जब हम पृथ्वी को विचारते हैं तो जड़ प्रतीत होती है जल भी ज्ञानशून्य है अग्नि भी ज्ञान नहीं रखती वायु में भी ज्ञान का अभाव नहीं प्रतीत होता है आकाश ज्ञान से हीन है इस प्रकार के विचार से हम सम्पूर्ण भूतों को ज्ञान से रहित पाते हैं परन्तु हम संसार में जो सोने के बने भूषणों में सोनेके गुण चांदी में चांदी के गुण पाते हैं इस से हमको बोध होता है कि कारण के गुण अनुकूल कार्य्य में गुण रहते हैं जब भूतों में ज्ञान गुण नहीं तो उसके कार्य्य रूप जगत में भी ज्ञान नहीं हो सकता और जगत् में मनुष्यों को ज्ञान से युक्त देखते हैं तो शीघ्र विचार उत्पन्न होता है कि यह ज्ञान गुण किसका है बहुत से लोग यह कहते हैं कि पृथक भूतों में तो चैतन्यता नहीं किन्तु संयोग से उत्पन्न होती है परन्तु जो गुण एक एक में न रहे वह संयोग से उत्पन्न नहीं होता जैसे मैदे में मधुरता नहीं जल में मधुरता नहीं तो मैदे और जल के संयोग से मधुरता नहीं उत्पन्न होती चीनी में मधुरता है जल में मिलाने से उत्पन्नहो जाती है दूसरे रेलके अंजन में [illegible]ी है जल है अग्नि है है

अन्तशक्तिका आधार कोई दूसरी वस्तु है जब हम इस प्रकार सृष्टि में जड़ चेतन्य को दो स्वरूप करके विचार लेते हैं तो हमको सृष्टि में इनका संयोग और सृष्टि में स्वभाव से संयोग है या निमित्त से यह विचार उत्पन्न होता है जब हम बाजार जाते है तो हमको कभी कहीं ईटें पड़ा पाती ह तो हम जानते हैं कि यहस्वाभाविक गिरी होंगी परन्तु यदि एक एक स्थान में दश२ गिनकरऊपर नीचे रक्खी हों तो विचार होगा कि गिन के किसी ने रक्खी हैं इससे यह सिद्ध होता हैं कि जहां पर नियम है वह नैमित्तिक और जो वे नियम है वह स्वाभाविक है जब सृष्टि में नियम को देखते हैं तो इसके हर एक पदार्थ में नियम प्रतीत होता हैं मनुष्य स्त्री के संयोग से लड़का उत्पन्न होता घोड़े घोड़ा के संयोग से घोड़ा, घोड़ी और गधे के संयोग से खच्चर इसीप्रकार सब पदार्थ नियमानुसार प्रतीत होते हैं गरमी में दश घंटे की रात्रि होती है सर्दी में १४ घंटे की जिधर देखो नियम बंधरहा है फिर इसे किस यक्ति से स्वाभाविक मानें दूसरे जो स्वाभाविक गुण हैं वे सर्वदा एक रस रहते हैं वे विना किसी निमित्त के बदलते नहीं जैसे जलका स्वभाव शीतस्पर्श वाला है विना अग्नि संयोग के उष्णता न होगी सो वह उष्णता

एक पदार्थ में दो विपरीत गुण तो रह नहीं सकते यदि भूतों में किसी का गुण उत्पत्ति मानलें किसी का विनाश तोभी व्यवस्था ठीक न होगी क्योंकि संयोग के समय वियोग बाधक होगा वियोग के समय संयोग जब इस प्रकार से विचार करते हैं तो भूतों के स्वभाव से जगत् की उत्पत्ति नहीं हो सकती इसका निमित्त कारण ज्ञानशक्ति सम्पन्न सर्व शक्तिमान् अवश्य मानना पड़ेगा जब इस प्रकार ईश्वर को मानेंगे तो यह शंका उत्पन्न होगी "लक्षणप्रमाणाभ्यां वस्तुसिद्धिर्नतु प्रतिज्ञामात्रेण,, अर्थात् लक्षण और प्रमाणों से वस्तु की सिद्धि होती है ईश्वर में प्रमाण का अभाव है क्योंकि प्रत्यक्षज्ञान तो होता नहीं प्रत्यक्ष केअभाव में व्याप्ति न होगी व्याप्ति के अभावमें अनुमान भी नहीं हो सकता निराकार और अनुपम होने से उपमान भी न होगा बाकी रहा शब्द प्रथम तो आप्तोपदेश से शब्द को प्रमाण माना जाता है आप्त उस को कहते हैं जो धर्म से धर्मी का लक्ष करके कहे जिसका प्रत्यक्ष नहीं उसमें शब्द भी होगा ॥।

उ०-यह है कि यदि प्रमाण के अभाव में ईश्वर की सिद्धि नहीं तो

दोष में पड़जाओगे यदि कहो प्रमाण में प्रमाण नहीं
तो उसकी असिद्धि है तो आपका प्रमाण जो स्वयम् सा-
ध्य कोटि में है वह दूसरों की सिद्धि में कैसे हेतु होगा
यदि मूलेमूलाभावात् अमूलं मूलं इस प्रकार प्रमाण बिना
प्रमाण के मान लोगे तो तुम्हारे सिद्धान्त की हानि होगी
यदि कोई शंका करे कि ईश्वर ने जगत उत्पन्न किया
है तो ईश्वर को किसने उत्पन्न किया है तो उसका उत्तर
यह है कि परिणामी पदार्थ कार्य्य होते हैं उनको कारण
की अपेक्षा होती है उसका ईश्वर परिणामी होता उस
का भी कारण हो परन्तु ईश्वर नित्य है अपरिणामी है
उसका कर्त्ता नहीं हो सकता यदि कोई कहे ईश्वर कहां है
तो उत्तर यही ठीक है कहां पद एकदेशी के लिये होता
है विभु के लिये नहीं बहुत लोग उसको देखना चाहते हैं
परन्तु ज्ञान चक्षु के अभाव से देख नहीं सकते जैसे ति
लों में तेल है परन्तु पीड़ने के विना दृष्टि नहीं पड़ता दधि
में घी है परन्तु मथने के विना नहीं मालूम होता इसी
प्रकार जगत में आत्मा व्यापक है परन्तु योगाभ्यास
विना नहीं ज्ञान पड़ता जैसे दीपशलाका में आग है
घिसने के विना नहीं मालूम देती जैसे गुड़ में

प्यारे पाठको ! अब विचार करके देखो यदि एक अंधा रूप को देखना चाहे कौन दिखला सकता है जबतक चक्षु काझु- धार न हो इसी प्रकार जबतक ज्ञान चक्षु न हो क्योंकर परमात्मा को देख सकते हैं यदि कोई बहरा राग सुनना चाहे कौन सुना सकता है जब तक उसके कान ठीक न किये जायें यदि कोई गूंगा मिठाई का स्वाद लेना चाहे कौन दिला सकता है जब तक उसकी जीभ दुरुस्त न हो यदि जिस की नासिका में दोष से गंध ग्रहण करने की शक्ति न हो कौन बिना नासिका के फूल सूंघा सकता है इसी कारण हे पाठको ! जब तक हमारे पास वह वस्तु नहीं जिससे परमात्मा जाना जाता है तो हम को कोई भी उसका दर्शन नहीं करा सकता जब हमारी ग्रहण की शक्ति ठीक होगी तो हम देख सकेंगे। हे पाठकों ! जिस धारणावती उग्रबुद्धि से परमात्मा देखा जाता है जब तक वह बुद्धि उत्पन्न न हो तब तक परमात्मा को कोई भी जान नहीं सकता वह बुद्धि वेदादि शास्त्रों के पढने से शुद्ध होती है जैसे अंजन से चक्षु ठीक होकर देखने का काम देती है अब बहुत से महात्मा यह कहेंगे कि तुमने मन से मान लिया कि ईश्वर है क्योंकि दो वस्तु-

उनको ज्ञात होगा कि प्रथम तो दही भी ज्ञानवान् के निमित्त से उत्पन्न हुआ है कि पृथिवी से दही नहीं उत्पन्न होता दूसरे गौ के गोवर में छोटे जीव रहते हैं वह दही से पल जाते हैं जैसे भूमि में घास की जड़ रहती है वह वृष्टि से वढ जाती है परन्तु ऊसर में घास नहीं होता इससे सिद्ध है जो वस्तु होती है वही उत्पन्न होती है पहिले कारण रूप में रहती है फिर कार्य में वदल आती है जैसै घट के आकार का ज्ञान कुम्हार को है घट वनने की शक्ति मृत्तिका में हैं तव घट उत्पन्न होता है यदि कुलाल न हो या मृतिका न हो तो घट नहीं वनता है पाठकों ! विना उपादान और निमित्त कारण के कोई वस्तु उत्पन्न नहीं होती इससे आप जगत् का कर्त्ता ईश्वर को माने विना विचार को वढा नहीं सकते परमात्मा आपको धारणावती वुद्धि दे जिससे आप तत्वज्ञान को प्राप्त होकर संसार के दुःख जाल से छूट जायें ॥

ओ३म् शांतिः ३
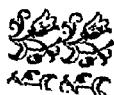
आदर्श हिंदी भाषा

आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध वक्ता तथा सुलेखक श्रीयुत मास्टर आत्माराम जी (एज्यूकेशनल इन्स्पेक्टर बड़ौदा स्टेट) की अतिप्रसिद्ध रचना है। मास्टर जी ने इस पुस्तक की रचना में अपनी बहुज्ञता और कल्पनाशक्ति अपूर्व चमत्कार से दिखलाई है। विवाह सम्बन्ध में चतुरस्र मीमांसा की गई है। पुस्तक आठ अध्यायों में विभक्त है विवाह का मुख्य तथा गौणभेद भिन्न २ देशों में विवाह की रीति और उद्देश्य क्या हैं, वैदिक विवाह सर्व श्रेष्ठ क्यों है ? गर्भाधानके लिये महर्षियों ने अमुक २ तिथियों को प्रशस्त या निंदित क्यों बतलया है। इत्यादि॥ विवाह आदर्श अपने विषय की एकही पुस्तक है। प्रत्येक गृहस्थ और नवयुवक और युवतियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिये। मूल्य केवल ३२८ पृष्ठ की रायल अठपेजी पुस्तक का जो कि उमदा टाइप और अच्छे कागज पर छापी है १) और सजिल्द १=)

मिलने का पता — शंकरदत्त शर्म्मा
वैदिक पुस्तकालय, मुरादाबाद।

विशेष सूचना

श्री स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज के ट्रैक्ट जिनका कि मिलना कठिन था हमने वह ट्रैक्ट बड़े परिश्रम से जहाँ तहाँ से इकट्ठे करके छपवाये हैं। जिन महाशयों को आवश्यकता हो वे निम्न लिखित पते से मंगावें। इकट्ठे सौ १०० के ख़रीदार को १।) रुपया सैकड़ा और हज़ार के ख़रीदार को १) रुपया सैकड़ा मिलेंगे।

मेनेजर वैदिक पुस्तकालय,
मुरादाबाद

॥ ओ३म् ॥

ईश्वर विचार

॥ द्वितीय भाग ॥

ट्रैक्ट नम्बर ६

जिसमें ईश्वर के साकार निराकार का विचार किया गया है।

जिसको पं० कृपाराम शर्म्मा सम्पादक वैदिक धर्म मुरादाबाद ने रचा

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती ने

बम्बई

मैशीन प्रेस सेवका बाजार आगरा में छपाकर प्रकाशित किया

तृतीय बार ५०००] सन १९१२ (मूल्य)।

ईश्वर विचार।

प्रिय पाठक वृन्द! ईश्वर विचार के प्रथम भागमें ईश्वर का अस्तित्व तर्क से सिद्ध किया गयाहै उस पुस्तक में वेद और शास्त्रों के प्रमाण इस हेतु से नहीं दिये कि उसका सम्बंध नास्तिकों से है और नास्तिक किसी पुस्तकको प्रमाणिक नहीं मानते. अब हम ईश्वर विचार का दूसरा भाग आप के समक्ष भेंट करतेहैं जिसमें इस विषय पर कि ईश्वर साकार है वा निराकार विचार किया गयाहै।

ईश्वर का लक्षण सच्चिदानन्दहै और इस शब्द में तीन पद अर्थात् (१) सत (२) चित (३) आनन्द है तीन काल में रहने वाले को सत कहते हैं और ज्ञान वाले को चित और तीनों काल में दुःख के अत्यन्ता भाव को आनन्द कहते हैं अब सबसे प्रथम हमको विचारणीय यहहै कि जो पदार्थ सतहै आया वह साकार होगा वा निराकार तात्पर्य यह है कि सत मूर्तिमान है या अमूर्ति मानहै यदि

कहा जाय कि मूर्तिमान है तो कहा जायगा आया
वह मूर्ति संयोग से बनी है या स्वस्वरूप है अर्थात्
सावयव है या निरावयव यदि कहा जाय सावयव
अर्थात् अनेक वस्तुओं से मिलकर बनी है तो यह प्रश्न
होगा कि भौतिक है या अभौतिक—यदि इसका यह
उत्तर है कि भौतिक है तो अवश्य ही वह सब भूतों
का कार्य होगा जब कार्य हुआ तो किसी काल में
कारण से उत्पन्न हुआ होगा और उसकी उत्पत्ति
से पूर्व कार्य नहीं होगा इससे प्रत्यक्ष सिद्ध है कि
जो उत्पन्न हुआ वह नाश भी अवश्य होगा और
नाशान्तर नहीं रहेगा—तात्पर्य यह कि भौतिक
मूर्ति होने से आदि और अन्त में न रहा केवल
मध्य अवस्था में हुआ परन्तु सत तीनों कालमें रहने
वाले को कहते हैं अतएव जो वस्तु एक कालमें रहे
वह सत नहीं हो सकती—यदि कहाजाय अभौतिक
मूर्ति है तो होनहीं सकती—क्योंकि अभौतिक मूर्ति
में दृष्टान्तका अभाव है और प्रत्यक्ष का विरोधी
होने से इसमें अनुमान भी नहीं होसकता क्योंकि
अनुमान प्रत्यक्ष पूर्वक होताहै और शब्द प्रमाण
भी नहीं होसकता न है—यदि कहें कि निरावयव

मूर्ति है तो सत प्रमाणु धर्म्म वाला होगा और प्रमाणु एक देशी है अतएव सतभी एक देशी होगा यहभी असम्भवहै क्योंकि कोई सान्त पदार्थ अनंत नहीं हो सकता अतएव सतसे सारे जगतके नियम नहीं चल सकते परन्तु परमात्मा सारे जगत का नियन्ताहै इसलिये सत को अमूर्ति मानना पड़ेगा अब रहा चित्त यह कभी मूर्ति वाला होही नहीं सकता क्योंकि मूर्ति मान पदार्थ भौतिक है और भौतिक जड पदार्थ है अर्थात ज्ञान शून्य चित जो ज्ञान का आधि करण है वह किस प्रकार जड हो सकता है !

द्वितीय भौतिक पदार्थ अनित्य है यदि चित अनित्यहै तो सतके साथ तीन कालमें किस प्रकार रह सकताहै अतएव चित्तभी मूर्ति वाला नहीं हो सकता—अब रहा आनन्द वहभी तीन कालमें सत के साथ रहता है अतएव उसको भी मूर्ति वाला नहीं कह सकते ।

पाठक वृन्द—उपरोक्त लेख से सिद्ध होगया कि सच्चिदानन्द साकार नहीं प्रत्युत निराकारहै और [illegible] नहीं [illegible]नहै और साकार वस्तुसीमाबद्ध

होगी और जो सीमाबद्ध होगा उसके गुण तथा शक्ति भी वैसीही होगी और जिसकीशक्ति सीमा बद्ध होगी वह सर्व शक्तिमान नहीं हो सकता–इससे ज्ञात हुआ कि निराकारही सर्व शक्तिमान हो सक्ताहै इस का प्रयोजन यह नहीं कि प्रत्येक निराकार सर्व शक्ति मान है किन्तु सर्व शक्तिमानअवश्य निराकारहै बहुतसे महाशय कहेंगे कि जिसका रूपनहीं वहवस्तुहीनहीं? परन्तु स्मरण रहेकि वायु रूप रहित है क्या वह वस्तु नहीं मन. बुद्धि. सुख, दुःख, गरमी, सरदी, काल. दिशा आकाश, यह सारी वस्तुयें आकारसे रहित हैं क्या यह नहीं हैं।

प्रिय पाठक! ईश्वर अजन्मा अर्थात् जगत का कर्ता है परन्तु साकार पदार्थ स्वयं परमाणु संयोग से बना हुआहै वह किस प्रकार जगत का आदि कारण हो सकताहै–ईश्वर अमृत है परन्तु साकार पदार्थ सावयव होने से नाशवाला होता है अतएव वह अमृत नहीं हो सकता ईश्वर सर्व व्यापक है और अनन्त है। अनन्त दो प्रकार का होता है एक देश योग से दूसरा काल योग से। परन्तु

साकार पदार्थ सावयव और जन्य होने से काल योग से तो सान्तही है और सीमा वाला होने से देशयोग सेभी सान्त होगा इसकारण कोई साकार पदार्थ अनन्त नहीं होसकता और ईश्वर अनन्त है इस कारण साकार नहीं ॥

ईश्वर निर्विकार है परंतु साकार पदार्थ सावयव होने से ६ प्रकार के विकारों अर्थात् जन्म वृद्धि स्थिति परिमाण घटने और नाश होने से बच नहीं सकता अतएव ईश्वर निराकार है ईश्वर सर्वाधार है साकार पदार्थ एक देशी होने से सर्वाधार हो नहीं सकता और दूसरे उस को स्वयं आधार की आवश्यकता होगी। साकार मानने वालोंने स्वयं स्वीकार किया है किसी का मंतव्य हैकि ईश्वर सिंहासन पर बिराजमान है और उसी सिंहासन का आधार देवता हैं किसी का मंतव्य हैकि क्षीर सागर में परमात्मा शेष की शय्यापर शयन करते हैं-किसी ने उसका स्थान बैकुंठ मानाहै परिणाम यह हैकि साकार मानने वाले स्वयं उसको आधार की आवश्यकता मान रहे हैं।

महाशय ? जब मनुष्यों में यह अज्ञान आगया कि परमेश्वर साकार है तो उसी समय उसको एक देशी समझकर उसके प्रबंधके वास्ते सहायक ढूंढने आरम्भ किये किसी ने कहा फरिश्तों के द्वारा उसके कार्य्य होते हैं और दुनिया में पैगम्बर का होना तसलीम कर बैठे इतना विचार न हुआ कि पैगम्बर के अर्थ पैगाम लानेवाले के हैं और पैगाम कुछ दूरी से आया करता है क्या कोई बतला सकता है कि परमेश्वर और मनुष्य के बीच में कितना अन्तर है जिसके कारण पैगम्बरों की आवश्यकता हुई-नहीं ? किंतु पैगम्बरों पर वही फरिश्तों द्वारा प्रकट होना स्वीकार करना पड़ा अर्थात् परमेश्वर बिलकुल असमर्थ सा बना दिया-दूसरी तरफ किसीने साकार मानकर उसका बेटा बना लिया और उसको खुदा के दक्षिण हाथ की ओर जा बिठलाया और यह न सोचा कि दायां बायां सीमाबद्ध पदार्थ का होता है सीमाबद्ध पदार्थ नाशवान होता है अतएव परमेश्वर भी नाशवान होजायगा और प्रायः लोगों ने उसका सिंहासन उसके गण उसकी स्त्री आदि बातें कल्पना कर

थी उन्होंने वास्तव में ग्रहस्थी मनुष्य बना दिया
है और इस प्रकार की चिन्ताओं में ग्रसित करा
दिया है कि वास्तविक उसको ईश्वर की दर्जा में
गिरा दिया जब यह दशा हुई तो सारे संसार में
पाप विस्तीर्ण होगया मनुष्यलोग ईश्वर से अधि
कांश राजा और कुटुम्बियों का भय खाने लगे
उन्होंने समझलिया कि ईश्वर किसी स्थानपर होगा
महाशयो इस समय जो पाप संसार में विस्तीर्ण
हुआ दृष्टि गत हो रहा है यह सब ईश्वरके साकार
मान नेसे फैल गया है यदि ईश्वर को निराकार
माना जाता तो संसारमें पाप फैलरहा नहीं सकता
था क्योंकि यहतो हम दृष्टिगत करते हैं कि जीव
फल प्रदाता शक्ति से नित्यभयातुर होता है जैसे
यदि कहीं पुलिस विद्यमानहो वहां कोई चोर चोरी
नहीं करता जब पुलिस को स्वप्न में अथवा दूर
दृष्टिगत करता है तब पाप करता है कोई मनुष्य
अपने माता पिताके सन्मुख व्यभिचार नहीं करता
इससे ज्ञात होता है कि यदि मनुष्य को इस बातका
निश्चयहो कि परमात्मा प्रत्येक स्थान में विद्य
मान है और संसार का अंधेरे से अंधेरा कोण

अथवा पर्वत की अंधेरे से अंधेरी गुफा परमात्मा से शून्य नहीं है तो इस दशा में वह किसी प्रकार और किसी स्थान में भी छिपकर पाप कर्म नहीं कर सकता परन्तु साकार मानने से तो ईश्वर एक देशी होगा और उसको सब स्थानों में विद्यमान किसी प्रकार नहीं मान सकते और ससीम वस्तु से बचकर निकलने के लिये मनुष्य की आत्मा कोई न कोई मार्ग निकाल लेती है जैसे ससीम राजा की ससीम शक्ति से बचने के लिये देश से भागकर अन्य देश में चला जाना प्रथम उपाय है द्वितीय पुलिस को घूस देकर बच जानेका प्रयत्न करना द्वितीय उपाय है असत्यवादी साक्षियों से मिथ्या साक्षी दिलाकर और अन्य मनुष्यों के असत्य वचनसे लाभ उठानेका यत्नकरना तीसरी युक्ति है और वकीलों के द्वारा न्याय कारियों को भ्रम में डालने का यत्न करना चतुर्थ मार्ग है इसी प्रकार अन्य भी अधिक मार्ग जो ससीम शक्ति के दंड की निवृत्त्यर्थ वर्तेजाते हैं यह सब साकार दशा में हो सकते हैं निराकार और चैतन्य शक्ति को सर्व अन्तर्यामी होने के दशा में

इस प्रकार का कोई यत्न लाभ दायक नहीं हो सकता उस दशा में मनुष्य पाप करके सुख प्राप्ति की आशा नहीं रख सकता और दुःख की आशा रखकर कोई कार्य कियाही नहीं जाता इस्से स्पष्ट विदित होता है कि निराकार के मान नेसे मुक्ति है साकार से नहीं चूंकि मुक्ति ईश्वर ज्ञान के अति रिक्त हो नहीं सकती और ईश्वर के साकार मानने सेभी मुक्ति हो नहीं सकती अतएव साकार ईश्वर में मुक्तिदाता होना जो ईश्वर का गुण है रह नहीं सकता अतएव ईश्वर निराकार है ।

महाशय गण युक्तियों सेतो आप समझगये होंगे किईश्वर साकारनहीं क्योंकि साकारपदार्थ अनित्य और जन्य होते हैं और शक्तिमान और सच्चि दानन्द भी नहीं होसक्ने—अब शास्त्रीय प्रमाणों से सिद्ध किया जाता है कि ईश्वर निराकार है ।

ततः परं ब्रह्म परं बृहन्तं यथानिकायं सर्व भूतेषु गूढम् । विश्वस्यैकं परिवेष्टितारमीशं तं ज्ञात्वाऽमृताभवन्ति॥७॥ ततोयदुत्तरतरं तदरूपमनामयम् । यएतद्विदुरमृतास्ते भवन्त्यथेतरेदुःखमेवापियान्ति॥१०॥ अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः । सवेत्तिवे

धेनचतस्यास्तिवेत्तातमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम् ॥१८॥

उससे परे बडा ब्रह्म है जो अशरीर होकर सब जीवों में छिपा हुआ है सारे संसार को आच्छादन करनेवाला जो एक परमात्मा ईश्वर हैं इसके ज्ञान सेही मुक्ति प्राप्त होती है ॥ ७ ॥

अतएव वह सबसे बड़ाहै और वह सबसे रहित और अनादि है अर्थात् निराकार है और जो लोग उसको जानते हैं वह लोग अमृत्यु होते हैं और जो इसके ज्ञान से शून्य हैं वह सब संसार में दुःख हो भोगा करते हैं ॥ १० ॥

उस ईश्वर के हस्तपाद नहीं परन्तु वह गमन करता और पदार्थों को धारण करता है और वह चक्षु रहित हैं परन्तु वह देखताहै और श्रोत्र रहित होकर सुनता है वह सब संसार का ज्ञाता है और इसका यथावत जानने वाला कोई नहीं उसी का उग्र पुरुष व्यापक कहते हैं । १८ ॥

एको वशीसर्वभूतान्तरात्मा एकंरूपंबहुधायः करोतितमात्मस्थंयेअनुपश्यन्ति धीराः तेषां सुखं शास्वतंनेतरेषाम् ।

वह परमात्मा एक है और सारे जगतमें व्यापक

और सर्व प्राणियों का अन्तरयामी जिसने प्रकृति से इस नाना प्रकार के जगत को नाना प्रकार के रूपों में किया और जो आत्मा में रहने वाला है जिसको धीर पुरुष प्रकृति के अन्दर व्यापक देखते हैं वही मुक्ति अर्थात् निराबिकल्प सुख को प्राप्त करते हैं अन्य नहीं।

नित्यानित्यानांचेतनश्चेतनानांएकोबहुणांयो विदधातिकामान् तमात्मस्थंयेअनुपश्यन्तिधीराते षांशान्तिशाश्वतीनेतरेषाम् ॥

वह परमात्मा नित्यपदार्थों में नित्य है अर्थात इसमें स्वरूप से अथवा ज्ञान से परिणाम नहीं है वह चैतन्य जीवों से भी चैतन्य है अर्थात् जीव अल्पज्ञ है और वह सर्वज्ञ है जो एक होकर अनेकों के अर्थ पूरण करता है अर्थात संसार में कर्मों का फल प्रदाता है उस जीवात्मा में रमण करने वाले को जो धीर पुरुष देखते हैं उन्हीको शान्ति निरंतर प्राप्त होता है अन्यों को नहीं।

सपर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर ? शुद्धमपाप विद्धम कविर्मनीषीपरिभूः स्वयम्भूर्य्याथातथ्यतो र्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥

वह परमात्मा सबमें व्यापक शीघ्र कारी शरीर से रहित और नाड़ी आदि के बन्धन से शुन्य शुद्ध और पाप से शून्यहै तीन कालका ज्ञाता अन्तर्यामी और जगत में व्यापक उस परमात्मा ने निरन्तर सुखों की प्राप्ति के लिये यथार्थ ज्ञान प्रत्येक वस्तु का वेदों द्वारा प्रदान किया है ।

ईशावास्यमिदꣳ सर्व्वंयत्किं च जगत्यांजगत्।
तेनत्यक्तेन भुञ्जीथा मागृधः कस्यस्विद्धनम् ।

यह सारा जगत और जगत के प्रत्येक पदार्थ सब-ईश्वर का निवास स्थान है और ईश्वर ने सब आच्छादन किया हुवा है जो इस परमात्मा को छोड़ते हैं वह जन्म मरण रूपी महा क्लेश को भोगते हैं चूंकि ईश्वर फल प्रदाता सबका अन्तर्यामी प्रत्येक स्थान पर विद्यमान हैं इस लिये हे जीव तू किसीका धन लेने की इच्छा न कर यदि तू ईश्वर को त्याग अन्यकी वस्तु लेगा तो अवश्य दुःख पावैगा ।

महाशयो!अब इन प्रमाणों से भी सिद्ध हो गया कि ईश्वर निराकार और जगत् में व्यापक है इसमें वाज भोले भाले भ्रातर यह प्रश्न करते

है कि यदि ईश्वर निराकार है तो उनका ध्यान किसी प्रकार नहीं हो सकता मानों उनके विचारानुसार साकार निराकार का ध्यान नहीं कर सकता और निराकार साकार का तो उनको यह विचार करना चाहिये कि जीवात्मा साकार है अथवा निराकार? चूंकि जीवात्मा भी निराकार है अतएव निराकार का ध्यान निराकार ही करता है और जो साकार पदार्थ है उनमें से भी निराकार गुण का ही जीवात्मा ग्रहण करता है जैसे फूल को जब देखते हैं तो प्रथम रंग का ज्ञान होता है जो निराकार है द्वितीय गन्ध का ज्ञान होता है वह भी निराकार है तीसरे परिमाण का ज्ञान होता है वह भी निराकार है इसी प्रकार जीवात्मा गुणों के अतिरिक्त किसी वस्तु का ज्ञान प्राप्त नहीं करता और गुण निराकार है और जो लोग कृष्णादि महात्माओं की मूर्त्ति में भी ध्यान लगाते हैं वह भी निराकार गुणों का ही ध्यान होता है जैसे कि काला रंग आकार और गुण यह सब निराकार पदार्थ है इन्हीं का ज्ञान होता है महाशयों चूंकि मनुष्य का उद्देश्य

संसार में मुक्ति प्राप्त करताहै और दुःखित दृष्टि पदार्थ से हो नहीं सकती जैसा कि महात्मा कपिल जी अपने सांख्य सूत्र में बतलाते हैं ॥

नदृष्टात्तात्सिद्धिर्निवृत्त्यापिपुनरअनुवृत्तिदर्शनात् ।

अर्थात् दृष्टि पदार्थों से अत्यन्त दुःखनिवृत्ती प्राप्त नहीं होती क्योंकि दृष्टि पदार्थ के संयोग से जो दुःख दूर होता है वह इस पदार्थके वियोग से फिर उत्पन्न होजाता है यह नित्य प्रति का अनुभव प्रत्यक्ष प्रमाण है अतएव उपनिषदों में लिखा है कि देवता लोग परोक्ष अर्थात् जो पदार्थ आंखों से नहीं दृष्टिगत होते अर्थात् जिन को ज्ञान इन्द्रियोंसे न जानने योग्य पदार्थ समझते हैं अर्थात् विद्वान लोग आत्मा जो इन्द्रियों से नहीं जाना जाता उसको प्यार करते हैं और प्रत्यक्ष जो प्राकृत पदार्थ है उनसे घृणा करते हैं क्योंकि प्रकृति दुःख स्वरूप है अतएव इससे मिथ्या ज्ञान और मिथ्या ज्ञानसे राग व द्वेश उत्पन्न होते हैं और राग से वस्तु की प्राप्ति का यत्न उत्पन्न होता है और इस यत्नसे धर्म अधर्म दो प्रकारका कर्म उत्पन्न होताहै और मनुष्य पाप और

पुण्य करता है और उस पाप और पुण्यका फल दुःख सुख भोगनेके अर्थ जन्म मरण धारण किया जाता है जो महा दुःख रूप है महाशयों इससे आपको विदित होगया कि निराकार ईश्वर और साकार प्रकृति है और साकार के संयोग से दुःख और निराकार से सुख लाभ होता है अत एव आप ईश्वर को निराकार मानकर शान्ति प्राप्ति करें ॥

ओ३म्

शान्तिः शान्तिः शान्तिः

ओ३म्

टरेक्ट नम्बर १४

ईश्वर प्राप्ति

प्रथम भाग

जिसको

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती जी की आज्ञानुसार

प्रबन्धकर्त्ता दयानन्द ट्रैक्ट सोसाइटी ने

महाविद्यालय मैशीन प्रेस ज्वालापुर में छपवाया.

मिलने का पता—

दयानन्द ट्रैक्टसोसाइटी

(दफ्तर) स्टेशन के सामने

बाजार हरिद्वार.

४००० प्रति] [मूल्य २ पाई.

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गौशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

ओ३म्

ईश्वर प्राप्ति

प्रथम भाग

वेदाहमेतम्पुरुषम्महान्तमादित्य वर्णन्त-
मसःपरस्तात्॥तमेवविदित्वाति मृत्युमेति
नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥ १ ॥

इस वेद मन्त्र में परमात्मा जीवों को मोक्ष के साधन का उपदेश करते हैं, और बतलाते हैं कि संसार में मोक्ष के बहुत से साधन नहीं किन्तु जिस प्रकार अन्धकार को दूर करने के लिये प्रकाश के अतिरिक्त दूसरा साधन नहीं होसक्ता और नहीं सरदी को दूर करने के लिये गरमी के अतिरिक्त और से काम चलसक्ता है॥ इसी प्रकार संसार में मनुष्य के जीवन उद्देश्य अर्थात् दुःखों से छुटने का नाम या आगे को दुःख न उत्पन्न हाने का नाम मोक्ष बतलाते हुवे उस के एक ही साधन को (जिस के अतिरिक्त

दूसरा हो नहीं सक्ता) उपदेश करते हैं कि — तुम सर्वव्यापक परमात्मा को जानो जो परमात्मा सूर्यवत् प्रकाशमय है जिस में किसी प्रकार की अज्ञानता या दोषादि का सम्भव ही नहीं, जो सर्व प्रकार के दूषणों से पृथक है। उसी परमात्मा को जानने से ही अति मृत्यु अर्थात् मोक्ष प्राप्त होता है। मोक्ष के लिये कोई दूसरा मार्ग होही नहीं सक्ता। वेद के इस मन्त्र को सुनते ही प्रश्न उत्पन्न होता है कि—

"लक्षणप्रमाणाभ्यां वस्तुसिद्धिर्न तु प्रतिज्ञामात्रेण,,

अर्थात् जब तक किसी वस्तु का लक्षण न कहा जावे और उसकी सत्ता के लिये कोई प्रमाण न उपस्थित कियाजावे तब तक उसकी सत्ता प्रतिज्ञामात्र से नहीं सिद्ध होसक्ता। इस कारण जब तक ईश्वर का लक्षण न किया जावे तब तक "उस के जानने से मुक्ति होती है और परमात्मा के जानने के अतिरिक्त मोक्ष नहीं होसक्ता प्रतिज्ञा मात्र ही हैं इस सिद्धान्त को लेकर महात्मा व्यासजी अपने वेदान्तदर्शन में ईश्वर का लक्षण कहते हैं कि—

"जन्माद्यस्ययतः,,। वे० द०॥

अर्थ—जिस से इस संसार का जन्म स्थिति और नाश होता है वह ईश्वर है अर्थात् जो इस सृष्टि का उत्पन्न करने वाला

पालने वाला और नाश करनेवाला है वह ईश्वर है इस लक्षण को सुनते ही वादी शंका करता है कि तुह्मारा यह ईश्वर क लक्षण ठीक नहीं क्योंकि यह संसार अनादि है जबतक जगत् की उत्पत्ति सिद्ध न की जावे तब तक ईश्वर का यह लक्षण किस प्रकार ठीक हो सक्ता है इसकारण से कि वादी की प्रतिज्ञा जगत् को अनादि मानने की है इस पर यह प्रश्न होता है कि जगत् स्वरूप से अनादि है या प्रवाह से ? यदि यह कहो कि जगत् स्वरूप से अनादि है , यह तो किसी दशा में सत्य हो ही नहीं सक्ता इस दशा में जगत् का अविकारी अर्थात् ६ विकारों से पृथक होना अवश्यक है । वह विकार ये हैं कि "जायते वर्द्धते संस्थीयते विपरिणम्यते क्षीयते विनश्यते ,, जिस वस्तु में इन ६ विकारों में से कोई पाया जावे वह अनादि नहीं हो सक्ती क्योंकि प्रत्यक्ष में भी इन ६ विकारों का उत्पत्तिमान् वस्तु में ही होना पाया जाता है । जैसे एक बालक उत्पन्न होता है, बढ़ता है, युवावस्था पर्य्यन्त बढ़कर बढना बन्द हो जाता है, फिर मूछडाढी का निकलना, शरीर में भोजन का आना फिर पक कर निकलजाना आदि विकार होते रहते हैं पश्चात वृद्ध होना अर्थात् घटना आरम्भ होता अन्तको मरजाता है यही दशा एक वृक्ष की है वहबीज से छोटासा अंकुर निकलकर उत्पन्न होता है फिर बढता है, फिर एक अवधि तक बढकर बढना बन्द हो जाता है फिर पतझड़ और वसन्त के कारण कभी हरा भरा होकर फल लाता है कभी शुष्क होकर नंगा हो जाता है, अन्त

को नाश हो जाता है । यह आवश्यक नहीं कि किसी वस्तु में छहों विकार एक साथ ही हों किन्तु अपने २ समय में एक या दो ही रहते हैं । जो उस वस्तु में अपने दूसरे सहचारियों के होने को सिद्ध करते हैं । जबकि हम सम्पूर्ण जगत को विकार वाला प्रतीत करते हैं तो उसको किस प्रकार अनादि स्वीकार कर सके हैं ? अनादिवस्तु के लिये निर्विकार अर्थात् बढ़ने घटने से पृथक होना आवश्यक है । जब कि यह सृष्टि किसी प्रकार भी विकार रहित सिद्ध नहीं होती तो किसी प्रकार यह स्वरूप से अनादि नहीं कहला सकी । यदि कहो कि प्रवाह से अनादि है तो इस प्रवाह के चलाने वाले का होना (अर्थात् जो किसी समय बनावे और किसी समय न बनावे उचित है) इस पर वादी यह कहता है कि यद्यपि जगत् में भिन्न २ वस्तुयें दशा बदलती हुई दृष्टि पडती हैं परन्तु समष्टि सृष्टि दशा नहीं बदलती इस कारण सृष्टि को स्वरूप से अनादि मानना ठीक है। यहां पर हम वादी से पूछते हैं कि वास्तव में सृष्टि इन सब वस्तुओं के समूह का नाम है या कोई दूसरी वस्तु है ? यदि कहो कि वस्तुओं के समूह का नाम सृष्टि है तो जिस समूह के अवयव दशा बदलते हैं तो वह समूह विकार रहित नहीं हो सकता जैसे एक मनुष्य के हाथ, पांव, उदर, शिर आदि सम्पूर्ण अवयव निर्बल हो गया यदि वह कहे कि मेरा शरीर निर्बल नहीं हुआ तो उसे मूर्ख ही कहना पड़ेगा क्योंकि इन अवयवों के समूह के अति-

रिक्त शरीर कोई दूसरी वस्तु नहीं है। इस कारण सृष्टि के सम्पूर्ण अवयवों को विकारी मानकर सृष्टि को समष्टिरूप से निर्विकार बतलाना सर्वथा अज्ञानता है। यदि वादी कहै कि इन वस्तुओं के समूह के अतिरिक्त सृष्टि कोई दूसरी वस्तु है तो उस की सत्ता का प्रमाण देना चाहिये॥

वादी कहता है कि यदि सृष्टि के प्रत्येक वस्तु के उत्पत्तिमान् होने से और उस का नाश देखने से सृष्टि को उत्पत्तिमान् ही स्वीकार किया जावे तो भी उस का कर्त्ता ईश्वर नहीं हो सकता क्योंकि सृष्टि स्वभाव से उत्पन्न होती है स्वभाव के अतिरिक्त सृष्टि का उत्पादयिता कोई नहीं। वादी की इस शंका में भी "कि सृष्टि का उत्पन्न करने वाला स्वभाव है" यह वादी की प्रतिज्ञा है। इस कारण इस प्रतिज्ञा की परीक्षा आवश्यक है इस स्थान पर यह प्रश्न होता है कि स्वभाव द्रव्य है या गुण है? यदि वादी कहै कि स्वभाव द्रव्य है तो उस के गुण क्या हैं? यदि कहै गुण है तो किस द्रव्य का है? दूसरे गुणों से कोई द्रव्य उत्पन्न नहीं हो सकता। सृष्टि द्रव्य है इस का कारण कोई द्रव्य ही हो सकता है॥ वादी कहता है कि स्वभाव गुण है जो प्रकृति में रहता है प्रकृति के विशेष मिलाप से सम्पूर्ण वस्तुएं उत्पन्न हो जाती हैं अब हम वादी से कहते हैं कि अभ्युपगम सिद्धान्तानुसार हम स्वभाव को

प्रकृति का गुण मान कर उस से सृष्टि की उत्पत्ति मान लेवें तो नाश किस से होगा क्योंकि उत्पन्न होना और नाश होना ये दो विरुद्ध गुण हैं जो किसी एक वस्तु में रह ही नहीं सकते. अब वादी इस का उत्तर देता है कि प्रकृति में संसार के नाश और उत्पन्न करने की शक्ति विद्यमान है उत्पत्ति संयोग या मिलाप से होती है प्रकृति के अन्तर्गत जल है जिस का गुण संयोग है और दूसरी वस्तु प्रकृति में अग्नि है जिस का काम विभाग करना है इस कारण जल से मिलाप होकर वस्तुओं की उत्पत्ति और अग्नि से अवयव छिन्न भिन्न होकर वस्तुओं का नाश हो सकता है। इस कारण अग्नि और जल दो प्रकार की वस्तुयें प्रकृति के अन्तर्गत होने से विरुद्ध गुणों की एकता का दोष इस स्थान पर नहीं घटता ,, वादी के इस उत्तर को सुन कर यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि प्रकृति में उत्पन्न करने और नाश करने की शक्तियें तीन दशाओं में रह सकती हैं या तो उत्पन्न करनेकी शक्ति अधिक और नाश करने की शक्ति न्यून हो या नाश करने की शक्ति अधिक और उत्पन्न करने की न्यून हो या दोनो सम हो परन्तु प्रकृति से जगत् की उत्पत्ति आदि का होना इन तीनों दशाओं में असम्भव है चौथी दशा कोई हो ही नहीं सकती यदि वादी उत्पन्न करने की शक्ति अर्थात् संयोग को अधिक मानेगा तो प्रत्येक वस्तु बढती ही चली जायगी कोई वस्तु घटेगी नहीं क्योंकि जिस क्षण में संयोग की शक्ति की अधिकता से उस वस्तु में पांच परमाणु

मिलेंगे उस क्षण में वियोग अर्थात् घटने की शक्ति के कम होने से चार प्रमाणु पृथक होंगे अर्थात् प्रति क्षण एक परमाणु बढ़ता जायगा घटने का अवसर कभी आवेगा ही नहीं परन्तु यह प्रतिज्ञा सर्वथा प्रत्यक्ष के विरुद्ध है क्योंकि सृष्टि में वस्तु घटती बढ़ती दोनों दशाओं में पाई जाती है जो ऐसा मानना असम्भव है इस लिये यह प्रतिज्ञा स्थिर नहीं हो सकती कि प्रकृति में उत्पन्न करने की शक्ति अधिक हो दूसरे यदि नाश करने की शक्ति अधिक मानी जावे और उत्पन्न करने की शक्ति न्यून तो उस दशा में जिस क्षण में पांच परमाणु पृथक होंगे और चार मिलेंगे तो इस दशा में प्रतिक्षण प्रत्येक वस्तु से एक परमाणु घटता ही चला जायगा कोई वस्तु बढ़ेगी नहीं परन्तु यह प्रतिज्ञा भी प्रत्यक्ष के विरुद्ध प्रतीत होती है क्योंकि जगत् में बहुत वस्तुयें बढ़ती हुई दृष्ट होती हैं तीसरी दशा यह है कि दोनों शक्तियें तुल्य स्वीकार की जावें उस दशा में जिस क्षण में एक वस्तु पांच परमाणु संयुक्त होंगे उसी क्षण में पांच ही नियुक्त होंगे क्योंकि दोनों शक्तियें अव्याहत और तुल्य काम कर रही हैं इस दशा में सृष्टि की कोई वस्तु न बढ़ेगी और न घटेगी किन्तु सर्व सृष्टि एक ही दशा में रहेगी यह प्रतिज्ञा भी प्रत्यक्ष के विरुद्ध होने से स्पष्ट असन्य है क्यों कि प्रत्येक वस्तु सृष्टि में एकसी नहीं दीखती सब बढ़ती घटती हुई पाई जाती है जैसा दिन कल था वैसा आज का दिन नहीं है क्यों कि उस से अनुमान डेढ़ मिनट के

अधिक होता है आज की रात कल की गत रात के बराबर नहीं कि वह उस से न्यून होगी इस प्रकार विचार करने से सम्यकतया बोध होता है कि स्वभाव से उत्पत्ति का होना असम्भव है दूसरे संयोग और वियोग दोनों गुण कर्म्म से उत्पन्न होने वाले हैं और कर्म्म प्रकृति का स्वाभाविक धर्म्म है या नैमित्तिक यह प्रश्न होता है ? यदि कर्म प्रकृति में स्वाभाविक धर्म मान लिया जावे तो कोई प्राकृत वस्तु स्थिर नहीं पावेगी क्यों कि स्वाभाविक धर्म किसी वस्तु का रुक नहीं सक्ता परन्तु यह प्रतिज्ञा भी प्रत्यक्ष के विरुद्ध है क्यों कि हम बहुत वस्तुओं को स्थिर देखते हैं ॥

अब वादी कहता है कि कर्म प्रकृति का स्वाभाविक धर्म है परन्तु जिन वस्तुओं को हम स्थिर देखते हैं उन को पृथिवी की आकर्षण शक्ति ने रोका हुआ है यह प्रतिज्ञा भी प्रत्यक्ष के विरुद्ध होगी फिर कोई प्राकृत वस्तु चलती हुई नहीं दीखेगी क्यों कि पृथिवी की आकर्षण शक्ति उस पर प्रभाव डालती है जैसे एक गाड़ी चलरही है दूसरी स्थिर है जब पृथिवी की आकर्षण शक्ति दोनों पर तुल्य प्रभाव रखती है ॥

प्रकृति में कर्म को स्वाभाविक धर्म मानने से एक का चलना और दूसरीका न चलना किस प्रकार सम्भव हो सक्ताहै उक्तदोषों के अतिरिक्त पृथिवी भी प्रकृति से बनी है वह भी गतिमान होने से किसी नियम के आधीन नहीं हो सकती उसका प्रत्येक परमाणु गतिमान है इस कारण उनका संयोग होही नहीं सकता क्योंकि

पृथिवी के प्रत्येक परमाणु में उनका स्वाभाविक धर्म जो कर्म है उसे पृथक करने के लिये उपस्थित है जिस से पृथिवी का आकर्षण भी नहीं हो सकता इस पर वादी कहता है कि प्रकृति का प्रत्येक परमाणु गतिमान् है और पृथिवी का आकर्षण उनको रोके हुए है जिस को दूसरी शक्ति अर्थात् अग्नि आदि से सहायता मिलती है वह पृथिवी की शक्ति को दबाकर चली जाती है जिस को सहायता नहीं मिलती वह रुकी रहती है।

अब फिर प्रश्न होता है कि दूसरी शक्ति जिस की सहायता से एक गाडी चलती है और दूसरी उस की सहायता न होने से रुकी हुई है यह सहायता देना उस शक्ति का स्वाभाविक धर्म है या नैमित्तिक? यदि कहो स्वाभाविक धर्म है तो उस को दोनों गाड़ियों को सहायता देना चाहिये जिस से दोनों गाडियां चलेंगी या स्थिर रहेगी एक का चलना एक का न चलना दोनों असम्भव हैं इस कारण जगत् को उत्पत्तिमान् और ईश्वर को उसका उत्पन्न करने वाला मानने के अतिरिक्त किसी दूसरे प्रकार से व्यवस्था होही नहीं सकती। इसी अवसरपर वादी फिर शङ्का करता है कि यदि यह भी स्वीकार कर लिया जावे कि कोई जगत् का कर्त्ता है तो उसके होने में प्रमाण क्या है? क्यों कि यदि उस से होने में कोई प्रमाण हो तो उस के जानने से मुक्ति हो सकती है परन्तु

जिस से होने में कोई प्रमाण ही नहीं तो उनको किस प्रकार जान सकते हैं ? क्यों कि ईश्वर का तीन काल में प्रत्यक्ष तो होताही नहीं और जिसका प्रत्यक्ष न हो उसे अनुमान से कैसे जान सकते हैं ? क्यों कि प्रत्यक्ष से व्याप्ति अर्थात् सम्बन्ध को जानकर फिर उस के अनुसार अनुमान होता है और जिसका प्रत्यक्ष और अनुमान दोनों प्रमाणों से ज्ञान न हो उस के लिये शब्द प्रमाण होही नहीं सक्ता जब ईश्वर को प्रमाण से जान नहीं सके इस लिये ईश्वर का होना सत्य नहीं और नहीं उस के जानने से मुक्ति हो सक्ती है' परन्तु जब वादी से पूछते हैं कि क्या जिन वस्तुओं का इन्द्रियों से ज्ञान न होवे नहीं होती यदि ऐसा मानो तो जिन इन्द्रियों से न देखने से तुम ईश्वर की सत्ता का निषेध करते हो उन इन्द्रियों को किस प्रमाण से जानते हो ? यदि कहो इन्द्रियों को इन्द्रियों से देखते हैं तो आत्माश्रय दोष है अर्थात् स्वयं ही दृश्य वस्तु और स्वयं ही देखने का साधन नहीं होसक्ता यदि कहो हम दर्पण में अपनी आंख को देखते हैं इस लिये आंख का होना आंख से ही प्रतीत होता है परन्तु यह कथन सत्य नहीं क्योंकि दर्पण में आंख नहीं दीखती किन्तु आंख का आभास उस से अनुमान के द्वारा जानना तो मान सक्ते हैं परन्तु यह कहना कि आंख से आंख को देखते हैं सत्य नहीं किन्तु आंख से आंख के आभास को देख कर उस से आंख के होने का अनुमान करते हैं कि यह सत्य होगा अस्तु आंख का तौ अनु-

मान से ही ज्ञान होगया परन्तु रसनेन्द्रिय का किस से ज्ञा
होगा ? न तो वह रूप है जो आंख से दीखे और न शब्द है
जिस का कान से ज्ञान हो, प्रयोजन यह है।

कि रसना इन्द्रिय का ज्ञान किसी इन्द्रिय से नहीं हो
सक्ता ऐसे ही अन्येन्द्रियों की दशा है जिन इन्द्रियों से न दीख
के कारण परमात्मा की सत्ता को स्वीकार नहीं करते वे तुम्हा
री इन्द्रियां ही प्रत्यक्ष नहीं तो तुम्हारा सिद्धान्त स्वयमेव खण्डि
होता है इसके अतिरिक्त जो पुरुष ऐसा विचार रखते हैं कि प्रत्य
क्ष ही सब प्रमाणों का मूल है और जिस वस्तु का प्रत्यक्ष न
हो उसका अभाव है वे बहुत ही भ्रान्ति में पड़े हैं क्योंकि प्रत्य
क्ष से किसी वस्तुका अनुमानके बिना ज्ञान होही नहीं सक्त
प्रत्येक वस्तुके एक ही भाग का प्रत्यक्ष होता है शेष का अनुमा
स ज्ञान हुआ करता है। जब केवल प्रत्यक्ष कोही प्रमाण माना जा
तो किसी वस्तु का भी ज्ञान न होगा " दूसरे अनेक ऐसी दश

कि जिनके कारण वस्तुओं के विद्यमान होने पर भी उनक
ज्ञान नहीं होताप्रथम अति समीप होनेसे जैसे नेत्रमें सुर्माहोत
है परन्तु वह नहीं दीखता दूसरे बहुत दूर होने से जैसे लन्द
यहां से नहीं दीखता तीसरे अतिसूक्ष्म होने से जैसे परमाणु दृ
ष्टि में नहीं आते चौथे अतिस्थूल होने से जैसे हिमालय पहाड़
संपूर्ण नहीं दीखता पांचवे वस्तु और इन्द्रिय के बीच में व्यव
धान होने से जैसे आंख पर हाथ रखने से कोई वस्तु न

दीखती अथवा भित्ति (दीवार) के दूसरी ओर व

वस्तुएं नहीं दीखती छठे इन्द्रियों में दोष हो जाने से जैसे अन्धे को रूप का ज्ञान नहीं होता और बहरे को शब्द का ज्ञान नहीं होना इत्यादि सातवें मन के अव्यवस्थित होने से भी नेत्रों के सामने चली जाने वाली वस्तुओं का ज्ञान नहीं होता जब कि इन सात दशाओं में विद्यमान वस्तुओं का भी प्रत्यक्ष नहीं होता तो प्रत्यक्ष न होने से ईश्वर की सत्ता को स्वीकार न करना सत्य नहीं किन्तु ईश्वर के होने में अनुमान और शब्द प्रमाण विद्यमान है।

वादी शङ्का करता है कि अनुमान किस प्रकार हो सक्ता है क्यों कि जब तक व्याप्ति का ज्ञान न हो तब तक अनुमान नहीं हो सक्ता और व्याप्ति प्रत्यक्ष से ग्रहण की जाती है ईश्वर का प्रत्यक्ष हुआ नहीं इस लिये व्याप्ति के न होने से अनुमान नहीं हो सक्ता। परन्तु वादी का यह कथन सत्य नहीं क्यों-कि यह बात प्रत्यक्ष सिद्ध है कि प्रकृति में क्रिया नहीं जब-तक चेतन उस को क्रिया देता है तबतक ही क्रिया होती है। जिसका प्रमाण मृतक और जीवित शरीर को देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है अर्थात् जब तक क्रिया देने वाला चेतन क्रिया दे रहा था तब तक यह शरीर क्रिया कर रहा था और जब चेतन पृथक हो गया तब वह शरीर जो प्रकृति से बना था क्रिया शून्य हो गया इस से स्पष्ट ज्ञात होता है कि प्राकृत वस्तु में क्रिया चेतन के बिना नहीं हो सक्ती दूसरे जिस

क्रिया में नियम पाया जावे वह तो किसी प्रकार नियम बनाने वाले के बिना होही नहीं सकी। घड़ी १२ घण्टे के पश्चात् अपने उसी स्थान पर, और जो घड़ी चौबीस घंटे में चाबी लेती है वह एक सप्ताह में, इन उदाहरणों के होने से सम्यकतया विद्वान् घड़ी बनाने वाले का होना प्रतीत होता है कोई मनुष्य भी जिस को बुद्धि हो घड़ी को उत्पत्तिवान् मान कर किसी अचेतन वस्तुने बनाई हुई नहीं जानता यद्यपि घड़ी बनाने वाले को घड़ी बनाते हुए प्रत्यक्ष नहीं देखा परन्तु अनुमान से घड़ी के कर्त्ता का होना उसे निश्चय हो जाता है क्यों कि स्वाभाविक क्रिया वाली वस्तु में लौट कर उसी स्थान पर आने का नियम हो नहीं सकता जैसे कि आगे चलना इञ्जन में भाप के होते हुए और किसी कल के बिगड जाने से रुक जाना भी सम्भव है परन्तु अपने स्थान पर लौट आना किसी प्रकार सम्भव नहीं जब तक कोई चेतन न लौटावे। इस लिये जिन वस्तुओं की कुछ दिनों के पश्चात् फिर उसी स्थान पर आने की शक्ति है।

वह अवश्य ही चेतन के नियम से बँधी हुई है इस लिये सृष्टि के सम्पूर्ण भूगोल नियम में आधीन देखने में आते है चन्द्रमा सूर्य पृथिवी और तारागण सब के बीच में नियत क्रिया के अतिरिक्त और किसी प्रकार का नियम प्रतीत नहीं होता जिस के नियमों की परीक्षा हम सौ वर्ष पहले से ही

जान सके हैं कि अमुक तिथि में इतने बजे सूर्य ग्रहण वा चन्द्र-ग्रहण होगा जिस प्रकार हम घडी को देख कर प्रतीत कर सकते हैं कि इतनी देर के पश्चात् घडी की सुइयां अमुक स्थान पर मिल जायेंगी ऐसे ही सूर्य और चन्द्र ग्रहण भी नियम के आधीन होने से हमें पहले से प्रतीत हो सकते हैं यद्यपि घडी को बनाने वाला चेतन मनुष्य हमें सृष्टि में दीखता है जिस से व्याप्ति अर्थात् सम्बन्ध को जान कर हम कह सकते हैं कि इस नियम पूर्वक जगत् को बनाने वाला चेतन परमात्मा है जिस प्रकार घडी को नियम पूर्वक चलती हुई

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

जैनियों का कल्पित और अनवस्था

दोषग्रस्त

ईश्वर जगत्कर्त्ता कैसे होसक्ता है

जिसको स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती
ने दयानन्द वेद प्रचारक मिशन
के लिये लिखकर छपाया

Printed by B. Kashi Prasad at the
Shanti Press Fatehgarh.

प्रथमवार ५०००] [मूल्य)।

नोट—स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती की उर्दू हिन्दी की बनाई हुई तमाम पुस्तकें दयानन्द वेद प्रचार मिशन आर्य समाज के सामने मोती कटरा आगरा से मिल सक्ती हैं ।

सूचना:—यदि आर्यसमाजों ने दयानन्दवेदप्रचार मिशन को सहायता दी तो तमाम पुस्तकों का जो समाज के विरुद्ध लिखी गई हैं उत्तर मिल सक्ता है ।

कल्पितेश्वर

जैनियों का ईश्वर जगत् कर्त्ता कैसे हो सक्ता है ।

सज्जन पुरुषो संसार में दो प्रकार के पदार्थ प्रतीत होते हैं एक स्वाभाविक दूसरे कृत्रिम जैसे एक तो सोना है दूसरे मुलम्मा चांदी और जर्मन की बनावटी चांदी गुण कर्म्म स्वभाव वाला सच्चा राजा और पञ्जाब का नामधारी नाई राजा यदि कोई सोने का काम मुलम्मे से लेना चाहे तो कैसे हो सक्ता है जैसे राजा दुष्टों से श्रेष्ठों की रक्षा करता यह कार्य्य नाई राजा से कैसे चल सक्ता है जैन लोगों का कल्पित और बना हुआ ईश्वर जो स्वयं जगत् में सम्मिलित है वह कैसे जगत् बना सक्ता है जैन लोगों का एकदेशी ईश्वर कर्म्मों का फल कैसे दे सक्ता है जैन लोगों ने जो ईश्वर के सम्बन्ध में परस्पर विरुद्ध कल्पना की है जिस से पता लगता है जैन आचार्य्य ईश्वर के स्वरूप से सदा अनभिज्ञ रहे अब भी अन-

भिन्न हैं ॥

श्री जैन ग्रन्थरत्नाकर कार्य्यालय बम्बई के छोटे पुस्तक से ईश्वर सम्बन्धी जैन कल्पना का नमूना पेश करके उस पर समीक्षा करते हैं।

न द्वेषी हो न रागी हो सदानन्द वीत रागी हो।
वह सब विषयों का त्यागी हो जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

समीक्षा.

जैनियों का ईश्वर ऐसा नहीं परन्तु वह ईश्वर को ऐसा बनाना चाहते हैं यदि जैनियों को ईश्वर का लक्षण विदित होता तो ऐसा न लिखते क्योंकि ईश्वर का लक्षण योग शास्त्र ने यह किया है कि,, क्लेशकर्म्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुष-विशेष ईश्वरः।

भावार्थः— जो किसी काल में क्लेश और कर्म में लिप्त न हुआ हो ऐसे पुरुष विशेष को ईश्वर कहते हैं जब पांचों क्लेशों में राग द्वेष वर्त्तमान है जिन से ईश्वर का कभी सम्बन्ध नहीं होता द्वेष उस शय से होता है जिस से कभी दुःख मिला हो जैसा लिखा

है " दुःखानुशयी द्वेषः " योग दर्शन और राग का लक्षण यह किया है " सुखानुशयी रागः " जब ईश्वर को सुख दुख होते ही नहीं क्योंकि यह मन के धर्म्म हैं ईश्वर का मन नहीं क्योंकि यह मन और इन्द्रियों की आवश्यकता एक देशी जीव को होती है ईश्वर सर्वव्यापक है उस का मन नहीं राग द्वेष और सुख दुःख मन के धर्म्म हैं जहां धर्म्मी नहीं वहां धर्म्म कहां सदानन्द और वीतरागी दो विरोधि गुण हैं क्योंकि सदानन्द उसे कहते हैं जिस का आनन्द तीन काल में बना रहे ।

वीतराग उसे कहते हैं जिस को राग होकर नाश होगया हो जिस को राग के नाश पर आनन्द आया है वह आनन्द सत् नहीं कहला सक्ता क्योंकि राग के नाश के पूर्व नहीं था स्थूल वस्तु के गुण सूक्ष्म में नहीं जासक्ते यह नियम है ईश्वर विषयों से सूक्ष्म है फिर ईश्वर में विषय का संग ही नहीं सक्ता त्याग प्राप्त का होता है जब ईश्वर में विषय आ ही नहीं सक्ता तो त्यागी कैसा ?

जैन

न खुद घट घट में जाता हो मगर घट २ का ज्ञाता हो ।

समीक्षा

किस प्रमाण से घट २ का ज्ञाता हो यदि कहो प्रत्यक्ष प्रमाण से तो एक देशी सब को प्रत्यक्ष कर नहीं सक्ता यदि कहो अनुमान से तो विना प्रत्यक्ष के व्याप्ति नहीं और विना व्याप्ति के अनुमान हो नहीं सक्ता यदि कहो शब्द प्रमाण से तो ईश्वर से बढ़कर आप्त पुरुष कौन है जिस से ईश्वर को ज्ञान हो जैन लोग ईश्वर जिनेन्द्र जिनवर आदि को एक देशी और सर्वज्ञ मानते हैं जो असम्भव है जो प्रमाण से सिद्ध नहीं हो सक्ता यदि किसी जैन विद्वान् में साहस है तो अपने कल्पित जिनेन्द्र और ईश्वर को सत्य प्रमाणों से सिद्ध करे इस में न हेतु है न उदाहरण ।

समीक्षा

सत का लक्षण कीजिये जो निर्दोष हो क्या उपदेश देना क्रिया नहीं ऐसा ईश्वर हो यह तो

आप के मन की कल्पना है इस प्रकार के ईश्वर की सत्ता प्रमाणोंसे सिद्ध कीजिये यदि सत्ता सिद्ध होगई तो जैनियों का ईश्वर ऐसा कह सक्ते हैं यदि सिद्ध न हुआ तो मानना पड़ेगा कि जैनियों का ईश्वर कल्पित है-

जैन

न करता हो न हरता हो नहीं अवतार धरता हो ।
मारता हो न मारता हो जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥

समीक्षा

क्या शक्ति शून्य हो या शक्तिवान् यदि शक्तिशून्य है तो असमर्थ को ईश्वर कहना अविद्या है यदि शक्तिवान् है तो शक्ति निष्फल खोने वाला है जो ज्ञानी कहला नहीं सक्ता क्योंकि जो अपनी शक्ति को निष्फल खोवे वह मूर्ख है ईश्वर के सर्वव्यापक होने से अवतार की आवश्यकता ही नहीं जहां ईश्वर न हो वहां उस का अवतार काम करे जो लोग ईश्वर को सर्वव्यापक मानते हैं वह ईश्वर का अवतार नहीं मानते जो लोग जैनियों की भांति

ईश्वर को एक देशी मानते हैं वही अवतार मानते हैं मरते प्राणधारी हैं जब अनन्त है तो वह स्वयं कैसे मर सका है कोई जीव स्वयं तो शरीर छोड़ना नहीं चाहता दुखी जीव भी इस आशा पर कि कभी सुख होगा जीना चाहते ईश्वर मारे नहीं तो कर्मों के फल से जीव कैसे मरे।

जैन

ज्ञान के नूर से पुरनूर हो जिसका नहीं सानी।
सरासर नूर नूरानी जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

समीक्षा:—

क्या जैनियों में जहां अनन्त भव्य जीव ईश्वर बन सके हैं कोई ऐसा ईश्वर भी है जिस का कोई सानी न हो यदि ऐसा है तो और मुक्त जीवों से उसका भेदक कौनसा गुण है जो दूसरे मुक्त जीवों में नहीं ऐसे ईश्वर की सत्ता प्रमाणों से सिद्ध कीजिए—

जैन

न क्रोधी हो न कामी हो न दुश्मन हो न हामी हो।
वह सारे जग का स्वामी हो जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

समीक्षा

क्रोध असमर्थ में होता है जब सर्वशक्ति सम्पन्न है तो उस में क्रोध कैसे होगा दुश्मन उसे कहते हैं जो बाधक हो क्या ईश्वर पाप का भी बाधक नहीं हामी साधक को कहते हैं क्या ईश्वर धर्म्म का भी साधक नहीं यदि सारे जगत् का स्वामी हो तो उसका क्या अधिकार हो क्योंकि स्वामी के दो काम हैं रक्षा और पालन यदि यह दोनों कार्य्य करे तो हामी हो जाय आप चाहते हैं स्वामी तो हो और हामी न हो आपकी यह कल्पना असम्भव है जिसको आपने शब्दार्थ की अनभिज्ञता से लिख मारा हामी शब्द फ़ारसी का है और स्वामी संस्कृत का है अर्थ दोनों का एक सा होते हैं एकार्थवाची दो शब्द लिखकर एक की सत्ता

मानना दूसरे से इनकार करना अविद्या है ।

जैन

वह जात पाक हो दुनियां के झगड़ों से मुबर्रा हो।
आलमुलग़ैब हो बे ऐब हो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

समीक्षा

ईश्वर जब कि सब से सूक्ष्म है तो उस में अपवित्रता आ कैसे सकती है और दुनिया के झगड़े अहंकार और शरीरधारी एक देशियों के लिये होते हैं जो सर्वव्यापक और अहंकार शून्य होगा उसको दुनियां के झगड़े कैसे लग सकते हैं जिससे कोई वस्तु छिपी हो वह आलिमुलग़ैब हो सकता है जिसका एक देशी होना आवश्यक है ईश्वर के लिये एक देशी होना भी ऐब है अतः बे ऐब कैसे हो सकता है।

जैन

दयामय शान्ति रस हो परम वैराग्य मुद्रा हो।
न जाबिर हो न काहिर हो जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

समीक्षा

इस से ईश्वर का मूर्तिमान् होना पाया जाता है क्योंकि निराकार की मुद्रा तो हो नहीं सकती और जो साकार है वह ईश्वर हो नहीं सकता ईश्वर के आत्मा में शान्ति हो मन में व शरीर में हो यदि कहो आत्मा में तो आत्मा में अशांति किस के नहीं आती यदि कहो मन में तो पहिले ईश्वर का मनसिद्ध कीजिये।

जैन

निरंजन निर्विकारी हो निजानन्द रस विहारी हो।
सदा कल्याणकारी हो जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

समीक्षा

जब जैनियों का ईश्वर वीतराग होने से बनता है तो वह मंद हो ही नहीं सकता जब वह स्वयं सदा नहीं तो सदा कल्याणकारी कैसे हो सकता है जिस की उत्पत्ति साधनों से होती है उस का नाश अवश्य होता है एक किनारे की नदी और एक सीमा

वाला मकान जगत् में है ही नहीं यदि दृष्टांत मिल जावे कि कोई कार्य सदा रह सकता हो तो जैनियों की कल्पना सम्भव हो सकती है।

जैन

न जग जंजाल रचता हो करमफल का न दाता हो।
वह सब बातों का ज्ञाता हो जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

समीक्षा

ज्ञान का फल कर्म होता है जिस कर्म की सामर्थ्य ही नहीं उस को सब चीज़ोंके ज्ञाता होने से क्या फल दूसरे एक देशी सब चीज़ों को जान कैसे सकता है यह असम्भव कल्पना जैनियों को शोभा देती है कोई बुद्धिमान् तो इस को स्वीकार नहीं कर सकता न कोई जैन प्रमाणों ही से ईश्वर की सत्ता सिद्ध कर सकता है।

जैन

वह सचिदानंद रूपी हो ज्ञानमय शिवस्वरूपी हो।
आप कल्याणरूपी हो जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

समीक्षा

इधर तो जैन ईश्वर को बनाते हैं उधर सच्चिदानंद बतलाते हैं यह परस्पर विरोध प्रत्यक्ष है क्यों कि सत् कहते हैं जो तीन काल में एकसा रहे जो बनता है वह बनने से पूर्वकाल में नहीं इस लिये वह सत् के लक्षण में नहीं आ सकता अंतः जैनियों का बना हुआ ईश्वर सत् नहीं जब सत् ही नहीं तो सच्चिदानन्द रूपी कैसे हो सकता है उस का ज्ञान भी उत्पन्न होता है इस लिये ज्ञानमय भी नहीं जिस कारण वह जीव से बना है इस लिये निर्विकार नहीं आनन्दस्वरूप जीव हो ही नहीं सकता जैसा कि वेदान्त दर्शन में युक्तियों से सिद्ध किया है ।

नेतरोनुपपत्तेः ॥

अर्थः—ब्रह्म से भिन्न जीव कभी आनन्दमय सिद्ध नहीं हो सकता जैनलोग जीव का स्वभाव आनन्द मानते हैं जो किसी प्रमाण से सिद्ध नहीं हो सकता शिव स्वरूप का जैनमत में क्या लक्षण और कल्याणरूप

जैन सिद्धांत में किस को कहते हैं यह दोनों शब्द संस्कृत के हैं जो इन का अर्थ है वह तो जैनियों को इष्ट नहीं।

जैन

जिस ईश्वर के ध्यान सेती बने ईश्वर कहे न्यामत।
वही ईश्वर हमारा है जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

जैनियों कि एक न्यामत आचार्य्य हैं जिन्हों ने यह परस्पर विरुद्ध और बे तुकी ईश्वर की कल्पना की है यदि ईश्वर के ध्यान से ईश्वर बनता है तो वह ईश्वर किसी और ईश्वर के ध्यान से बना होगा अतः जैनियों के ईश्वर की सत्ता अनवस्था दोषग्रस्त है जिससे सिद्ध है कि जैनियों का ईश्वर सच्चिदानन्द नहीं यह शब्द कल्पित है केवल दूसरों को धोखे में डालने के वास्ते है जिससे कोई इनको अनीश्वरवादी न कहे जैन लोग न तो ईश्वर को मानते हैं और न जानते हैं इसलिये असम्भव कल्पना करके कहते हैं कि हमारा यह ईश्वर है हमारा भारतवर्ष के समस्त जैन विद्वानों को खुला चैलेञ्ज है कि वह कल्पित और

अनवस्था दोषग्रस्त ईश्वर को प्रमाणों से सच्चिदानंद सिद्ध करें जैसा कि उन्हों ने लिखा है वरन अपने को ईश्वरवादी कहना छोड़दें ।

जैनियों में जब कोई स्थिर ईश्वर है ही नहीं सब ईश्वर अनवस्था दोषग्रस्त और बने हुये हैं तो वह जगत्कर्त्ता कैसे हो सकते हैं जगत्कर्त्ता नित्य ईश्वर दूसरा है और जैनियों के कल्पित ईश्वर दूसरे हैं उस का प्रयोजन यह है कि जैन जो ईश्वर को जगत्-कर्त्ता नहीं मानते वह अपने कल्पित ईश्वरों को जो मुक्त जीव हैं जगत् कर्त्ता नहीं मानते मुक्त जीव को जगत्कर्त्ता कोई मत वाला नहीं मानता ।

ओ३म् शम्-

ओ३म्

वेदों की आवश्यकता

ट्रैक्ट नं० १

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती कृत

जिसको

प्रबन्धकर्त्ता वैदिकधर्मप्रचारक मण्डली

ने

वैदिकयन्त्रालय

अजमेर में

छपवा कर प्रकाशित किया

प्रथमबार ५००० | जुलाई १९०२ | मूल्य)॥

मनुष्य जब संसार के पदार्थों को सूक्ष्मदृष्टि से करके देखता है तब उस को निश्चय हो जाता है कि संसार के जितने रोग हैं उन सब की औषधि है और जितनी औषधि हैं वह किसी न किसी रोग के लिये उपयोगी हैं जब तक मनुष्य इसबात को न जानले कि इस समय इस रोग के कारण औषधि की आवश्यक्ता है तब तक उसकी प्रवृत्ति उस औषधि के सम्पादन करने में नहीं होती और जब तक मनुष्य यह न जानले कि मुझे अमुक रोग है तब तक वह उसकी निवृत्ति के उपायों को नहीं विचारता यद्यपि वह औषधि उसके पासही पड़ी हो तो भी आवश्यक्ता के न जानने से वह उसको ग्रहण नहीं करता इससे विचारशील का काम है कि प्रथम रोग अर्थात् वस्तु की आवश्यकता पश्चात् वस्तु के गुण तदनन्तर उससे रोग की निवृत्ति अच्छे प्रकार से समझाकर वस्तु के देने की चेष्टा करे, नहीं तो वस्तु के दान से अभीष्ट फल सिद्धि न होगी इसकारण हम प्रथम मनुष्यों की आवश्यकता को प्रगट करेंगे।

मनुष्यों का रोग।

अब हम संसार में देखते हैं कि अन्न संसार के जीवों का प्राणस्वरूप है और प्राचीन विद्वानों ने भी उसको मनुष्यों

का प्राण माना है "अन्नं वै प्राणः" स्मृति वाक्य से तो हम निश्चय ही करते हैं कि अन्न मनुष्यों का प्राण है परन्तु जब कोई मनुष्य कच्चा अन्न खा जाता है तो बहुधा अपचि रोग हो जाता है जब अन्न अधिक खा जाता है तो विशूचिका आदि रोगों से प्राणों का नाशक प्रतीत होने लगता है उस समय उपरोक्त सिद्धान्त से विमुख वृत्ति हो जाती है जब हम सुनते हैं "आज्यं वै बलम्, आज्यं वै आयुः आज्यं वै प्राणः" अर्थात् घृत ही जीवों को बलदायक है। घृतही जीवों की आयु है घृत ही जीवों का प्राण है तो घृत का सेवन आवश्यक प्रतीत होने लगता है परन्तु जब कोई ज्वर पीड़ित मनुष्य घृत का सेवन करता है उस समय घृत उसे बलवान् नहीं बनाता किन्तु विषमज्वर अर्थात् (तपेदिक़) करके उसके बल का नाशक, आयु का नाशक और प्राणों का नाशक हो जाता है वा घृत खा कर पानी पीलो तो (काशरोग) अर्थात् खांसी उत्पन्न हो जाती है। इसको देखकर घृत खाने में अश्रद्धा हो जाती है। अब लीजिये विष अर्थात् संखिया जो मनुष्यों को प्राणनाशक प्रतीत होता है जिसको प्राणनाशक समझ कर राज्य ने भी उसका बेचना बंद कर दिया है परन्तु जब वही संखिया वैद्यकशास्त्र की रीति से शुद्ध कर के खाया जाता है तो बड़े२ प्राणनाशक रोगों को नाश करके जीवों को अमृत के तुल्य गुणकारी प्रतीत होने लगता है पाठकगण ! उक्त दृष्टान्तों से निश्चय हो जाता है कि कोई भी पदार्थ इस संसार में जीव के लिये उपकारक नहीं और न हानिकारक है किन्तु पदार्थों

को तत्वज्ञान अर्थात् यथार्थ ज्ञान कर उसके गुण
क्रिया को जानकर उस का बरताव करना लाभकारक है और
इससे विरुद्ध मिथ्याज्ञान के आश्रय उसका ग्रहण हानिका-
रक है।

प्रियपाठको ! जब हमें किसी अंधकारमय स्थान में जाने
का अवसर मिलता है तो भयदायक वस्तु के न होने पर भी
चित्त का भय दूर नहीं होता जब प्रकाश में सिंह सर्पादि
भयानक जीवों को देखते हैं तो उनकी अवस्था को जानकर
हमारा भय बहुत ही न्यून हो जाता है इससे भी निश्चय हो-
ता है कि मनुष्य को अज्ञान ही भयकारक है अज्ञान के नाश
से मनुष्य का भय भी नाश हो जाता है बहुधा हम देखते हैं
कि एक मनुष्य बलिष्ट पशुओं की मण्डली को एक सोटा
हाथ में लिये अपने आधीन करके जिधर चाहता है उधर
ले जाता है परन्तु वह दो मनुष्यों को उस सोटे से अपने आ-
धीन नहीं कर सक्ता यह सब बातें प्रत्यक्ष जतला रही हैं
कि ज्ञान का न होना बड़ी हानि का कारण है मनुष्यों को
इसी ने परतंत्र कर रक्खा है यही मनुष्यों के दुःखों का आधार
है पाठकगण ! आप यह भी जानते हैं कि जीव अल्पज्ञ है और
प्रकृति विभु है तो प्रकृति का तत्व जीव को पूर्णतया होना
असम्भव है इससे जीव कभी सुखी नहीं हो सकेगा और
प्राचीन शास्त्रों ने भी इस बात को प्रतिपादन किया है कि
मनुष्य मिथ्याज्ञान से बद्ध होता है जैसा महात्मा महामु-
नि कपिल जी ने अपने सांख्य शास्त्र में दिखलाया है।

"बंधो विपर्ययात् ।"

अर्थ—विपर्य्यय अर्थात् विपरीत ज्ञान ही बंध का हेतु अर्थात् कारण है क्योंकि प्रकृति के अविवेक से जब जीव को प्राकृत पदार्थों में यह भ्रम उत्पन्न होजाता है कि यह पदार्थ मेरी आत्मा के अनुकूल अर्थात् सुखकारक है और यह पदार्थ प्रतिकूल अर्थात् दुःखकारक है तो जिन पदार्थों को आत्मा के अनुकूल समझा है उनके ग्रहण करने की इच्छा उत्पन्न होती है और उस पदार्थ के उपादान करने अर्थात् प्राप्त करने में मनुष्य यत्न करता है वह यत्न से उत्पन्न हुआ कर्म धर्माधर्म रूप फल को उत्पन्न करता है और उस फल को भोगने के वास्ते जन्म मरण अर्थात् शरीर के संयोग वियोग को प्राप्त होता रहता है और इस रोग की औषधि तत्वज्ञान के बिना दूसरी नहीं जिस प्रकार रज्जु में सर्प की भ्रांति से जो भय उत्पन्न होता है उसकी निवृत्ति का उपाय बिना प्रकाश में रज्जु को रज्जु जाने दूसरा नहीं और महर्षि पतञ्जलि ने भी अपने योगशास्त्र में लिखा है ।

"अविद्याऽस्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः पंचक्लेशाः"

अविद्या अर्थात् जिससे पदार्थ के तत्वस्वरूप को न जान कर भ्रम से अन्य में अन्य निश्चय करना इत्यादि और भी सब महात्माओं की सम्मति में मिथ्याज्ञान ही मनुष्यों का रोग है जिसके नाश से मनुष्य शांतिसुख को लाभ कर

सकता है और इस रोग की औषधि सिवाय . . .
चन के दूसरी नहीं क्योंकि जब तक जीव अपने स्वरूप
प्रकृति के, स्वरूप और स्वभाव को न जानले और अपने अभीष्ट
आनन्द के अधिकरण अर्थात् आश्रय को न समझले तबतक
जीव के दुःख की निवृत्ति होना असम्भव है।

प्रियपाठको! हमारे महात्मा योगीश्वरों ने भी इसको पुष्ट
किया है।

"ज्ञानात् मुक्तिः।"

अर्थात् मुक्ति नाम त्रिविध दुःखनिवृत्ति ज्ञान ही से हो-
ती है और महामुनि गौतम जी ने अपने शास्त्र के आरम्भ में
ही सिद्धांत कर दिया है।

"प्रमाणप्रमेयसंशयप्रयोजनदृष्टांतसिद्धांताव-
यवतर्कनिर्णयवादजल्पवितण्डाहेत्वाभासच्छलजा-
तिनिग्रहस्थानानांतत्वज्ञानान्निःश्रेयसाधिगमः"
न्या० अ० १ पा० १ सू० १॥

अर्थ-प्रमाण जिससे वस्तु का यथार्थ ज्ञान होता है। प्रमेय,
जिसका ज्ञान प्रमाण से हो। संशय, जहां सामान्य ज्ञान हो
परन्तु प्रमाण के अभाव से निश्चित ज्ञान न हो। प्रयोजन, जिस
अर्थ की इच्छा को धारण करके कार्य्य में प्रवृत्ति होती है।

दृष्टान्त, जिस में लौकिक और परीक्षकों की बुद्धि समान हो। सिद्धान्त, जो प्रतिपक्षी के साथ वाद करके अन्तिम व्यवस्था ठहरे इत्यादि और सब सोलह पदार्थों के तत्त्वज्ञान से निःश्रेयस अर्थात् मुक्ति प्राप्त होती है क्योंकि जब प्रमाणादि द्वारा जीव को यह निश्चय होजाता है कि अमुक पदार्थ मेरे आत्मा के अनुकूल अमुक प्रतिकूल है तो सत्य काय्यों में प्रवृत्ति होती है जिसके भोगने के लिये जन्म की आवश्यकता नहीं होती इसी प्रकार जब जीव अपने प्रकृति तथा ईश्वर के गुणों का ठीक ठीक निश्चय कर लेता है तब वह हिताहित को ठीक साधन कर लेता है जिस प्रकार आजकल जुगराफिये और नकशों के द्वारा हमको हरएक नगर देश समुद्र झीलादि का यथार्थज्ञान उपकारदृष्टि से हमारी न्यायशील सरकार ने विनाश्रय घर बैठे सिखला दिया है और यह भी प्रगट कर दिया कि अमुक नगर में यह वस्तु उत्पन्न होती वहां के लोगों का यह मत है उन की यह रीति है जब मनुष्य इस प्रकार जान लेता है कि अमुक देशवासियों का यह धर्म है ऐसा स्वभाव है ऐसा धन है, ऐसे कारीगर हैं उनका ऐसा चाल चलन है इत्यादि बातों को जान कर उसको अपने अभीष्ट की सिद्धि का ज्ञान जिस स्थल से प्रतीत होता है वह वहीं जाता है अन्यथा व्यर्थ भ्रमण करके अपनी आयु का नाश नहीं करता इसी प्रकार उस परमात्मा की दयालुता से प्रकृति का पूरा नकशा जिसके जानने से प्रकृति के पूरे सिद्धान्त को जानकर अपने आत्मा के अनुकूल वा प्रतिकूल न जानकर

हेय उपादेय रूप वृत्ति को इसमें न फंसा कर अपने अभीष्ट आनन्द के लिये यत्न करता है और यह पूर्ण विवेकी ज्ञान के आश्रय अभीष्ट का प्राप्त करके अतीव दुख को प्राप्त होता।

क्योंकि यह तो सामान्य पुरुष भी नहीं चाहता कि विना प्रयोजन के पक्षपात करके अपने नाम को कलंकित करे तो ईश्वर में यह संदेह ही नहीं हो सकता प्यारे पाठको! संसार में कर्मों के फल के विना कोई भी सुखी दुखी नहीं होता और जब तक कर्मों का विधि निषेध निश्चय न होजाय तब तक उन कर्मों में प्रीति नहीं होती इससे भी ज्ञात होता है कि कर्मों की विधि निषेध का ज्ञान ईश्वर ने जीवों को दिया है।

प्यारे परीक्षकजनो! यह तो आप ठीक रीति से समझते हैं कि जो मनुष्य जिस वस्तु वा कौशल को बनाता है जब तक उसको यथार्थ वरतने की विधि मुख से वा लेख से न बतलादे तब तक उसका यथार्थ वर्ताव किसी को भी नहीं आता और यह भी हम देखते हैं कि हमारे सामने जो घड़ियें अमरीका वा यूरुप देश से आती हैं जब तक उसको कुंजी लगाने का समय वा विधि और सूइयों के घटाने बढ़ाने के नियम तेज और धीमा करने का विचार हमको न विदित होवे तब तक उस घड़ी से हम यथार्थ प्रयोजन सिद्ध नहीं कर सकते और न हम इस वस्तु के बिगड़ने से दोषी ठहराये जा सक्ते हैं हम जगत् में देखते हैं कि जहां हम विना देखे थोड़ी दूर भी चले

यहाँ ठोकर खाई जो जतलाती हैं कि ईश्वर ने जो तुम्हें आंखें देने से देखकर चलने की आज्ञा दी थी उसको भङ्ग करने का यह फल है।

प्यारे पाठको! इसीप्रकार जब ईश्वर के दिये हुये इन्द्रियों के नियमों को तोड़कर प्रत्यक्ष में दुःख उठाते हैं इससे यह अनुमान सिद्ध है कि वर्त्तमान दुःख भी पूर्व में जो ईश्वर आज्ञा उल्लंघन की हैं उनका फल है।

महाशयगण! जब यह निश्चय होगया कि दुःख ईश्वर आज्ञा उल्लंघन का फल है तो यह बात छिपी नहीं रहती कि ईश्वर ने हमें क्या आज्ञा दी है अब ईश्वर आज्ञा को हम उसके दिये नियमों तथा विधि निषेध रूपी वेदों से पाते हैं।

प्यारे पाठको! जब निश्चय हो चुका तो हम उन पुस्तकों की जिनको संसार में ईश्वर आज्ञा मानते हैं परीक्षा करने के लिये उद्योग करते हैं।

प्यारेपाठको! वेदों को छोड़कर बाकी ४ पुस्तकें तौरेत ज़बूर इंजील कुरान को अधिकांश लोग ईश्वर आज्ञा के नाम से पुकारते हैं।

पहिली पुस्तक तौरेत तो मूसा के समय में उतरी विचार यह उत्पन्न होगा कि मूसा से पहिले लोगों को विधि निषेध

का ज्ञान किसप्रकार से होता था और आदम से लेकर मूसा तक ईश्वर आज्ञा संसार में थी वा नहीं और मूसा से पहिले संसार में कौन बात न थी जिसके लिये ईश्वरीय पुस्तक की आवश्यकता थी जिसको तौरेत ने पूरा किया इसका उत्तर यथार्थ देना अति कठिन है।

प्यारे पाठको! यदि दुर्जनतोष न्याय से यह भी मान लें कि तौरेत की आवश्यकता थी तो तौरेत में क्या न्यूनता थी? जिसको पूरा करने के लिये ज़बूर की आवश्यकता हुई और तौरेत के बनाने वाले को उस आवश्यकता का ज्ञान पूर्व था वा नहीं यदि था तो पाहिले क्यों न लिखा और आदम से लेकर दाऊद तक मनुष्यों का जीवन अधूरेपन में गया और उनको ईश्वर की यथार्थ आज्ञाओं को न पालन से वंचित रह कर जो दुःख उठाना पड़ा इसका दोष किसपर आवेगा? तौरेत के बनाने वाले पर।

प्यारे पाठको! संसार में दो प्रकार का ज्ञान प्रतीत होता है एक तो सामान्य ज्ञान दूसरा विशेष ज्ञान। सामान्य ज्ञान तो जीव के स्वभाव से ही रहता है क्योंकि जीव अल्पज्ञ है अर्थात् नियमित ज्ञान स्वभाव से समस्त जीवों में रहताहै परन्तु विशेष ज्ञान बिना किसी निमित्त से नहीं हो सकता। खाना सोना रोना इत्यादिक जो कार्य्य पशु पक्षी सर्पादि सब योनियों में रहता है वह स्वाभाविक है परन्तु हरएक योनि में जो विशेष ज्ञान है वह किसी निमित्त अर्थात् दूसरे के सिखाने से प्राप्त होता है।

मित्रवर्गो! अब हम समस्त जीवों से मनुष्यों की तुलना करते हैं उस समय समस्त जीवों में भोगशक्ति को पाते हैं जैसे-गौ, भैंस अश्वादिक पशु-तथा हंसादिक पक्षी वा सर्पादिक तिर्य्यक् जीव, अन्नादि पदार्थों को भोगते हैं परन्तु उनको अन्नादिक पदार्थों की वृद्धि तथा उत्पत्ति करने का ज्ञान नहीं प्रतीत होता। इससे ज्ञात होता है कि जीव स्वभाव से वर्तमान अवस्था का ज्ञान रखता है किन्तु जब हम मनुष्यों में कर्तृत्व शक्ति अर्थात् कर्मों के करने की सामर्थ्य को विचारदृष्टि से विचारते हैं तो यह सामर्थ अन्य जीवों में न पाकर हमें विश्वास होता है कि यह शक्ति किसी निमित्त से उत्पन्न हुई है और जब हम अशिक्षित पुरुषों को देखते हैं तो वे भी कर्तृत्व शक्ति से शून्य ही प्रतीत होते हैं इससे स्पष्ट ज्ञान होता है कि करने की सामर्थ्य प्राप्ति मनुष्यों को शिक्षा से हुई है अब यह विचार उत्पन्न होता है कि मनुष्यों को शिक्षा किससे प्राप्त हुई बहुत लोग तो कहेंगे कि शिक्षा जीवों के परस्पर मेल से उत्पन्न होती है क्योंकि बहुतों की अल्पज्ञता या सामान्य ज्ञान मिल कर बहुज्ञता या विशेष ज्ञान उत्पन्न होजाता है परन्तु तत्वदृष्टि के विचार से यह मिथ्या प्रतीत होता है जैसे दियासलाई में सामान्य अग्नि है और रगड़ने से विशेषाग्नि प्रगट होती है तो रगड़ना निमित्त ही विशेषाग्नि का उत्पादक प्रतीत होता है और डिब्बी में सौ दियासलाइयों के योग से विशेषाग्नि का उत्पन्न करने वाला निमित्त कारण नहीं जब एक सलाई में विशेषाग्नि प्रगट होजाती है तो वह बहुतसी वस्तुओं को

यह शक्ति दे सकती है इसी प्रकार जब तक जीव को शिक्षा प्राप्त न होगी तबतक उसमें यह सामर्थ्य न होगी।

प्रियपाठको ! कुछ लोग यह कहते हैं कि जीवात्मा नित्य प्रति उन्नति करता है इससे काल पाकर सर्वज्ञ हो जायगा परन्तु उनका यह सिद्धान्त ठीक नहीं क्योंकि जीवात्मा ज्ञान विषय कभी भी विना निमित्त उन्नति नहीं कर सक्ता इस में हेतु यह है कि कोई वस्तु भी उन्नति नहीं करती किंतु अपने उपयोगी अवयवों को प्रकृति से ग्रहण करती है उसको मूढ़ पुरुष उसकी उन्नति मानता है किन्तु गुणों के उचित सहकारी निमित्त को पाकर अधिक हो जाती है परन्तु देश कालादिक तथा प्रकृति यह सब ज्ञान से शून्य हैं इनसे सर्वज्ञता का मिलना असम्भव है बहुत से भाई यहां पर यह शंका करेंगे कि जीव जहां जायगा वहां के पदार्थों को देखकर अपनी ज्ञान शक्ति को विना किसी निमित्त के बढ़ा सकता है, परन्तु यह शंका भी असंगत ही है क्योंकि सूर्य के निमित्त से चक्षु में प्रत्यक्ष पदार्थों के देखने की शक्ति अधिकांश हो जाती है इससे रूप ज्ञान तो होगया परन्तु विशेष ज्ञान का अभाव ही रहा और यह शक्ति सब जीवों में स्वतः उपस्थित है इसको तुम विशेष ज्ञान नहीं कहसकते क्योंकि संसार के पशु पक्षी रूप ज्ञान को प्राप्त हैं किन्तु प्रत्यक्ष में अतिरिक्त अनुमानादि जन्म ज्ञान जिससे कार्य्य को देखकर कारण का बोध और लिंग को देखकर लिंगी का बोध होता तथा नित्य के व्यवहारों

से अनुभव बिना शिक्षा के प्राप्त नहीं होता इसलिये अवश्य अनुमान होता है कि यह शिक्षा मनुष्य को कहीं से प्राप्त हुई है।

प्रियमित्रो! यह तो आप स्वीकार करते हैं कि जबतक आप किसी भृत्य वा सन्तान को किसी कार्य्य के करने की आज्ञा न दें और कुकर्म्मों के करने का निषेधयुक्त उपदेश न करें तबतक उसको किसी कर्म के करने न करने के लिये दोषी नहीं बना सकते और न उसको दण्ड दे सकते हैं यदि आप उसको दण्ड दें तो कोई भी आपको न्यायशील या भला नहीं कहेगा यदि आप किसी न्यायशील मनुष्य को किसी अपराधी को दण्ड देते देखेंगे तो आपको यह दो बातें ध्यान आवेंगी या तो उस अपराधी ने न्यायाधीश की आज्ञा को उल्लंघन किया है या वह न्यायाधीश अन्यायी है पहिली अवस्था में तो उसकी आज्ञा का प्रचार होना आवश्यक है॥

महाशयगण! अब आप विचारें कि संसार में जो करोड़ों जीव जो नाना प्रकार के दुःख पारहे हैं इन को देखकर समझदार मनुष्य या तो दुःख को पूर्व कर्म का फल समझेगा वा दुःखदाता ईश्वर को अन्यायी जानेगा किन्तु ईश्वर न्यायकारी है उसको अन्यायी कहना केवल मूर्खों का प्रलाप मात्र है हां यह सब मनुष्यों के पापों का फल है पाप ईश्वराज्ञा को उल्लंघन करने का नाम है इससे भी सिद्ध होता है कि ईश्वर ने अवश्य कोई आज्ञा दी है जिसके अनुसार चलकर मनुष्य

इन दुःखों से छूट सकता है जिसके विरुद्ध चलने ही से मनुष्य इन दुःखों से ग्रस्त हुआ है।

प्यारे भाइयो! जब इस प्रकार ईश्वर निर्मित नियम या आज्ञा या सत्यविद्या युक्त पुस्तक की आवश्यकता प्रतीत होती है और ईश्वर के न्यायादि गुणों से भी लक्ष्य होता है कि अवश्य उसने प्रकृति के नियमों को संसार में प्रचार किया है।

प्यारे पाठको! यदि हम यह मान लें कि संसार में ईश्वर आज्ञा प्रचलित है तो हमें उसका विचार करना पड़ता है कि ईश्वर आज्ञा के लक्षण क्या हैं या ईश्वर ने जो हमें वेदों का ज्ञान दिया है वह कैसा है? पहिला लक्षण हम आवश्यकता के अनुसार यह करते हैं कि "हिताहितसाधनताबोधकत्वं वेदत्वम्" अर्थात् जो हित जीवात्मा के अनुकूल और अहित जीवात्मा के प्रतिकूल साधनों का बोधक अर्थात् बतलानेवाला हो उसे वेद कहते हैं तो यह लक्षण सब ग्रन्थों में अतिव्याप्त होता है अर्थात् सब ग्रन्थ थोड़ी बहुत हित की विधि और अहित का निषेध लिये रहते हैं फिर लक्षण इस प्रकार करते हैं कि "हिताहितसाधनताबोधकानि चापुरुषवाक्यानि इति वेदाः" अर्थात् जो हिताहित का बोधक अपुरुषवाक्य अर्थात् किसी मनुष्य का कहा हुआ वाक्य नहीं उसे वेद कहते हैं अब नास्तिकों के ग्रन्थों और कुरान अंजील तौरेत ज़बूर इन पुस्तकों में अतिव्याप्ति होगी क्योंकि जैन

लोग अपने तीर्थंकरों को ईश्वर मानते हैं और मुसलमान लोग कुरान को ईश्वरीय पुस्तक मानते हैं ईसाई अंजील और यहूदी तौरेत और ज़बूर को, अब वेदों का लक्षण यह होगा "हिताहितसाधनताबोधकानि चापुरुषवाक्यानि ब्रह्मप्रतिपादकानि सृष्टिक्रमाविरुद्धानि इति वेदाः" इसमें जो अवस्था हिताहित ज्ञान का बोधक पुरुषवाक्य न हो ब्रह्म का प्रतिपादक हो और सृष्टिक्रम विरुद्ध न हो उसे वेद कहेंगे परन्तु वेद शब्दमय है शब्द को प्रमाण नहीं मानाजाता जबतक उसमें यह दोष पाये जावें जैसा महात्मा गौतमजी ने शब्द परीक्षा में लिखा है।

"तदप्रामाण्यमनृतव्याघातपुनरुक्तिदोषेभ्यः"

अर्थ—शब्द अप्रामाण्य है क्योंकि उसमें अनृत नाम झूंठा होना व्याघात नाम परस्पर विरुद्ध शब्द कभी सिद्धिदायक नहीं होता इस कारण उसको प्रमाण नहीं माना जाता क्योंकि ईश्वर सर्वज्ञ है वह अनृत वचन कभी नहीं कहता उसका कथन तत्वज्ञान के अनुकूल होता है इस कारण वेदों में यह दोष न होना चाहिये और सर्वज्ञ अपने पूर्व कथन को भूलकर उसके विरुद्ध भी नहीं कहता इस कारण व्याघात दोष भी वेदों में नहीं हो सकता और पुनरुक्ति भी अज्ञानी के कथन में हुआ करती है वेदों को इन दोषों से रहित गौतम आदि महात्मा ऋषियों ने अपने२ शास्त्रों में सिद्ध कर दिया है।

क्रमशः

ट्रैक्ट सोसाइटी वैदिकधर्मप्रचारकमण्डली गुरुकुल बदायूं के नियम ॥

१-यह ट्रैक्ट सोसाइटी वैदिकधर्म्म व देवनागरी प्रचार और गुरुकुल के लाभ के लिये जारी की जाती है।

२-जो महाशय २५) रुपये इस सुसाइटी की सहायतार्थ दान देंगे उनके नाम से एक देवनागरी ट्रैक्ट ५००० छपवाया जायगा जो गरीबों को मुफ्त और आम लोगों को)। में दिया जाग-गा। और जो मूल्य प्राप्त होगा वह गुरुकुल में खर्च किया जायगा।

३-जो महाशय ५००) रुपये गुरुकुल की सहायतार्थ दान देंगे उनके नाम से १००००० ट्रैक्ट छपवाकर जारी किया जाय-गा। जो मूल्य प्राप्त होगा उस से एक कमरा बनवाकर उस पर दानी महाशय के नाम का स्मारक चिन्ह लगाया जायगा।

४-जो महाशय देवनागरी प्रचार के अतिरिक्त वैदिक धर्म के प्रचार के लिये इस सोसाइटी को १०००) रु० ट्रैक्ट छप-वाने के लिये दान देंगे उनके नाम से १००० उर्दू ट्रैक्ट छप-वाया जायगा जिसकी मूल्य प्राप्ति गुरुकुल में खर्च होगी।

५-जो लोग बांटने के लिये)। वाला १००० ट्रैक्ट मंगवा-वेंगे उनको ८) रु० में १००० ट्रैक्ट और १०० मंगावेंगे उनको १) रु० में दिये जायेंगे।

६-जो किताब बेचने वाले इस सोसाइटी के एजेन्ट होना चाहें उनको फीसदी ४०) रु० दाखिल करना होगा और कमीशन ३०) फीसदी दिया जावेगा।

७-उधार मूल्य पर पुस्तकें किसी को नहीं दीजावेंगी और न यह सुसायटी किसी से उधार लेगी।

मैनेजर ट्रैक्ट सुसायटी गुरुकुल सूर्यकुंड बदायूं

ओ३म्

वेद किसपर प्रकट हुए

अर्थात्

ब्रह्माजी ने वेद रचे या अग्नि, वायु, आदित्य अंगिरा द्वारा परमात्मा ने प्रकट किये।

ट्रैक्ट नं० ५

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती जी कृत

जिसको

पं० शंकरदत्त शर्मा ने

अपने शर्मामेशीन प्रिंटिंग प्रेस मुरादाबाद में

छापकर प्रकाशित किया।

द्वितीयवार १००० | फरवरी १६१६ | मूल्य)॥

॥ ओ३म् ॥

॥ वेद किस पर प्रकट हुए ॥

प्यारे पाठक ! इस संसार में यह नियम प्रतीत होता है कि हरएक मनुष्य जिस प्रकार के संस्कार रखता है हर एक चीज़ के तत्त्व को उसी प्रकार का बताना अपना धर्म समझता है बहुत थोड़े मनुष्य हैं कि जिनको सत्य की जिज्ञासा हो और झूठ से घृणा करें परन्तु याद रखना चाहिये कि मनुष्य इस में बटोही के समान है और बटोही के वास्ते उचित है कि वह हर क़दम पर अपने पांव की ज़मीन छोड़े अगर वह उसी जगह पर खड़ा रहे, तो कभी अभीष्ट स्थान का मुंह नहीं देख सकता इसलिये जो मनुष्य बिना अनुसन्धान किये हठ करने के आग्रही होगये हैं उनको सत्य असत्य का कुछ विवेक नहीं रहता और वह अपने संस्कार एवं अविद्या के कारण सदा सत्य से विमुख रहा करते हैं ॥

प्यारे दर्शको ! आज मुझे मुन्शी इन्द्रमणि जी की बनाई हुई पुस्तक "वेदद्वारप्रकाश" एक सज्जन पुरुष के द्वारा मिली जिसको देखकर मैं चकित होगया कि संसार में ऐसे भी

मनुष्य उपस्थित हैं जो अशुद्धि करके दूसरों को भी अशुद्धि में डालते हैं और अपनी अशुद्धि को सच्ची और दूसरों की सच्ची बातको अशुद्ध करने का उपाय करते हैं, चूंकि ऐसे पुरुषोंके लेखोंसे सर्व साधारणको भ्रममें पड़ने का संदेह है इस वास्ते इसका उत्तर लिखना मुझे आवश्यकीय विदित हुआ ॥

मुन्शी साहब ने पहिले पृष्ठ में लिखा है इसके उपरान्त सत्य के जिज्ञासु और असत्य के जिज्ञासु पुरुषों को ज्ञात हो कि अनादि काल से ऋषि, मुनि, पण्डित और आचार्य एक मत होकर यह निश्चय करते चले आये हैं कि वेद हम को ब्रह्माजीके द्वारा मिला।

शोक! मुन्शी साहब ने आचार्यों का नाम तो लिखा परन्तु प्रमाण कोई भी नहीं दिया। प्यारे मित्रो! आज तक चारों वेदों का भाष्य केवल सायणाचार्य के और किसी ने नहीं किया शोक कि मुन्शीजी ने उसका भाष्य और भूमिका का दर्शन तक नहीं किया और यूंही लिख दिया कि सब आचार्य इस पर सहमत हैं। देखिये सायणाचार्य ऋग्वेद भाष्य की भूमिका में लिखते हैं देखो सायणभाष्य छापा मुम्बई पृष्ठ ३

जीवविशेषैरग्निवाय्वादित्यैर्वेदानामुत्पादितत्वात् ॥

जीव विशेष अग्नि वायु आदित्य को वदों का प्रकाशक होने से। महाशय सायणाचार्य खुद ही नहीं लिखता ऐतरेय ब्राह्मण का एक हवाला भी पेश करता है।

ऋग्वेदएवाग्नेरजायत यजुर्वेदो वायोःसामवेद आदित्यादैतरेय ब्राह्मण पञ्चम ॥३२॥

क्यों महाशय! क्या सायणाचार्य ब्रह्मा पर वेद उतरना मानता है या अग्नि वायु आदि ऋषियों पर, मुन्शीजी ने पुस्तकोंका विचार नहीं किया विना पढेलिखे लिखमारा कि सारे आचार्य इसपर एक मत हैं। मुन्शी जी ने एक भी आचार्य का नाम जिसने वेदों पर भाष्य किया हो, अपने प्रमाण में नहीं लिखा मुन्शी जी ने जो 'जनीप्रादुर्भावे' इस धातु को लेकर यह बात लिखी कि अग्नि वायु आदित्य ने इनका कर्मकाण्डमें प्रचार किया होगा। यह भी पुस्तकों के न देखने का फल है यदि आप आचार्यों की सम्मति को शास्त्रों में पढ़े होते, तो आप को यह झूंठा वहम न होता देखो सायणाचार्य लिखते हैं।

ईश्वरस्याग्न्यादिप्रेरकत्वेन निर्मातृत्वं द्रष्टव्यम् ॥

यहां पर मुन्शीजी का आचार्य तो अग्नि आदिका

प्रेरक होने से ईश्वर को वेद का निर्माता ठहराता है और मुन्शी जी इसके विरुद्ध अपनी कपोल कल्पना से ब्रह्मा से अग्नि वायु आदित्य का पढ़ना बतलाते हैं।

प्यारे पाठकगण! आप न्याय करें कि आचार्य्य की सम्मति के विरुद्ध स्वामीजी हैं या मुन्शीजी। जब सायणाचार्य चारों वेदों का भाष्यकर्त्ता मुन्शी जी की सम्मति को झूंठी बतला रहा है तो समझ लीजिये कि मुन्शीजी का यह कथन कि सब आचार्य उसपर सहमत हैं ठीक नहीं।

मुन्शीजी ने गायत्री उपनिषद् को भी नहीं देखा नहीं तो ज्ञात हो जाता कि ब्रह्मा वेदों से पैदा होता है अर्थात् वेद के पढ़ने से ब्रह्मा बनता है।

गायत्री उपनिषद्—वेदात् ब्रह्मा भवति ॥

जिसका अर्थ यह है कि वेदों से ब्रह्मा होता है न कि ब्रह्मा से वेद। जब कि अग्नि आदि से तो वेदों की उत्पत्ति मानी जाती है और वेदों से ब्रह्मा की, तो इस दशा में आपका लिखना किसी तरह मानने के योग्य ज्ञात नहीं होता।

पृष्ठ ५ मुन्शीजी ने स्वामीजी का लिखा हुआ शतपथ का एक वाक्य प्रस्तुत किया है।

अग्नेर्ऋग्वेदोऽजायत वायोर्यजुर्वेदः सूर्य्यात् सामवेदः

मुन्शी जी की इस पर ये शंका है कि 'वै' शब्द श्रुति में नहीं और 'सूर्यात्' की जगह आदित्यात् है प्यारे मित्रो! 'वै' और 'एव' पर्याय शब्द हैं और ऐतरेय ब्राह्मण की श्रुति में 'एव' शब्द विद्यमान है जिसके अर्थ निश्चय (यक़ीन) के हैं फिर आपका कहना किसतरह पर ठीक माना जासकता है क्योंकि सिद्धान्त में तो कुछ भी भेद न पाया रहा सूर्य और आदित्य ये भी पर्याय शब्द हैं इससे भी कुछ आपका कार्य सिद्ध न हुआ और जो आप कहते हैं 'अन्तरा' यत्' शब्द बढ़ाया है वह भी इस श्रुति में विद्यमान है।

और पृष्ठ १०में मुन्शी जी कहते हैं कि स्वामी जी ने जो अग्नि आदि को मर्षि लिखा है ये ठीक नहीं क्योंकि वेदोंमें इनको देवता कहा गया है कि जिसके प्रमाण में आप ये मन्त्र पेश करते हैं।

अग्निर्देवता वातोदेवता सूर्योदेवता चन्द्रमा देवता०

मुन्शीजी के इस लेख ने तो विदित करदिया कि सचमुच मुन्शीजी की राय को हठने अपना घर बना लिया था, क्योंकि उन्होंने जड़ वस्तु देवताओं के लिये जो वेदों में प्रमाण था बिना प्रसंग के उपस्थित किया। सायणाचार्य अपने भाष्य में तो अग्नि, वायु और आदित्य को जीव

विशेष बतला रहे हैं परन्तु मुन्शी जी उसके विरुद्ध समझ कर कि न तो चन्द्रमा जीव विशेष है न सूर्य जीव विशेष है किन्तु जड़ पदार्थ हैं उनको जीवों के स्थान में बता रहे हैं किन्तु पृष्ठ २५ में तो मुन्शीजी ने यही मन्त्र उद्धृत करके स्पष्ट लिखा है कि ब्रह्मा जी ने अग्नि वायु सूर्य आदि को पैदा किया क्या ही अच्छा होता कि मुन्शीजी इस लेख से पहिले इस श्रुति के अर्थों को गुरु से पढ़ लेते ।

तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूत आकाशाद्वायुर्वायोरग्निरग्नेरापः अद्भ्यः पृथिवी पृथिव्या ओषधयः ओषधिभ्योऽन्नम् अन्नाद्रेतः रेतस पुरुषः ।

प्यारे मित्रो !! चूंकि ब्रह्मा पुरुष हैं इस लिये वह अग्नि आदि वसु देवताओं से पीछे पैदा हुआ मुन्शी जी को इतना भी ख्याल न आया कि श्रुति के अनुकूल जल अग्नि के बाद पैदा हुआ और आप के ब्रह्मा जी बमूजिब पुराणों के कमल से पैदा हुये तब उनको चारों ओर जल ही जल नज़र आया भला अब सोचिये ब्रह्मा से पहिले जल और जल से पहिले अग्नि था या नहीं महाशय मुन्शीजी साहब जब कि शतपथ में अग्नि वायु आदित्य से वेदोत्पत्ति सिद्ध है और मनु ने भी इसको माना है।

अग्नि वायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम् ।
दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुः सामलक्षणम् ॥

ऐतरेय ब्राह्मण भी अग्नि वायु से वेदों का प्रादुर्भाव मानता है और गोपथ ब्राह्मण में भी ऐसा लिखा है ।

अग्नेर्ऋग्वेदं वायोर्यजुर्वेदमादित्यात् सामवेदम् ।

अग्नि से ऋग्वेद पैदा हुआ और वायु से यजुर्वेद और आदित्य से सामवेद पैदा हुआ जिससे स्पष्ट शब्दों में पाया जाता है कि अग्नि वायु आदित्य अङ्गिरा ऋषियों पर वेद उतरें । गोपथ ब्राह्मण में जो सिलसिला (क्रम, ब्रह्म परमात्मा से लेकर अग्नि वायु आदित्य अङ्गिरा तक प्रतिपादन किया गया है उसमें कहीं ब्रह्मा का नाम तक नहीं और अङ्गिरा को तो स्पष्ट शब्दों में ऋषि लिखा है जब कि अथर्व का पैदा या प्रकाश करना अङ्गिरा नामक ऋषि द्वारा है तो फिर किस तरह कहा जासकता है कि अग्नि आदिक ऋषि नही हैं और वेदों का प्रकाश सिवाय चेतन के हो नहीं सकता और भौतिक अग्नि वायु आदित्य अचेतन हैं हां अग्नि वायु आदित्य अङ्गिरा के लिये देवता शब्द भी आसकता है क्योंकि देवता विद्वान् का नाम है और भौतिक अग्नि वायु और सूर्य को भी दिव्यगुण वाला होने से देवता कह सकते

है गायत्री उपनिषद् से भी यही पाया जाता है कि वेद से ब्रह्मा बनता है यानी वेदाध्ययन से ब्रह्मा कहलाता है तो इस अवस्था में इन सारे पुस्तकों के प्रमाणों के विरुद्ध उपनिषद् का मुकाबला ही क्या है और उस श्रुति का अर्थ ये हो सकता है :—

यो वै ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै

जिसने ब्रह्मा को पूर्व काल में पैदा किया यानी चारों वेद अग्नि आदि के द्वारा उसको पढ़ा कर ब्रह्मा बनाया। अन्यथा वेदों के बिना तो वह ब्रह्मा हो नहीं सकता और पूर्व शब्द सापेक्ष्य है चूंकि श्वेताश्वतर के बनाने वाले से ब्रह्मा पहिले पैदा हुए इसी वास्ते इसके ये अर्थ नहीं कि वो सब से पहिले पैदा हुवे इसके वास्ते कोई मन्त्र प्रमाण नहीं

ब्रह्मा देवानां प्रथमो बभूव।

ब्रह्मा देवतों में पहिले पैदा हुआ जिसके प्रथम अर्थ होने के हैं जैसे किसी की योग्यता को देखकर कहा जाता है ये सबसे प्रथम है इसके अर्थ ये होते हैं कि ये सबसे योग्य है ब्रह्मा सम्पूर्ण विद्वानों से अधिक विद्वान् है इस वास्ते कहा गया कि ब्रह्मा देवतों में अव्वल नम्बर पर है या संसार में जिस कदर विद्वान् होंगे ब्रह्मा उन सब का शिखामणि होगा क्योंकि ब्रह्मा चारों वेद का ज्ञाता होता

है वाकी इससे कम होंगे इस वास्ते यहां प्रथम मनुष्य का वाचक नहीं किन्तु योग्यता का बतलाने वाला है।

और आपने जो मनु का अर्थ उलटा किया है ये आपकी जबरदस्ती है, धातु के अनेक अर्थ होने से क्या कोई विरुद्ध-अर्थ भी निकाल सकता है क्या कहीं दुह धातु दानार्थ में आज तक किसी ने प्रयोग की है यदि की है तो इसका उदाहरण दीजिए वरना इस झूठे दावे से बाज आइए यद्यपि व्याकरण में धातु यानी मसदर के अनेक अर्थ होते हैं परन्तु वे परस्पर विरुद्ध नहीं होसकते चूंकि देना और लेना परस्पर विरुद्ध है। कौन आदमी है जिसको कहा जावे कि गाय से दूध दुहा गया और अर्थ यह किए जावें कि गाय को दूध दिया मुन्शी जी ! यहां कुल्लुक भट्ट और स्वामी जी का अर्थ ठीक है और पञ्चमी विभक्ति है। आपने जो शास्त्रज्ञानशून्य होकर लिख मारा ये आपकी भूल है और आपने जो पाराशर सूत्र आदि के प्रमाण दिए हैं वह एक दूसरे के विरुद्ध होने से प्रमाण नहीं और असम्भव भी हैं क्योंकि कहीं आप सूर्य को पृष्ठ २६ पर ब्रह्मा जी का बेटा ठहराते हैं और कहीं पृष्ठ २७ में ब्रह्माजी के बेटे का दौहित्र बतलाते हैं। मुन्शी जी साहब ने जो ये लिखा है

कि अग्नि आदि की उत्पत्ति से पहिले ब्रह्माजीके पास वेद थे तो इसके लिए प्रमाण देना चाहिए नहीं तो आपका कहना कोई प्रमाण नहीं, और जो सांख्य का सूत्र आपने उपस्थित किया है वो ब्रह्मा को सृष्टि का आदि नहीं बतलाता किन्तु उसके ज्ञानवान् होने से तात्पर्य है सूत्र ये है—

आब्रह्म स्तम्बपर्यन्तं तत्कृते सृष्टिराविवेकात् ।

जिसका प्रयोजन यह है अर्थात् उच्चकोटि के ज्ञानी चारों वेदों के वक्ता ब्रह्मा से लेकर स्थावर तक जिस कदर सृष्टि है वो सब पुरुष के लिये है रही ये बात कि ब्रह्मा ने ब्रह्म विद्या अथर्वा आदि को पढ़ाई है उसका प्रयोजन यह है कि ब्रह्मविद्या से अभिप्राय उपनिषदों से है वेदों से नहीं क्योंकि ये क्रमशः ऋषियों ने ब्राह्मण ग्रन्थ बनाए और उपनिषदें भी ब्राह्मण ग्रन्थों से निकलीं जैसे बृहदारण्यक उपनिषद् शतपथ ब्राह्मण का एक कांड है इसलिए ये ग्रन्थ ब्रह्माजी ने ऋषियों को पढ़ाए मुन्शीजी ने जो प्रस्ताव किया है वो सरासर ऐतरेय ब्राह्मण के विरुद्ध है और सायणाचार्य्य की भी सम्मति के विपरीत है और गायत्री उपनिषद शतपथ के विरुद्ध होने से निश्चय अशुद्ध है।

और मुन्शी जी जो संज्ञा या नाम आदि का कारण

ब्रह्मा को मानकर ये लिखते हैं कि अग्नि वायु आदित्य आदि नाम ब्रह्मा जी ने रक्खे । ये स्पष्ट प्रसिद्ध है संज्ञा कर्म ब्राह्मण ग्रन्थों में हैं जैसा कि महर्षि कणाद वैशेषिक शास्त्र में लिखते हैं :-

ब्राह्मणे संज्ञा कर्म ०

अर्थात् संज्ञा आदि का प्रचार ब्राह्मण ग्रन्थों में है यदि मुन्शीजी ये कहें कि ब्रह्मा से पहिले अग्नि वायु आदित्य नाम किसने रक्खे हैं तो मैं कहता हूं "ब्रह्मा" यह नाम किस तरह रक्खा गया यह शंका दोनों तर्फ बराबर है

शोक ! मुन्शीजी को लिखते समय आग्रह के कारण आगा पीछा स्मरण न रहा एक जगह खुद अग्नि को तपस्वी लिखा और दूसरी जगह उनके ऋषि होने पर शंका की और कहा कि वेदोंमें देवता माने गये हैं ऋषि नहीं ॥

प्यारे पाठकगण । इसी तरह पर आदमी जब तक किसी वस्तु के तत्त्व को न जाने तब तक उसे यथार्थता से उसका ज्ञान नहीं होता और जब तक ठीक ज्ञान न हो तब तक उस पर अमल नहीं होसकता है और जब तक अमल न हो तबतक आत्माको शान्ति नहीं होती, जब तक आत्मा को शान्ति न हो तब तक मनुष्य हठ और दुराग्रह से बच

नहीं सकता और उसको पुराने संस्कारों के अनुकूल सदैव अविद्या से कष्ट होता है और दूसरे जो अविद्या से स्वार्थता उत्पन्न होजाती है उसकी चिकित्सा भी विद्या है मैंने जहां तक पुस्तकों को देखा तो उनमें अग्नि वायु अङ्गिरा आदित्य पर ही वेदों का उतरना बताया गया है और ये ठीक भी है कि जो ऋषि सृष्टि के आदि में पैदा होते हैं उनको मुक्ति से लौटने के कारण शुद्ध संस्कार और समझने की शक्ति होती है और उन्हीं के आत्मा में परमात्मा वेदोंका उपदेश करते हैं और ब्रह्मातो चारों वेदों के जानने वालेका नाम है वो हर एक यज्ञ में अपनी योग्यतानुसार बनाया जाता है इस वास्ते ब्रह्मा के सदैव बनने से और अग्नि आदि के सृष्टि के आदि में पैदा होने से मालूम होता है कि वेदोंका प्रकाश इन्हीं महात्माओं पर हुआ इस वास्ते वेदों के हर एक भाष्यकार ने वेदों का अग्नि वायु आदित्य अङ्गिरा ऋषियों पर उतरना माना है ब्रह्मा पर नहीं ॥

प्यारे पाठकगण ! जब तक हमें प्रामाणिक ग्रन्थों से इस बात का प्रमाण न मिल जावे तो किस तरह कोई बुद्धिमान पुरुष उसको मान सकता है और वेदानुकूल

प्रामाणिक ग्रन्थोंमें ब्रह्मा पर वेदों के उतरने का कहीं गन्ध भी नहीं इस लिये स्वीकार करना पड़ता है कि वेद अग्नि वायु आदित्य अङ्गिरा पर उतरे जब तक विपक्षी लोग कोई पुष्ट प्रमाण उसके खण्डन में न देवें निस्सन्देह प्रत्येक मनुष्य को ये ही मानना पड़ता है ॥

प्यारे पाठकगण! आप उद्योग करें कि संसार में वेदों का प्रचार अधिक हो ताकि वेद के वे सिद्धान्त जो आज साधारण लोगों पर विदित न होने से उपयोगी होने पर भी संसार को लाभ नहीं पहुंचा सकते उनसे संसार को लाभ पहुंचावे और लोग वेदोंके अभ्यास से अपनी बुद्धि को सुधार कर अपनी आत्मा की शान्ति को प्राप्त करके संसार की स्वार्थ आदि व्याधियों से बच कर संसार में परोपकार करते हुए अन्त को मुक्ति सुख को प्राप्त करें।

ओ३म् शान्तिः ३

देखने योग्य पुस्तकें।

विवाहादर्श—इस में विवाह का मुख्य गौण भेद भिन्न २ देशों की विवाह रीति वैदिक विवाहकी श्रेष्ठता बालविवाह से हानियाँ स्वयम्बर कोर्ट शिप गर्भाधान आदिका सप्रमाण विवेचन है। मूल्य १)

जीवन—इस पुस्तक में मनुष्य जीवन का उद्देश्य भली भाँति दर्शाया है। मूल्य ॥) नीति शतक ।)

दृष्टान्त समुच्चय—इस पुस्तककी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है इस में शिक्षा युक्त १६४ दृष्टान्त हैं जो व्याख्यान के हर एक विषय में दाईं बांहका काम देतेहैं इसकी प्रशंसा सरस्वती अगस्त १९१४में देखो मू०१=) मनुस्मृति भाष्य १)

ध्यान योग प्रकाश—इस में योग और उस की क्रियायें आसन सृष्टि क्रम आदि का अच्छा निरूपण है। मू० १।)

हिन्दू आर्य और नमस्ते का अनुसन्धान—इस पुस्तक को स्वर्गवासी श्री पं०लेखरामजीने बड़े परिश्रमसे लिखा है -)॥

सिक्खों के दश गुरु—धर्मगुरु वीर चक्र चूड़ामणि नानक गुरु गोविन्दसिंह आदि दशगुरुओंका नाम किसने नहीं सुना कौन हिंदू इनका कृतज्ञ नहीं है इनहीं का विलक्षण चरित्र है मूल्य ॥) आना है।

स्वामी विरजानन्द जी प्रज्ञाचक्षु का जीवन चरित्र -)

श्री स्वामी दर्शनानन्द जी के पुस्तक

न्याय दर्शन भाषा भाष्य मूल्य १।) वैशेषिक दर्शन मूल्य १।) सांख्य दर्शन कपिल प्रणीत भाषा भाष्य मूल्य ॥।) उपरोक्त तीनों शास्त्र एक साथ लेने से २॥।) में मिलेंगे।

उक्त स्वामी जी के अन्य पुस्तकें।

ईसाई मत परीक्षा)। उन्नीसवीं सदी का सच्चा बलिदान)। धर्मशिक्षा)। मुक्ति और पुनरावृत्ति ~)। भोंदू जाट और एक डाक्टर पादरी साहबका मुबाहिसा =) वेद किस पर प्रकट हुवे)॥ वेदों की आवश्यकता)॥ बालशिक्षा)॥ महाअन्धेर रात्रि)। गुरुकुल)। मोहमुद्गर)। भोगवाद)। श्राद्ध व्यवस्था)। कलयुगी आचार्य्य)। अविद्या का प्रथम अंग)। दूसरा अंग)। स्थावर मे जीव विचार)। षट्शास्त्रों की उत्पत्ति)। स्वामी दयानन्द का उद्देश्य)। कनफुकवे गुरु बैल की पूंछ)। आत्मिकबल)। आत्मिक शिक्षा)। ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र की व्याख्या)। ईश्वर विचार प्रथम भाग)। द्वितीयभाग)। ईश्वर प्राप्ति प्रथम भाग)। द्वितीय भाग)। तृतीय भाग)। क्या वेदों के पढ़ने का सबको अधिकार नहीं है)। कोपीन पंचक)। रामायण सार)। जैनी पंडितों से प्रश्न)। धोखे बाजो से बचो)। हिन्दुस्तान की तबा ही)। ईसाई विद्वानोंसे प्रश्न मू०)। ईसाई मत में मुक्ति असंभव है मूल्य)। आर्य समाज क्याहै मूल्य)॥ मांस मत खाओ)॥

पुस्तक मिलने का पता

पंडित शंकरदत्तशर्मा वैदिक पुस्तकालय मुरादाबाद

॥ ओ३म् ॥

ट्रेक्ट नम्बर ७

ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र

की व्याख्या

जिस को

स्वामी दर्शनानंद सरस्वती जी ने

दयानन्द ट्रेक्ट सोसाइटी के हितार्थ रच कर

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

ज्वालापुर-हरिद्वार में

प्रकाशित किया

—=+:※:+=—

२००० प्रति] [मूल्य)।

॥ ओ३म् ॥

ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र की

व्याख्या

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ।
होतारं रत्नधातमम् ॥ ऋ० १ ॥

प्यारे पाठकगण ! यह वह मंत्र है कि जिसके कारण से बहुत से अल्पज्ञ यूरोपियों ने आर्य्यों को प्रकृती उपासक सिद्ध किया है और बतलाया है कि आर्य्यों के पितर अग्नि वायु इत्यादि भूतों को ईश्वर माना करते थे और उन्हीं से प्रार्थना किया करते थे अर्थात् वरदान मांगा करते थे क्योंकि आजकल भारत वर्ष में वेदों के जाननेवाले और उनका ठीक अर्थ करके उनके गौरव के गौरव को प्रकट करनेवाले महात्मा कम रहगये और द्वितीय वेदों के पुरानी व्याख्या अर्थात् शाखायें जो कि ११३२ के लगभग थीं लोप होगईं इस समय लगभग आठ नौ का पितर मिलता है शेष का नाम तक मुश्किल से ज्ञात होता है दूसरी तरफ जटा, माला, पद गहन

कर्म इत्यादि की रीति से भी अर्थ करने की रीति नष्ट होगई और वेदांगों का पढना पढाना भी नष्ट होगया केवल थोडे से

मनुष्य व्याकरण पढते हुए दृष्टिगोचर आते हैं इस के
पूर्णविधी की अगाध शिक्षा ने वेदों के गौरव को बहुत बडा
पहुंचाया बी.ए. तक शिक्षा में वेदांगों का नाम नहीं केवल
इत्यादि की शिक्षा दी जाती है आगे चलकर वेद का सायण
पढाया जाता है जो उस समय का बना हुआ है जिसमें
विद्या का प्रचार बहुत कम होगया था, पुनः उस आश्य
ठीक पढाने वाले नहीं जो पढाने वाले हैं वह प्रायः विरुद्ध
के और वेद वेदांगों से अनभिज्ञ थे वह विद्यार्थियों (
यानी नौ जवानों) को इस ढंग से शिक्षा देते हैं कारण
अन्तःकरण में जिससे वेदों की प्रतिष्ठा के स्थान में अप्रति
स्थिर होजाती है और वह वेदों को इंजील इत्यादि की
व्यर्थ कहानियों का समूह समझने लगजाते हैं पढेहुए लोग
यों वेदों से अलग होगये और बिना पढे तो न पढे
महत्व ज्ञात हुआ अर्थात् वर्तमान समय में वेदों की
होने का कारण दो बातें दृष्टि गोचर आरही हैं अतः अब
श्रम करेंगे कि कम से कम पचास मंत्रों की ठीक २
करके सामान्य मनुष्यों को जतलाना चाहते हैं कि
व्यर्थ कहानियां नहीं हैं किन्तु कुल विद्यायें मौजूद हैं
उनमें प्रकृती की उपासना का जिक्र है किन्तु प्रकृती के
स्वरूप को बतलाया है और जिन लोगों ने अर्थात्
अंतरः ने इन बातों को इस तरह बतलाया है कि जिससे

की अप्रतिष्ठा होती है यह उनके या तो अज्ञान का दोष है या ईसाई धर्म का अनुयायी होने से पक्षपात का कारण है वरन कोई समझदार आदमी जिसको वेदांगों की माहीति ज्ञात हो और साथ ही पक्षपात भी न रखता हो तो कभी वेदों के बारे में ऐसी मति नहीं दे सकता जैसी कि वर्तमान काल में कोई २ अल्पज्ञ यूरोप के वासी देरहे हैं यद्यपि यूरुपवालों ने जिन्होंने वेदों के बनाने इत्यादि की तारीख स्थापित की हैं उस की अशुद्धी भी बतलानी आवश्यक है परन्तु वह किसी दूसरी जगह बतलाई जावेगी।

प्यारे पाठकगण वेदों के दो प्रकार के अर्थ होते हैं एक अध्यात्मिक दूसरे भौतिक अब हम मंत्र के दोनों प्रकार के अर्थ बतलायेंगे यह स्मरण रहे कि ऋग्वेद पदार्थों के स्वरूप अर्थात् लक्षण का वर्णन करता है और ऋचा का अर्थ स्तुति अर्थात् तारीफ के परन्तु किसी २ ने स्तुति से यह संकेत किया है कि किसी की झूंठी वड़ाई बतलाई जावे परन्तु यहां स्तुति से वही संकेत जो रेखा गणित अर्थात् ज्योतिष की पुस्तकों में रेखा इत्यादि की स्तुति से संकेत है अर्थात् उसको वही स्तुति कीजावे जो उसको दूसरी वस्तुओं से पृथक करदे जिसको संस्कृत में लक्षण के नाम से प्रगट कियागया है और अंगरेजी में डेफीनेशन कहा जाता है और फ़ारसी में तारीफ़ कहते हैं।

भ्रातृगण इस मंत्र में जो ऋग्वेद का सबसे पहला मंत्र है और जीवों को अग्नि का लक्षण बतलाते हैं क्योंकि अग्नि सब

से उत्तम और मनुष्यों के लिये आवश्यक वस्तु है और [illegible]
इसके दूसरे भूतों की सिद्धी और उसके गुणों का प्रकाश [illegible]
होसकता अतः अग्नि की तारीफ सब से पहले वतलानी आ-
श्यक समझीगई—और दूसरे अध्यात्मिक अर्थ में अग्नि ईश्वर
अर्थ में भी आया है इसलिये भी इसको पहले वतलाना [illegible]
श्यक ज्ञात होता है ।

आर्य्यगण इस मंत्र में सात पद हैं १ अग्निम् २ इळे ३
हितम् ४ यज्ञस्य ५ देवम् ६ ऋत्विजम् ७ होतारं रत्नधातमम्
दो पद में तो यह वतलायागया है कि हम अग्नी की [illegible]
करते हैं अर्थात् (अग्निम्) अग्नी की (ईळे) स्तुति [illegible]
इसके आगे अग्नि की स्तुति है पहला पद यह है पुरोहित अ[illegible]
अग्नी दूसरों की हितकारक है अब आप देखलीजिये कि
अग्नि का बीज सूर्य्य वर्तमान न हो तो मनुष्य किस
काम करसकता है किस प्रकार शिक्षा पासकते हैं [illegible]
नुष्य की सब से प्रथम इन्द्री (चक्षु) विना अग्नी के [illegible]
होजाती है अर्थात् विना अग्नी की सहायता के मनुष्य
होते हुए भी अंधा है दूसरी तरफ जठराग्नि अपना काम
करदे तो मनुष्य के अन्दर पाचनशक्ती [हाजमा] वि
गिरजावे और साथ ही खून की चाल बन्द होजावे ।
शरीर का बढना नितान्त बन्द होजावेगा अर्थात् विना
के मनुष्य जीवित दशा में भी मुर्दा समझा जावेगा [illegible]
किसी काम के योग्य नहीं रहेगा—तीसरे वृक्षों को देख

उसमें भी सूर्य की किरणों से आई हुई अग्नी नीचे से जो पानी
खींचने का काम करती है यदि बन्द होजावे तो वृक्षों का बढ़ना
नेतान्त रुकजावेगा गोया वृक्षों के लिये बढ़ाने का सामान नि-
ान्त अग्नी है चौथे यदि वायु गन्दी होजाय तो उसके शुद्ध करने
ी चिकित्सा हे कि अग्नी जलाओ तत्काल वायु शुद्ध होजावेगी
ाप लोगों ने अकसर सुना होगा कि जिस मकान में चिराग
हीं जलायाजाता और वह बन्द रहता है तो उसमें भूत इत्यादि
ोजाते हैं लेकिन इसका मतलब यह है कि जिस मकान में
द रहने से—सूर्य्य की किरणें न जाने से और
राग जलने से अग्नी का काम छुटजाता है वहां की
यु नितान्त गन्दी और मनुष्य के लिये हानिकारक होजाती
और उसमकान में जब तक हवन न किया जावे तब तक
मकान रहने के योग्य नहीं. इसी लिये आर्यों के प्रत्येक
म में हवन का होना मुख्य बतलाया गया है. पांचवें अगर
ी खराब हो तो उसकी चिकित्सा अग्नी पर पकाना है उस
दुर्गन्धि जाती रहती है और अगर कोई मिट्टी की चीजभी
ी होजावे तो वह भी अग्नी में जलाने से शुद्ध होसकती
त प्रत्येक पदार्थ की शुद्धि अग्नि के आधीन है अतः अग्नि
पुरोहित कहागया—

प्यारे पाठकगण संसार में पुरोहित और यजमान शब्द
चार हुआ वह भी इस ही से लिया गया क्यों कि जो

यजमान का हितकरे वह पुरोहित कहलता है क्योंकि प्राचीन समय में ब्राह्मण क्षत्री इत्यादि तीन वरणोंको यथार्थ ज्ञान और धर्मोपदेश के द्वारा से उन्नति किया करते थे इस लिये उनको भी पुरोहित कहने लगे, वह सर्वदा यजमान के अज्ञान को ज्ञान से और बुरे कर्मों के संस्कारों को अपने कर्मों के नमूने से दूर रक्खा करते थे इसी प्रकार संस्कारों में अग्नी भूतों के रूपके प्रकाश से और उनकी दुर्गन्धि को अपनी गर्मी और यौगिक शक्ती द्वारा नाश करने से वह पुरोहित कहलाती है,

(यज्ञयस्यदेवम्) यज धातु का अर्थ देवपूजा और संगतिकरण दान है, और संगति करण देव पूजा से मतलबहै अग्नी संयोग करने में देवता..आप प्रश्न करेंगे कि अग्नी सम्मिलान का देवता कैसे है परन्तु स्मरण रहे कि जिस कदर मोटे पदार्थ मिलाये जायंगे उसी कदर जल्दी अलग हो जायंगे पदार्थों का सब से उत्तम संयोग वह कहला सकता है जो परमाणु करके मिलाया जावे अब आप समझ लीजिये कि परमाणु करना सिवाय अग्नी के किसकी शक्ती में है, घी कहां से आता है पशुओं के दूध से दूध कहां से आता है खुराक से प्रायः..मनुष्य इस पर ।० करेंगे, लेकिन हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि जिस गाय को जि .. ख्ली खिलाई जाये उसका दूध जियादा हो जायेगा और जि सको विनोले सियादा खिलाये जावेंगे उसके दूध में घी ज़ियादा होगा जब मालूम होगया कि दूध वा घी वनस्पति से

हुआ है पशु केवल एक ग्रन्थ है तो वनस्पति से घी निकालते हैं और वनस्पति में कहां से आता है वर्षा से वर्षा बादल से होती है जब तक बादल में घी विराजमान न हो तो उसके उत्पन्न होने का चक्र चल नहीं सकता अब स्थूल घृत तो बादल में जा ही नहीं सकता, वह सूक्ष्म परमाणु होकर जायेगा. अग्नी का काम है वह बादल में घी मिलादे अतः कहाजाता है यद्यपि संसार के और पदार्थ भी इसी प्रकार अग्नी के कारण अपनी आवश्यकता को प्राप्त करते हैं लेकिन वह सूर्य की किरणों से काम लेते हैं, जिसको सामान्य मनुष्य नहीं समझ सकते अतः सृष्टि नियम यह दृष्टान्त रखदिया (रितिजम्) अर्थात् ऋतुओं के पैदा करने वाली भी अग्नी है आप जो गर्मी सर्दी वर्षा वसन्त इत्यादि ऋतुओं को मालूम करते हैं उसके पैदा करने वाली भी अग्नी है अर्थात् ये सारी ऋतुयें अग्नी के पुंज सूर्य की गर्दिश से पैदा होते हैं जैसे जब सूर्य हमारे शिरपर होता है तो उसकी किरणें सीधी पडती हैं उस समय पानी के परमाणु सूर्य की आकर्षण शक्ती से अधिक उडते हैं इस लिये मनुष्य को पानीकी इच्छा अधिक मालूम होती है यही गर्मी है और संसार में भी पानी के अधिक खींचे जाने से खुश्की आजाती है और ज़मीन के नीचे तक सूर्य की किरणें पानी निकालने के लिये जाती है उस समय वह वृक्ष जिनकी जड गहरी है उसको पानी मिलता रहता है वह हरे रहते हैं और जिनकी जड बहुत कम

गहरी हैं वह सूखने लगते हैं या तो बराबर पानी दिया जा। या सूख जाते हैं बस इसी का नाम ग्रीष्म ऋतु है जब पानी की आवसकता अधिक हो अब सूर्य्य दक्षिण की ओर जाने लगा अर्थात् दक्षिणायण होगया अब किरण तिरछी पडने लगी उन की आकरपण शक्ती भी निर्बल हो चली अब वह पानी जो सीधी किरणों से ऊपर चला गया था पृथ्वी की आकरपण शक्ती नीचे गिरने लगा पहले तो सूर्य्य की ओर जारहा था अब पृथ्वी की ओर आने लगा अब ये वर्षा हो गई यद्यपि सूर्य्य और पृथ्वी सर्वदा प्रत्येक वस्तु को अपनी तर्फ खींचा करते हैं परन्तु सृष्टि नीयम ने ऐसा चक्कर (इस्थिर) कर दिया है कि सूर्य्य ग्रीष्म के दिनों में पृथ्वी से बहुत अधिक आकर्पण शक्ती रखता अब अपनी किरणों के टेढी होजाने से अल्प शक्ती मान होगया और उसने जो जल पृथ्वी से छीनलिया था अब वह वापिस देना पडा इसके पश्चात् सूर्य्य और भी दक्षिणायण हुआ किरणें अधिक तिरछी हो गई अब पानी बहुत कम उडने लगा और बडे २ वृक्षों की जडों तक किरणों की शक्ती निर्बल होने लगी यह शर्द ऋतु कहलाती है चन्द्र रोज बाद सूर्य और भी दक्षिणायण होगया अबतो किरणें बिलकुल कमजोर हो पानी जम कर बर्फ बनने लगा बडे २ वृक्षों के पत्ते सूख गिरने लगे क्योंकि नीचे से तो किरणों की निरबलता के कारण पानी आना बंद होगया और उधर से कुछ न कुछ कम

रहा निदान पानी की आय न रही और व्यय बराबर होने से वृक्ष सूख गए इसी का नाम हेमन्त ऋतु है— इसके पश्चात् सूर्य फिर उत्तरायण आना आरम्भ हुवा किरणें बलवान होने लगीं वृक्षों की जड़ों के नीचे से पानी आने लगा और वृक्षों की नई कोंपें और पत्ते निकलने लगे प्रत्येक तर्फ वृक्षों पर नवीन सिरे से जवानी आने लगी चंद्रोज़ में कुल वृक्ष हरे भरे होगये यह वसन्त ऋतु कहलाती है इस के पश्चात् सूर्य और भी उत्तरायण होगया ऋतु में गर्मी ज्ञात होने लगी बड़े वृक्षों में और भी वृद्धी आरम्भ हुई छोटे पौदे जड़ से थोड़े गहराव से सूखने लगे अर्थात् ग्रीष्म ऋतु आगई ॥

प्यारे पाठक गण पूर्वोक्त वृत्तान्त से अच्छे प्रकार ज्ञात हो गया होगा कि ऋतुओं का जन्म या विकार केवल अग्नि के कारण (हैं) (होतारम्) अग्नि होता है—होता कहते हैं हवन करने वाले को बतायोंकि यह संसार एक बड़ा भारी हवन कुण्ड है और उसमें जितने पदार्थ हैं वे सब हवन की सामग्री हैं और अग्नि इसका हवन करके पदार्थों के परमाणु को अलग करके उड़ाता रहता है जिस प्रकार होता जल वायु आदि की शुद्धी के वास्ते पदार्थों के परमाणु करके आकाश में पहुंचाता है उसी तरह अग्नि संसार की वनस्पती का हवन करता है

प्यारे पाठकगण आप देखते हैं कि अभी एक फूल सुगन्धित

हराभरा मौजूद था थोड़ीही देर के पश्चात उस का रंग बदल-जाया सुगन्ध कम होगई सूखजाने से बोझ भी कम होगया परन्तु लोग नहीं समझते किफूल किस प्रकार शुष्क होगया सुगन्ध किस प्रकार नष्ट होगई ॥

परन्तु समझदार आदमी समझते हैं कि अग्नि ने फूल में से सुगंधि के परमाणु जिनसे वो हरे भरे थे अलग करदिये और वह सुगंधि आकाश में फैलगई और उससे जलादिकों को शुद्धी प्राप्त होगई जब आप सुगंधित वस्तु को देखते या सूंघते हैं तो उस जगह अग्नि उसके परमाणु को अलग करती और वायु उसको आपकी नाक तक पहुंचा देती है तब आपको सुगंध का ज्ञान होता है यहां पर स्पष्ट ज्ञात होगया कि पदार्थों की दशा में परिवर्त्तन पैदा करनेवाली अर्थात उसका परमाणु बनाकर उड़ानेवाली अग्नि है ।

[रत्न धातमम] रत्नों को धारण करनेवाली अर्थात रत्नों को उत्पन्न करने का कारण भी अग्नी है ।

प्यारे पाठकगण यह जो आप चांदी सोना हीरालाल नीलम पुखराज इत्यादि बहुत प्रकार के चमकदार रत्न देखते हैं ये सभी अग्नी के कारण से उत्पन्न होते हैं इनके अन्दर जितनी चमक है वह सब अग्नी के कारण से है क्योंकि अग्नी के बिना कोई तत्व चमकदार नहीं रहता जहां पर आप चमक देखें उसे अग्नि के कारण से समझें—जब वर्फ पर अग्नि की किरणें पड़ती

रहती हैं और वह चिरकाल के पश्चात् किरणों से ढलती नहीं तो वह बिल्लौर बनजाती है और इसी तरह पर अर्कीक, नीलम पुखराज, हीरा, लाल, इत्यादि होजाते हैं।

प्यारे पाठकगण अब आप समझलीजिये कि इस वेद मंत्र में पांच विद्याओं का बीज रक्खागया था लेकिन अल्प बुद्धि लोगों ने तो उसको समझा नहीं और कहने लगे कि वेद चरवाहों के गीत हैं क्या कोई मनुष्य है जो पांच शब्दों में पांच विद्याओं का उपदेश करले, पहली विद्या यह है कि संसार के पदार्थों की शुद्धी किस तरह होसकती है और संसार के पदार्थ बढ़ते किस तरह हैं और संसार के जीवों का हितकारक कौन है किसके जरिये से आंखें काम कर सकती हैं किसके कारण से खून हरकत करता है किस के कारण से भूख और प्यास लगती है और किसके विगडने से शरीर की संपूर्ण शक्ति रद्दी होजाती हैं, इन सब बातों का उत्तर था कि अग्नी के कारण से ये सारे काम संसार में होते हैं. दूसरे विद्याके ठीक मिलान करने का कौनसा कारण है, या यज्ञका कौन देवता है जिसके कारण से सारे देवता प्रसन्न होजाते हैं अर्थात् कौन एक सब देवताओं को मनुष्य के लिये सुखकारी बना सकता है उसका उत्तर दिया गया कि देवता अग्नी है अग्नी सब पदार्थों को तुम्हारे लिये सुखकारक बना सकती है, एकतो प्रकाशद्वारा उनका गुण जतलाकर दूसरे गर्मी द्वारा उनको शुद्ध करके तीसरे क्रिया-ऋतु क्योंकर पैदा

होती और बदलती हैं किस प्रकार वह जगत् जो अग्नि के प्रकार गर्म है नितान्त ठंडा होजाता है कि जहां रुईदार कपडा ओढे विना आराम नहीं मिलता जहां पर नितान्त सूखा था, वहां पर जल ही जल होजाता है या एक समय सम्पूर्ण पेड पत्तों से नितान्त खाली होगये वह पुनरपि हरेभरे होकर नये जीवन में आजाते हैं इन ऋतुओं का पैदा होना किस शक्ती से होता है, उत्तर मिला अग्नी से अर्थात् अग्नी के कारण से संपूर्ण विकल्प [तबादला] संसार में होता है अगर अग्नी न होती तो ऋतुओं का बदलना और पदार्थों का संयोग ठीक कभी भी न हो सकता [चौथे विद्या] संसार में कौन ऐसी बात है जो प्रत्येक पदार्थ की दशा को बदल देती है, उत्तर मिला अग्नी है, पांचवें धातु और रत्न जो चमकदार पदार्थ हैं किस शक्ती से पैदा होते हैं, जवाब मिला अग्नी की शक्ती की शक्ती से।

ओरम् शांतिः शांतिः शांतिः

———○०※०○———

दयानन्दट्रेक्ट सोसाइटी के सामान्य नियम

१—इस टरेक्ट सोसाइटी का आशय ऋषि-दयानन्द के सिद्धान्तों का प्रचार करना और वेद मन्त्रों के शब्दों को सरल भाषा में व्याख्या करके और दर्शनों के प्रत्येक सूत्र पर एक टरेक्ट लिख कर उन के आशय को अच्छी तरह समझा कर आर्य पुरुषों को इस लायक बनाना है कि वह वैदिकधर्म के विरोधी के मुकाबले में स्वयं काम चला सकें बाहर से सहायता की आवश्यकता न रहै ॥

२—यह टरेक्ट सोसाइटी एक वर्ष में १६ पृष्ठ के) वाले ३६० टरेक्ट प्रकाशित किया करेगी जिस में वेद मन्त्रों की व्याख्या एक

टरेक्ट में एक मन्त्र १२५ दर्शनों के सूत्रों की व्याख्या एक टरेक्ट में एक सूत्र १२५ आर्य सिद्धान्तों पर विचार २५ टरेक्ट (मुखालिफ़ान) वैदिकधर्म के जवाब में ७५ आर्यसमाज सुधार पर १० टरेक्ट ॥

३—जो मनुष्य इस टरेक्ट सोसाइटी के ग्राहक बनकर सहायता देंगे उन को १० दिन पीछे इकट्ठे १० टरेक्ट)॥ के टिकट में भेजे जावेंगे जिस जगह १० ग्राहक होंगे उ को नित्य प्रति रवाना किये जावेंगे जिले में १० समाजें १० टरेक्ट रोज लेने वाले होंगे या जिस जिले में १०० ग्रा रोजाना टरेक्टके होंगे उस जिले को एक उपदेशक टरेक्ट सोसाइटी की ओर से विवेतन के दिया जायगा ॥

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गोशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

ओ३म्

टरेक्ट नम्बर १९

स्वामी दयानन्द का उद्देश

जिसको

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती जी की आज्ञानुसार
प्रबन्धकर्त्ता दयानन्द ट्रेक्ट सोसाइटी ने
महाविद्यालय मेशीन प्रेस ज्वालापुर में छपवाया.

मिलने का पता—

दयानन्द ट्रेक्टसोसाइटी
(दफ्तर) स्टेशन के सामने
बाजार हरिद्वार.

४००० प्रति] [मूल्य २ पाई.

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गोशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

ओ३म्

स्वामी दयानन्द

और उन का उद्देश्य

प्रिय वर पाठक ! आप महाशयों ने श्री १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी का नामतो अवश्य सुना होगा उन के निर्मित किये हुवे वेद भाष्य व अन्यान्य पुस्तकों को भी कदाचित देखने का अवसर मिला हो यदि आप आर्य समाज के मेम्बर हैं तब तो आप को उन की व्यवस्था से भली प्रकार भिज्ञता होगी परन्तु इतने परभी क्या आपने श्री स्वामी जी के मुख्य उद्देश्य या सदुपदेशों का प्रयोजन यथोचित समझ लिया है मुझे जहां [illegible] में २६ वर्ष सामाजिक आयु को व्यतीत कर तजरबा से मालूम हुआ है और उस में सफलता हुई है मैं कहसक्ता हूं कि मुझे अति न्यून संख्या ऐसे मनुष्यों की दृष्टि गोचर होती है जो उस महर्षी के मन्तव्यों को भली भांति समझे हों-बहुत से लोग स्वामी जी को भारत वर्ष का हितैषी मानते हैं कुछेक उन को हिन्दू रिफार्मर ठहराते हैं अनेक महाशय उन

को देशोद्धारक जानते हैं परन्तु मेरी सम्मति से एक महात्मा सन्यासी के विषय में ऐसा कहना मानो उसको उसके धर्म्म से पदोच्युत कर देना है क्यों कि सन्यासी का धर्म सारे संसार का उपकार करना और प्रत्येक को समान दृष्टि से देखना है यदि स्वामी दयानन्द केवल भारत वर्ष के हितैषी थे तो अन्य देशों के वे अवश्य अशुभ चिंतक होंगे जो सर्वथा मिथ्या है यदि हिन्दू रिफार्मर थे तो हिन्दू जाति से प्रीति और अन्यसे घृणा होगी परन्तु यह प्रत्यक्ष रूप से अल्प बुद्धि जनो के मन्तव्य हो सक्ते हैं वास्तव में वह महर्षि एक सच्चा सन्यासी था और सारे संसार के प्राणी मात्र को सुख पहुंचाना उसका उद्देश्य था ॥

प्यारे मित्रो ! यह आप को ज्ञात है कि आदि में सारे संसार में वैदिक धर्म का प्रचार था परन्तु क्रमशः समय के परफेर ने इस वैदिक धर्म को भिन्न २ टुकडो में विभाजित कर दिया इस का प्रमाण यह है कि वैदिक धर्म का सर्वोत्तम नियम अर्थात् यज्ञ अग्निहोत्र को हम प्रत्येक देश तथा धर्म की मूल पुस्तक में पाते हैं और पांच सहस्र वर्ष से प्रथम की कोई ऐसी सम्प्रदाय प्रतीत नहीं होती—अर्थात् यवन मत १३०० वर्ष से ईसाई मत १९०० वर्ष से, यहूदी ३५०० वर्ष से पारसी मत ४५०० वर्ष से, इस से प्रथम वैदिक धर्म के अतिरिक्त कोई मत नहीं पाया जाता जिस से प्रत्यक्ष विदित है कि यह सारे मत वैदिक धर्म के विगडने से उत्पन्न होगए—

इस के अतिरिक्त जिस समय इस श्लोक को देखते

वाल्हिका पल्ववाश्चीना शुलीका यवनाशका
आपगोधूम सरसहृदीशाख वैश्वानरोचिता

अर्थात् महात्मा अत्रि ऋषि ने बलख, ईरान, चीन, अरब यूनान, और उस के पूर्वी विभागों में भ्रमण किया और वहां पर उन्हों ने अंगूर उर्द और गेहूं के खाने वाले तथा शास्त्र के अनुकूल अग्निहोत्र करने हारे मनुष्य देखे तो इस से प्रत्यक्ष ज्ञात होता है कि वैदिक धर्म उस समय वर्त्तमान् था और जब महाभारत युद्ध में योग्य विद्वानों के नष्ट होजाने से उस का प्रचार निर्बल होगया और अन्त में प्रचार के न रहने से और धनादि की अधिकता से मनुष्यों में दुराचार फैलनेलगा और राजा लोग निन्दित कर्मों में प्रवृत्त होगए ब्राह्मण जो उस समय जगत गुरू कहलाते थे वैदिक धर्म के प्रचार के न होने तथा आलस्य से अपने कर्तव्यों से प्रथम ही पतित होचुके थे वे भी राजाओं के सेवक होगए और हां में हां मिलाने लगे– उस समय जब लोगों ने राजाओं से कहा कि आप यह क्या अधर्म्म करते हैं ?

इसी प्रकार जब सारे देश में उनकी निन्दा होने लगी तब राजाओं ने अपने पुरोहित ब्राह्मणों से मिल कर इस निन्दा से बचने का उपाय किया और संसार में एक ऐसा मत चलाया जिस में सारे कुमार्ग धर्म्म बनगये– इस मत का नाम वाम मार्ग है— और "वाम„ का अर्थ "उल्टा„ अर्थात् उल्टा

मार्ग फैलाया जिस में अधर्म्म की बातों को धर्म्म बतलाया अर्थात् ईश्वर के स्थान पर प्रकृति को मानना या विषय सुख को धर्म्म बतलाना प्रत्यक्ष रूप से वाम मार्ग का उल्टा मार्ग बतला रहे हैं।

भ्रातृगण ! इस वाममार्ग का मूल तैतरीयशाखा है क्योंकि उसके विषय में जो वृत्तांत महीधर भाष्य में लिखा है उससे प्रत्यक्ष विदित होता है कि उसी समय से वाममार्ग चला अर्थात् एक समय व्यासजी के चेले वैशम्पायन अपने शिष्य याज्ञवल्क्य से किसी बात पर रुष्ट होगये और उससे कहा कि मेरी पढ़ी हुई विद्या को छोडदे—याज्ञवल्क्य ने उसी समय विद्या का वमन कर दिया-तब वैशम्पायन ने अपने और शिष्यों से कहा कि इसको खालो—उन्होंने तीतर का रूप धारणकर उसको खालिया अतएव यह तैतरीयशाखा बनगई यह वृत्तांत महीधरने अपने यजुर्वेद भाष्य की भूमिका में लिखा है। इस लेख से तैतरीय शाखा की उत्पत्ति ज्ञात होगई और याज्ञवक्ल्यऋषी के समय का पता लगगया ॥

पाठकवृन्द ! यह गाथा वाममार्ग के प्रारम्भ की है अन्यथा वाममार्गियों में तो बडा सिद्ध वही कहलाता है जो व न को भक्षण करले और इस गाथा में तीतर बनना इस सिद्ध करता है कि उससमय वाममार्ग का विशेष प्रचार हुआ था और न इसप्रकार के सिद्ध उत्पन्न हुये थे—और ि

सूत्र आजकल दृष्टिगत होते हैं जिनमें पशुयज्ञ और मांसादिका विधान है उनमें अधिकतर तैतीयशाखा, तैतरीयआरण्यक और तैतरी ब्राह्मण के दियेजाते हैं जो वाममार्ग के समय में निर्मित हुवे हैं और इनहीं पुस्तकों में यज्ञमें पशुहिंसा वतलाई है अन्यथा पूर्वकाल में तो यज्ञमें हिंसा करना महापाप है जैसा कि ऋग्वेद के मंत्र में लिखा है ॥

अग्नेयं यज्ञमध्वरं विश्वतः परि भूरसि सइद्देवेषु गच्छति ।

अर्थात् हे ज्ञानस्वरूप अग्निनाम परमात्मन तेरा जो हिंसा रहित यज्ञ सारे संसार में व्याप्त होरहा है वही यज्ञ इस स्थान से देवताओं को जाता है ।

वहुत महाशयों को इसमें शंका होगी परन्तु वेद में कम से कम सौ जगह पर यज्ञको हिंसा रहित वतलाया है और इस मन्तव्य की पुष्टि में अनेक उदाहरण पाये जाजते हैं अर्थात् जिससमय विश्वामित्र ने यज्ञ किया था उससमय राक्षस लोग उनके यज्ञम मांस विष्ठादिडालकर उसको अपवित्र करते थे यदि यज्ञमें हिंसा का निषेध न होता तो विश्वामित्र क्षत्री होने पर भी कभी राजारामचन्द्रजी को सहायतार्थ न वुलाते क्योंकि यज्ञमें क्रोध करना पाप है और हिंसा विदून क्रोध के हो नहीं सकती—इसमें और भी प्रमाण हैं ॥

प्रियपाठक ! इसको बहुतबडा सबूतयहहैकि पारसियों को जब अग्निहोत्र को उपदेश हुआ था अर्थात् जिससमय व्यास व जरदुश्त का वार्तालाप हुआ था और व्यासजी ने अग्निहोत्र का उपदेश किया उस समय तो केवल सुगंधित, बलवर्धक और आरोग्य रखनेवाले पदार्थों का हवन होता था जैसा कि पारसियों के रिवाज से प्रकट होता है — परन्तु वाममार्ग फैलजाने के पश्चात् जो आर्य्यावर्त से अन्यदेशों में शिक्षा पहुंची वहां यज्ञके स्थान में पशु वधका प्रचार होगया— जिससमय इसप्रकार चारोंओर वेदों के अर्थों का अनर्थ करके वेदके नाम से बहुतसी वाममार्गीय पुस्तकें औरसूत्र बनाये तोसारे संसार में वेदों की निंदा होनेलगी जैसा कि चारवाक ने लिखा है ॥

त्रयोवेदस्यकर्त्तारो भांडधूर्तनिशाचराः ॥

अर्थात् तीनो वेदों के बनानवाले भांड़ धूर्त और राक्षस है। जब इस तरह से वेदों की निन्दा होती थी तो एक राजा की लड़की जिसको वैदिकधर्म में अति प्रीति थी शोक से यह कह रही थी।

किंकरोमि क्वगच्छामि को वेदानुद्धृष्यति॥

अर्थात् क्या करूं कहां जाऊं कौन वेदों उद्धार करेगा उस की इसबात को सुनकर कुमारिलभट्टाचार्य्य को इसबात का विचार उत्पन्न हुआ और उत्तर दिया॥

मांचिंत्यवरारोहि भट्टाचार्यौरितभूतले॥

अर्थात् पे धर्मनुरागणी ! कुछ चितामतकर वेदों के उद्धार के लिये भट्टाचार्य मौजूद हैं और कुमारिलभट्टाचार्य ने मीमांसा वार्तिक बनाकर यज्ञों का नियम ठीक करनेका प्रयत्नकिया परन्तु वह पूरे तौर से कृत कार्य न हुये ॥

जब इसप्रकार वाम मार्ग के अधिक प्रचार ने देश में दुराचार फैला रक्खा था उसी समय कपिल वस्तु केराजा साखी सिंह गौतम को उसके दूर करने के हेतु बहुत भारी विचार पैदा हुआ, उन्होंने राज्य को छोड तप करना आरम्भ किया जब अच्छी तरह ज्ञान होगया तो उन्होंने हिंसक यज्ञों का खंडन करना प्रारम्भ किया और उस समय जब वाम मार्गी ब्रह्मण सब जातियों को सेवक बनाकर अधर्म्म में चला रहे थे उनके वर्णाश्रम का भी खंडन आरम्भ किया, बुद्ध की शिक्षा अधिकतर वैदिक धर्म्मानुकूल थी परन्तु उस समय जो वाम-मार्ग के अनर्थों से वैदिक धर्म्म होरहा था उससे बिलकुल विरूद्ध थी— उस समय वाम मार्गी ब्रह्मणों नेबौद्धमत के शास्त्रार्थों में वेदों के प्रमाण अर्थात् उसी वाम मार्गी तैतरीय शाखा के प्रमाण देने आरम्भ किये महात्मा बौद्ध देव जो कि संस्कृत के बडे विद्वान तो थे ही नहीं इस कारण स्वयं तो वदार्थ विचार न सके थे दूसरे उस समय में वेदों के अनुकूल पुस्तकें भी कम प्राप्त होती थीं जिससे उनको भली भांति शिक्षा होती

जब उन्हों ने देखा कि वैदों के जमघटे को साथ लेकर वाम मार्ग को दूर नहीं करसकते और न संसार का उपकार कार सकते हैं तो उसका उपाय उनको यही सूझाकि वेद को मानना छोड़दें और जहां तक हो सके इन हिंसा करने वाले यज्ञों को बंद करने के वास्ते अनेकप्रचार और उनकी जड़ वेदों के न्यून करनेका प्रयत्नकिया अतएव उन्होंने शूद्रों से कार्य आरम्भ किया और थोड़ेही दिनों में सारे भारतवर्ष में हलचल मचगया जब विरोधियों ने देखा कि गौतम वेदों को नहीं मानता तो उन्होंने उससे कहा कि वेद ईश्वर कृत है।

बुद्धदेव ने उत्तर दिया कि हम ऐसे ईश्वर कोभी नहीं मानते जिसने ऐसी पुस्तकें बनाई हों जिसमें हिंसा करने का उपदेश हो अस्तु इस प्रकार महात्मा बुद्धदेव धर्म के एक हिस्से को अपने मन्तव्यानुसार विषयुक्त समझकर उस से पृथक् होगए और शेष भाग का प्रचार करने लगे जब इस प्रकार से ज्ञान का मुख्य भाग अर्थात् जीव, प्रकृति, ईश्वर इन तीन में से ईश्वर निकल गया और शेष दोतिहाई धर्म अर्थात् जीव और प्रकृति का प्रचार होता रहा॥

प्यारे मित्रो! इस त्रुटि को पूरा करने के वास्ते स्वामी शङ्कराचार्य जी महाराज ब्रह्म की सिद्धि के वास्ते कटिबद्ध हुए और सारे देश में भ्रमण कर बौद्ध मत का खण्डन किया और जहां तक होसका अपना कुल समय ब्रह्म सिद्धि में व्यय किया—क्योंकि उस समय तक मनुष्यों में प्रकृति और जीव

को छोड कर दूसरे किसी स्थान में दिखलाना कठिन था इस लिये उन्हों ने प्रत्येक वस्तु में दिखलाना शुरू किया और षट पदार्थ अनादि बतलाकर पांच को सान्त बतलाया अभी महात्मा शङ्कराचर्य को अपना पूरा सिद्धान्त दिखलाने का अवसर मिला ही नहीं था देश के दुर्भाग्य से वह भारत का भानु इस असार संसार से चलता हुआ परन्तु जितना काम इस महात्मा ने किया उस से मालूम होता है कि यदि इस ऋषि को दस वर्ष तक अधिक जीवित रहने का अवसर मिलता तौ यह भारत का उद्धार करदेते और वैदिक धर्म को जो महाभारत के बाद हानि पहुंची थी उसकी पूर्ति होजाती परन्तु तौभी २२ वर्ष की अवस्था से ३२ वर्ष की अवस्था तक इस ब्रह्म प्रचारक ने सामान्यतया और आर्यवर्त्त में विशेषतया ब्रह्म को फैला दिया ॥

भ्रातृ वर्गों ! महात्मा शङ्कराचार्य के पश्चात् उन के चेले यद्यपि बड़े २ पण्डित हुए जिन्हों ने अद्वैत वाद के सिद्ध करने के लिये सहस्रों नए प्रमाण गढे और सैकड़ों पुस्तकें लिख डाली परन्तु यह वैदिक धर्म्म को उस मूल तत्व से बहुत दूर लेगए अर्थात् उन्हों ने प्रकृति और जीव की अस्तित्व से बिलकुल इन्कार कर दिया और षट अनादि मान कर पांच को अन्तवाला बतलाने के मन्तव्य को बिलकुल न समझा— महात्मा शङ्कराचार्य का तो यह सिद्धान्त था कि जो वस्तु उत्पन्न होती है वह अनित्य है और जो उत्पत्ति से रहित है वह नित्य है ॥

अतएव यह छः पदार्थ अनादि अर्थात् उत्पत्ति शून्य हैं अतएव नित्य है परन्तु ब्रह्म तो सर्वव्याक है अर्थात् वह अनन्त है और शेष पांच पदार्थ जीव, ईश्वर, माया, अविद्या, और इनका सम्बन्ध यह पांचो सीमा बद्ध हैं यहां पर जीव के अर्थ बद्ध जीव के हैं और ईश्वर मुक्त जीव को कहते हैं अविद्या जीव का गुण है, माया प्रकृति का नाम है।

हमारे कुछेक मित्र यह कहेंगे कि तुमने यह बात मन गढ़त कही है परन्तु जहां जीव का लक्षण किया है वहां अविद्या में युक्त चेतन को जीव माना है अविद्या के दो अर्थ हो सकते हैं एक तो ज्ञान का अभाव दूसरे विपरीत ज्ञान अगर अविद्या के अर्थ ज्ञान के अभाव के माने तो ठीक नहीं क्यों कि 'चेतन' ज्ञान वाल को कहते हैं और जिस में ज्ञान का अभाव है वह चेतन ही नहीं कहला सकता इस हेतु से अविद्या को अर्थ विपरीत ज्ञान के लिये जाते हैं यहां उलटा ज्ञान बन्धन अर्थात् दुःखोत्पत्ति का कारण है और इसी के नाश से मुक्ति होती है जब मिथ्या ज्ञान का नाश होगया तो उसमें अल्पज्ञता जो जीव का स्वाभाविक गुण है मौजूद है परन्तु मिथ्या ज्ञान बिलकुल अलग होगया अब यह बन्धन से खाली है इसी को शुद्ध सत्य प्रधान उपाधि सहित अर्थात् ईश्वर कहते हैं॥

प्रिय पाठक! क्यों कि आदि और अन्त दो प्रकार से होते हैं एक तो देश योग से दूसरा काल योग से जो वस्तु काल योग से आदि वाली है वह काल योग से अन्त वाली होगी

कि नदी एक किनारे की कहीं होती ही नहीं जिस का आदि है उसका अन्त अवश्य है और जो वस्तु देश योग से अनादि है वह देश योग से अनन्त भी होगी परन्तु यह नहीं होसका कि जो वस्तु काल योग से अनादि है वह देश योग से भी अनन्त हो क्यों कि परमाणु काल योग से अनादि है परन्तु देश योग से सान्त हैं यहां महात्मा शङ्कराचार्य का यह प्रयोजन था कि काल योग से छः वस्तुयें अनादि और अनन्त हैं परन्तु देश योग से पांच वस्तुयें आदि और अन्त वाली केवल एक ब्रह्म ही अनन्त है ॥

सज्जन महाशयो ! महात्मा शङ्कराचार्य के प्रयोजन को न समझ कर लोगों ने ऐसे झगडे उत्पन्न किये कि महात्मा शङ्कर का जो सिद्धान्त वैदिक धर्म को उस कमी को पूरा करने का था जो महात्मा बुद्ध ने संस्कृत न जानने और पण्डितों के वाममारगी होने के कारण अयुक्त समझ काट दिया था परन्तु दुर्भाग्य वश शङ्कराचार्य के चेलों ने विना समझे या किसी अपने प्रयोजन से वैदिक धर्म्म के उस हिस्से को जिसको बुद्ध ने स्थिर रक्खा था विलकुल उड़ादिया केवल वह भाग जिस को शङ्कराचार्य बुद्ध मत में मिलाकर उसकी त्रुटि को पूरा करना चाहते थे उसी को रख लिया अर्थात् जीव, प्रकृति जिसको बौद्ध मत वाले मानते थे शङ्कराचार्य इस में ब्रह्म को मिलाकर इस को पूरा वैदिक धर्म्म बनाना चाहते

थे परन्तु उनके चेलों ने प्रकृति और जीव को छड़ा कर केवल ब्रह्म अर्थात् एक तिहाई वैदिक धर्म का प्रचार शुरू किया और शेष पर विशेष ध्यान न दिया अब वैदिक धर्म के दो भाग होगए एक बौद्ध मत दूसरा अद्वैत वाद दोतिहाई भाग तौ बौद्ध मत ने ले लिया और एक भाग शङ्कराचार्य ने चेलों अर्थात् अद्वैत वादियों ने लिया परंतु यह तिहाई भाग विशेषतः प्रकाशक और हितकारी था इस वास्ते यह प्रबल पड़ा और पृथ्वी के प्रत्येक विभाग में फैल गया॥

देखो भाग दूसरा

॥ ओ३म् ॥

ट्रेक्ट नम्बर ६

मोहमुद्गर

जिस को

स्वामी दर्शनानंद सरस्वती जी ने

दयानन्द ट्रेक्ट सोसाइटी के हितार्थ रच कर

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

ज्वालापुर हरिद्वार में

प्रकाशित किया

—=+:※:+=—

४००० प्रति] [मूल्य)।

ओ३म्

* मोहमुद्गर *

मूढजहीहि धनागम तृष्णां-
कुरुतनुबुद्धिमनः सुवितृष्णां।
यल्लभसेनिजकर्मो पात्तं
वित्तं तेन विनोदय चित्तं १

हेमूढ़ ! धनागम की तृष्णा दूरकर।
शरीर में बुद्धि में और मनमें उसकेप्रति

वितृष्णा भाव प्रदर्शन कर तुमने अपने कर्म फल से जो प्राप्त किया है उससेही चित्तका संतोष कर । १ ।

कातवकान्ताकस्ते पुत्रःसंसा सेऽयमतीवविचित्रः। कस्य त्वंवाकुतआयातः तत्वंचिन्त यतदिदंभ्रातः॥ २ ॥

कौन तुम्हारी स्त्री तुम्हारा पुत्रही कौन है ! इस संसार का व्यापार अति विचित्र है । तुम किस के और कहा से आये हो ? हे भ्राताः ! इस गूढ तत्व की चिन्ता करो॥२॥

माकुरुधनजनयौवनगर्व्वं
हरतिनिमेषात्कालः सर्व्वं ।
मायामयमिदमखिलं हि-
त्वाब्रह्मपदंप्रविशाशुविदित्वा

धन, जन, यौवन का गर्व परित्याग करो, काल निमेष में इन सबको हरण करलेता है। माया मय इस सम्पूर्ण जगत् को परित्याग पूर्वक परम ब्रह्म पद जान उसमें शीघ्रता सहित प्रवेश करने का यत्न करो ॥ ३ ॥

नलिनीदलगततजलमतितर-
लंतद्वज्जीवनमतिशयचपलं।
क्षणमिहसज्जनसंगतिरेका
भवतिभवार्णवतरणेनौका ४

पद्म पत्र स्थित जल की समान
जीवन अत्यन्त चंचल है इस संसार में
केवल साधु संग ही अवलम्बनीय है, वही
संसार सागर से उत्तीर्ण होने के लिये
नौका स्वरूप है ॥ ४ ॥

यावज्जननंतावन्मरणं

तावज्जननीजठरेशयनं
इतिसंसारेस्फुटतरदोषः
कथमिह मानव तव सन्तोषः

जिस समय जन्म ग्रहण करता है,
तभी मृत्यु उसके पीछे २ आती है और
मृत्यु के पीछे पुर्नवार जननी के जठर में
प्रवेश करना होता है। संसार में यही
प्रकाशरूप से दोष दिखाई देता है।
अतएव हे मानव ? तुम्हारे संतोष का
क्या विषय है ॥ ५ ॥

दिनयामिन्यौसायम्प्रातः

शिशिरवसंतौपुनरायातः।
कालःक्रीडतिगच्छत्यायुः
तदपिनमुञ्चत्याशापाशः ८

दिन जाते हैं, रात्रि आती हैं। संध्या होती है, प्रातःकाल फिर होता है। शिशिर और बसन्त ऋतु बारम्बार आती जाती हैं करता है। जीव की परमायु दिन व्यतीत होती है, तथापि आशा फांस नहीं छूटती॥ ८॥

अंगंगलितंपलितंमुण्डं

दन्तविहीनंजातंतुण्डं ।
करधृतकंपितशोभितदण्डं
तदपिनमुञ्चत्याशाभाण्डं ७

शरीर गलित होता है शिरोदेश अवनत होगया है, मुख मण्डल दन्त विहीन हुआ जाता है, हस्त धृत यष्ठि (हाथ में धारण की हुई लकडी) हाथकी अवसन्नता प्रयुक्त कंपित और शोभित होती है, तो भी आशाभाण्ड परित्यक्त नहीं होता ७

सुरवरमन्दिरतरुतलवासः

शय्याभूतलमजिनंवासः ।
सर्व्वपरिग्रहभोगत्यागः
कस्यसुखंनकरोतिविरागः ८

देव मन्दिर के भीतर अथवा वृक्ष के नीचे वास. भूमितल में वास वा मृगचर्म पहरने से सर्व प्रकार परिग्रह और भोग सुख परित्यक्त होता है अर्थात् छूटजाता है, इस प्रकार का वैराग्य किसका सुखकारी नहीं होता ? ॥ ८ ॥

शत्रौमित्रेपुत्रेबंधौमाकुरुयत्नं
विग्रहसंधौ।भवसमचित्तःस-

र्व्वत्रत्वं वांछस्यचिराद् यदि विष्णुत्वं ॥ ९ ॥

शत्रु और मित्र, पुत्र अथवा बांधव, इन सबके ही प्रति समान यत्न करें। किसी के प्रति न्यूनाधिक न करें। विग्रह अथवा सन्धि दोनों में ही समान यत्न करें। यदि अचिर विष्णु पदकी वांछा करते हो, तो सर्वत्र समभाव से देखो ९

अष्टकुलचलसप्तसमुद्राः

ब्रह्मपुरन्दरदिनकररुद्राः।

नत्वंनाहंनायंलोकः
तदपिकिमर्थंक्रियतेशोकः॥

पर्वत श्रेणी के प्रधान प्रधान आठ कुलाचल और सात समुद्र और ब्रह्मा, देवराज, इन्द्र, सूर्य, रुद्र देव इत्यादि यह सब तुम अथवा मैं, इन सबमें कुछ भी इस लोक के लिये नहीं है अतएव किस लिये शोक करते हो॥ १०॥

त्वयिमयिचान्यत्रैकोविष्णुः
व्यर्थंकुप्यसि मय्यसहिष्णुः
सर्व्वंपश्यत्वन्यात्मानं सर्व्वत्रो

त्सृजभेदज्ञानं ११

तुममें मुझमें और अन्यत्र सम्पूर्ण वस्तु में ही केवल एक मात्र विष्णु ही विराजमान हैं। अतएव मेरे प्रति असंतुष्ट होकर किसलिये कोप करते हो ! अपनी आत्मा को अन्य आत्मा से स्वतंत्र मत समझो, वरन सर्व भूतकी आत्मा तुम में दिखाई देती है, सर्वत्र ही भेदज्ञान परित्याग करना चाहिये ॥ ११ ॥

बालस्तावत्क्रीडाशक्तस्तरुण स्तावत्तरुणीरक्तः। वृद्धस्ताव- च्चिन्तामग्नः परमेब्रह्मणिको

ऽपिनल्प्स: ॥ १२ ॥

बाल्यावस्था पर्यन्त क्रीड़ा (खेल) में ही आसक्त होकर दिन व्यतीत करते हैं, तरुण अवस्था के समय स्त्री में अनुरक्त रहते हैं, वृद्ध अवस्था के समय चिन्ता में ही मग्न होकर दिन व्यतीत होते हैं, अतएव कोई भी किसी समय में परब्रह्म में मन स्थिर नहीं करसकता १२

अर्थमनर्थंभावयानित्यंनास्ति ततः सुखलेश: सत्यं । पुत्रादपिधनभाजांभीतिः सर्व्वत्रैषाकथितानीतिः ॥ १३ ॥

प्रतिदिन केवल वृथा अर्थ चिन्ता करते हो, उसमें सुख का लेश मात्र भी नहीं है। क्योंकि धनवानों को पुत्र से भीते भी उनको भीति (डराहुआ) देखा जाता है यह नियम सर्व स्थल में कथित है

यावद्वित्तोपार्ज्जनशक्तः ताव न्निजपरिवारोरक्तः, तदनुच स्या जर्ज्जरदेहे वार्त्ताकोऽपि नपृच्छतिगेहे॥ १४ ॥

जबतक तुममें धन उपार्जन करने की सामर्थ है, तबतक ही तुम्हारा परिवार तुममें अनुरक्त रहेगा। फिर जब तुम्हारा

शरीर बृद्धावस्था से जर्जरीभूत होगा और धन उपार्जन की सामर्थ न रहेगी, तब तुम्हारी कोई बात तक भी न पूछेगा १४

कामं क्रोधं लोभं मोहं त्यक्त्वात्मा नं पश्यति कोऽहं, आत्मज्ञान विहीना मूढा स्ते पच्यन्ते नरके निगूढा ॥ १५ ॥

काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि परित्याग करके 'मैं कौन हूँ' आत्मा को इस भाव से अनुसंधान करो। इस प्रकार के आत्मज्ञान से हीन मूढ़ लोग ही नरक गामी होते हैं ॥ १५ ॥

षोडशपज्झटिकाभिरशेषः शि-
ष्याणांकथितोऽभ्युपदेशः येषां
नैषकरोतिविवेकं तेषांकः क-
तांमातिरेकं ॥१६॥

षोडश (सोलह) श्लोक पज्झटिका छन्द में लिखेगये हैं इस छन्द के क्रमसे अशेष शिष्यगणों को जो उपदेश दिया गया है, इससे भी जिनको उपदेश नहो अथवा विवेक उदय नहो, उनको ज्ञान उत्पन्न होने के लिये अन्य क्या उपाय होगा ! समझ में नहीं आता ॥ १६ ॥

॥ ओ३म् शम् ॥

॥ ओ३म् ॥

ट्रैक्ट नम्बर २[illegible]

अकालमृत्यु मीमांसा

प्रथम भाग

जिस को

स्वामी दर्शनानंदसरस्वती जी ने

दयानन्द ट्रेक्ट सोसाइटी के हितार्थ

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

हरिद्वार

छपवाया

—=:※:=—

प्रथम वार ५००० प्रति] [मूल्य)॥

ओ३म्

अकाल मृत्युमीमांसा ॥

"सिद्धार्थं सिद्धसम्बन्धं श्रोतुं श्रोता प्रवर्तते । शास्त्रादौ तेन वक्तव्यः सम्बन्धः सप्रयोजनः ।

हम को इस "अकालमृत्युममीमांसा" नामक विषय की आवश्यकता इस लिये हुई कि हमने जब यह विचारा यदि हम विचार कर देखें तो इस सृष्टि के आदि से आज जितने भी प्रसिद्ध युद्ध वीर धर्मविरोधिक पुरुष हुए उन से यदि पूर्वज वीरों की ओर दृष्टि डालें तो एक महान् ही आश्चर्य प्रतीत होता है। वह क्या आश्चर्य है? आश्चर्य यह कि पूर्व के यावत् पुरुष अर्जुन भीष्मादि पर्यन्त वीर हुवे हैं के अन्दर कौनसा ऐसा बल था कि जिसके भरोसे वे सहस्रों नहीं २ लक्षों क्रोड़ों मनुष्य वीरों के संग युद्ध करने

सम्यनद्ध हुवा करते और किञ्चिमात्र भी भय उनको नहीं होता था, यहां तक कि पुरु जैसे छोटे राज्य वाले राजा भी सिकन्दर जैसे बड़े बादशाह के साथ सेना रहित हुवे, चारों ओर से सेना से घिरा हुआ होने पर भी सिकन्दर से यह पूछे जाने पर कि हे पुरु! बतलाओ अब तुम अकेले हो हाथी पर आरूढ़ (सवार) हो; चरों ओर से सिकन्दर की महा चलिनी सेना से घिरे हुये स्वयं सेना रहित हो, ऐसी दशा में तुम्हारे साथ हम कैसा व्यवहार (सलूक) करें ? वह पुरु किञ्चिमात्र भी भय को प्राप्त नहीं होता और उस बल के आश्रय कि जो उन की आत्मा में वर्तमान है यह उत्तर देता है कि मुझ से वह व्यवहार करो कि "जो बादशाह बादशाहों के साथ करते है" अपने को भी बादशाह ही समझाना ऐसी दशा में किस बल के आश्रय है ?

प्रियवर! आजकल के वीरम्मन्यों की पूर्व काल वीरों के साथ यदि तुलना की जाये तो हँसी आती नहीं २ शोक होता है कि हा! भारत वसुन्धरा! क्या ऐसे वीर पुरुषों की प्रसविनी होने के स्थान में अब प्रति वन्ध्या ही होगई? परन्तु आप जानते हैं कि "कारणाभावात्कार्याभावः" इस ऋषि प्रोक्त नियम के अनुसार पूर्वोक्त आत्मिक बल अपने कारण के अभाव से नष्ट होजाने से ही नष्ट होगया; आवश्यकता इस ग्रन्थ की यह है कि, "आवश्यक है कि उस कारण का [जो इतने बड़े भारी

आत्मिक बल (जिस से पूर्व काल ऋषि और राजाओं की कीर्ति जगत् में सुप्रकाशित हुई) का हेतु है]. अन्वेषण (जहां तक होसके) किया जावे जिस से परमात्मा की कृपा से वैसे ही वीरपुरुष उत्पन्न होने सम्भव होसकें। उन अनेकशः कारणों में से जो कि मनुष्यों को महा भीरु (डरपोक) बनाने का हेतु है एक यह भी हेतु है कि " अकाल मृत्यु का विश्वास होना,, इस सब से मुख्य हेतु ने मनुष्यों को जो कि बड़े २ भारी धर्मवीर होने सम्भव थे अधर्मात्मा बनाये, इसी विश्वास ने जो बड़े २ युद्धवीर होने सम्भव थे महाभीरु बनाया कहां तक लिखें इसी कारण से यह भारत वर्ष जिस को मनु जैसे महात्मा भी यह कहा करते थे कि:—

एतद्देशप्रसुतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥ १ ॥

ऐसी दशा में गिरा दिया कि जिस के अन्य देशों में साधारणतया से भी गिरा दिया। सत्य है कि " सत्य मेव जयते नानृतम्,, सत्य ही का जय होता है न कि झूठका इस झूठे विश्वास ने मनुष्यों के आत्मिक बल का सर्व तो नाश कर दिया क्योंकि सचाई ही बल और जीवन है झूठे मनुष्यों को निर्बल

ना देता तथा मार देता है। यदि इस पुस्तक से थोड़े मनुष्यों
ो भी पर्याप्त उपकार होगा तो मैं अपने परिश्रम को सफल
समझता हुवा अन्यकार्य्य में प्रोत्साहित हूंगा।

प्रथम इस से कि हम अकाल मृत्यु के होने और न हो
की परीक्षा करें सर्व साधारण को यह समझ लेना आवश्यक
है कि जो मनुष्य अकाल मृत्यु को मानते हैं उन का यह
अकाल मृत्यु, शब्द भी ठीक है अथवा नहीं। यदि हमारे भाई
इस शब्द का यह अर्थ करें कि " बिना काल के मृत्यु का हो
जाना ,, यह तो सर्वथा अयुक्त है क्योंकि चाहे कभी क्यों ना
मृत्यु हो वह किसी न किसी काल में तो अवश्य होगी बिन
काल के मृत्यु का होना असम्भव है। महात्मा कणाद ऋषि ने
कहा है—

नित्येष्वभावादनित्येषु भावात्कारणे कालाख्या ॥ वै० द०

अर्थात् भूत भविष्यत् वर्तमानादि लक्षणों वाले काल का
नित्य पदार्थों में अभाव होता है और अनित्य पदार्थों में भाव
होता है इस लिये काल कारण है। जो पदार्थ नित्य होता है
उस के हुवा, होता है, होगा इत्यादि व्यवहार नहीं होते क्यों-
कि वह नित्य है। इसी प्रकार जो पदार्थ अनित्य होता है उस

संसर्ग हुई, होती है, होगी इत्यादि व्यवहार हुआ करते हैं जिस लिये कि मृत्यु होती है, अतः अनित्य है अनित्य होने से उस के साथ हुई, होती है, होगी इत्यादि काल का सम्बन्ध है। जब मृत्यु के साथ काल का सम्बन्ध है तो यह कहना कि "बिना काल के मृत्यु होजाना" सर्वथा अयुक्त है॥

प्रश्न-हम इस का यह अर्थ करते हैं कि "ईश्वर ने जितनी आयु यावत् प्राणियों की नियत (मुकर्रर) करदी उस नियत काल से पहिले अथवा पश्चात् किसी विघ्न विशेष से पहिले अथवा किसी सुकर्म विशेष से पश्चात् मृत्यु का होना अकाल मृत्यु कहलाता है। इस का उदाहरण यह है कि जैसे है एक दीपक तैल से परिपूर्ण हो जब तक वह तैल रहेगा तभी तक वह दीपक जलता रहेगा यहां तैल उस दीपक की आयु समझनी चाहिये।" बस जैसे तैल से परिपूर्ण दीपक तैल के समाप्त होने से पहिले वायु आदि के लगने रूप विघ्नों से निर्वाण (बुझा हुआ) होजाता है इसी प्रकार आयु के अधिक होने पर भी नाना प्रकार के सर्प का काटना, आग से जल जाना, पानी में डूबना रूप विघ्नों से प्राणी आयु समाप्ति से पहिले ही मर जाते हैं इसी का नाम अकाल मृत्यु है।

उ०—प्रथम तुम यह बतलाओ कि ईश्वर ने जो प्राणियों की आयु नियत की है वह ईश्वर के ज्ञान में है वा नहीं अर्थात् ईश्वर को आयु नियत करने से प्रथम यह ज्ञान था वा नहीं

कि "इस प्राणी की ऐसे २ कर्मों के अनुसार इतने काल तक आयु होनी चाहिये यदि कहो नहीं था तो क्या उसने कर्मों के अनुसार (जितने जैसे कर्म किये हों) आयु कैसे दी ? यदि कर्मों के विरुद्ध दी तो वह न्यायकारी नहीं। यदि तुम कहो कि ईश्वर को ज्ञान था तो ईश्वर के सत्य ज्ञानी होने से जैसा ईश्वर ने जाना था वैसाही आयु का काल होना चाहिये। न कि पहिले या पीछे अर्थात् जैसे ईश्वर ने किसी प्राणी की सौ वर्ष की आयु नियत की और ईश्वर को यह ज्ञान भी है कि यह प्राणी सौ वर्ष तक जीवित रहैगा अब यहां यदि वह मनुष्य सौ वर्ष से पहिले वा पीछे मर जावे तो ईश्वर को जो यह ज्ञान था कि "यह मनुष्य सौ वर्ष तक जीवित रहैगा ,, मिथ्या हो गया जिस लिये कि ईश्वर मिथ्या ज्ञानी नहीं है किन्तु सत्य ज्ञानी है अर्थात् जितने काल तक ईश्वर ने आयु नियत की है वह जान कर की है और ईश्वर ने जैसा आयु का काल जाना है उस के विपरीत हो नहीं सक्ता इस से सिद्ध हुवा कि आयु की समाप्ति से प्रथम कोई प्राणी नहीं मर सक्ता इस लिये अकाल मृत्यु नहीं होती॥

प्रश्न—यदि आप ऐसा कहेंगे तो ईश्वर के सर्वज्ञ होने से जैसा ईश्वर ने जाना है वैसा ही मनुष्य पाप पुण्य करेंगे यदि न करेंगे तो ईश्वर मिथ्या ज्ञानी होजायगा, यदि करेंगे तो मनुष्यों को पाप पुण्य के करने में परतन्त्र होने से अथवा वह पाप और पुण्य ही नहीं कहला सक्के और न किसी के

अविभक्त पाप और पुण्य दूर सके इस से पापों से बचना भी असमम्भ होगा। यदि आप इसे नहीं मानते तो आप उसे भी न मानिये कि जो आपने पहिले दोष दिया था क्योंकि दोन पक्ष समान हैं।

उत्तर—प्रियवर ! क्या ईश्वर ने जैसे आयु नियत की है (जैसे कि तुम्हारा भी पक्ष हुआ है) क्या इसी प्रकार प्राणियों के पाप पुण्य भी नियत कर दिये हैं यदि किये हैं तो क्या तुम्हारे पास इस पक्ष का पोषक कोई श्रुति, स्मृती अथवा युक्ति सिद्ध कोई प्रमाण है ? यदि कहो कि ईश्वर सर्वज्ञ है इस लिये तो हम पूछते हैं कि क्या ईश्वर सर्वज्ञ होने से अपना अन्त भी जानता है यदि जानता है तो ईश्वर के सत्यज्ञानी होनेसे ईश्वर अनन्त नहीं रहेगा। यदि कहो कि ईश्वर का अन्त ही नहीं है इस लिये जो पदार्थ अभावरूप है उस को ईश्वर भावरूप नहीं जानता क्योंकि ईश्वर मिथ्याज्ञानी हो जायगा तो ऐसे ही यहां भी समझो कि ईश्वर जीव के कर्मों को अव्यवस्थित ही जानता तो है अर्थात् यह ज्ञान नहीं है कि ये कर्म इस प्राणी के नियत है क्योंकि यदि अनियत को नियत जान जावे तो ईश्वर मिथ्या ज्ञानी हो जावे इस लिये तुम्हारी शङ्का ही भ्रम मूलक है क्यों कि अनियत कर्मों का अनियत होने का ज्ञान ही सत्यज्ञान है परन्तु तुम्हारा पक्ष ही यह है कि आयु ईश्वर ने नियत की है इस लिये नियत आयु का ही नियत होने का ज्ञान सत्य ज्ञान है न कि अनियत कर्मों के नियत होने का ज्ञान इस से अनि-

यत और नियत की परस्पर तुलना (मुकाबला) करना
अयुक्त है।

यदि तुम यह कहो कि आयु भी नियत नहीं है तो किस अवधि से पहिले मर ने को तुम अकाल मृत्यु कहो गे क्योंकि अनियत होने की दशा में कोई अवधि ही नहीं रहती। दूसरे अनियत मानने में तुम्हारे (पहिले जो पक्ष किया गयाथा उस) पक्ष की भी हानि होगी इससे प्रतिज्ञा हानि नामक निग्रहस्थान से निगृहीय होजाओगे, तीसरे आयु के अनियत मानने में ईश्वरका नियम ही क्या रहेगा ? आयु का मिलना किसी कर्म का फल न रहैगा क्योंकि कर्म का फल अनियत नहीं होता॥

तथा—

सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः। यो.द.

अर्थात् मूल कर्मों के विद्यमान होने से ही योनि, आयु और भोग होते हैं इस महर्षि पतञ्जलि के वाक्य की क्या सङ्गति करोगे ? क्योंकि जब योनि आयु और भोग तीनों विपाक हैं तो वात्स्यायन मुनि के कथनानुसार (जो कि आगे दिखाया भी जावेगा) सब कर्मों के पीछे के जन्मों में विपाक (फल दायक) होने से इस जन्म के कर्मों से अगाड़ी और पूर्व जन्मों के कर्मों से वर्तमान जन्म की आयु नियत होनी चाहिये और तुमने जो यह कहा था कि " जैसे दीपक अपनी आयुरूप तैल के होते हुये भी निर्वाण (बुताहुवा) होजाता है ऐसेही मनुष्य भी अपनी आयु से प्रथम मरजाता है। "

यह भी ठीक नहीं क्योंकि प्रथम तो दीपक की आयु जिस ने नियत की है वह मनुष्य होने से सर्वज्ञ नहीं हो सकता इस-से दीपक के (तैल की समाप्ति से पहिले) बुझ जाने से भी मनुष्य का जो यह ज्ञान था कि "यह दीपक जब तक तैल रहेगा तब तक प्रज्वलित रहेगा यदि मिथ्या हो जावे तब भी कोई हानि नहीं क्योंकि मनुष्य के ज्ञान में प्रमादि दोष होना सम्भव है परन्तु यदि आयु के नियत कर्ता सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् परमात्मा के ज्ञान में भी दोष आजावे तो बडा भारी हानि है क्योंकि सर्वज्ञ होने से उस में प्रमादि दोष का होना असम्भव है इस से अल्पज्ञ और सर्वज्ञ की तुलना करना बडी भारी अज्ञान है।"

दूसरे– तुमने जो यह दृष्टान्त दिया कि दीपक तैल समाप्ति से पहिले ही बुझ जाता है तो यहां यह सोचना चाहिये कि जैसे किसी प्राणी की आयु सौ वर्ष की नियत की गई हो यदि वह पचास वर्ष की आयु में तुम्हारे कथनानुसार अकाल मृत्यु से मर जावे तो अब जो उस का दूसरा जन्म होगा तो वह शेष आयु पचास वर्ष तक जीवेगा और पचास वर्ष की समाप्ति होने पर मर जावेगा उस मनुष्य के विषय में तुम तो यह कहते हो कि "जिस लिये कि यह सौ वर्ष तक जीवित न रहा, किन्तु पचास ही वर्ष में मर गया इस लिये यह अकाल मृत्यु से मरा है,, यह कथन ठीक है अथवा वह अपनी आयु के अनुसार ही मरा है यह कथन ठीक है। तुम्हारे निकट उन मनुष्यों के विषय में कि जो सौ वर्ष से पहिले ही मर जाते हैं क्या प्रमाण है कि

जो वह सिद्ध करे कि यह अकाल मृत्यु से मरा है, अथवा पूर्व जन्मों की भोगी हुई आयु से शेष रही आयु को भोग कर ?

तीसरे—तुम्हारे पक्ष में मनुष्य की सौ वर्ष की आयु होने में कल्पना करो कि किसी मनुष्य की आयु सौ वर्ष की है और जब वह एक वर्ष की हुआ तब किसी ने मार डाला, इसी प्रकार जब वही दूसरे जन्म में एक वर्ष का हुआ तब भी मार डाला ऐसे ही तीसरे जन्म में प्रयोजन यह है कि अकाल मृत्यु के संभव होने से सौ बार हो यदि एक २ वर्ष की हो हो कर अकाल मृत्यु से मर जावे, अब उस ने अपनी आयु में मरण जन्म का दुःख सुख तो भोगा परन्तु उसे कर्म करने का अवसर ही नहीं मिला क्योंकि एक वर्ष के बच्चे को धर्माऽधर्म का अधिकार ही नहीं। इस से मनुष्य योनि जो उभय योनि माना गया है वह नहीं रहा केवल भोग योनि ही रहा नाकि कर्म योनि भी।

प्र०—कर्म योनि, भोग योनि और उभय योनि इन को स्पष्ट करके समझाओ।

उ०—त्रिधा त्रयाणां व्यवस्था कर्मदेहो भयदेहाः। सां० द०

महात्मा कपिलजी कहते हैं कि व्यवस्था से योनि तीन प्रकार की है १—कर्म योनि, २—उपभोग योनि ३—उभय योनि। इन तीनों में से कर्म योनि वे ऋषि हैं कि जो सृष्टि के आदि में मुक्ति से लौट कर आते हैं, उन्हें कर्म योनि इस लिये कहते हैं कि

वे पूर्व जन्म के पाप और पुण्य के अभाव से दुःख सुख नहीं भोगते, किन्तु कर्म ही करते हैं। अच्छे कर्मों से अच्छा और बुरे कर्मों से बुरा फल उन्हें उस जन्म से अगले जन्मों में मिलता है और उन का यह जन्म पुनरपि तत्वज्ञान के द्वारा मुक्ति प्राप्त होने के प्रयोजन ईश्वर की दया से होता है परन्तु वे कर्म में स्वतन्त्र ही रहते हैं। दूसरी योनि उपभोग योनि है वे ईश्वर के न्यायानुसार केवल दुःख सुख भोगने के अर्थ ही होती हैं पाप पुण्य करने के लिये नहीं। जैसे पशु पक्षी आदि। तीसरे उभय योनि जो दुःख सुख भोगने और कर्म करने के लिये भी होती हैं जैसे मनुष्य की। बस जो मनुष्य सौ वर्ष की आयु को लेकर एक २ वर्ष का हो २ कर सौ बार मर जावे तो उसे कर्म करने का अवकाश ही नहीं मिला तो उभय योनि न रही। चौथे—तुम्हारे पास इस विषय में क्या प्रमाण है कि मनुष्य की आयु सौ ही वर्ष की होती है? यदि नहीं है तो आयु की अवधि न होने से किसी अवधि से पहिले मरने को अकाल मृत्यु कहोगे?

उ०—सौ वर्ष की आयु होती है इस विषय में शब्द प्रमाण है जैसा कि सन्ध्या में भी लिखा है कि—

जीवेम शरदः शतम्

अर्थात् हम सौ वर्ष तक जीवें। और दूसरा प्रमाण यह कि:

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः

एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म
लिप्यते नरे। यजुः॥

अर्थात् ईश्वर उपदेश करते हैं कि जीव! तू (वह) इस जन्म अथवा जगत् में (कर्माणि कुर्वन्नेव जिजीविषेत) कर्मों को करता हुआ ही जीने की इच्छा करे, कब तक ? (शतं समाः) सौ वर्ष पर्य्यन्त, इस से क्या लाभ होगा? (एवम् इस प्रकार से (त्वयि नरे कर्म न लिप्यते) तुझ नर में कर्म लिप्त नहीं होगा पर मैं (नेतोऽन्यथास्ति) इस से-
अन्य प्रकार से कर्म लिप्त होने से पृथक नहीं हो सका। यहां भी सौ वर्ष की आयु बतलाई है॥

परिहार—तुम ने जो इन दो मन्त्रों से सौ वर्ष की आयु सिद्ध की है वह ठीक नहीं क्योंकि तुमने पहिला मन्त्र यह दिया है कि:

जीवेम शरदः शतम्।

हम सौ वर्ष तक जीवे। इस से तुम्हारा पक्ष यह सिद्ध नहीं होता कि आयु सौ वर्ष की होती है प्रत्युत यह मन्त्र प्रार्थना विषयक है इस मन्त्र में यह प्रार्थना की गई है हम सौ वर्ष की तक जीवें इस से सौ वर्ष की आयु ही है॥

यह सिद्धान्त नहीं होता क्यो जब यह प्रार्थना की "जावे हे ईश्वर हमें चक्रवर्त्ती राज्य का सुख दे" तब क्या यह सिद्ध होता है कि सब चक्रवर्त्ती राजा हैं। सब मनुष्यों का चक्रवर्त्ती राजा होना असम्भव नहीं तो क्या है?

इसी प्रकार सौ वर्ष के जीने के लिये प्रार्थना किये जाने पर सब मनुष्यों की सौ वर्ष की आयु समझाना भी अज्ञान है। वास्तव में प्रार्थना उस वस्तु की जाती है जो अपनी जाति (किस्म) में सब से उत्तम हो जितने राज्य हैं उन में सब से बड़ा चक्रवर्त्ती राज्य है इस लिये उस की प्रार्थना की गई इसी प्रकार जित ने प्रकार की आयु है उन में सब से बड़ी मनुष्य की आयु सौ वर्ष की है इस लिये उस की प्रार्थना कीगई। योगियों की चार सौ वर्ष तक अधिक से अधिक रहती है, इस से उस को चार सौ वर्ष तक जीने के लिये इच्छा की गई इत्यादि। दूसरे प्रार्थना उस वस्तु की की जाती है जो अप्राप्त (प्राप्त न हुई) हो और इष्ट भी हो, यदि हमें सौ वर्ष की आयु प्राप्त है तो उस की प्रार्थना कैसी ?

उ०—यदि हम यह मान लगे कि आयु तो सौ वर्ष की ही है परन्तु बीच में जो विघ्न आवेंगे उन के हटाने के लिये प्रार्थना की जाती है तब क्या कह सकोगे ?

समाधान----जब तुम्हारी अकाल मृत्यु अवश्य होनी है तो क्या प्रार्थना करने से हट जावेगी ? अथवा क्या कहीं प्रार्थना का यह फल लिखा है ? यदि नहीं तो तुम्हरा कथन ही अयुक्त है और तुमने जो दूसरा मन्त्र यह दिया था कि—

कुर्वन्नवेह कर्माणि जिजीषेच्छतᳬसमाः ।

एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥ यजु ॥

इस मन्त्र से भी यह सिद्ध नहीं होता कि आयु सौ वर्ष की है किन्तु इस में यह आज्ञा दी कि तू सौ वर्ष तक जीने की इच्छा कर। क्या परमात्मा ने यहां यह आज्ञा दी है कि तू सब शुभ कर्मों को कर और अशुभ कर्मों को परित्याग कर। इस से यह सिद्ध होता है कि सब जीवों ने शुभ कर्मों को ग्रहण और अशुभ कर्मों का परित्याग कर रक्खा है। इसी प्रकार ईश्वर की सौ वर्ष तक जीने की आज्ञा होनेसेभी यह सिद्ध नहीं होता कि सब मनुष्यों की सौ वर्ष की आयु है क्योंकि आज्ञा भी सौ वर्ष तक जीने वाले को ही सौ वर्ष तक जीने के लिये दी जाती है नहीं तो आज्ञा कैसी ?

देखो भाग दूसरा

॥ ओ३म् ॥

टेरेक्ट नम्बर १७

स्थावर में जीव विचार

जिस को

स्वामी दर्शनानंद सरस्वती जी ने

दयानन्द टरेक्ट सोसाइटी के हितार्थ

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

ज्वालापुर हरिद्वार में

छपवाया

—=+:※:+=—

४००० [प्रति [मूल्य)।

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गौशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

ओ३म्

स्थावर में जीव विचार

प्रथम भाग

प्रिय पाठक वर ! आज कल इस उपर्युक्त विषय पर बड़े २ नाना प्रकार के प्रश्न और शङ्कायें उठती हैं कि वृक्षों में जीव है या नहीं ? परन्तु सत्य के अन्वेषक और निष्पक्ष विद्वानों ने इस बात को निर्णय कर लिया है कि वृक्षों में जीव नहीं है ! तथा पृच्छकों को भी महती शान्ति से निर्णय करा दिया कि "वृक्षों में जीव नहीं है"। यद्यपि अभाव वादियों पर प्रमाणादि का भार नहीं होता किन्तु भाव का सिद्ध न होना ही उन का प्रमाण है। इस से हमें प्रमाणों की कुछ आवश्यकता तो नहीं देखो ब्रा०, स० । परन्तु सत्य निर्णयार्थ यह प्रकरण है।

वाचक वृन्द ! हमारा यह पक्ष वा हठ नहीं है कि विना ही प्रमाण के किसी बात को मान लिया जावे किन्तु भली प्रकार से निर्णय कर के मानना चाहिये । इसी लिये हम इस बात

को यहां से आरम्भ कर के आगामी सम्पूर्ण तर्कों का प्रत्याख्यान करते हुए [जो इस विषय के विरुद्ध हैं] सत्य के जिज्ञासुओं के हितार्थ इस विषय को सिद्ध करेंगे।

पाठकों को यहभी अवगत हो कि शरीर में दो प्रकार के जीव रहते हैं। प्रथम अनुशायी [जो उस शरीर को अपना नहीं समझते और एक ही शरीर में बहुत रहा करते हैं] और दूसरे अभिमानी [जो उस शरीर को अपना समझते और उस शरीर में व्यापक व एक होता है] इस लिये ऊपर के विषय से अभिमानी का निषेध समझना चाहिये॥

इसी विषय में भीमसेन जी का ब्रा० स० पत्र में लेख है। प्रथम हम उसी की समालोचना करते हैं। क्यों कि आजकल पं० भीमसेन जी ही स० ध० सभा के पण्डिताधिराज अवतारवत माननीय हैं - और उन का ब्रा० स० पत्र भी स्वतः प्रमाणवत समझा जाता है इस लिये उन के ही परास्तत्व में धर्म सभा के सब पण्डितों का परास्त होना समझना चाहिये

ब्राह्मण सर्वस्व में एक स्थान में भीमसेन जी स्वीकार करते हैं कि " वृक्षों में जीव न मानना सायंस के विरुद्ध है ,, [और आगे] वृक्षों में जीव स्वामी दयानन्द जीभी मनते थे

प्रथम पक्ष में तो यह प्रश्न है कि क्या आप सायंस को जान कर उस के विरुद्ध कहते हैं या न जान कर ? यदि कहो न जान कर तो विना जाने किसी के विरुद्ध कहना कोई

विद्वान् ठीक नहीं कहसकता। कदाचित कोई भवादृश पण्डित स्वीकार करले तौ दूसरी बात है, अस्तु।

यदि कहो जान कर, तौ अंग्रेजी सायंस को जान कर या संस्कृत सायंस को? अब बतलाए कि किस पुरुष से आपने अङ्गरेजी सायंस को सीखा और वह सर्वथा ठीक है या नहीं। यदि कहो संस्कृत सायंस को जान कर, तौ संस्कृत सायंस [पदार्थ विज्ञान] महर्षि कणाद विरचित वैशेषिक है और कणाद ऋषि वृक्षों में जीव नहीं मानते, जिसकी साक्षी महर्षि स्वामी शङ्कराचार्य्य स्वयं वृक्षों में जीव मानते हुएभी निष्पक्षता से लिखते हैं। देखो छान्दोग्य उपनिषद्--

अस्य यदेकाᳵ शाखांजीवो जहात्यथ सा शुष्यति द्वितीयां जहात्यथ सा शुष्यति तृतीयां जहात्यथ सा शु. इत्यादि ॥

इसी के भाष्य में स्वामी शङ्कराचार्य जी [स्वयम् वृक्षों में जीव मानते हुए भी] अपनी सम्मति को ऋषियों से मिलाकर झूठमूठ कुछ नहीं लिखते, किन्तु स्पष्ट कहते हैं कि

बौद्ध कणाद मतमचेतनाः स्थावरा इति

अर्थात् बौद्ध और कणाद ऋषि के मत में स्थावर अर्थात् वृक्षों में जीव नहीं है।

अब या तो पं० जी इस से अर्थ ही पलट दें जिस से सनातनी भाइयों को सन्तोष हो। नहीं तो कहदें कि प्रक्षिप्त [मिलावटी] है, परन्तु भीमसेन जी कब लिखेंगे क्यों कि उन्हों ने तो आ० स० में ये काम आर्यसमाजी और नास्तिकों के बतलाए हैं। सो हमें आशा है कि भी० से० जी ऐसा तो नहीं करेंगे, नहीं इसनो पर हरताल ही लगा दें। अथवा भाष्यकार जी को कहदें कि वे समझे नहीं थे। यदि आप कुछभी न करें तो क्यों न मानलेते कि "वृक्षों में जीव नहीं है॥

कदाचित आप इस लिये डरते हो कि हमें मनुष्य क्षणिक बुद्धि न कहदें कि कभी कुछ मानते हैं और कभी कुछ, तो दूसरी बात है।

आ० स० भा० १ अं० ३ पृ० १०२ में लिखा है कि जब काशी के पं० यह [मनुस्मृति सारी प्रमाण है] मानते हैं तो फिर हम नहीं जानते कि वहां के पण्डितों से अधिकतर संस्कृत [केवल व्याकरण] के अन्य कौन विद्वान् हैं।

उ०–विचारशील पाठकजन! यद्यपि व्याकरण संस्कृत विद्या में बहुत उपयोगी है परन्तु जो मनुष्य केवल व्याकरण पढ़ और दर्शनादि कुछ न पढ़ कर अपने को कृतकृत्य समझ लेते हैं यह उन की भूल है। और हां यह तो बतलाए कि आप जब आर्य-समाजी थे तब क्या आप संस्कृत (अष्टाध्याय्यादि) भी नहीं जानते थे? यदि आप संस्कृत के विद्वान् थे तो फिर

आपने भी तो मनु के श्लोकों को प्रक्षिप्त * माना था अथ वा आपने कुछ भी नहीं पढा था अब धर्म सभा में आकर ह्व द्वादशाक्षरी आरम्भ की है। कृपया गुरु का ही नाम बतला दीजिये जिससे आपने एक ही वार पलटा खाय और नेत्र खुलवा कहदीजिये कि हम जब आर्य्यसमाजी थे सर्वथा अविद्वान्थे। और इसी लिये आर्य्यसमाज के सिद्धान्त समझ में नहीं आते थे। स्वामी दयान्द जी के वि में हम क्या लिखेंगे कि वे संस्कृत के कितने विद्वान्थे। कृपय काशी के शास्त्रार्थ को ही पढ लीजिये और अपने निष्पक्ष नातनी भाइयों से ही पूछ लीजिये। या अपने उपनिषदादि भाष्य पर ही सन्तोष किजिये जहां स्पष्ट लिखा है कि " स्वामी दयान्द जी के शिष्य भीमसेन जी " यदि आप कहें भूल से लिखदिया तो आप का यह कथन भूल रहित नह होसक्ता क्योंकि भूल का न होना ऐकान्तिक नहीं रहा।

आगे आपने जो लिखा है कि "मनुस्मृति के इन श्लोकों तो स्वामी जी ने भी माना है" क्योंकि उन्होंने सत्यार्थप्र० लिख है जैसा कि 'याति स्थावरतां नरः०' सत्यार्थप्र० पृ० २५ तथा 'स्थावराः कृमिकीटाश्च०' स० पृ० २५५ में २ चाहिये जबकि स्वामिजी ने भी इन श्लोकों को अप्रमाण नहीं तब सिद्ध हुवा कि वृक्षों में जीव है क्योंकि यदि स्मामी वृक्षों में जीव नहीं मानते तो अवश्य प्राक्षिप्त कहते।

* प्रमाणार्थ देखो मनुस्मृति के भाष्य का उपोद्घात

उ०—प्रथम तो किसी ग्रन्थकार के पुस्तक में किन्हीं श्लो-
कों का लिखा होना इस बातका प्रमाण नहीं कि ग्रन्थकार उन्हें
मानता है। यदि कहो कहीं प्रक्षिप्त नहीं लिखा इसलिये प्रमाण
है तो भी ठीक नहीं क्योंकि सम्भव है कि किसी सिद्धान्त के
प्रमाण में उन श्लोकों को अंशमात्र प्रमाण दिखलाने का स-
म्पूरण श्लोक लिखगये हों और उनका कुछ अंश अप्रमाण भी
हो परन्तु इतने से वह ग्रन्थकार का मन्तव्य नहीं समझा
जाता।

पाठकवर्ग! यहां हम उक्त बात (लेख) की पुष्टि में उदा-
हरणवत् यह दिखलाना उचित समझते हैं कि स्वामीजी ने कि-
सी अंश में प्रमाण दिखलाने का सम्पूर्ण श्लोक भी मनुस्मृती
का लिखा है। और वह यह है:—

सत्यार्थप्र० पृ० २९ से इस विषका वर्णन है कि आधुनिक
कल्पित भूतप्रेत कोई नहीं होते किन्तु जो होचुके वे भूत तथा
मृतक को प्रेत कहते हैं। इसी विषय में स्वमी जी मनु का यह
श्लोक सम्पूर्ण अर्थ सहित लिखते हैं—

"गुरोः "प्रेतस्य" शिष्यस्तु पितृमेधं
समाचरन्। प्रेतहारैः समं तत्र दश-
रात्रेण शुद्ध्यति।

इसका सारा अर्थ भी स्वमीजीने लिखा है परन्तु स्वामी जी का प्रयोजन केवल इससे है कि " मनु के अनुसार भी "प्रेत,, मृतक को कहते हैं, आधुनिक कल्पित प्रेत को नहीं।,, और सारे श्लोक को स्वामी जी नहीं मानते। और नहीं यहां यह लिखा है कि यह श्लोक प्रक्षिप्त है। इससे ये स्वमीजी का मन्तव्य नहीं हो सकता।

पाठकवर्ग ! यह तो स्पष्ट है कि किसी अंश में प्रमाण दिखलाने के लिये सम्पूर्ण श्लोक भी अर्थसहित स्वामीजी लिख देते हैं और प्रक्षिप्त कहने की उपेक्षा करते हैं। इसी प्रकार मनु के श्लोक भी (जैसे यहां "प्रेत ,, के अर्थ की पुष्टि की है वैसे ही) इस बात के पुष्टि करने के लिये कि "पाप पुण्य के नानाविध होने से जन्मादि भी नानाविध होते हैं,, सम्पूर्ण श्लोक के लिखेगये हैं। परन्तु इतने से वे सर्वंश में प्रमाण नहीं होते।

प्र० इसका क्या प्रमाण है कि स्वामी ने जो सत्यार्थ० आदि में मनुस्मती के वाक्य लिखे हैं उन सब को स्वामी ने सर्वांश में प्रमाण नहीं मानते ? .

उ०—इस बात का दृढ़ तथा स्पष्ट प्रमानहै क्योंकि यजुर्वेदभ्य के प्रथमाङ्क के आदि में ही स्वामीजी स्वयं विज्ञापन देते हैं उस का प्रयोजन यह है कि (सत्यार्थप्र० आदि ग्रन्थों में जो बहुत से श्लोक "मनुस्मृति,, तथा अन्यान्य ग्रन्थों के लिखे हैं उन का मैं सर्वंश में सब को मैं प्रमाण नहीं मानता किन्तु वेदानु-

कूळ को साक्षिवत् प्रमाण मानता हूं और वेद विरुद्ध का नहीं)
यदि कोई कहै कि सब श्लोक क्यों लिखे हैं ? इसका उत्तर भी
स्वामीजी यहीं देते हैं कि [उन२ ग्रन्थों के मतों को जानने के लिये
लिखे हैं] इससे स्पष्ट है कि स्वामीजी सब श्लोकों को (सत्यप्र०
में लिखे होने पर भी) प्रमाण नहीं मानते । फिर ये कैसे कह
सकते हैं कि "स्वामीजी ने जो प्रमाण मनुस्मृति के लिखे वे सब
स्वामीजी ने माने हैं और इसीलिये मनु के अनुसार स्वामीजी
वृक्षों में जीव मानते हैं,, क्योंकि यदि मनु के सारे श्लोक प्रमाण
होते तो विज्ञापन की क्या आवश्यकता था ?

प्र०— प्रियवर! अभी तो यह सिद्ध करना बहुत दुःसाध्य है
कि स्वामीजी वृक्षो में नहीं मानते थे " क्योंकि प्रेतको पुष्ट्यर्थ जो
मनु का श्लोक लिखा है इस श्लोक में " जो दश रात्रोंके पश्चात्
शुद्ध होता है,, इतना वाक्य है वह तो तुम्हारे कहने से प्राक्षि-
प्त भी सिद्ध होजायगा तो इसलिये कि स्वमी जी ऐसी बातों
को नहीं मावते इसलिये यह प्रक्षिप्त है । परन्तु जहां वृक्षो में
जीव का बोध होता है वहां के श्लोक भी तभी अप्रमाण समझे
जायेंगे जब तुम यह कहीं लिखा दिखलादो कि स्वमी जी ने
वृक्षो मे जीव का निषेध किया है और वेदाविरुद्ध है ॥

उत्तर—विचारशील जनो ! जैसे हमप्रेतार्थ पुष्टि के लिये
स्वामीजीका लिखा हुवा श्लोक सर्वांशमें प्रमाण नहीं मानते क्यों

कि ऐसी बातों को स्वमी जी नहीं मानते थे। इसी प्रकार
मनु के श्लोकों को भी सर्वांश में प्रमाण नहीं मानते।
यहां मनुस्मृति के अनुसार पाप पुण्य की बहुत प्रकार कीग
दिखलाने के लिये मनुस्मृति के प्रकारवश सब श्लोक
गये उन में से जो श्लोक मनुस्मृति के इस विषय को सिद्ध
हैं कि " स्थावर में जीव है " उन को स्वमी जी कभी
नहीं मानते थे।

अब हम इस बात को दिखलाते हैं कि स्वमीजी ने
चर में जीव का निषेध कहां किया है? क्योंकि जैसे भूत
दि को स्वमी जी का अमन्तव्य समझ कर मनु के
उसी विषय में प्रमाण मानना चाहिये न कि सर्वांश में
कि सर्वांश स्वमी जी के सिद्धान्त के विरुद्ध हैं। इसी
मनु के श्लोक यहां भी सर्वांश मे प्रमाण नहीं क्योंकि
जी स्थावर में जीव नहीं मानते न उन्होंने अपने "स्वमन्त
न्तव्य प्रकाशादि" में कहीं लिखा है प्रत्युत जिस सत्यार्थ
में मनु के श्लोक उद्धृत हैं उसी सत्यार्थ प्र० में तो
ही इस का निषेध किया है—देखो स० प्र० १
१५ पं० २४ ईश्वर नाम व्याख्या प्रकरण में स्वामी जी
हैं कि—

सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ।

इस यजुर्वेद के वचन से जो " जगत् " नाम प्राणी चेतन
ार [जङ्गम] अर्थात् जो चलते फिरते हैं । " तस्थुषः "
प्राणी अर्थात् स्थावर [जड़पदार्थ]

अब यहां स्थावर का अर्थ जड अर्थात् जीव रहित स्पष्ट
और दूसरे यहां वेद के मन्त्रार्थाऽनुसार स्वामी जी ने
ों में जीव का निषेध किया है । अब सोचिये कि एक दृढ़
ापन के होते हुए और मनु को सर्वांश में अप्रमाण होते
, स्वामी जी का स्थावर [वृक्ष] को जड़ (जीव रहित)
ाव्य होते हुए, किसी ऐसी वैसी रद्दी पुस्तक का अर्थ नहीं
तु वेद मन्त्र का अर्थ यह करते हुए कि स्थावर (जड़)
ात् जीव रहित है, और मनु के दो श्लोकों को जो स्वामी
ने लिखे हैं उन को वेद विरुद्ध होते हुए यह कह देना कि
ी जी वृक्षों में जीव मानते थे, कितने शोक की बात है।

प्रिय भ्रातृवर्ग ! स्वामी जी तो वेदों को स्वतः प्रमाण
र थे और अन्य ग्रन्थों को परतः प्रमाण अर्थात् वेद से
ग्रन्थों में यदि एक भी शब्द वेद से विरुद्ध दीख पड़े वह
ाण समझा जाता था--परन्तु अन्य ग्रन्थों (मनुस्मृत्यादि)
ब्द भी यदि वेद में हो तो वह प्रमाण है । भला जब
न्त्रार्थ में स्वामी जी ने स्थावर का अर्थ जड़ (जीव-
) बतलाया है (जैसा कि पूर्व लेख से स्पष्ट है) तब
न्त्र के विरुद्ध चाहे कितने ही ग्रन्थों के श्लोक क्यों

न हों वे सब स्वामी जी के अमाननीय हैं जैसा कि मनुजी स्वयम् लिखते हैं ।

या वेदबाह्याः स्मृतयो याश्चकाश्च कुदृष्टयः सर्वास्ता निष्फलः प्रेत्य तमोनिष्ठा हि ताः स्मृताः । मनुः ॥

इस को स्वामी जी ने भी स० प्र० में लिखा है । इस का प्रयोजन यह है कि जो स्मृति वेदानुकूल न हों वे सब निष्फल (अप्रमाण) हैं अब स्वामी जी को 'वृक्षों में जीव मानने वाला, कहने वाले भाई सोचें कि वेद मन्त्र के विरुद्ध समझते हुए (जैसा कि हमने ऊपर स० प्र० से उद्धृत करालिखा है) उस (वेद) के विरुद्ध केवल दो श्लोक मनुस्मृति के स्वामीजी कैसे मान सकते हैं? क्योंकि स्वामीजी तौ वेदाभिन्न को परतः प्रमाण और वेद विरुद्ध को अप्रमाण मानते है। इसी लिये स्वामी जी ने उक्त विज्ञापन दिया था जिससे मनुष्यों को भ्रम न हो । यदि इतने पर भी आप नहीं मानते तौ बतलाइये कि यह पक्षपात नहीं तौ क्या है ?

विचारशील पाठक जन ! जो मनुष्य यह हठ रखते हैं कि मनुस्मृति सारी प्रमाण है उन के लिये यह १ श्लोक उदाहरण वत् लिखते हैं ॥

और अपने भाइयों से पूछते है कि तुम इस श्लोक को मानते तथा तदनुसार आचरण करते हो या नहीं जैसा कि मनु ने लिखा है तथा हि—

यज्ञार्थं ब्राह्मणैर्वध्या प्रशस्ता मृगपक्षिणः। भृत्यानाञ्चैव वृत्त्यर्थमगस्त्योह्याचरत्पुरा ॥

इसका अर्थ यह है कि " ब्राह्मणों को यज्ञ के लिये उत्तमोत्तम मृग अर्थात् पशुमात्र एवं पक्षी भी मारने चाहिये —(कदाचित् हमारे हिन्दू भाई कहदें कि " वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति ,, अर्थ—वेदविधि से की हुइ हिंसा " हिंसा ,, नहीं कहलाती तो) यहीं तक इति श्री नहीं है किन्तु यह भी तो कहा है कि ' भृत्यां० ,, अर्थात् अपने भृत्यवर्ग (नोकरों) के (वृत्ति) रोजगार के लिये भी उत्तमोत्तम पशु तथा पक्षी मारने चाहिये

अब क्या कोई ऋषिसन्तान आप के सिद्धान्त के अनुसार मनुस्मृति को सर्वांश में प्रमाण मानकर मनु के इन श्लोक को मानेगा ! क्या इस के अनुसार वह आचरण करेगा अर्थात् यज्ञ के लिये, एवम् (दरिद्रवत् धन न देसकने केकारण पशुपक्षी मारकर) अपने नोकरों के रोज़गार के लिये यह कर्म करके धर्मात्मा कहलायगा ?

अथवा कथा प० भी० से० जी ने अपनी पार्टी में कोई ऐसे ब्राह्मण तयार किये हैं जिन्हो ने पशु पक्षी ओं को मारना ही अपना धर्म समझा हो, जब कि मनु ने लिखा है –

"अहिंसा परमो धर्मः,,

अर्थात् हिंसा न करना परमधर्म है ।

भाई लोगो! थोड़ा सोचो आप को इससे भी बढ़ कर (मनु तथा अन्यान्य ग्रन्थों) घृणित बातें मिलेगी, जब तक आप उन्हे प्राक्षिप्त और अप्रमाण न माने तबतक निर्वाह नहीं होगा, यदि प्राक्षिप्त होने का अधिक प्रमाण देखना हो तो महाभारत में देखो ।

प्रश्न—स्वमी जी ने स०प्र० में जो स्थावर का अर्थ जड किया है उस से नहीं सिद्ध हो सका कि स्वामी जी ने वृक्षों में जीव नहीं माना क्योंकि वृक्ष, योनि अर्थात् शरीर है और शरीर जड़ होता ही है इसी को सोच कर कि स्थावर शरीर जड़ होते हैं स्वामी जी ने स्थावर को जड लिखा है परन्तु इससे यह अभिप्राय निकलता है कि शरीर जड और जीव चेतन होता है किन्तु यह प्रयोजन नहीं कि स्थावर में जीव नहीं होता और दूसरे यहां स्थावर शब्द है वृक्ष शब्द नहीं कदाचित् स्थावर शब्द से अन्य ही अभिप्राय हो । इस लिये; जब तक दृढ प्रमाण और युक्ति न दी जायेगा तब तक स्वामी जी का वृक्षों में जीव न मानना सिद्ध नहीं होगा ॥

उ०—आप जो कहते हैं कि स्वामी जी ने स्थावर शरीर को जड़ समझ कर स्थावर को जड़ लिखा है, परन्तु जीव रहित नहीं लिखा सो ठीक नहीं किन्तु स्वामी जी जड़ का अर्थ ही जीव के सम्बन्ध से रहित करते हैं।

देखो ऋ० भूमिका पृ० ८९---

जडम् = जीवसम्बन्धरहितम्।

अर्थात् जड़ उसे कहते हैं जो जीव के सम्बन्ध से रहित हो, जीव का सम्बन्ध (ताल्लुक) न हो। अब स० प्र० के वाक्य का यह अर्थ हुआ कि "स्थावर अर्थात् वृक्ष वनस्पति आदि में जीव नहीं हैं क्यों कि उन से जीव का कुछ सम्बन्ध नहीं है,, यही स्वामी जी का अभिप्राय है नहीं तो जीव और शरीर की भांति स्थावर और जीव का सम्बन्ध अवश्य होता परन्तु स्वामी जी और स्थावर का सम्बन्ध नहीं मानते किन्तु जड लिखते हैं इस से स्थावर में जीव माना स्वामी जी का इष्ट नहीं किन्तु अनिष्ट है। (क्रमशः)

ओ३म्

संख्या ३

नशा निवारक।

लेखक :—

पं० विहारीलाल शर्म्मा उपदेशक
आर्य्य समाज गंज मुरादाबाद.

जिसको

बा० प्रतापचन्द्र जी रईस पाकबड़ा ने
अपने द्रव्य से छपवाकर आर्यसमाज
गंज मुरादाबाद को प्रदान किया।

और

पं० शंकरदत्त शर्म्मा ने अपने
"शर्म मैशीन प्रिंटिंग प्रेस" मुरादाबाद में, छापा।

प्रथमवार १००० मूल्य)॥ सैंकड़ा १)

इन ट्रैक्टों का नफ़ा वेद प्रचारमें व्यय कियाजायगा

॥ ओ३म् ॥

नशा-निवारक ।

प्यारे मित्रों ईश्वर ने मनुष्य में पशु पक्षियों से यह विशेषता की है, कि उसे बुद्धि दी है, जिससे वह धर्म अधर्म को जान कर मुक्ति को प्राप्त कर सकता है। बुद्धि से ही मनुष्य बड़ा धनवान कहला सकता है। बुद्धि से ही बड़े२ बलवानों को वश में कर सकता है, बुद्धि से ही जल स्थल आकाश तक में निर्भय विचर सकता है, देखो बुद्धि के ही बल से अंग्रेजों ने रेलगाड़ी तार तथा अनेकों कलें बनाईं, जिन से देर में होने वाले मुश्किल काम भी सहल और जल्दी होने लगे। बुद्धिसे ही मनुष्यों ने ऐसे२ कला भवनभी बनायेहैं कि जिनको देखतेहीसाधारण जन चकित होजातेहैं। सारांश यहहै कि बुद्धि मनुष्य की सबसे बड़ी सम्पत्तिहै। ऐसी सुन्दर सम्पत्ति को जान बूझकर नाश करना दुर्भाग्यही है। परन्तु आजकल हम

देखते हैं कि अनेकों मनुष्य अपने आप अपनी बुद्धि को धन खर्च कर २ के बड़ी कोशिश से नाश कर रहे हैं, और फिर धन बल बुद्धि नाश करनेके बाद रोते पछताते हैं। वह हैं नशेबाज। कोई शराब से, कोई भंग से, कोई सुलफे से, कोई गांजे से, कोई अफयून से, कोई चण्डू से, कोई पोश्त से, बल, बुद्धि तथा धन को नष्ट करते हैं। क्योंकि जिस तरह किसी डोरी को बार २ जोर २ से खींचा जाय तो, कमजोर पड़जातीहै। इसी तरह बुद्धिभी नशे से भड़क २ कर मन्द हो जाती है। नशेबाज की पाचक शक्ति कमजोर पड़जाती है, तथा फेफड़ों में अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं अक्सर नशों के कारण लोगों को क्षयी आदि रोग से शीघ्र मरना पड़ा है। डाक्टरों ने यह सिद्ध कर दिया है कि नशों में जहर किसी न किसी रूप में मिला ही रहता है, जो मनुष्य के जीवन को बहुत ही हानिकारक है। यह तो प्रत्यक्ष ही देखिये कि शराबी पागलों की भांति क्रोधी, बकवादी, या कामी, घमण्डीसे बने रहते हैं। सुलफेबाजों का तो गरुड़ पुराणोक्त प्रेतों से ठीक २ ही हुलिया मिल जाता है। जहां कहीं भी बैठें वहां खकार से गज़भर भूमि अवश्य ही खराब करदें

महामैले चिथड़े (साफी) को बार २ मुंह से लगावें जिसके पड़ोस में बसें रातों खों २ के मारे नींद न आने दें। जिस स्थान में बसें उसे गन्दे धुएं, राख की ढेरियों तथा गुलियों से पिशाचभवन की समान करदें फिर भी धन की धूल, बच्चे अलग रो रहे हैं, औरत अलग कि-स्मत को रो रही है। रुपये को खर्च करके पागलपना, तथा और २ बीमारियों को खुद खरीदते हैं। किसी ने ठीक कहा है—

दोहा।

बुद्धि जाय अरु बल घटे, होत द्रव्य की हार।
नशा करन पर कीजिये सहस्र बार धिक्कार॥

प्यारे दोस्तो! इस नशे ने ही लाखों मनुष्यों को तबाह किया, बड़े २ धनवानों को कंगाल बना दिया, ज़मींदारों की ज़मींदारियां बिकवाना नेक चलन आद-मियों का रांडयों में फंसाना, लोक में निन्दित तथा पर-लोक में नर्क का भागी बनाना, इस नशे का ही काम है और मनुष्य योनि तो अगले जन्म में नशेबाजों को मि-लनाही दुर्लभहै, क्योंकि परमात्मा ने बुद्धि नेक व बद की

तमीज़ के लिये दी है उसे नशा पी २ कर भ्रष्ट बनाया तो परमात्मा फिर क्यों बुद्धि देंगे ? कभी नहीं देंगे। और अवश्य किसी कुयोनि में जाना पड़ेगा नशा पापोंकी जड़ और पाप दुःखों का मूल है। इस लिये सर्व प्रकार के दुःख इसके द्वारा हो सकते हैं। इस लिये यह सब पापों का बाप है। क्योंकि नशे के करने पर ज्ञान (नेकोबद की तमीज़) जाती रहती है। काम (ख्वाहिशे नफसानी) दिल में पैदा होता है। हुकूमत पसन्दी दिमाग़ में फौरन आती है। यानि ज़ोर २ से किसी के डाटने को जी चाहता है। बस यही हालतें हैं जो गोश्त (मांस) आदि अभक्ष्य वस्तुओं का भक्षण करना, पर स्त्री गमन, तथा जुआ खेलना, मारपीट या मार डालना, झूठ बोलना सब करा लेती है हिन्दुओं का साम्राज्य नशे के ही कारण नष्ट हुआ, यादवों का नाश शराब के ही कारण हुआ। तथा इसी दुर्व्यसन से मुसलमानों के राज्य की नींव उखड़ी। और यह तो प्रत्यक्ष अब भी देखने में आता है, कि चंडू सुलफे शराब के कारण सैकड़ों की ज़मीदारियां नीलाम हो जाती हैं। रूप कुरूप हो जाता है बेशरमी हद तक पहुंच जाती है। जैसा कि

एक शराबी नशे में चूर हुए चले जा रहे थे रास्ते में कहीं झटका जो लगा तो गिर पड़े। सिर नाली में होगया पांव ऊपर। इधर कोई कुत्ता भी आ निकला बस नशे की खुश्की दूर करने के लिये उसने भी शराबी के मुंह पर अपना पेशाबी पंप लगा दिया। किसी भले आदमी ने यह दुर्दशा देखकर जो कुत्ते को डांटा तो शराबी कहने लगे कि भाई क्या करते हो वह तो आबपाशी करता है। घृणा भी इन लोगों से दूर हो जातीहै। फिर न जाने इसको यह लोग क्यों नहीं त्यागते जान बूझकर ज़हरीले कुए में गिरते हैं।

नशेबाज़—भाई आपने जो नशे के नुक़सान समझाये, वे तो सब ठीक हैं। मगर नशे से फिक्र और थकावट दूर हो जाती है यह फायदाभी है। तथा थोड़ा२ नशा नुक़सान भी नहीं दे सकता। जो दवाई की तरह सेवन किया जावे।

समझदार—नशा फिक्र और थकावट को दूर नहीं करता, किन्तु कुछ देर को भुला देताहै जैसे पागल अपनी चोट पर ख्यालनहीं करता। परन्तु उसे उस चोट सेजो

नुक़शान होना है वह अवश्यही होता है। नशेबाज़ थकावट और परेशानी के तो घर बन जाते हैं। जब तक नशा रहा तब तक नमालूम पड़ा मगर नशे के उतार पर तो आलस्य थकावट और अरुचि खूब होतीहै चिन्ता तो नशे बाजोंके लिये और अधिक बढ़जातीहै। क्यों कि चिन्तायें बुद्धि सेही दूर होसकती हैं बुद्धिमान को बडे २ कार्यों के करने में भी चिन्ता नहीं सताती। सो बुद्धि को नशा नाश ही करता है फिर भला चिन्तायें क्या दूर हो सकतीहै ? रहा थोड़ा नशा करना सो जैसेही थोड़ा थोड़ी २ बुद्धि बिगाड़ाता है, वैसे ही अधिक नशा अधिक बुद्धि बिगाड़ता है। इस लिये इस का त्याग ही सबसे अच्छा है।

नशेबाज़-क्यों जी सुलफे में तो कोई हानि नहीं ? क्योंकि यह मरदाना नशा है ?

समझदार-सुनोभाई नशे में क्या मरदाना क्या ज़नाना। बुद्धि को सब ही बिगाड़ते है किन्तु हां मरदाना और अधिक नाश करैगा क्योंकि वह अधिक बलवान होगा, तभी तो सुलफा शीघ्र ही मांस को चाटकर ढांचाही बाकी छोड़ता है खनको खेकार और खूब सूरती को बदसूरती बना देता है।

नशेबाज़—हां ठीक यह नशे दुःखदायक ही हैं इस लिये हमतौ थोड़ी सी भंग ही पीलेते हैं क्योंकि यह शुद्ध जड़ी बूटी है। और आनन्द भी बड़ा आता है पीकर फिर बड़ी अच्छी तरह भजन होता है।

समझदार—अरे भाई भंग कहां की भली है यह भी सुलफे की माता है और गांजा सुलफे का पिता है और जो वुद्धि की शक्ति को घटावे वह शुद्ध कहां? जड़ी बूटी तौ मीठा तेलिया भी हैं। क्या वह भी सेवन करना चाहिये? आनन्द तौ वुद्धि के बढ़ने में भी आता है और नशे का भजन भी पागल की बकवाद के समान है। नशे में जो भजन किया जाता है, उससे कुछ विचार हृदय में नहीं जमता। जैसे हाथ पर मोम लगाने पर मिहदी का रंग नहीं चढ़ता इसी प्रकार नशेमें होकर किये हुए भजन से अन्तः करण पर कुछ असर नहीं होता।

नशेबाज़—चंडू और अफीम कैसे हैं? इन्हें तौ अच्छे २ राजे और नवाब भी सेवन करते थे।

समझदार—चंडू क्या अफीम क्या, पोस्त क्या, चरस क्या, सब एक से ही हैं। जो वुद्धि को बिगाड़े, वही नशा

है। क्योंकि (बुद्धिं लुम्पति यद्द्रव्यं मदकारि तदुच्यते)
इस लिये सबही नशे खराब हैं चाहे राजा हो, चाहे महा-
राजा हो, जो इन्हें ग्रहण करैगा, धन सम्पत्तिको नाश
करि के पछतायेगा। अगर राजे नवाब पाप करैं तो क्या
पाप अच्छा हो सकता है ? कभी नहीं।

नशेबाज़–हां जी ठीक है मगर साधु सन्त तो इससे
मुस्तसना हैं ? यह तो हरएक नशा कर सकते हैं ?

समझदार–नहीं, साधु का अर्थ है " जो पर कार्य
को सिद्ध करै " जब बुद्धि को नशे पी पी कर नाश
कर दिया तो पर कारज क्या खाक साधेंगे यह आज कल
के साधू नहीं, किन्तु व्याधू हैं। जहां बैठें वहां अनेक
व्याधायें खड़ी करदें गृहस्थों के धन को बरबाद करना ही
इनका काम है ऐसे धूर्तों को कभी पैसा नदे, न इनका
सत्कार करै। क्यों कि पाप कर्म में धन देना भी पाप है

नशेबाज़––महाशय जी ठीक है अब हम कभी
नशा न करैंगे। मगर यह और बतला दीजिये कि
हुक्के में तो कोई दोष नहीं है ? क्योंकि यह पञ्चायत का
सरपञ्च, बिरादरी का नायक, और दांतों के रोगों तथा

कब्जियत के लिये एक मात्र औषध बताई जाती है हमारे ताऊ को तो जबतक पाखाना भी नहीं उतरता था, जब तक कि तवे की दो चिलम न पी लेते थे।

समझदार—भाई हुक्का क्या नशा नहीं है ? बिना खाने पीने वाले को तम्बाकू खिला पिला दो तो फौरन नशा होगा। हुक्के में और नशों से भी अधिक यह बात है कि जूठन भी सब की ही चखा देता है बेहयाई भिखमंगापन भी यह करवा देता है जहां चिलम देखी हाथ फैला दिये रेल में बैठे हों तो सब पास बैठने वालों को गन्दे धुंए से तकलीफ पहुंचावे।

किसी ने ठीक कहा है:—

दोहा

हाथ जरैं और मुंह जरै, जर पेट की आंत,
तनिक धुंआं के कारने फिरत निकारे दांत।

प्रातःकालका समय सन्ध्या (ईश्वरका ध्यान) हवन (होम वायु शुद्ध करने के लिये) करने का है। मगर हुक्कचियों को इन शुभ कर्मों से अलग हो हुक्कराम की ही सेवा करनी होती है। आठ २ बजे तक चारपाई पर पड़े मुंह से दुर्गन्धित धुआं और गुदा से अपान वायु छोड़ २ कर वायु को दुर्गन्धित कर पाप कमाते रहते हैं।

हुक्के से मुंह में बदबू, हाथों में दाग, बैठक में कूड़ा तो होते ही हैं। परन्तु यह फेफडे, पर भी ज़हरीला असर डालता ही है तम्बाकू के कुटने में जो भ्रष्टता होती है वह घोर घृणा (नफ़रत) दिलाने वाली है कुदरतन भी तम्बाकू न खाने की चीज़ है न पीने की और न सूंघने की। क्योंकि आत्मा इससे घृणा करता है। यदि सूंघते हैं तो छींक आती है। खाते हैं तो थूकना पड़ता है पीते हैं तो फूंकते है। सारांश यह है कि यह अन्तरात्मा को बिल्कुल रोचक नहीं, परन्तु ज़बरदस्ती की जाती है। रोगों के दूर करने की और अनेक औषधियां है, जो वैद्यों से मिल सकती हैं। तो फिर क्यों इस झगडे, को गांठ बांधा जाये। असल में तो तम्बाकू के खाने, पीने, सूंघने, तीनों ही प्रकार से अनेक हानियां हो रही हैं। हज़ारों बीघे जमीन इस जहरीली वस्तु के ही काम में आरही है। यदि तम्बाकू न बोया जाय तो उन खेतों में गेहूं आदि अनेक लाभकारी अनाज हो सकते हैं। इस लिये ऐसे व्यर्थ के व्यसन को त्यागना ही अच्छा है। तम्बाकू खाना पीना सूंघना तीनों तरह बुरा है। हां यह विषैली वस्तु है। जो काम विषों से लिये जावें वही

इस से लेने चाहिये। जैसे हथियार बुझाना, वृक्षों के कीड़े नष्ट करने के लिये उन पर इसका पानी छिड़कना, आदि।

नशेबाज़-क्यों महाशय जी! सिगरट पीने में स्यात् कोई हानि नहीं होगी? क्योंकि यह तो जैन्टिलमैनों का एक मुख्य मुख भूषण है। जब तक सिगरट न हो तब तक जैन्टिलमैनी ऐसे है जैसे बिना चन्द्रमा के रात्रि!

समझदार-अरे भोले भाई! आप समझ से काम क्यों नहीं लेते? सिगरट तो हुक्के से भी अधिक ख़राब है। रक्त बिगाड़ती, खुश्की को बढ़ाती, तथा दिमाग को कमज़ोर करती है। इसमें अभक्ष्य वस्तुएं (लीद जैसे) भी मिलाकर तम्बाकू की जगह पिलादी जाती है तथा सरेस वा लेही से जुड़े हुए कागज को मुख में देना कैसी अपवित्रता है। सिगरट को चाहें पढ़े लिखे अवश्य पीवें परन्तु वह बुरी अवश्य है। पढ़े लिखे या बाबू लोगों का ही अनुकरण करके सिगरट पीना भूल है। यह जैन्टिलमैनी का चिन्ह नहीं, जैन्टिलमैनी के चिन्ह तो नेक काम हैं। जो रुपया सिगरट में फूंका जाय उसे नेक कामों में लगाया जाय यही सभ्यता (जैन्टिलमैनी) है।

भारतवर्ष का कई करोड़ रुपया इस व्यर्थ व्यसन में जो व्यय किया जाता है इस दुर्व्यसन सिगरट नोशीको अगर छोड़ दिया जावे और उस रुपये से देश में विद्या की वृद्धि की जावे, किसानों को सहायता देकर खेतीमें उन्नति कराई जावे तो देश की सब दुर्दशा दूर हो सकतीहै और सिगरट न पीने में कोई कठिनता भी नहीं है। इसलिये इसमें व्यर्थ धन न खोकर परोपकार में लगाया जाये तो दोनों लोकों में भलाई है आजकल बच्चोंमें भी सिगरट का प्रचार बढ़ता जाता है जो पैसे बच्चोंको मिठाई खाने के लिये मिलते हैं। उनकी वे सिगरट पीतेहैं इसके दोषी वास्तव में माता पिता वा और बड़े हैं। क्यों कि यदि वे सिगरट न पीवें तो बच्चे भी नहीं पीसकते यद्यपि स्कूलों मे सिगरट पीने की बड़ी मुमानियत है। परन्तु सिगरट का प्रचार बढ़ता जाता है । इसका कारण यह है कि मास्टर लोग स्वयं सिगरट पीते ह अतः उनके कहने का कुछ असर नहीं होसकता बस अगर अपने बच्चों को दुर्व्यसन से बचाना हैं। देशकी दशा ठीक करनी है ।। तन्दुरुस्ती को बिगाड़ना नहीं है। धनको बचाना है। बुद्धिमान बनना चाहते हो तो ऐसे बुरे व्यसनों से बचो।

नशेबाज़—मगर महाशयजी मनो विनोद के लिये तौ कुछ हौनाही चाहिये। पस उसी के लिये कभी२नशा पानीकरलेवें तौ क्या हानि ? इससे सब यारदोस्तों में बे तकल्लुफीभी रहतीहै तथा यार दोस्त मिलते भी रहते हैं।

समझदार—मनोविनोद के लिये सुन्दर ग्रन्थों का अवलोकन श्रेष्ठगान आदि बातें हैं। नकि नशा आदि; नशा जुआ आदि मन को क्लेश करने वाले कामहैं। अक्सर नशे पी पी कर लोग हंसी दिल्लगी करते२ लड़ पड़ते हैं। चोटें चलजातीं, मुकदमें होजाते हैं। यादव कुल का नाश तौ नशे की दिल्लगी में ही हुआ। इस-लिये इसको मनोविनोद (दिलखुश करना) बताना ठीक नहीं। यहतो रंज बढ़ाने वाली वस्तुएं हैं। वे तकुल्लुफी नहीं बल्कि इससे लज्जा जाती रहतीहै निर्लज्जतासे नशे वाले परस्पर बकाकरतेहैं सो ठीक नहीं और यार दोस्त नशे से नहीं मिलते। किन्तु स्वार्थी लोग इकट्ठा होजाते हैं जबतक पैसा पास रहता है तब तक सैकड़ों खुशामदें करते हैं जहां देखा कि अब इस पर कुछ नहीं रहा बस चलदिये और किसी दूसरे को जा फांसा। ऐसे धूर्तों को

यारदोस्त समझना भूल है। यार तो वे हैं जो बिना किसी स्वार्थ के अपने हितैषी हों यह तो नशे की गरज से यार दोस्त बनते हैं। कष्ट पड़नेपर पीठ दिखा जातेहैं बस सच्चे यार तो बल, बुद्धि, धन, विद्या तथा अपने को भली शिक्षा देने वाला, अपने को दुःख सुख में समान समझने वाले हितैषी पुरुष हैं सो नशे बाजों से यह सब रूठ जाते हैं। इसलिये यदि इन असली मित्रों को अपने पास रखना है तो मनुष्य को सब नशीली वस्तुओं का त्यागन करदेना चाहिये।

नशेबाज़—महाराज आपने ठीक समझाया अब कभी किसी प्रकार का नशा न करूंगा। और जो धन नशे में नाश करता हूं। वह अब परोपकार में लगाया करूंगा। कृपया ऐसा कोई भजन करने की रीति और बताइये जिससे सारा अज्ञान और मन की मलिनता मिटकर बुद्धि का प्रकाश हो।

समझदार—ईश्वर तुम्हारा कल्याण करै। तुमने बहुत अच्छा विचार किया है। जो कि तुमने हमसे सुना इसे औरों में भी पहुंचाने का यत्न करो इसके लिये नशे के दोष दिखाने वाले ट्रैक्टों को बिना मूल्य सबमें

बांटो । वा जुबानी भी समझाओ । ताकि और लोग भी इससे बचकर लाभ उठावें । और सब संसार का कल्याण हो । मन शुद्ध करने के लिये सन्ध्या तथा गायत्री का जप किया करो । और सुलफे आदि से दुर्गन्धित की हुई वायु को शुद्ध बनाने के लिये सुगन्धित सामिग्री से हवन कियाकरो ।

॥ ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

अब ईश्वर से प्रार्थना करो कि हे परमपितः परमात्मन् हम अब तक अज्ञान वश अनेक प्रकार के पापों में फंसे हुए दुःख पारहे हैं । अब और हमें पापों के फन्द से बचाइये । अपनी कृपा से हमारी बुद्धिको शुद्ध बनाइये हे प्रभो संसार के सब मनुष्य बुराइयों से बचें । और भलाइयोंमें लगें । भगवन् ! सबका कल्याण हो सब की बुद्धि शुभ कर्मों में प्रेरित कीजिये । यही आर्यसमाज की परम कामना है ॥

॥ ओ३म् ॥

* बकरा विनय *

जिसको

अयोध्याप्रसाद अध्यापक संस्कृत पाठशाला शाहजहाँपुर यू० पी० ने रचा।

और

भगवान आ० धर्म्मप्रचारक ने मुफ्त बांटने को छपवाकर प्रकाशित किया।

और पं० शङ्करदत्त शर्माने अपने धर्मदिवाकर प्रेस मुरादाबाद में छापा।

सृष्टि सं० १९७२९४९०१२

वि० सं० १९६८ दयानन्दी सं० २८

प्रथमवार] [५००० प्रति

ओ३म्

बकरा विनय

दोहा—परम पिता जगदीश को, बार २ शिर नाय।
बकराविनयबनावहीं, भली भांति बलिजाय १॥
बात चीत बकरा नहीं, यद्‌पि करै प्रियभाय।
अलङ्कार के रूप से, तद्‌पि रचैं इन बाय।२।
जान बचै सब पशुन की, होवे धर्म प्रचार।
सब के उर दाया बसे हत्या कर्म बिसार॥ ३॥
नहीं प्रयोजन और कछु, सज्जन सुनिये मोर।
जग हितकारी समझकर, रचैंग्रन्थकरिशोर ४॥
बकरा दीन दुखी बलहीना, बिनतीकरै यहि निजलीना।
सुनहु सुजन यह मोर पुकारा, दीनबंधु शब भांतिउदारा।
सकल सृष्टिका सिरजन हारा, जो सर्वज्ञ अखण्ड अपारा।
उस ही ने हम तुमको भाई, कर्म वश्य यह देह धराई।
भयो जनक इसकारण सोई, तब सम बाप अन्य नहिंकोई।
इससे आपुसमें सबभाई, भयो भेद ना काहू दिखाई।
हिलमिल प्रेम परस्पर राखें, वेदशास्त्र अस वाणी भाखें।
दृते दृꣳहमामित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भू-

तानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥

हे भुवनेश विश्वपति राया, हमपै अस कीजै प्रभु दाया।
सर्व जीव हमको जगमाहीं, मित्रदृष्टि देखैं चितपाहीं।
ताही विधि हमहू सबकाहीं, मित्रदृष्टि देखैं मनमाहीं।

दोहा—वेद वचन सब के लिये, हैं हितकारी भ्रात।
शुद्ध महोत्तम निष्कपट, यह उपदेश उदात ।१।
हम तुम सब केरे लिये, अस आज्ञा भगवान्।
वेदों में बतला दई, तिसको करैं प्रमान। २।
सब जीवन पै दयाकरि, ब्रह्म भजो चितलाय।
निज दुखसम परदुख लखो, बुराकर्म बिसराय ।३।

मछरी सुअर हरिण छागाई, इनहल सबकाकरीबराई।
जो तुम नारि मारि नित खाओ, गारतनकाहिं कलङ्क लगाओ।
जपतपयज्ञ ध्यान सुखकारी, त्यागि कसाईपन चितधारी।
रैनदिवस मम और नगाता, काटि खाल मननाहि अघाता।
हा! अन्धेर कैसा यह छाई, कोई टेर सुने नहिं भाई।
दीन दुःखी नित पाती खावैं, काहूको हमनाहि सतावें।
दाना घास नहीं हम चाहैं, जङ्गल चारा से निवाहैं।
किस हू के कांटा लग जावे, हा हा दैया तुरत मचावे।

तुम्हरे लड़कोंको कोई मारै, हमी मांहि एकधौलछुमारै।
तौ तुम मारन उसके काजा, लाठी लै दौड़ौ महाराजा।
जैसे तव शिशु तुमको प्यारे, वैसे हम निजमातु दुलारे।
फिर कैसे तुमहो निर्दाया, देवी मास झाटिमोहिखाया।
है जगदम्बा सबकी माता, पक्षपात उसको नहिं भाता।
जो तुम्हरे पुत्रन तजि देई, हमरे प्राण नित्य प्रति लेई।
सवैया-कर्मसे रोगी होसकते अरु दुर्जनलोगमदारचलाहीं
मानतहैं मुरगी कुक्कर अरु शूकर मूरख नाहिं लजाहीं।
पापसवार जभीसिर होत तभी हनिदेवीकी भेंटचढाहीं।
डाइनि देवीहवै सबही निज बाल बुकहनको नित खाहीं।
वास्तव में देवीनहिं खाई, तुम्हरीजीभ जभी चटकाई।
तबहीं तुम लेकर तरवारा, हमरे ऊपर करी प्रहारा।
हा दिलीप यदुनाथ कन्हैया, कहां गये हमरे रखवैया।
हा रघुअज अरु रामभुआला, कहांगये तजि हमैंनिराला
जो तुम अब होतेमहिमाहीं,तो ममदुःख सुनते क्षणमाहीं
दोहा–मैंमैं कर चिल्लावते, कोई सुनैं नहिं टेर।
जिस काहूसे दुःख कहैं, सो लेवे मुख फेर॥
अजब एक अरु सुनोकहानी, जो हिंसकजहते मनमानी।
बकरा यदि खायेनहिंजावैं, तो बढ़कर यह कहांसमावैं।
किसीकामके हैंयह नाहीं, इससे मारि रांधिहमखाहीं।

भक्षणमांस बहुतहै नीका, इसके बिन सब भोजनफीका।
सिंह समान पराक्रम होता, जो बकरा के खावे पोता।
मींग खाय हड्डी भीतर की, बुद्धिबढ़े सो हो बहु तरकी।
ग्रन्थ मनुस्मृतिमें वह भाई, मद्य मांस भोजन दिखराई।
जो कलियाखाना नहिंसच्चा, तो यह ग्रन्थ होवैसबकच्चा।
बकरा कहै सुनो धरिध्याना, जो आगे हम करें बयाना।
कोई नर २ नारि न खाई, वे जग में कस रहैं समाई॥
जो तुम कहौ मरतपहु जाई, तो हम क्याअनरीतीखाई।
तुम्हरी आयुवर्ष सतकेरी, चौदह तक जानो प्रिय मेरी॥
बद्रीनाथ तरफ़ जो जावो, तो मम कामदेखि तुमपावो॥
बोझलाद गिरपै चढ़ जावैं, निज स्वामीको सुख पहुचावैं
अङ्गरेजन बग्घी बनवाई, छोटी तिस में मोहि नधाई॥
तिसमें निजबालक बैठावैं, तिनको ले हम हवाखिलावैं॥

दोहा—जब तुम पैदा होत हो, तब मम जननी क्षीर।
प्रथमहि पीकर होयते, जग में मानुष बीर॥

दूध दही घृत और मलाई, पेड़ा बर्फी आदि मिठाई॥

दोहा—मात पिता बाबा चचा, जब बूढ़े होजांय।
किसी काम के ना रहैं, मुफ्त अन्न गह खांय॥
खांसे और खखारहीं, थूक बिगारे गेह।
मारि रांधि खावो उन्हैं, न्याय सदय तब येह॥

बुद्धि भ्रष्ट होजात है कीजै नेक बिचार ॥
हड्डी भीतर रेंट को, जो प्रिय तुम भखि जात।
तिसहु ते तव मत सकल, शीघ्र नष्ट होजात ॥
सोरठा—महिं मनुजीने भाय, ग्रन्थ आपने में लिखो ।
मारि २ भखिजाय, निर्बल दीन दुःखी पशू ॥
वाम मार्गिन दियो मिलाई, ग्रन्थ मनुस्मृतिमें बहुभाई ।
हिंसा अरु कलियाकाखाना, मनु रोका सो करें बखाना॥
श्लोक—वर्षे वर्षेऽश्वमेधेन योयजेत शतं समाः ।
मांसाँ निघन खादेद्यस्तयोपुण्य फलं समम्॥ १॥
सदायजति यज्ञेन सदा दानानि यच्छति ।
सतपस्वी सदा विप्रो यश्च मांसं विवर्जयेत ॥२॥
सर्वं कर्मस्वहिंसाहि धर्मात्मा मनुरब्रवीत् ।
कामकाराद् विहिंसंति बहिर्वेद्यां पशून्नराः ॥३॥
यो हिंसकानि भूतानिहि नसत्यात्म सुखेच्छया।
सजीवश्च मृतश्चैव न क्वचित सुख मेधते ॥४॥
नाकृत्वा प्राणिनां हिंसाँ मास मुत्पद्यते क्वचित् ।
नच प्राणिवधः स्वर्ग्यस्तस्मात् मांसं विवर्जयेत्॥५॥
न भक्षयति यो मासं विधिं हित्वा पिशाचवत् ।
स लोकेप्रियतां याति व्याधिभिश्च न पीड्यते॥६॥
मांस भक्षयिता मुत्र यस्य मांसं मिहाद्म्यहम् ।

एतन्त्रासस्य मांसत्वं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥७॥
अनुमंता विशसिता निहन्ता क्रय विक्रयी ।
संस्कर्ताचोप हर्ता खादकश्चेति घातकाः ॥८॥

अश्वमेध मख जे शतसाला, करैं भर्खं कलियाभरमाला ॥
जेन करे अरु मांस न खावें ते नर तुल्य पुण्य को पावें ॥
दान यज्ञ तप करे सुजाना, नहीं खाय कलियाकाखाना ॥
सो तपस्वी द्विज श्रेष्ठ बखानो, मुनिकेवाक्य सहीपहिचानो ॥
जे निज सुख इच्छा के कारण, अवधयोग्य पशु लानै मारण ।
जीते अरु मरणके बादा, नहिं सुखपावैं अस मनुनादा ॥
एक अहिंसा मनु ऋषिराई, सर्व काम में श्रेष्ठ बताई ॥
पर निज उदर भरनके काजा, मखमें पशु काटैंकरलाजा ॥
मिले न मांस बिना पशु मारी, नहीं खान इसकी कहुंजारी ॥
जीवमारि नहिं स्वर्ग जावै, इससे मांस कभी नहींखावै ॥
सो०–खात हवे जो रोज, जिसका गोश्त निकारकर ।
मरण बाद कर खोज, सो उसका पुनि खावहीं ॥
छन्द–जो देय सम्मति खाव मासे और जीवनिकावहीं
मारे बिना अपराध जो अरु जौन मास खरीदहीं ॥
बेचैं पकावें जौन परसे जौन भोग लगावहीं ।
चावहाल आठप्रकार के इतने मुनीश बतावहीं ॥

भगवान आ० ध० प्रचारक सं० १९६८ वि०

* ओ३म् *

ईसाई विद्वानों से प्रश्न ।

लेखक-

श्री १०८ स्वामी दर्शनानन्दजी सरस्वती

जिसको

पं० शङ्करदत्त शर्मा ने अपने लिये
अपने शर्म्मा मैशीन प्रिन्टिंग प्रेस मुरादाबाद में
छापकर प्रकाशित किया ।

द्वितीयवार १०००] [मूल्य)॥ सैकड़ा २।)

ईसाई विद्वानों से प्रश्न !
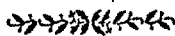
प्रश्न (१) तौरैत के नाज़िल (प्रकाशित) होने से प्रथम कौनसी विद्या का नियम न था कि जिसके बताने के लिये तौरैत नाज़िल (प्रकाशित) हुई तौरैत में दयालु परमात्मा क्या लिखना भूल गया था जिसको बताने के वास्ते ज़बुर नाज़िल हुई, और ज़बूर में क्या कमी थी कि जिसको इञ्जील द्वारा पूरा किया ।

प्रश्न (२) जब कि बाइबिल के अनुसार खुदाओं की एक जाति सिद्ध होती है कोई एक ईश्वर नहीं-देखो पौलूस रसूल का खत इब्रानियों को, बाब १ आयत ८ ऐ खुदा चूं कि तूने नेकी से प्यार और बदीसे द्वेष रक्खा इसलिये ऐ खुदा तुझ को तेरे खुदाने तेरे शरीकों की निस्बत खुशीके तेलसे अधिक मन्सूह (अभिषेक) किया ऐसे ही उत्पत्ति की पुस्तक से भी विदित होना

(ज़ाहिर) होता है। तो किस ख़ुदाने संसारको उत्पन्न किया ?

प्रश्न (३) जब कि बाइबिल के अनुसार ख़ुदाने सूरज को चौथे दिन उत्पन्न किया और यह निश्चय सिद्धान्त है कि सूरज से दिनका सम्बंध है। जब सूर्य पृथ्वी के गोलार्ध के सामने होता है तो उस गोलार्द्ध पर दिन और जिस गोलार्द्ध के सामने न हो उस पर रात होती है तो सूर्य से पहिले तीन दिन क्योंकर शुमार हुए?

प्रश्न (४) उत्पत्ति की पुस्तक (बाइबिल) में लिखा है कि ख़ुदा की रूह (आत्मा) पानीपर तैरती थी क्या रूह कोई प्राकृतिक (माद्दी) वस्तु है या अप्राकृतिक (ग़ैर-माद्दी) यदि प्राकृतिक वस्तु है तो किस प्रकृति से बनी है? और अप्राकृतिक है तो किस प्रकार तैर सकती है ?

प्रश्न (५) ईश्वर एक देशी (महदूद) है या सर्व देशी (ला महदूद) है यदि महदूद है तो सर्व शक्तिमान किस तरह हो सकता है (क्योंकि वह जिस किसी स्थान में रहेगा वहां के अलावे और जगह के हाल को न जान सकेगा न काम कर सकेगा) यदि लामहदूद है तो सारी बाइबिल रद् होजाती है क्यों कि लामहदूद का दावा

बायां हाथ नहीं होसकता जब दायां हाथ नहीं है तो ईसूमसीह दायें हाथ किस तरह बैठ सकता है बाइबिल में लिखा है कि ईसूमसीह स्वर्ग में ईश्वर के दायें हाथ पर बैठेगा।

प्रश्न (६) युहन्ना के प्रकाशित वाक्यों में लिखा है कि ख़ुदा की सात रूह हैं और उत्पत्ति की पुस्तक में एक रूह का पानी पर तैरना लिखा है अब दोनों में कौनसी बात सत्य है यदि सात रूह हैं तो उत्पत्ति के समय एक रूह तो पानी पर तैरती थी शेष छैः कहां थी?

प्रश्न (७) इल्हामी ईश्वरीय पुस्तक का लक्षण (तारीफ़) क्या है ? इलहामी किताब की किस कसौटी से सचाई जानी जाती है ?

प्रश्न (८) ईसूमसीह ने जो तमाम पैग़म्बरों को बुरा कहा कि 'जितने मेरे आगे आये सब चोर और डाकू थे' (योहनकी इन्जील पर्व १० आयत ६) जो अपने से पहिले सब पैग़म्बरोंको चोर और डाकू बतावे और जो अपने को सबसे अच्छा कहै, आप किस कसौटी से उस की बात को सच्चा साबित कर सकते हैं ?

ओ३म् शम्

प्रश्न (९) मसीह ईश्वर का शरीर सम्बन्धी बेटा है या आत्मा सम्बंधी और वह अव्वल से बेटा है या मरियम के पेट से पैदा होने के बाद बेटा हुआ।

प्र०(१०) 'मसीह बिना बाप केवल माता से ही उत्पन्न हुआ' इसमें प्रत्यक्ष (जो आंखोंसे दीखे) प्रमाण तो है ही नहीं अनुमान (अन्दाज़ा) जैसे बादलों के होने से वर्षा का हो नहीं सकता क्योंकि इसके वास्ते कोई मिसाल (दृष्टान्त) नहीं कि जहां इकली माता से औलाद पैदा हुई हो और बिना दलील और मिसालके कोई अनुमान सही नहीं हो सकता, लिहाज़ा किसी प्रमाण से आप इस दावे को साबित कर सकते हैं ?

प्र० (११) ईसाई मतमें मुक्ति को अनन्त (अब्दी) कहाहै और अनन्त वह पदार्थ होताहै जो अनादि (अज़ली) हो क्योंकि वाज़िबुल वजूद (नित्यपदार्थ) का आदि तथा अन्त दोनों नहीं होते लिहाज़ा मुक्ति की तो आदि है इस वास्ते वह वाज़िबुल वजूद हो नहीं सकती नाहीं वह मुमकिनुल वजूद (अनित्य पदार्थ) हो सकती है क्योंकि मुमकिनुल वजूद के आदि तथा अन्त दोनों होते हैं। और

आप मुक्ति का अन्त नहीं मानने पर ईसाइ मतकी निजात नामुमकिन (असम्भव है) आप दुनिया को नामुमकिन के गढ़े में क्यों गिराते हैं ?

प्र० (१२)नसबनामा (वंशावली) ईसामसीहसे साबितहै कि इब्राहीम के ४२ वीं पुश्त में मसीहको तसलीम किया जाता है जब तक मसीह यूसुफ़ के वीर्य से पैदा न हो तो इब्राहीम की औलाद में किस तरह होसकता है जो बाप का बेटा नहीं वह दादे का पोता किसतरह होसकता है ?

प्र० (१३) ईसाई मतानुसार गुनाह (पाप) का कारण क्या है पाप शरीर में रहता है या आत्मा में ?

प्र० (१४) रूह को आप मुरक्किब (संयोगज जो मिलके बने) मानते हैं या मुफरद(असंयोगज जो किसीसे मिलके न बनी हो) यदि मुरक्किब है तो किन अवयवों से बनी है यदि मुफ़रद है तो किस तरह पैदा हो सकती है किसी मुफरिद की पैदायश साबित करें ?

प्र० (१५) आप सिवा ईश्वर के दूसरी वस्तुको नित्य नहीं मानते तो रूह माद्दे के पैदा होने से पहिले खुदा किसका मालिक और किसजगह मुहीत (व्यापक था)

प्रश्न (१६) यदि ईसूमसीह ईश्वर था ईश्वर का पुत्र था तो उसे ईश्वरीय कर्मों का ज्ञान क्यों नहीं था जैसा कि मत्ती की इञ्जील पर्व२४ आ०३६ "उस दिन (प्रलय का दिन) और उस घड़ी (प्रलय की घड़ी) के विषय में न कोई मनुष्य जानता है न स्वर्ग के दूत परन्तु केवल मेरा पिता" यहां मसीह अपने को नहीं किन्तु ईश्वर को जो सब का पिता है जाननेवाला मानता है ?

प्रश्न (१७) यदि ईसू के पास शान्ति (तस्कीन) थी तो उसे अपने शिष्यों के लिये दूसरे शान्तिदाता के मांगने की आवश्यकता क्यों पड़ी जैसा कि योहना की इञ्जील पर्व १४ आयत १६ "और मैं पिता से मागूंगा और वह तुम्हें दूसरा शान्तिदाता देगा" यदि मसीह पर शान्ति न थी तो क्यों व्यर्थ संसार को उस पर विश्वास दिलाते हो ?

प्रश्न (१८) यदि मसीह सबके लिये मुक्ति देने आया था तो क्यों उसने बार २ अपने को केवल इस्राएल की भेड़ों का चरवाहा बताया ?

प्रश्न (१६) क्या शराब बनाकर पिलाना ईश्वरकी आज्ञानुसार है यदि नहीं तो मसीह ने ऐसा क्यों किया ?इति

* ओ३म् *

ईसाईमत परीक्षा

अर्थात्

मसीहीमज़हब के नियमों पर विचार दृष्टि

प्रथम भाग ।

लेखक

श्री० १०८ स्वामी दर्शनानन्द जी सरस्वती

जिसको

पं० शङ्करदत्त शर्म्मा ने अपने लिये

अपने शर्म्मा मैशीन प्रिन्टिंग प्रेस मुरादाबाद में

छापकर प्रकाशित किया ।

द्वितीयवार १५००] मूल्य)॥

धर्मार्थ बांटने वालों को १२) रु० हजार ।

* ओ३म् *

ईसाईमतपरीक्षा ।

पाठकगण ! मजहबकी श्रेष्ठता उसके नियमों की उत्तमता से ज्ञात हो सकती है, परन्तु मज़हब के माने रीति और मार्ग के हैं, इसलिये जो लोग उद्देश्यों को नहीं जानते उनको शुद्ध अशुद्ध मार्ग का ज्ञान हो ही नहीं सकता और जबतक सत्यासत्य (सच और झूंठ) का ज्ञान न हो तब तक चलने का विचार करना बड़ी भारी मूर्खता है ।

जिन लोगों को ईश्वर ने आँखें नहीं दी हैं वे भी लाठी के द्वारा मार्ग को टटोल २ कर चलते हैं जिससे ज्ञात होता है कि मनुष्य की बनावट ही में तमीज़ का मादा है और तमीज़ की आवश्यकता केवल शुभाशुभ (नेकबद या हानि लाभ जानने के लिये है किन्तु मनुष्यों को श्रेष्ठता पशुओं से इसी तमीज़ के कारण मानी गई है। यदि तमीज़ कोई बुरी वस्तु है तो उसके

कारण से मनुष्य को पशु से बहुत बुरा होना चाहिए नाकि श्रेष्ठ परन्तु बहुत मज़हब तमीज़ (विवेक) के भाग ऐसा शत्रु [जानी दुशमन] हैं।

वे तमीज़--विवेक के कारण से मनुष्य को दोषी समझते हैं, इसलिए तमीज़ उनमें श्रेष्ठता के बदले छुटाई पैदा करती है हमारे बहुत से मित्र कहेंगे, कि संसार में ऐसा कोई मज़हब नहीं जो ज्ञान को बुरा जानता हो वरन प्रत्येक मज़हब इस बात पर एक है कि मनुष्य ज्ञान के कारण ही पशुओं से उत्तम है परन्तु ऐसा कहने वाले लोग भूल पर हैं क्योंकि सबसे पहले ईसाई मज़हब ही मौजूद है जो ज्ञान को पाप (दोष) समझता है यों तो प्रत्येक ईसाई कहता है कि ईश्वर की बातों में "अक़ल का दखल नहीं" लेकिन ईसाई धर्म की किताबें और ईसाइयों का खुदा इससे भी बढ़कर तमीज़ (ज्ञान) का वैरी है वह नहीं चाहता कि मनुष्यों में तमीज़ पैदा हो बल्कि जिस समय उसने आदम को उत्पन्न किया उसी समय नेक व बदकी तमीज़ का फल खाने से रोका भला जब खुदा ने खुद तमीज़ को ऐसा बुरा समझा तभी तो

फल खाना आदम के लिए मना किया यहां यह प्रश्न पैदा होता है कि खुदा को यह तो ज्ञात ही था कि आदम इस पेड़ का फल अवश्य खायेगा (यहां तक तौरेत से पाया जाता है। परन्तु ज्ञात होता है कि उसे बिलकुल नहीं मालूम था कि आदम उस वृक्ष का फल खायेगा। क्योंकि उसने सवाल किया (देखो उत्पत्ति की पुस्तक पर्व ३ आयत ९ से ११ तक) तब परमेश्वर ईश्वर ने आदम को पुकारा और उससे कहा कि तू कहां है ? और वह बोला कि मैंने बारी में तेरा शब्द सुना और डरा क्योंकि मैं नंगा हूं इस कारण मैंने आपको छिपाया और उसने कहा कि किसने जताया कि तू नंगा है क्या तूने उस वृक्ष का फल खाया जिसका फल खाना तुझ को वरजा था ऊपर कही आयत से स्पष्ट ज्ञात होता है कि ईसाइयों का खुदा इतना कमइल्म-[अल्पज्ञ] है कि उसे बिना खोज किए काम के पीछे तक खबर ही नहीं होती जब इतना अल्पज्ञ है तभी तो नेक व बदकी तमीज़ के फल खाने से मना करता है ! बहुत से कहेंगे कि अभी तक कोई प्रमाण नहीं दिया कि खुदा ने ज्ञान का फल खाने को मना किया था इसका प्रमाण देखो उत्पत्ति

पुस्तक पर्व २ आयत १५। १६। १७ और परमेश्वर ईश्वर ने पहले आदम को अदन के बाग़ में रक्खा कि उसको बाग़बानी और निगहबानी करे और खुदावन्द खुदा ने आदम को आज्ञा देकर कहा कि—

तू बाग़ के हर वृक्ष का फल खाया कर लेकिन नेक व बद की पहिचान के वृक्ष से न खाना जो खाया तो तू मर जायगा! यह है ईसाइयों के खुदा की आज्ञा! भला जब खुदा ने तो नेक व बद की तमीज से आदम को अलग रक्खा लेकिन सांपने कृपा करके आदम को तमीज़ करादी! जिससे हमारे भाई ईसाई भी दावे से श्रेष्ठ संसार [अशरफुलमखलूकात] में उत्तम होने में अपना भाग समझने लगे—वरना उनके खुदा को तो आदमी का बेतमीज़ ही रखना स्वीकार था।

परन्तु*बाइबिली सांप ने इन्सान को तमीज़दार बना दिया वह नहीं चाहता था कि मनुष्य तमीज़ पैदा करके उत्तम बनजावे। बल्कि आदमी को ज्ञान प्राप्त करने से ईसाइयों के खुदा को इस बात का डर हो कि कदा-

---

* क्या बाइबिली सांप बातचीत भी किया करता था?

त्रित् मनुष्य अमृत के पेड़ के फल खाले और हमारे बराबर होजावे बहुत से लोग हैरान होंगे कि खुदा और खौफ़ से क्या मतलब ? लेकिन हां जनाब ! ईसाइयों का खुदा इसी प्रकार का है इसके प्रमाण में देखो किताब उत्पत्ति [पर्व ३ आयत २१-२३] और खुदावन्द खुदा ने कहा कि देखो मनुष्य नेक व बद की पहचान में हम में से एक की मानिन्द हो गया अब ऐसा न हो कि अपना हाथ बढ़ावे और अमृत के वृक्ष से भी कुछ पके खावे और सदा जीता रहे इस लिए खुदावन्द खुदा ने उसको बाग़अदन से निकाल दिया।

इससे भी बढ़कर और क्या भय का सबूत दरकार है खुदा को डर क्यों न हो क्योंकि एक और सबका मालिक तो परमेश्वर है नहीं जो सबपर प्रभाव अधिकार रखता है और न वह अनन्त ही है बल्कि ईसाई मजहब में खुदाओं की एक क़ौम या जमाअत है जैसा कि ऊपर की आयतों में खुदा के अपने वाक्य से मालूम होता है।

क्योंकि वह कहता है कि मनुष्य नेक व बदकी तमीज़ में हममें से यानी खुदाई क़ौम में से एक की मानिन्द

होगया यानी नेक व बदकी तमीज़ में तो खुदाके बराबर हो गया सिर्फ अमृत के फल खाने का फर्क रहा ईसाई मज़हबमें खुदाओंकी क़ौम होनेका एक और भी सबूत लेलीजिये पौलूसका खत इबरानियों को (पर्व १ आयत ६) ए खुदा ! तून नेकीसे मुहब्बत और बदीसे दुश्मनी रक्खी इस वास्ते ए ईश्वर ! तेरे खुदाने तुझे तेरे शरीकोंका निस्बत खुशी के तेलसे अधिक अभिषेक किया क्या अब भी कोई ईसाई इनकार कर सकता है कि ईसाइयों का खुदा अकेला ही मालिक नहीं है बल्कि उसका खुदा और उसके शरीक साझी भी मौजूद हैं ?

भला ! जिनके खुदाका खुदा और शरीक (साझी) भी हों ! ! ! अब हम पूछते हैं कि वह किस खुदाके पासको मुक्ति मानेंगे !

पादरी गुलाममसीह साहब और दूसरे पादरियों को जो खुदाके पाससे मुक्ति मानते हैं सोचना चाहिये कि किस खुदाके पाससे मुक्ति होगी क्योंकि ईसाइयोंके मज़हबमें तो खुदाओं का एक झुण्ड है जो खुदाके अपने वाक्यसे प्रगट हो रहा है और ईसाइयोंके खुदाका परिमित और शरीरधारी होना भी उनकी

किताबोंसे ही साबित होता है क्योंकि ईसाइयों का खुदा भी आदमीकी सूरतका और मनुष्यकी मानिन्द है इसके सबूतमें देखो किताब उत्पत्ति (पर्व १ आयत २६ तब खुदाने कहा कि हम मनुष्यको अपनी सूरत और अपनी मानिन्द बनावें इस आयतसे मालूम होता है कि ईसाइयों के खुदाकी शक्ल आदमीके अनुसार है और वह आदमी की तरह अल्पज्ञ और अल्प शक्ति वाला है इसके सिवाय खुदाके परिमित होनेका और भी सबूत है देखो किताब उत्पत्तिकी पर्व ३ आयत ८ और उन्होंने खुदा और खुदाकी आवाज-जो ठण्डे वक्त बागमें फिरता था सुनी उसने और उसकी स्त्री ने आपको खुदावन्द खुदाके सामनेसे बागके पेड़ोंमें छिपाया अब बुद्धिमान् समझ सकते हैं कि ईसाइयोंका खुदा मनुष्य है या और कोई।

भला कैसे शोककी बात है कि जिस मज़हबका खुदा बागोंकी सैर करता फिरे-जिसको हसद व कीना (ईर्षा द्वेष) हो जो तमीज यानी नेक बदकी पहिचान आदमी को देना न चाहे और जिसको डर हो कि अगर मनुष्य ने अमृतके पेड़का फल खाया तो हममेंसे एकके बराबर

हो जायगा जिनके खुदाको पैदायशके लिखते समय ये भी विचार न हो कि वह चौथे दिवस सूर्य और चांदको पैदा करें, भला दिन और रातका फर्क सूर्य और चांद के कारण है और ये चौथे दिन पैदा हुए तो ईसाइ साहबान बतलावें कि पहले तीन दिन किस तरह हुए जो जुबान (जीभ) से तो खुदाको सर्वशक्तिमान् कहें लेकिन अमलन ये साबित करें कि उसे काम करनेके पहले किसी विषयका ज्ञान भी नहीं होता क्या ऊपरकी आयतको पढ़कर कोई भी बुद्धिमान् पुरुष यह कह सकता है कि ईसाइयोंका खुदा सर्वशक्तिमान् और दयालु है ?

ईसाइयों को जो नेक व बदकी तमीज़ है वह खुदा की दया से प्राप्त नहीं हुई ॥

बल्कि सांपकी कृपाका फल है जो तमीज और एजहब वालोंके पुरुषाओंको पशुओंसे श्रेष्ठ बनाने वाली साबित हुई वही तमीज ईसाइयोंके पूर्वज आदमको दोषका तमगा पहनाने वाली हुई जब ईसाई लोग ईश्वरको शरीरधारी और परिमित मानते हैं वो हम पूछते हैं कि जमीन और आसमानके पैदा करनेसे पहले आपका शरीर धारी खुदा जो आदमीकी शकल का है

कहां पर मौजूद था क्योंकि उस वक्त कोई जगह तो थी ही नहीं और शरीरधारी चीज़ बगैर जगहके रह नहीं सकती अब जब तक ईसाई लोग अपने शरीर धारी खुदाके तख्तको ये न बतलायें कि वह कहां था तब तक उनके मज़हबी कायदे बालूकी भीतसे भी अधिक कमज़ोर रहेंगे और जिस तख्त पर अब उनका खुदा और उसका बेटा मय अपने शरीरों के बैठा है उस तख्तकी उत्पत्तिका जिक्र उत्पत्तिकी पुस्तकमें तो दिखाई नहीं देता कदाचित ये कदीम अनादि हो।

ईसाई लोग सिवाय खुदाके किसीको भी कदीम (अनादि) नहीं मानते अगर यह भी प्रश्न पैदा होता है कि एक खुदाके सिवाय बाकी खुदाओंको कौम कदीम है और हरएक खुदा अनादि है तो उनमें आपस में कुछ फर्क था या नहीं और यह भी प्रश्न पैदा होता है कि खुदाने ज़मीन व आसमानको पैदा किया था क्योंकि अगर एक खुदा होता तो हरएक आदमी मानलेता कि एक ही पैदा करने वाला है चूंकि यहां खुदाओंकी कौम है तो यह सवाल जायज़ है कि उसने ज़मीन व आस-

पान बनाया और उस समय बाकी खुदा उनकी मदद करते रहे या नहीं और उस खुदाई कौममें सर्वशक्तिमान् खुदा कौनसा है क्योंकि जब तक मनुष्य मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकता क्योंकि ईसाई मजहबमें कर्मों से मुक्ति हो ही नहीं सकती जिसका इकरार पादरी गुलाम मसीह साहब मास्टर स्कूल मैनपुरी ने अपनी किताब (रद्दत-नासुख) में किया है वह खुदाके फज़लसे मुक्ति मानते हैं और परमात्माओंकी एक कौम मालूम होती है। अब उसमें से किस खुदाके फज़लसे मुक्ति होगी और मुक्तिमें कौन पास होगा और आत्माका तकाजा किस खुदाके पास पहुंचना है जब तक ईसाई साहबान इन सवालों का जवाब न दें तब तक उनके सारे दावे व्यर्थ मालूम होते हैं।

(१ हेतु)-कोई परिमित चीज़ अपरिमित शक्तिरख नहीं सकती (२ हेतु) कोई साकार चीज बिना आधार यानी जगह के रह नहीं सकती (३ हेतु) सर्वशक्तिमान् परमात्माओं की जमाअत इकट्ठी हो नहीं सकता (४ हेतु) सब विद्याओंका जानने वाला ईश्वर किसी काम में भूल नहीं कर सकता।

सर्वशक्तिमान् ईश्वरको कहीं यह डर हो नहीं सकता कि कोई उसकी उत्पन्न की हुई तमीज और अमृत का फल खाने से उसके बराबर हो जावेगा और आदमी की शकल वाला ईश्वर इस संसार को पैदा नहीं कर सकता क्योंकि परिमित चीज की शक्ति परिमित होने से उससे अपरिमित कामों का होना असम्भव (नामुमकिन) है हमारे बहुत से मित्र कह देंगे कि जब ऐसी दशा ईसाई मजहब की है तो बुद्धिमान लोग उसे कैसे मान गए ? पाठकगण ! यह तो आपको ऊपर की आयतों से स्पष्ट पता लग गया होगा। कि ईसाई मजहब तो अक़ल व तमीज (बुद्धि व विवेक ज्ञान) को तो गुनाह का कारण बतला कर पहले ही अलग करा देता है जब बुद्धि दूर हो गई तो फिर तहकीकात कौन कर सकता है क्योंकि किताब पैदायश के लेखानुसार बुद्धि शैतान की दी हुई और मनुष्य को अपराधी बनाने वाली है केवल बुद्धिहीन पशु ही मजहब में अच्छे हैं और मसीह ने इंजील में भी इस बातको बतलाया है क्योंकि वह कुल अपने चेलों को भेड़ें और अपने को गड़रिया

बतला रहा है भला जो गडरिये की भेड़ें हों वह तहकी-कात क्या कर सकती हैं ? चाहें कोई ईसाई कैसा ही बुद्धिमान हो वह जब तक भेड़ बनकर मसीह मजहब की बातों को न माने तब तक उसको मसीह मजहब पर ईमान कामिल (पूर्ण विश्वास) नहीं हो सकता जो मनुष्य इनकी भेड़ों को बुद्धि सिखावे उसे वह शैतान का बहकाया हुआ कह देते हैं स्वयं भेड़ बन जाने से तमीज़ नहीं रही ईसाइयों का परमेश्वर तो मनुष्य को बेतमीज रखना चाहता था परन्तु सांप की कृपा से न रख सका लेकिन उसके बेटे मसीह ने अपने बाप का काम पूरा कर दिया अर्थात् मनुष्यों से अक्ल दूर करवा कर उनको भेड़ बना दिया और आप गड़रिया बन गया और करोड़ों आदमी उस गड़रिया गुरुकी पंक्तीमें लग गये जहां ईसाई मजहबने अक्लके दख़लको मजहबसे दूर किया वहां हजारों गलत बातोंको कबूल करना पड़ा क्योंकि अक्ल ही एक ऐसा औज़ार है कि जिसके कारण मनुष्य ग़लतियोंसे बचकर सीधी राह पर जा सकता है ईसाई लोगोंका यह विश्वास कितना कमज़ोर है कि वह आत्माको पैदा हुआ मानकर मुक्तिको अनन्त मानते हैं परन्तु संसार में पैदा हुई चीजें कभी अनन्त

नहीं कहलाती क्योंकि एक किनारे वाली नदी नहीं होती लेकिन उनके मजहबकी विद्या फिलासफी ही निराली है कि परमेश्वर को परिमित मानकर सर्व शक्तिमान मानना और आत्माको पैदा हुआ मानकर अनन्त बतलाना अगर कोई इनसे पूछे कि क्या कभी अनित्य भी अनन्त हो सकता है अनन्त होने के लिये अनादि होना लाजिमी है जो नित्य की तारीफ है आप उन बातों को जिनको गुजरने के बाद लोगों ने तहकीकात करके लिखा अपौरुष वाक्य बताते हैं।

इतिहास तवारीखको अपौरुष वाक्य ईश्वरीय ज्ञान बताने वाले भी हजरत हैं और आपके दिमाग मे वह लेख जिनमें आपस में विरोध हो जिनके विषय बुद्धि के विरुद्ध हों कानूनकुदरत के खिलाफ हो जब अपौरुष वाक्य हैं तो कौनसी गलती है जिसके होने से आपका मजहब बरी हो सकता है? हमें अफसोस होता है कि जब इस मजहब के चलने वाले कहते हैं कि हम क्यों तहकीकात करें हमें अपने मजहब में शक हो तो हम बहस करें-अगले नम्बरों में हम मसीही मजहब की तमाम इल्मी कमजोरियों को सिलसिले वार पेश करेंगे और जिस तरह हमारे मसीह दोस्तों ने रामकृष्ण परीक्षा

में उनके चाल व चलन की तहकीकात की है अब हम अकली तौर पर मसीह के चाल व चलनकी परीक्षा करेंगे और दिखलावेंगे कि श्रीरामचन्द्र व मसीह की सुशीलता में कितना अनन्तर है जहां तक होगा हम किन्हीं प्राचीन बुजुर्गों पर अपनी तरफ से गढ़कर कोई अपराध नहीं लगावेंगे बल्कि बाईबिल के लेख पर ही अपनी तहकीकात की बुनियाद रक्खेंगे।

हम अपने व्याख्यानों में कमसे कम चालीस व्याख्यान ईसाई मजहब के मुतल्लिक पेश करेंगे और दिखलावेंगे कि जिन लोगों ने अपने धर्म के न जानने से ईसाई मजहब को कबूल किया है उन्होंने कैसी गलती खाई है और यह भी दिखलावेंगे कि इन गलतियों के पैदा होने के कारण क्या हैं गरजे कि हम थोड़े अरसे में ही ईसाई मजहब की चिकनी चुपड़ी बातों पर जिस को भोले भाले लोग गलती से सही समझकर भूल जाते हैं और अपने धर्म और जिन्दगी को तबाह करके ईश्वर के हुक्म की तामील से अलग होकर दुःखों के गहरे गड्ढे में गिर जाते हैं उनकी सच्ची तहकीकात पेश करके सर्व साधारण को ईसाइयों के भ्रम से बचाने का यत्न करेंगे ॥ इसके और भाग भी तयार हैं।

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती।

"वैदिक पुस्तकालय" मुरादाबाद के पुस्तकों का

सूचीपत्र ।

श्री स्वामी दर्शनानन्दजी कृत पुस्तकें ।

स्वामी जी का तीन दर्शनों (शास्त्रों) पर भाष्य न्याय-दर्शन-भाषा भाष्य मू० १॥) वैशेषिकदर्शन-मू० १॥) सांख्य १]

उक्त स्वामी जी की पुस्तकें ।

ईसाईमत परीक्षा]॥ भाँटूजाट और एक डाक्टर पादरी साहब का मुबाहिसा ≤] वेद किस पर प्रकट हुए]॥ वेदों की आवश्यकता]॥ मुक्ति और पुनरावृत्ति ―]॥ ईश्वर विचार प्रथम भाग]॥ द्वि०]॥ ईश्वर प्राप्ति प्रथम भाग]॥ नवयुवको उठो]॥ क्या वेदों के पढ़ने का अधिकार सबको नहीं]॥ धर्म-शिक्षा]॥ उन्नीसवीं सदी का सच्चा बलिदान]॥ बालशिक्षा ―] महाअन्धेर रात्री]॥ मोहमुद्गर]॥ भोगवाद]॥ धर्म व्यवस्था]॥ अविद्या का प्रथम अङ्क]॥ दूसरा अङ्क]॥ स्थावर में जीव विचार]॥ षट्शास्त्रों की उत्पत्ति]॥ स्वामी दयानन्द का उद्देश्य]॥ कनफुकवे गुरू बैल की पूंछ]॥ आत्मिक बल]॥ आत्मिक शिक्षा]॥ ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र की व्याख्या]॥ प्रश्नोत्तरी]॥ कोपीन पञ्चक]॥ रामायणसार]॥ जैनी पण्डितों से प्रश्न]॥ ईश्वर जगत् कर्ता है)॥ हिन्दुओं की छाती पर जहरीली छुरी ―) बकरा विलय]। शिवलिङ्ग पूजा विधान ।जैन धर्म]॥ व्याख्यान मुक्तावली ॥, कुरान की छानबीन ।) तत्त्वेलाम्रपी की कथा ।]

पं० शङ्करदत्त शर्म्मा

वैदिक पुस्तकालय, मुरादाबाद ।

* ओ३म् *

संख्या १

ईसाई मत में मुक्ति असम्भव है।

लेखक

श्री० १०८ स्वामी दर्शनानन्द जी सरस्वती

जिसको

पं० शङ्करदत्त शर्म्मा ने अपने लिये
अपने शर्म्मा मैशीन प्रिन्टिंग प्रेस मुरादाबाद में
छापकर प्रकाशित किया।

द्वितीयबार १०००]   मूल्य)॥ सैंकड़ा २)

* ओ३म् *

ईसाई मत में मुक्ति असम्भव है ।

महाशयो !

हमारे ईसाई मित्र मोक्षको अनन्त मानते हैं । जिसका आशय यह है कि इसका अन्त न होगा यद्यपि यह शब्द प्रत्येक जातिको प्रियहै किन्तु इसकी असलियत पर विचार करने से पोल खुल जाती है क्योंकि ऐसा कोई मत नहीं जो मोक्ष (निजात) को अनादि मानता हो क्योंकि जब वह जीवात्मा को ही अनादि मानने से इंकार करते हैं तो मुक्ति को अनादि कैसे कह सकते हैं, अब यह प्रश्न है कि जो मुक्ति पैदा होती है वह आत्मा का स्वभाविक गुण है, या नैमित्तिकगुण, यदि स्वभाविक गुण स्वीकार किया जाय तो मुक्ति के लिये किसी साधन की आवश्यकता

नहीं-किन्तु प्रत्येक मत अपने विश्वास को मुक्ति का साधन मानता है अतएव कोई भी मत मुक्ति को आत्मा का स्वाभाविक गुण नहीं बतला सकता–क्योंकि मुक्ति के माने छूटने के हैं। और छूटता वह है जो पहले बँधा हुआ हो अतएव मुक्ति आत्मा का स्वभाविक गुण हो ही नहीं सकता, प्रश्न यह भी उत्पन्न होता है कि यदि मुक्ति आत्मा का स्वाभाविक गुण नहीं, तो क्या जिस बन्धन से मुक्ति पाता है, वह आत्मा का स्वाभाविक गुण है ? उत्तर मिलता है नहीं क्योंकि यदि आत्मा का स्वाभाविक गुण बन्धन माना जाय तो मुक्ति किसी दशा में हो ही नहीं सकती। स्वाभाविक गुण सदा गुणी के साथ ही रहता है और बन्धन के अर्थ ही खुले शब्दों में प्रकाशित करते हैं कि वह नैमित्तिक गुण है. क्योंकि बंधता वह है जो प्रथम छूटा हो अतः बन्धन और मुक्ति दोनों नैमित्तिक गुण हो सकते हैं। बस किसी नैमित्तिक गुण का अनादि होना ईसाई फ़्लासफ़ी में ही हो सकता है और में नहीं-क्योंकि पदार्थ (मफहूम) का भाग तीन दशाओं में हो सकता है या वह नित्य सत पदार्थ (वाजिबुलवजूद) हो जिसका

लक्षण विद्वानोंने यह किया है कि जिसका आदि तथा अन्त न हो। अर्थात् वह अपने अस्तित्व के लिये साधनोंका आधीन न हो क्योंकि मुक्ति का साधनों के आधीन होना उसके नित्यपन को नष्ट करता है दूसरा पदार्थ अनित्य (मुमकिनुलवजूद) जिसका दो अभावों (नफियों) के मध्य होना आवश्यक है अर्थात् एक प्रागभाव जो उत्पत्ति से प्रथक हो दूसरा प्रध्वंसाभाव जो नाश के उपरान्त हो, क्योंकि मुक्ति को अनन्त मानने वाले उसके प्रध्वंसाभाव को जो (नफी) नाशके उपरान्त हो स्वीकार नहीं करते अतः मुक्ति अनित्य पदार्थ नहीं कहला सकती। तीसरा पदार्थ सम्भव है जिस का होना तीनों काल में असम्भव हो और जिसका कोई दृष्टान्त न मिले जैसे शशशृंग (खरगोश के सींग) तथा वन्ध्या का पुत्र क्योंकि जिसका बेटा हो वह वन्ध्या कहला ही नहीं सकती। क्योंकि संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं जो उत्पन्न होकर अनन्त हो यदि किसी ने एक किनारे वाली नदी देखी होती तो ईसाइयों की मुक्ति सम्भव हो सकती है किन्तु एक किनारे की नदी कहीं दृष्टि गोचर नहीं होती

अतएव अनन्त मुक्ति असम्भव ही मानी जा सकती है।
बड़े आश्चर्य का स्थान है कि जब ईसाई मत में आत्मा
अनादि न होने से अनन्त नहीं हो सकती, क्योंकि ईसाई
और मुसलमान आत्मा को अनादि नहीं मानते। जब
आत्मा अनादि नहीं तो अनन्त किस तरह हो सकती है.
जब आत्मा अनन्त हो ही नहीं सकता तो मुक्ति अनन्त
किसप्रकार कहला सकती है। हमारे ईसाई मित्र दूसरे मतों
की परीक्षा कर रहे हैं कहीं राम परीक्षा कहीं कृष्ण परीक्षा
गुरु परीक्षा इत्यादि यदि मुक्ति परीक्षा भी कर लेते तो
इस असम्भव के गढ़े में स्वयं न गिरते और दूसरों को
गिराते किन्तु इञ्जील के देखने में पता चल सकता है कि
मसीहने ईसाइयों को अपनी भेड़ें बताया है। और भेड़ों
की आदत है कि वह विना विचारे एक दूसरी के पीछे
गढ़े में जा गिरती हैं, ऐसे ही हमारे ईसाई मित्र विना वि-
चारे ही गढ़े में जागिरे हैं ईसाई मत अनादि तो है ही
नहीं क्योंकि उसका सन् उसको नया बताता है उन्होंने
जिस बौद्ध मत से इस विचार को ग्रहण किया वहां ऐसा
ही वर्णनथा यदि वह परीक्षा करके बुद्ध के उद्देश्यों को अपने
मतमें प्रकाशित करते तो ऐसी भूल न करते इस भूलकी

नींव उपनिषदों के न जानने से हुई है यह तो किसी को सन्देह नहीं होसकता कि उपनिषदोंसे ईसाई मत अथवा बौद्धमत बाद उत्पन्नहुए हैं क्योंकि जो उपनिषदोंमें प्रामाणिक बात है वह ब्राह्मणों और वेदों से लीगई हैं कि जिनपर बहुत से टीके विद्यमान हैं शंकर स्वामी का भाष्य उपनिषदों पर है उपनिषदों में तो यह लिखा हैं कि ब्रह्मलोक की आयु तक जीव मुक्ति से नहीं लौटता, लोगों ने यह समझ लिया कि कभी नहीं लौटता उपनिषदोंसे हिन्दुओं ने लिया और उनसे बौद्धमत वालों ने और बुद्ध मत से ईसाइयों ने लिया, किन्तु यह प्रश्न है कि यदि ईसाई लोग मुक्ति को अनन्त स्वीकार करें तो उसको किस पदार्थ में रक्खेंगे हमारे माननीय पादरी ज्वालासिंहने कहाथा कि अनित्य पदार्थ दो प्रकार के होते हैं "एक मुख्य दूसरे गौण" किन्तु किसी प्रकार का अनित्य क्यों न हो उसमें जो लक्षण अनित्यकाहै वह तो अनिवार्य हीहै और अनित्य का दो अभावों के मध्य होना अवश्य ही अनिवार्य है।

यदि संसार भी अनन्त होजाये तो सूर्य चन्द्रादि ब्रह्माण्ड भी अनन्त होसकते हैं किन्तु उनको कोई अनन्त स्वीकार नहीं करता, अतएव अनन्त मोक्ष (निजात अब्दी)

एक ऐसा गड्ढा है जिसके आस्तित्व का सिद्ध करना हमारे मित्रों (ईसाईयों के लिये)को असम्भवहै, यदि अनंत अब्दांके अर्थ स्थिर (मुस्तकिल)नौकरीके समान चिरस्थायी के लिये जावें तो सम्भव हो सकता है, जिसको मानने से हमारे मित्र इंकार करते हैं, जहांतक ध्यान से अनुसंधान कियाजाता है,(मसलूंक शै संसारीवस्तु अनन्त (अब्दी) साबित नहीं हो सकती प्रत्येक सांसारिक वस्तु का नाश होना अनिवार्य है प्रत्येक उत्पन्न हुए के साथ मृत्यु अवश्य भावी है विलम्ब से हो वा शीघ्र हमारे ईसाई मित्र जब एक भी दृष्टांत नहीं दे सकते तो उनको इस विषय (मसला) पर हठ करना व्यर्थ है, क्योंकि प्रत्येक पक्षके लिये युक्ति और दृष्टांत का होना अत्या-वश्यकहै क्योंकि जिस दावे का कोई दृष्टांत नहीं उसको सत्य स्वीकार नहीं किया जासकता यदि हमारे ईसाई मित्र एक भी दृष्टांत देदें तो किसी बुद्धिमानको मानने से अस्वीकारी नहीं हो सकती जब नक्शा और जुगराफिया और ज़मीन मिल जाते हैं तब किसीको [illegible] मानने में शङ्का नहीं होती क्योंकि आदि अनन्त पद [illegible] ईसाई लोग एक भी दृष्टांत नहीं देसकते, इसलि[illegible] वाली मुक्ति का अनन्त बताना असम्भवोक्ति [illegible] त है। इति

सूचीपत्र ।

श्री स्वामी दर्शनानन्द जी कृत पुस्तकें ।

स्वामी जी का तीन दर्शनों (शास्त्रों) पर भाष्य न्याय-दर्शन-भाष्य सू० १॥) वैशेषिकदर्शन-सू० १॥) सांख्य १)

उक्त स्वामी जी की पुस्तकें ।

ईसाई मत परीक्षा)॥ मौलवी और एक डाक्टर पादरी साहब का मुबाहिसा ≈) वेद किस पर प्रकट हुए)॥ वेदों की आवश्यकता)॥ मुक्ति और पुनरावृत्ति -)॥ ईश्वर विचार प्रथम भाग)॥ द्वि०)॥ ईश्वर प्राप्ति प्रथम भाग)॥ नवयुवको उठो)॥ क्या वेदों के पढ़ने का अधिकार सबको नहीं)॥ धर्म शिक्षा)॥ उन्नीसवीं सदी का सच्चा बलिदान)॥ बालशिक्षा -) महाअन्धेर रात्री)॥ मोहमुद्गर)॥ मांसवाद)॥ धर्म व्यवस्था)॥ अविद्या का प्रथम अङ्क)॥ दूसरा अङ्क)॥ स्थावर में जीव विचार)॥ पदार्थों की उत्पत्ति)॥ स्वामी दयानन्द का उद्देश्य)॥ कनफुकने गुरु बैल की पूँछ)॥ शान्तिकरण)॥ आत्मिक शिक्षा)॥ ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र की व्याख्या)॥ ब्रह्मचारी)॥ कौपीन पञ्चक)॥ रामायणसार)॥ जैनी पण्डितों से प्रश्न)। ईश्वर जगत् कर्त्ता है)॥ हिन्दुओं की छाती पर जहरीली छुरी -) बकरा विनय)। शिवलिंग पूजा विधान)। जैन धर्म)॥ कुरान की छानबीन ।) तत्वेचाऋषी की कथा ।)

पं० शङ्करदत्त शर्मा

वैदिक पुस्तकालय-मुरादाबाद,

ओ३म्

भोंदूजाट और एक डाक्टर

पादरी साहब का शास्त्रार्थ।

सम्पादकः—

परलोकवासी श्री १०८ स्वामी
दर्शनानन्द जी सरस्वती.

इस शास्त्रार्थ में पादरीसाहब के भोंदूजाट ने छक्के छुड़ादिये, यह पुस्तक सर्वउपयोगी है।

पं० शङ्करदत्त शर्मा ने अपने
"शर्मा मैशीन प्रिंटिंग प्रेस" मुरादाबाद में
छापकर प्रकाशित किया।

सप्तमवार १०००] सन् १९१० [मूल्य ≡)

यवनमत खण्डन की पुस्तकें तर्क इस्लाम ।

इस पुस्तक में कोई २०२ के करीब आयतों के हवाले देकर उपरोक्त मतको मिष्टर धर्मपाल ने झुठलाया है। जिसका जवाब आज तक किसी ने भी सन्तोष जनक नहीं दिया मू० ।)

विपलता ।

नखले इस्लाम का अनुवाद थोड़ा ही बाकी है। पुस्तक बड़े काम की है भारत के प्रत्येक नवयुवकों के देखने योग्य है कीमत ।=)

यवनमत परीक्षा ।

इस पुस्तक के लेखक—श्री पं० लेखराम जी आर्य-पथिक है पुस्तक बड़े अनुसन्धान से लिखी गई है इस पुस्तक को पढ़कर तथा सुन कर मियां लोग तोबा तैया मचाते हैं। १८४ सफ़े की पुस्तक जो कि उत्तम काग़ज़ १२ पेजी २०+२६ पर छपी है मू० ~।

यवनमतादर्श प्रथम भाग मू० १)

गाने योग्य भजन पुस्तकें ।

भजन अंधेरखाता)॥ भजन तेजसिंहशतक ।~) भजन पचासा प्रथम भाग ~)॥ द्वि० =) नगरकोर्त्तन—पाठक रामस्वरूप कृत ~)॥ वनिताविनोद =) कर्णामृत =) बड़ी गौ पुकार चालीसी)॥ नूतनभजन प्रकाश ≡) वैदिकपताका =) गौ भक्ति प्रकाश ~) आनन्द मङ्गल ≡) आनन्दलता =)॥ ज्ञानोपदेश)॥ वसन्तबहार =)॥ स्त्री ज्ञान गजरा तीनों भाग ≡) स्त्री गीत प्रकाश)॥। स्त्री गीतसागर प्रथम भाग)॥ द्वि०)॥ भजनानन्द चेतावनी ≡)॥

मिलने का पता—वैदिक पुस्तकालय, मुरादाबाद.

❀ ओ३म् ❀

एक डाक्टर पादरीसाहब का भोंदूजाट के साथ

प्रश्नोत्तर ।

एक डाक्टर पादरीसाहब ईसाई मतकी मनादी और बीमारियों का इलाज़ करते हुए जाटों के गांव में जा निकले वहां एक पेड़के नीचे तम्बू तान उपदेश करने लगे प्रथम भागवत वगैरः पुराणों का हवाला देकर हिन्दुओं के मज़हब को खूब झूँठा बतलाया बाद अज़ां बाइबिल की खूबियां बयान करके बताया कि तुम लोग खुदावन्द ईसामसीह पर ईमान लाओ तब वहांके बाशिन्दों में से जो बाज़ दवाओं के लालच से और बाज़ तमाशा समझ इकट्ठे होगये थे उनमें एक जाटजी भी खड़े थे जिसका नाम भोंदू था तमाम गांव में सब से बड़ा बेवकूफ़ मशहूर था, पादरी साहब से कहा कि मै गांव का रहने वाला हूं और नाख्वांदा और बेवकूफ़ आदमी हूं आपकी बातों को अच्छी तरह पर नहीं समझता अगर आप किसी तरकीब से मुझको समझा देवें कि आपका मत सच्चा है तो मैं बहुत खुशी से उसको कबूल करूँ ।

पादरीसाहब—कहो क्या बात, तुम्हारी समझ में नहीं आई।

भोंदूजाट—प्रथम मैं आपसे यह निवेदन करना चाहता हूं क्योंकि मैं एक बिलकुल बिना पढ़ा महज़ जाहिल बरायनाम आदमी हूं मुझको बेवकूफ़ समझ कर गांव वाले मेरी बातों से बुरा नहीं मानते अगर कोई लफ्ज़ बेजा मेरे मुँह से निकल जावे तो मेहरबानी करके आप मुझको माफ़ फरमावें क्योंकि आप दाना हैं।

पादरीसाहब—बेवकूफ़ नहीं तुम तमाम गांव वालों से ज़ियादा अक्लमन्द मालूम होते हो जो प्रभु ईसामसीह ने तुम्हारे आत्मा के भीतर प्रकाश किया तुम बिना भय वर्णन करो हम कुछ अप्रसन्न न होंगे तुम्हारे अनुकूल लोगों को ईश्वर बहुत प्यार करता है ऐसे ही लोग आसमान की बादशाहत में सम्मिलित होंगे,

भोंदूजाट—खुदावन्द ईसामसीह कौन थे?

पादरीसाहब—खुदा के बेटे।

भोंदूजाट—खुदाके कितने बेटे हैं?

पादरीसाहब—केवल एक बेटा है।

भोंदूजाट—तब तो तुम्हारा खुदा अधिक भाग्यवान् नहीं है क्योंकि यदि वह बेटा मर जावे तो उसका जीवन नष्ट होजावे।

पादरीसाहब—ऐसा नहीं होसकता?

भौंदूजाट—अच्छा आप यह कहिये यदि खुदा का बेटा है तो स्त्री अवश्य होगी क्यों कि बेटा बिना स्त्री के नहीं हो सकता।

पादरीसाहब—खुदा की कोई स्त्री नहीं है।

भौंदूजाट—फिर वह किस के पेट से पैदा हुए ?

पादरीसाहब—मरियम के पेट से।

भौंदूजाट—मरियम कौन थी॥

पादरीसाहब—एक स्त्री थी।

भौंदूजाट—उसका कोई पति भी था या नहीं।

पादरीसाहब—उसकी मगनी यूसुफ़ नामी एक बढ़ई से हुई, परन्तु विवाह होने से पूर्व अविवाहिता के पेट से ईसामसीह पैदा हुए।

भौंदूजाट—क्या आपकी समझ में ऐसा हो सकता है ?

पादरीसाहब—हां हो सकता है।

भौंदूजाट—मेरी समझ में ये आपका कथन नहीं आता कि बिना पुरुष के साथ संगति किये किसी क्वारी या ब्याही से लड़का उत्पन्न होजावे यदि कहीं पर ऐसा हो भी जाता है तो हम गांव के रहने वाले गँवार लोग भी उसको मुख्य पुत्र नहीं कहते।

पादरीसाहब—तुम बड़ा गँवार, आदमी है ऐसी बातें तुम जंगली आदमियों के यहां हुआ करती हैं सभ्य मनुष्यों की बातें जो

भौंदूजाट—दीनदयाल मैंने तो आप से पूर्व ही निवेदन कर दिया था, कि मैं गँवार मनुष्य हूं अगर कोई बेजा बात मेरे मुँह से निकल जावे तो क्षमा करें क्योंकि मुझको यह ज्ञात नहीं था कि काज़िब लोगों के साथ ऐसी वार्त्तालाप नहीं किया करते हम जंगली लोग तो उसको सच जानते हैं।

पादरीसाहब—तू अवश्य जंगली है तेरा नाम भौंदू बहुत ठीक गांव वालों ने रक्खा है जो शुद्ध शब्द को नहीं समझता फिर सभ्य मनुष्यों की बात को क्या समझेगा।

भौंदूजाट—दीनदयाल आप बुरा न मानें मैं जंगली मेरा बाप, दादा, परदादा, जंगली आप काज़िब आप के बाप दादा काज़िब।

पादरीसाहब—हम काज़िब नहीं काज़िब झूंठे को कहते हैं जैसे तुम्हारे सदृश मनुष्य होते हैं।

भौंदूजाट-महाशय! अप्रसन्न न हों अज्ञानता के कारण मेरे मुँह से ऐसा निकल गया मुझ को आप काज़िब नहीं किन्तु वाजिब कहें मैं अप्रसन्न न हूंगा यदि आप मज़ज़ूब हैं तो मज़ज़ूब ही सही हम गँवार जाट लोग इन बातों को नहीं समझते।

पादरीसाहब—इस बात को छोड़ो मूर्ख तु कोई दूसरी बात पूछो जो तुम्हारी समझ में आवे।

भौंदूजाट—बहुत अच्छा महाराज इन दिनों स्री कुवारियों के पेट से लड़के उत्पन्न होते हैं क्या

भी ईसामसीह हैं ?

पादरीसाहब—ऐसा नहीं हो सकता।

भोंदूजाट—हमारे गांव में थोड़े दिनों से एक मुद-रिस आया है जो हमारे लड़कों को पढ़ाता है उसने एक समाचार पत्र के भीतर से, ये पढ़ कर सुनाया है कि एक लड़की जिसका पति विवाह होने से दो दिन पश्चात् मर गया था और विवाह के समय उसकी उम्र केवल ५) वर्ष की थी परन्तु अब वह लड़की युवा होगई है एक लड़का पैदा हुआ है।

पादरीसाहब—तुम लोग बड़ा मूर्ख है जो नहीं समझता वह लड़का जो उस लड़की से उत्पन्न हुआ हरामी बेटा है और ईसामसीह खुदा से उत्पन्न हुए थे इस लिये वह खुदा के बेटे हैं और खुदा भी हैं।

भोंदूजाट—भला जी तब उनकी आकृति आदमियों के विरुद्ध होगी जैसे घोड़ी और गधी से खिच्चर एक तीसरी प्रकार की आकृति पैदा होती है।

पादरीसाहब—तुम बड़ा गँवार, आदमी है. ऐसी बातें जंगलियों के यहां हुआ करती हैं सभ्य लोगों के यहां नहीं।

भोंदूजाट—दीन दयाल! आप का कथन सब प्रकार ठीक है हम लोग निःसंदेह मूर्ख जंगलियों के बेटे हैं। जैसा कि इतिहासों से प्रकट है यद्यपि आपके पूर्वजों की कृपा से कुछ२ बुद्धि हमको आने लगी है जो सूत कातने

के लिये चरखे बनाते हैं परन्तु अब भी जंगलीपन हम लोगों में से नहीं गया क्यों कि यदि ऐसे न होते तो इतनी देर तक परिश्रम करके आप के समझाने से भी सच और झूठ की परीक्षा न कर सकते परन्तु ब्राह्मण लोग तो जंगली नहीं हैं वह पत्रा देखकर आपकी भांति परोक्ष की बातें बतलाते हैं।

पादरीसाहब—उनकी बातें सब झूठ और हमारी सच

भोंदूजाट—हम कैसे जानें कि उनका कहना झूठ और आप का कहना सच है।

पादरी साहब—वह काला आदमी है और हम गोरा आदमी है।

भोंदूजाट—पुस्तक तो तुम्हारी और उनके पास एक ही प्रकार की हैं दोनों के पत्रे श्वेत और स्याही कालीहै।

पादरी साहब—तुम बड़ा मूर्ख और झक्की आदमी है कौनसी बात तुम्हारी समझ में नहीं आई जल्दी पूछ लो निष्फल बातों को छोड़ो।

भोंदूजाट—बहुत अच्छा दीनदयाल यह कहिये कि ईसामसीह में वह कौनसी अनोखी बात थी जो हम में नहीं है इस तरह पर तो सब खुदा के बेटे हैं और खुद भी हो सकते हैं।

पादरी साहब—सब नहीं हो सकते क्यों कि वह बातें हर एक में नहीं हैं।

भोंदूजाट—कल्पना करो कि वह सब बातें मुझ विद्यमान हैं।

पादरी साहब—कैसे ?

भोंदूजाट—जैसे ईसामसीह खुदा भी हैं और खुदा के बेटे भी और उनकी मां एक खातन- और बाप खाली था इसी तरह मैं खुदा भी हूं और खुदा का बेटा भी हूं मेरी मां जाटनी और बाप जाट ?

पादरीसाहब—इस बात का क्या प्रमाण ?

भोंदूजाट—आपकी बात का क्या प्रमाण ?

पादरीसाहब—बाइबिल के भीतर लिखा है।

भोंदूजाट—मेरे हृदय के भीतर ऐसा लिखा है।

पादरीसाहब—तुमने कैसे जाना ?

भोंदूजाट—आप इतने बड़े डाक्टर पादरी साहब होकर यह नहीं जानते कि हृदय को खुदा ने बनाया है जिसको बच्चे भी समझते हैं सम्पूर्ण संसार के मनुष्य हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, मूसाई, पण्डित, मूर्ख हर एक से पूछलो कोई इन्कार नहीं कर सकता।

पादरी साहब—तुम जानता है हृदय क्या वस्तु है।

भोंदूजाट—आप जानते हैं बाइबिल क्या वस्तु है।

पादरी साहब—बाइबिल एक कलाम पाक है।

भोंदूजाट—हृदय वह वस्तु है जिसके द्वारा बाइबिल जैसी और सैकड़ों इसी प्रकार की पुस्तकें बनाई गई हैं।

पादरी साहब—हृदय को किसने बनाया ?

भोंदूजाट—परमेश्वर ने।

पादरी साहब--इसी तरह से बाइबिल को भी परमेश्वर ने बनाया।

भोंदूजाट-मेरी बात का सम्पूर्ण संसार साक्षी है। आप की बात का कौन साक्षी है।

पादरी साहब-हमारी बात के सब ईसाई साक्षी हैं

भोंदूजाट-जिस बात की एक जाति साक्षी हो वह ठीक या जिसको सब जातियां कहें वह ठीक।

पादरीसाहब-जिस बात को हम कहें वह ठीक।

भोंदूजाट-यह आपने कैसे जाना इसी प्रकार तो हम भी कह सकते हैं?

पादरी साहब-प्रभु ईसामसीह की करामात से।

भोंदूजाट--प्रभु ईसामसीह में कौन कौन सी करामातें थीं?

पादरी साहब-उसने सहस्रों मृतकों को जीवित किया, अंधों को आंखें दीं, कोढ़ियों को चंगा किया भूत निकाले, वह मर गया फिर ३ दिन के पश्चात् जीवित होकर अपने बापके पास चौथे आसमान पर चलागया अब उसके दाहिने हाथ की ओर बैठा है।

भोंदूजाट-पहिले यह कहिये? कि आकाश किसको कहते हैं।

पादरी साहब-आज कल के दार्शनिक लोगों के कथनानुसार तो आकाश कोई वस्तु नहीं केवल शून्य स्थान की संज्ञा आकाश है परन्तु बाइबिल के अनुसार

आकाश एक ठोस वस्तु है जिसके ऊपर खुदा और उसका बेटे दोनों बैठे हैं।

भोंदूजाट—इन दोनोंमें से दार्शनिक लोगों का कहना ठीक है या पादरी साहब लोगों का ?

पादरीसाहब—पादरी लोगों का।

भोंदूजाट—पहिले तो अपने मुँह मियां मिट्ठू बनना आपको उचित नहीं यदि उचित है तो इस बात का कोई प्रमाण भी हो।

पादरीसाहब—बाइबिल में जो लिखा है वह पूरा २ प्रमाण है।

भोंदूजाट—बहुत अच्छा महाशय जो आज्ञा हो आप यह तो कहिये कि आपके ईसामसीह जो खुदा के दाहिनी ओर बैठे हैं सदैव बैठे ही रहते हैं या कभी कभी खड़े भी होजाते हैं और चल फिर सकते हैं या नहीं और दोनों आजकल क्या काम कर रहे हैं।

पादरीसाहब—परमेश्वर सर्वशक्तिमान् है।

भोंदूजाट—मेरे प्रश्न का उत्तर आपने ठीक २ नहीं दिया अस्तु आपकी इच्छा जो आज्ञा वह सिर माथे पर आप यह कहिये कि सर्वशक्तिमान् किस को कहते हैं ?

पादरीसाहब—जो सब कुछ कर सके।

भोंदूजाट—क्या परमेश्वर कोई अपना बाप भी बना सकता है ?

पादरीसाहब—नहीं बना सकता।

भोंदूजाट—क्यों नहीं बना सकता—जिस प्रकार बेटा बना लिया उसी प्रकार अपना बाप भी बना सकता है और मैं यह भी पूछना चाहता हूं कि उसने बेटा को बनाया-पोता क्यों नहीं बनाया क्योंकि इस संसार में हम ऐसा किसी को नहीं देखते जो अपने कुटुम्ब को उन्नति देना न चाहता हो फिर उसने अपनी निजकी सन्तान का वंश क्यों खो दिया ?

पादरीसाहब—इन बातों को तुम लोग नहीं समझ सकते यह खुदा की बातें हैं उसको वही अच्छी तरह से जानता है।

भोंदूजाट—अगर आप अपने मतको अच्छी तरह से नहीं जानते तो क्यों गांव २ में उपदेश करते फिरते हो कि अपने मत को छोड़कर ईसाई मत में आजाओ।

पादरीसाहब—हमको ईसामसीह की ऐसीही आज्ञा है।

भोंदूजाट—क्या आपको ऐसी आज्ञा है जो बात स्वयं अपनी समझ में भी न आई हो उसको दूसरों को समझाओ ?

पादरीसाहब—हम यह नहीं कहते कि खुदा की सब बातों को नहीं समझते बहुधा बहुतसी बातें हम नहीं समझ सकते ?

भोंदूजाट—किन २ बातों को आप समझते हैं वह बतलाइये।

पादरीसाहब—केवल इस पिछले प्रश्न के और सब बातें समझते हैं।

भोंदूआट-बहुत अच्छा महाशय अब यह तो कहिये कि आपके ईसामसीह जो मृतक से जीवित होकर आकाश पर चढ़गये थे तो कोई सीढ़ी लगा कर चढ़े थे या कुलांच मारकर, जैसे बन्दर लँगूर कूद २ ऊपर चढ़ आते हैं या किसी और युक्ति से।

पादरीसाहब-बिना सीढ़ी के स्वयं चढ़ गये थे।

भोंदूआट-इस बात को कौनसी युक्ति से सिद्ध किया ?

पादरीसाहब-जो बाइबिल में लिखा है वह बहुत सच्ची युक्ति और पूरा २ प्रमाण है।

भोंदूआट-जब कि आपकी बाइबिल में लिखा हुआ बहुत पक्का प्रमाण है तो हमारे पुरानों में तो ऐसी बड़ी २ करामातें लिखी हैं कि जिनके आगे आपको करामातें समुद्र और बूंदकी तुलना भी नहीं। एक पुरान में एक राजा का हाल इस प्रकार से लिखा है, जब कभी किसी शत्रु के साथ उस की लड़ाई होती थी तो सायंकाल के समय अपनी सेना के लाखों मनुष्यों को जो लड़ाई में मारे जाते थे एक दम में जीवित कर लेता था, और शत्रु के मनुष्यों को मृतक छोड़ देता था, और २ ये क्या किन्तु इस प्रकार की हजारों और लाखों करामातें पुराणों में विद्यमान हैं बात बढ़ने के कारण वर्णन करना उचित नहीं समझता, पहली बातों को जाने दो अब भी बहुतेरे वैद्य लोग ऐसे विद्यमान हैं। जो अन्धों को

और कोढ़ियों को दवाओं के बल से अच्छा कर देते हैं, रहा भूत निकालने का कथन यह तो बहुत सहल बात है इस प्रकार के हजारों आदमी गांव में इस समय भी विद्यमान् हैं जो अपने सिरों को हिला हिला कर और कूद २ कर भूतों को निकाला करते हैं इस प्रकार के आदमी नीच जातियों में औतार लिया करते हैं।

पादरीसाहब-पुराणों में जो कुछ लिखा है वह सब झूठ है और वैद्य लोग औषधियों के बल से अच्छा करते हैं जैसे हम हैं पर ईसामसीह ने करामात के बल से चंगा किया था और आज कल के भूत निकालने वाले बड़े ठगिया हैं परन्तु पूर्वकाल के और ईसामसीह ठगिया नहीं थे।

भोंदूजाट-जिस तरह आपकी किताबों में लिखा है उसी तरह हमारी भी किताबों में लिखा है तुम्हारी किताबपर कौनसी खुदा की मुहर लगी हुई है जो हमारी किताबों पर नहीं है फिर वह कैसे जाना गया कि आप की किताब का लिखा हुआ सच है और हमारी किताब का झूठा।

पादरीसाहब-हमारी किताबों में जो कुछ लिखा है वह हजरत ईसामसीह के चेलों ने अपनी आंखों से देख कर लिखा है इस से यह जाना जाता है कि सच है।

भोंदूजाट-आपने स्वयं अपनी आँखों नहीं देखा।

पादरीसाहब-निस्सन्देह हमने नहीं देखा।

मौदूजाट-फिर आपने कैसे जाना कि इन लोगों ने आंखों से देखकर सच २ लिखा है।

पादरीसाहब-बाइबिल के अन्दर जो लिखा है वह सब सच है।

मौदूजाट--सुनी हुई बात ठीक होती है या आंखों से देखी हुई।

पादरीसाहब-आँखों से देखी।

मौदूजाट-महाशय मैं आंखोंकी देखी बात कहता हूं कान लगाकर सुनिये-मेरे पास एक हाली नौकर था जो हल जोता करता था, उसने लाखों मृतकों को जीवित किया। अंधों को आंखें दी, कोढ़ियों को चंगा किया, भूत निकाले मर गया ३ महीने के पश्चात् जीवित होकर बिना सीढ़ी लगाये केवल एक बांस के द्वारा पहले दूसरे तीसरे इत्यादि सातों आकाशों पर सब आदमियों के सामने चढ़ जाया करता था और सातों आकाश पर एक चक्कर के ऊपर दोनों पैर से खड़ा होकर लोगों को खेल दिखलाया करता था, उसके बाप दादा भी उसमें आकर सम्मिलित हो जाते थे उन्होंने बहुत से गांवों में इस प्रकार की करामातें दिखलाईं, पर यह तीनों एक दम से अलोप हो गये और अब परोक्ष शिला के ऊपर चौदहवें आकाश पर तीनों बैठे हैं और नरसिंहा फूँकने की मश्क कर रहे हैं इसी तरह नटों के २४अवतार पहले यहां विद्यमान थे आज इन तीनों

२७ हो गये हैं प्रलय के होने से कुछ दिन पूर्व सबके पृथ्वी पर उतरेंगे, और ऐसे बल से नरसिंहा फूकेंगे। कि सम्पूर्ण संसार में उनका शब्द सुनाई देवेगा फिर उनमें से पिछला जो सबसे छोटा है परन्तु मानमें अपने पूर्वजों का भी पूर्वज है। सोने के एक तख्त पर बैठ कर न्याय करेगा केवल नष्ट लोगों को बैकुण्ठ में भेजेगा। और सबको नरक में और क्यों कि उसने मेरा नमक खाया है इसलिये मेरी आज्ञाको वह प्रसन्नता से मानेगा मेरे कहने से वह निर्दोषी को नरक में और पापियों को बैकुण्ठ में भेजेगा क्योंकि वह पूरा नमक हलाल है वह कहने के लिये सबसे प्यारा है परन्तु मुझको सम्मिलित रखता है कृपालु भी है मगर अपने स्वामी के लिये शिष्टाचार और उसकी तामील की कुछ परवा नहीं करेगा जब मेरे यहां हल जोता करता था तब उसने मुझसे कहा था कि मैंने तुझको सबसे पहले पैदा किया सूर्य चांद पृथ्वी इत्यादि उसने सब मुझ से पीछे बनाये हैं यदि वह मुझको पैदा न करता तो कुछ भी न करता उसका होना न होना बराबर था विशेष विशेषण संहित है परन्तु कहने के लिए बिना अपने मालिक अर्थात् मेरे बिना वह कुछ नहीं कर सकता, परन्तु फिर भी वह मेरा खुदा है और मैं उसका बन्दा।

पादरी साहब—तुम्हारी बात का कोई साक्षी है।

भोंदूजाट—आपकी बात का कौन साक्षी है।

पादरी साहब—उसके दूत साक्षी हैं।

भोंदूजाट–उसके दूत कहां हैं उनको हमारे सामने बुलाओ?

पादरी साहब–हम नहीं जानते कहां हैं और न हम बुला सकते हैं।

भोंदूजाट–मेरी बात के सब गांव वाले साक्षी हैं जो जो इस समय तुम्हारे सामने विद्यमान हैं।

पादरीसाहब–"वल" गांव वाला क्या जानता है।

गांव वाले—दीनदयाल यह लट्ठमोगरी आदमी है इसके साथ आप निष्प्रयोजन बोलते हैं, इससे आप न जीत सकेंगे। यहां तक कि आपके लार्ड पादरी भी इसके सामने दम मारने की शक्ति नहीं रखते यथार्थ बात यह है कि इसके पास एक हाली नौकर था जो जात का नट था वो इसके यहां हल चलाया करता था किसी जोगी ने कुछ जड़ी बूंटी उसको बतला दी थी कितने ही आदमी आंखों से अन्धे देह से कोढ़ी उसके पास आये और औषधि के प्रभाव से अच्छे हो कर चले गये, कतिपय स्त्रियों को भूत चिपट गया था, वह एक राख की चुटकी उनके माथे पर लगाकर छू मन्त्र पढ़ देता था नहीं ज्ञात परमेश्वर जाने क्या बात थी वह अच्छे होकर चले जाते थे कतिपय रोगी मरने वाले आये किन्तु हम लोगों ने मृतक विचार कर के

उसका कफ़न भी तैयार कर लिया था परन्तु न कुछ उसकी औषधि ने प्रभाव किया था क्या हुआ अच्छे होगये एक बार वह स्वयं बड़ा रोगी हुआ तीन महीने तक मृतक पड़ा रहा न बोल सकता था न बात चीत कर सकता था, उसके बाद वह भी परमेश्वर की कृपा से अच्छा होगया उसका हाल सुनकर उसका बाप और दादा वहां आगये फिर उसने इसकी नौकरी छोड़ दी वह तीनों नटों का तमाशा किया करते थे सात बांस बड़े २ लम्बे अपने पास रखते उनको एक दूसरे से बांध कर ज़मीन में गाड़ देते थे और रस्सों से सुदृढ़ बांध देते थे, और सब से ऊँचे सातवें बांस पर चढ़कर नरसिंहा फूँक कर खेल दिखलाया करते वह बहुत ऊंचे अर्थात् आकाश में चढ़ने से छोटे २ दिखलाई दिया करते थे इसी तरह कुछ अरसे तक वह बहुत से गावों में तमाशा दिखलाते और भीख मांगते फिरा करते थे फिर वह गायब हो गये कुछ पता नहीं लगा इस कदर हाल हम को मालूम है।

पादरीसाहब—'वल' झूँठा आदमी तुम कैसे कहता था कि मेरी बात के सब आदमी साक्षी हैं।

मौलूजाट—दीनदयाल आप पहले कह चुके हैं दार्शनिक लोगों के कहने के अनुकूल आकाश कोई नहीं है यदि इस बात को मानें, तब तो आकाशों बनाने की कोई आवश्यकता नहीं थी परन्तु आप

लोगों की बात को झूंठ बतलाते हैं और अपनी बातों को सच, इस लिये उन सातों बासों के सम्मुख सात आकाश कल्पना किये गये इसी प्रकार से शेष वस्तुओं को भी समझ लो जैसे पाठशाला के भीतर भारतवर्ष, यूरोप, एशिया इत्यादि सम्पूर्ण संसार के चित्र रहते हैं वह नाप के बनाये जाते हैं इसी प्रकार आकाश भी नाप के बनाये थे।

पादरी साहब—लोगों का कहना झूंठ पादरी लोगों का कहना सच और आकाशों की ऊंचाई ज्ञात नहीं है फिर नाप से कैसे उसका चित्र बन सकता है।

मौलूजाद—आपके ईसामसीह आकाश पर कुलांच भरकर चले गये उसके पश्चात् हजरत मुहम्मद साहब अन्तिम पैगम्बर [दूत] आकाश के ऊपर बैठकर उस से भी तीन आकाश ऊंचे थोड़ी देर में चले गये थे क्यों कि जब वह चले थे, उनकी चारपाई के पास पानी का भरा हुआ घड़ा रक्खा गया पैरों की ठोकर लगकर वह लुढ़क गया था जब तक वह सात आकाशों तक पांच पांच सौ वर्ष का मार्ग तै करके लौट आये तब तक वह पानी ढल रहा था इससे ज्ञात होता है कि आकाश बहुत दूर नहीं है उसी अनुमान से वह सातों बांस सात आकाश कल्पना किये गये हैं यदि आप अ-

धिक ऊँचे जानते हैं तो भी कुछ आश्चर्य नहीं यह बांस दूसरी माप आकाश गणना में आजायेंगे।

पादरीसाहब—नहीं २ सभ्य आदमियों का कहना ठीक होता है ईसामसीह में यह बात न थी यह आदमी जो जीवित हुए नितान्त न मर गये होंगे परन्तु मसीहने मृतकों को चंगा किया था और आप चङ्गा होकर आकाश पर चला गया बाइबिल के भीतर जो लिखा है वह बड़ी पक्की युक्ति है, क्योंकि वह लोग जिन्होंने ईसामसीह का हाल लिखा है बड़े पवित्र और ईश्वरोपासक थे मछली हड्डी, अण्डा, मुर्गी ऐसे २ उत्तम पदार्थ का खाकर जीवन व्यतीत किया करते थे और बहुधा उनमें से जंगलों में भेड़ बकरियां चराया करते थे।

डोंदूजाट—हम लोग उनसे भी अधिक पवित्र और ईश्वरोपासक हैं उनकी भांति किसी जीव को नहीं सताते और न किसी अपवित्र वस्तु का प्रयोग करते हैं क्योंकि अण्डों के भीतर बिलकुल अपवित्र वस्तु होती है जिसके नामही लेने से ग्लानि आती है और आप सभ्य लोगों के आगे वर्णन करते इस लिये डरता हूं कि कदाचित आप अप्रसन्न हो जायं हम लोग परिश्रम करके हल जोतते हैं खेती करते हैं जो नाज उत्पन्न होता है उसको आप भी खाते हैं और दूसरों का भी पालन करते हैं और हम लोग आप के पैग़म्बरों की

तरह भेड़ बकरियां गाय चराया करते हैं और सर्वदा जंगलों में रहते हैं यदि आपको जंगली आदमियों की बातें बहुत प्रिय हैं तो मुझपर क्यों विश्वास नहीं लाते, क्योंकि जैसे वे जंगली थे वैसा ही मैं जंगली हूं वे मर गये मैं जीवित हूं यदि कोई इस समय आपकी ओर मारने को दौड़े तो वो तुम्हारी कुछ सहायता नहीं कर सकते परन्तु मैं लट्ठ दूं और तुम्हारे शत्रुओं का सिर तोड़ दूं।

पादरी साहब—जानवरों को सताने में कुछ दोष नहीं है क्योंकि उनके भीतर जीवात्मा नहीं है।

ओंकार—जिस तरह वनस्पतियों के भीतर आम, अमरुद, जामन, गुलाब फूल इत्यादि लाखों प्रकार के वृक्ष हैं इसी प्रकार पशुओं के भीतर आदमी गाय, घोड़ा, गधा, इत्यादि लाखों प्रकार के जीव हैं जिस प्रकार जीवन आम में विद्यमान है उसी प्रकार शेष अन्य वृक्षों में विद्यमान है इसी उदाहरण से जैसा जीवात्मा आदमियों के भीतर हैं वैसे ही पशुओं के भीतर है यदि कोई यह कहे कि वनस्पतिओं में केवल आम के पेड़ के भीतर जीव हैं शेष वृक्षों के भीतर नहीं और वे सब वृक्ष आमियों के वास्ते बनाये हैं जैसा उसका कहना भी झूंठ है इसी तरह जो मनुष्य कहता है कि केवल आदमियों के भीतर जीव है पशुओं के भीतर नहीं और यह सब आदमियों के भोजन के लिये बनाये हैं उसका

कहना भी झूंठ है जैसे हां वृक्षों के भीतर आम इत्यादि दूसरों से उत्तम हैं जिससे दूसरों को सुख मिलता है इसी तरह पशुओं के भीतर आदमी उत्तम है जब कि इससे दूसरों को सुख पहुंचे यदि कोई इसके विरुद्ध काम करे अर्थात् दूसरों को सुख के बदले दुःख देवे तो उससे नीच कोई नहीं है उसका जीवित रहने से मरना अच्छा है दूसरे पशु गाय इत्यादि घास फूंस खाते हैं और अमृत तुल्य दूध देकर दूसरों को लाभ पहुंचाते हैं और अपने आप दुःख उठाते हैं और दूसरों को सुख देते हैं और आदमी सम्पूर्ण संसार की अच्छी अच्छी वस्तुएं खाता है परन्तु उसके बदले जो जो वस्तुएं इससे प्राप्त होती हैं वो सब की सब अपवित्र हैं इससे सिद्ध होता है कि इस बात में आदमी पशुओं से न्यूनकक्षा रखता है एक उत्तम वस्तु जो उसके भीतर है वह बुद्धि है जिस के द्वारा आत्मा और परमात्मा को पहचान सकता है दूसरों को लाभ पहुंचा सकता है यदि उससे इसने काम न लिया या आत्मा को पहिचानने का प्रयत्न न किया न दूसरों का भला किया बल्कि उलटी हानि पहुंचाई तो जानो कि उससे जानवर अच्छे हैं बड़े आश्चर्य की बात है कि आप लोग बुद्धि-मान होकर यह नहीं सोचते कि खुदा को आपके साथ कौन सी शत्रुता है जो दूसरे पशुओं को कष्ट दिलाने

को तुम्हारा भोजन बनाया. फिर उस पर आश्चर्य यह है कि परमेश्वर को दयालु और न्यायकारी भी बत-लाये जाते हैं ऐसे २ अत्याचारों को माथे चेपकर आप लोगों ने उसको अच्छे आदमियों से बुरा बना दिया, शोक शत् शोक आपकी बुद्धि और विद्या पर जो अपने हाथों से गला काट रहे हो, और नहीं चेत करते क-ल्पना करो एक मनुष्य ने आपको बहुत कष्ट दिया आज्ञा देने वाले ने उस अत्याचारी को पकड़ कर आप के अधिकार में दिया कि जिस तरह तुम्हारा मन चाहे इसे दण्ड दो इस दशा में यदि आप बुद्धिमान होंगे तो उस आदमी से अपने घोड़ों के लिये घास खुदवावें या खेतों के भीतर माल पुरवावेंगे या और कोई उसकी योग्यता के अनुकूल ऐसा काम उससे लोगे जिससे आपको सर्वदा लाभ होता रहे और उसको भी रोटी मिलती रहे यदि आप यह न करके यह चाहें कि इस को मारकर खा जावें तो इसमें प्रथम तो आपकी प्रत्यक्ष हानि है दूसरे ऐसे दण्ड से डर है कि हाकिम आपसे अप्रसन्न होजावे, और उलटे आपको लेने के देने पड़ जावें फिर आप किस भूल में भूले हुए हो कहा-वत प्रसिद्ध है कि "कांटा किसी के मत लगा गो मिस्ल-गुलफ़ूला है तू। वह हक़ में तेरे ज़हर है किस बात पर भूला है तू" क्योंकि हम तुम और सब पशु उसकी प्रजा हैं और बादशाह के सामने सब बराबर हैं उसने

जो उनको आपके अधिकार में किया है इसी कारण से आप उनसे उस की शक्ति के अनुकूल जैसा कि काम कर सकता हो उससे काम लेकर स्वयं लाभ उठाओ और समय के पूर्ण हो जाने पर वह भी स्वतंत्र हो जावें यदि यह इच्छा न होती तो लाभ पहुंचाने के गुण भी उनमें न रखता जैसा कि एक गाय है कि उस के जीवित रहने से चारलाख पचहत्तर हजार४७५००० आदमियों के लिये एक दिन का खाना मिल सकता है और उसको मारडालने से केवल ७० वा० ८० आदमी एक रोज़ अपने पेट को समाधि लगा सकते हैं फिर यदि भविष्य में दूध की आवश्यकता पड़े तो उसका मूत्र भी मिलना दुर्लभ है।

पादरीसाहब–काले आदमियों की बात स्वीकार के योग्य नहीं होती है।

भोंदूजाट–धोले आदमियों की बात भी स्वीकार के योग्य नहीं होती ? प्रथम तो हम लोग काले नहीं हैं। कश्मीर के रहने वाले भी तो हमारे भाई हैं जो आप लोगोंसे भी अधिक गोरे होते हैं हमारी संस्कृत पुस्तकों में पश्चिम के रहने वालों को विडालाक्ष लिखा है जिस के माने हैं विलाव कीसी आंखों वाले, काले तो हबश के देश वाले होते हैं सो आप लोगों ने धन के घमण्ड में आकर हठ से हमारा काला आदमी नाम रख लिया

है जैसे मुसलमान बादशाहों ने आर्यों से कि जिसके माने श्रेष्ठ और ईश्वरपूजक के हैं 'हिन्दू नाम' रख लिया था जो चोर डाकू मूर्तिपूजक इत्यादि का नाम है इसके सिवाय आप के ईसामसीह इत्यादि भी काले ही आदमी थे क्योंकि वो एशिया के रहने वाले थे यूरोप के नहीं फिर उन की बातों को क्यों स्वीकार करते हो यदि आप प्रबलता यह कहें कि वे लोग काले नहीं थे केवल तुम ही लोग काले हो तो आपके कथन के अनुकूल स्वरूप से काले हैं परन्तु हमारा मन आप लोगों के तुल्य काला नहीं है जिसके अन्दर से यह सच्ची बात आपको सुना रहे हैं क्यों कि आपका हृदय काला है इस लिये आप सच और झूँठ में भेद नहीं कर सकते? आप की वह उपमा है कि एक मनुष्यने बन्दर न देखा था उसके गुरु ने कुत्ते को बन्दर बतलाया उसने इसबात को ऐसा अपने ध्यानमें पच्चीकारी कर लिया कि हज़ार कोई समझावे कि यह कुत्ता है बन्दर नहीं परन्तु वह कदापि नहीं मानता सो ऐसी हठ करता आपके अनुकूल बुद्धिमान लोगों को नहीं चाहिये सचको स्वीकार करना चाहिये और झूँठ को छोड़ना उचित है।

पादरीसाहब–तुम बड़ा 'फूल' (मूर्ख) है तुमको किस तरह से समझावें अच्छा "जिसकी लाठी उसकी भैंस" इस बात को तुम मानते हो या नहीं?

भोंदूजाट-गरोबपरवर मैं बड़ा नहीं हूं बड़े तो हजूर हैं रहो दूसरी बात भैंस और लाठी की उसको हम मानते हैं।

पादरीसाहब-आजकल हमारा राज्य है जिस बात को हम कहें उसको सच जानो और काला लोगों का कहा हुआ सच झूँठ हमारी बातों में जरा भी चूँचरा मत करो तभी तुम्हारा कल्याण है।

भोंदूजाट-राज्य होना और बात है और धर्म का सच्चा होना और बात है हां राजा ने तो मनादी करादी है कि वह किसी के धर्म में हस्ताक्षेप नहीं करते और सब को अपने अपने धर्म के मानने की स्वतन्त्रता देदी है फिर तुम्हारी बात कैसे सच्ची हो सकती है। मनुष्य को योग्य है कि इस राज्य और माया को छोड़ अपनी मृत्यु और अपने पैदा करने वाले परमेश्वर को हर समय स्मरण रक्खे और ऐसा काम कदापि न करे जो न्याय विरुद्ध होवे और आप जो प्रतिज्ञा करते हैं कि हमारा राज्य है यह कथन भी आपका ठीक नहीं है आज कल राजराजेश्वरी श्रीविक्टोरिया माई का राज्य है हम तुम सब लोग उसके बेटे हैं कोई बेटा आपकी तरह योग्य और कोई हमारी तरह मूर्ख परन्तु मां के सन्मुख बराबर प्यारे हैं उसके राज्य में रोज़ विद्या की उन्नति होती जाती है जिस तरह दूसरे बादशाहों की बनाई हुई इमारत वगैरः अब तक उनकी स्मारक है।

इसी तुल्य यह विद्या की स्वतंत्रता धार्मिक तौब की हमेशा यादगार रहेगी इसके अतिरिक्त आप को राज्य का अभिमान मिथ्या है हमेशा न होई रहा न रह सकता है पहले जमाने में सैकड़ों बरसों तक आर्यों ने इस मुल्क में चक्रवर्ती राज किया है और बिगड़ी हुई हालत में महाराज युधिष्ठिर से लेकर पृथ्वीराज तक कुल पांच हज़ार वर्ष तक राज्य इनका स्थिर रहा है। कदाचित इन बातों को आप झूँठ बतलावें क्योंकि आप की किताबों के अनुसार केवल पांच छै हजार वर्ष पृथ्वी की उत्पत्ति को हुए हैं और उससे पूर्व असंख्यात वर्षों से परमेश्वर खाली बैठा था और महाप्लय के पश्चात् सदा के लिये खाली बैठा रहेगा, अस्तु इन बातों को जाने दो जिस प्रकार आप विचार कर रहे हैं कुछ काल पूर्व मुसलमान भी ऐसा विचार करते थे क्योंकि जीव अल्पज्ञ है हां जिसका यश सदैव स्मरण रहे वह भाग्य-शाली है और जिसका अपयश सदैव स्मरण रहे वह भाग्यहीन है नौशेरवां बादशाह कहाँ है परन्तु उसके न्याय के कारण अब तक उसका शुभनाम चला जाता है और बराबर चला जावेगा इसको भाग्यशाली समझो इन दिनों विक्टोरिया माई के राज्य की बदौलत विद्या की उन्नति यहां तक होगई है कि मेरे अनुकूल गँवार जाट हल के जोतने वाले अपढ़ भेड़ बकरियों के चराने वाले

सच और झूँठ को समझने लगे उनको भी भाग्यवान् समझो परन्तु शोक है आप लोगों पर ? जो बुद्धिमान होकर भी नहीं समझते पूर्व समय में लूथर साहब ने पोप लोगों और बाइबिल की भूलें निकाली थीं परन्तु वह भी केवल मोटी २ भूलों को निकाल सके कुल भूलों को न निकाल सके परन्तु आजकल विद्या के समय में उन भूलों को निकालना आरम्भकर दिया है परमेश्वर हमारी माता विक्टोरिया महारानी और उसके राज्य को स्थिर रक्खे कुछ दिन पश्चात् सब झूँठी बातों का अन्त होकर केवल एक वेद मत रह जायेगा वह समय बहुत निकट है जब कि इंगलिस्तान के बुद्धिमान लोग उसकी सचाई से विज्ञ होकर उसको स्वीकार करेंगे क्योंकि सच सदैव प्रबल रहा करता है और आप जो हमको घृणा दृष्टि से देख कर जंगली समझा करते हैं यदि हम लोग न होते तो आप को खाना भी प्राप्त न होता, इस लिये हम लोग गवर्नमेंट के कमाऊ बेटे हैं और आप खाऊ ?

पादरीसाहब—तुम कहता कि हम बिलकुल अपढ़ हैं फिर लूथर इत्यादि का हाल तुमको कैसे ज्ञात हुआ—

भोंदूजाट—आपके पैग़म्बर साहब ने क़ुरानशरीफ के तुल्य बड़ी किताब गुमराह लोगों को कैसे सुनाई ? परन्तु मैं उनके बराबर होने का दावा नहीं करता बात यह है कि गाँव में जो मदरसा होगया है उसके अन्दर

छोटे २ लड़के इन कहानियों को पढ़ा करते हैं उनसे सुनके हम ने जाना।

पादरीसाहब—वेद तुम लोगों का मत नहींहै आर्य्य समाज वालों ने एक नया मत खड़ा किया है तुम्हारे मत की भागवत इत्यादि गड़बड़ पुस्तकें हैं सो उनकी भूलें तुमको समझा चुके यदि आवश्यकता हो तो और भी समझा सकते हैं॥

भोंदूजाट—हमारे मूल मत वेद हैं जब से सृष्टि पैदा हुई है तब से वेद मत हैं और जब तक वह रहेगी तब तक वह रहेगा।

पादरीसाहब—जब आर्य्यसमाजें नहीं बनी हुई थीं उस वक्त वेदमत कहाँ था?

भोंदूजाट—वेद मत तब भी विद्यमान था जैसे बादलों के हो जाने से सूर्य्य छिप जाता है इसी प्रकार से अविद्या की ओट में छिपा हुआ था जैसा परमेश्वर नित्य है ऐसे ही उसकी वेद विद्या भी नित्य है जिस प्रकार आज के दिन हजूर उपदेश करने को तशरीफ लाये हैं इसी तरह कुछ दिन पूर्व कुछ आर्य्यसमाज वाले हमारे गांव में आये थे उन्होंने हम लोगों को यह समझाया कि सिवाय वेतमत के और सब मत विश्वास के योग्य नहीं जो २ बातें उन्होंने हम लोगों को समझाईं वे सब हमारी समझ में आगई थीं थोड़ी दूर पर एक आर्य्यसमाज अजमेर का सदस्य कुछ दिनसे आया

हुआ है उसके मेरा भाई नौकर है यदि आप फरमावें तो मैं जाकर उनको बुलालाऊँ फिर आप उन्हें शास्त्रार्थ करके परास्त कर देंगे तो हम लोग निस्संदेह आपका मत स्वीकार कर लेवेंगे।

पादरीसाहब—आर्य्यसमाज वाले पागल हैं वे लोग भ्रमित करते फिरते हैं उनका कहना मतमानों जो हम कहें सचजानों।

भोंदूजाट—अच्छा यदि उनसे शास्त्रार्थ करते हुए भय लगता है तो हमको समझादो हम तुरन्त समझ जावेंगे।

पादरीसाहब—तुम लोग भी उनकी बातों को सुन कर दीवाना होगये।

भोंदूजाट—ग़रीबपरवर हम लोग दाना नहीं दाना आप हैं कृपा करके हमको समझाओ अगर नहीं समझा सकते तो फिर आपसे हम गँवार ही अच्छे हैं।

पादरीसाहब—तुम क्या बोला?

भोंदूजाट—जो आपने सुना सोई बोला।

पादरीसाहब—हमने क्या सुना?

भोंदूजाट—जो हमने बोला सोई सुना।

पादरीसाहब—तुम बड़ा बदमाश है तुम हमसे अच्छा कैसे हो सकता है। तुम अपढ़ हम पढ़ा हुआ, तुम गाँव का रहने वाला हम शहर का, तुम्हारा काला रंग हमारा गोरा, तुम गांव के रहने वालों के सब

टूटी फूटी एक बोली जानता है हम तेरह भाषायें जानते हैं, फिर तुम हम से अच्छा कैसे हो सकता है ॥

भोंदूजाट—बड़ा जो शब्द है वह परमेश्वर के वास्ते है उससे बड़ा कोई नहीं और बदमाश वह होता है जो बुरे काम करके माश [आजीविका] अर्थात् रोजी पैदा करते हैं, हम अच्छे काम करके माश पैदा करते हैं इसी लिये नेक माश हैं और बदमाश वो लोग होते हैं जो खुद अपने आप तो नहीं समझते परन्तु भोले लोगों को गुमराह करते फिरते हैं, और अपनी आत्मा के विरुद्ध बोलते हैं जहां महीना हुआ थैलियां की थैलियां वेतन के रुपयों की घर में रख लेते हैं, मिहनत कुछ नहीं करते उमदा सवारियों में बैठे २ फिरते हैं, हम अपढ़ हैं परन्तु आपका पढ़ा होना किसी काम का नहीं क्यों कि आप अपढ़ आदमियों को नहीं समझा सकते, एक जानवर होता है जिसको हजार दास्तान कहते हैं हजारों किस्म की बोलियां जानता है, अगर बोलियों के जानने से बुजुर्गी होती तो वह सब से अधिक बुजुर्ग गिना जाता बुजुर्ग वह हैं कि जो आत्मा और परमात्मा को जानते हैं, और नेक काम करके माश पैदा करते हैं खुब भी खाते हैं और दूसरों का भी भला करते हैं, और शहरों के अन्दर रहने से कोई बड़ाई नहीं होती अच्छे काम करने से बड़ाई है चाहे कहीं पड़ा हो और गोरे होने

का जो आपको घमण्ड है यह भी व्यर्थ है देखो तुम्हारी आंखों के बीच में जो काली पुतली है अगर वह जाती रहे तो तुम्हारी आंख किसी काम को न रहे, इसके बाद काले और गोरे सब परमेश्वर के बनाये हुए सुन्दर रंग हैं इन में दोष निकालना परमेश्वर की कारीगरी में दोष निकालना है हम आप से इस वास्ते अच्छे हैं कि हमारी आत्मा अन्दर से पवित्र है जो विचार हमारे मन में हैं उन्हीं को स्पष्ट २ सत्यता के साथ वर्णन करते हैं परन्तु आप हृदय में समझते हैं कि हमारा कहना ठीक है मगर हठधर्मी से आत्मा के विरुद्ध होकर उलटा बोलते हैं इस लिये आप अपनी आत्मा के शत्रु हैं आत्मा के शत्रु दो तरह के होते हैं एक ज्ञान से दूसरे अज्ञान से. जैसे दो आदमी हैं जिनको परमेश्वर ने बड़ी २ आंखें दो हैं उन में से एक आंखों को बन्द किये हुए भूल में मस्त होकर विष को पी रहा है और दूसरा आंखें खोल कर देख रहा है जानता है कि यह विष है, इसके खाने से मैं मर जाऊँगा मगर हमेशा से थोड़ा २ खाते इतना आदी होगया है कि उसको नहीं छोड़ सकता बराबर खाये ही जाता है-सो ऐसे मनुष्य आप हैं जो जान बूझ कर आत्महत्या कर रहे हो। अगर आपको ईसाई मत सच्चा मालूम होता है तो बुद्धि पूर्वक विचार करके हमको समझाओ-यह उत्तर ठीक नहीं है कि बाईबिल में जो लिखा है वह

बहुत और युक्ति और पूरा २ प्रमाण है और आप अप्र- सन्न होते हैं—उपदेशक लोगों को अप्रसन्न होना नहीं चाहिये।

पादरीसाहब—तुम्हारे साथ इस समय बात अधिक नहीं कर सकता हमारी हाजरी (मध्याह्न भोजन) का समय होगया है और तुम्हारे साथ बोलते २ हमारा दिमाग थक गया है।

चौधरी जाट—अच्छा हजूर जो हुक्म हम भी अब जाते हैं. हमारे भी अब हल जोतने का समय है और हमारा दिमाग आप के साथ बातें करने से बहुत प्रसन्न है शोक है तो इतना है कि आप अपनी आत्मा के अन्दर नहीं सोचते कि सच क्या है और झूँठ क्या है अगर आप इसको नहीं समझ सकते तो किसी बड़े पादरी साहब को बुला लो और अपनी पवित्र पुस्तक के सत्य होने की परीक्षा करादो नहीं तो इन झूँठी बातों को छोड़ दो जब कि एक मूर्ख आदमी के साथ आपका यह हाल हुआ फिर विद्वानों के सामने तो मुँह से एक हरफ भी नहीं निकलता होगा, अफ़सोस है कि आपकी विद्या पर यह कहावत चरितार्थ होता है।

शेर—नीम तन दर गोर अन्दर नीम तन दर जिन्दगी।
बस कि बस मालूम शुद वा फन्दगी वा फन्दगी॥

पादरीसाहब—तुम कहता है कि हम एक शब्द भी नहीं पढ़ा फिर यह फारसी का शेर तुम क्यों बोला।

मौदूजाद—जनाब आली हमारे गांव के रहने वाले चन्द लड़के जो पाठशाला में पढ़ा करते हैं आपस में शास्त्रार्थ किया करते हैं जब उन में से कोई निरुत्तर होजाता है तब दूसरे लड़के उस को इसी तरह बोला करते हैं, उसको सुनकर वह लड़का लज्जा कर फिर बोलने लगता है जैसे बैल चलते२ रुक जाता है तब चाबूक के जोर से उसको चलाते हैं या दीपक जिस समय बुझने लगता है थोड़ा सा तेल डालने से उसमें प्रकाश आजाता है इसलिये मैंने यह शेर पढ़ा है ताकि आपके अन्दर प्रकाश आकर फिर बोलने लगो ।

पादरीसाहब-तुम बड़ा शरीर और गुस्ताख़ आदमी है यद्यपि हमको मजिस्ट्रेटी के अधिकार नहीं जो कि तुमको दण्ड दे सकें परन्तु हमारे भाई दूसरे साहब लोग जो तुम्हारी इन बातों को सुनेंगे तो निःसन्देह दण्ड देंगे।

मौदूजाद-ग़रीब परवर हम कंगाल हैंनहीं कंगाल वह होते हैं जो भीख मांगते फिरते हैं या चन्दे से जिनको वेतन मिलता है और मजिस्ट्रेट बुद्धिमान् होते हैं जो भले बुरे भेद कर सकते हैं यदि ऐसे न होते तो उनको ऐसे प्रतिष्ठित पद भी न मिलते चूंकि पाँचों उँगलियें बराबर नहीं होतीं अगर हज़ारों में कोई एक आध आप के विचार का हो तो हम उस का कुछ भय नहीं करते

क्योंकि हमने सबकी भलाई का काम समझ कर सत्य भाव से ऐसा कहा है ताकि इन बातों को सुन कर गुमराही से सीधे मार्ग पर आजावें और हम तमाम इंगलैण्ड के बुद्धिमानों को अपना हाकिम जानते हैं उनका गौरव करते हैं आप भी हमारे हाकिम हैं लेकिन आपकी टोपी के ऊपर एक काला सांप बैठा हो है जिसके काटने से आप कदापि न बचें उसको देख कर हम बाध्य हैं कि जिस तरह हो सके उस मूजी से आप की टोपी के ऊपर अपनी लाठी ऐसे बलसे फेंक के मारें कि जिससे वह सांप आपके सिर से दूर हो जावे तो आप क्या न्यायकारी होकर उसको हमारा अपराध समझेंगे हम आशा करते हैं कि हमारा सत्यभाव देख कर आप हम से प्रसन्न होंगे ?

पादरीसाहब—ये बकरा जो तुम्हारी आँखों के सामने बँधा हुआ है हमने गांव में से अपने भोजन के वास्ते मँगाया है तुम बतला सकता है, कि इसने क्या पाप किया था।

भोंदूजाट—कार्य को देखकर कारण का ज्ञान होता है जैसे कारागृह के कैदियोंको देखकर कोई नहीं बतला सकता कि किसर अपराध के कारण बांधे गये हैं परंतु उनको देख कर अनुमान अवश्य करते हैं कि किसी अपराध के करने से यह दण्ड इनको मिला है क्योंकि कोई मजिस्ट्रेट ऐसा अत्याचारी नहीं है कि बिना अप-

राध किसी गरीब को पकड़ कर भेज देवे जब कि जीव अल्पज्ञ है तब भी जान बूझ कर वह ऐसा काम नहीं करते प्रमाण के अनुकूल हम अवश्य कह सकते हैं कि किसी न किसी पाप कर्म के करने से इस बकरे की यह दशा हुई है कि पराधीन होकर गला कटाने के लिये आप के लिये आप के आगे बंध रहा है। क्यों कि परमेश्वर सर्वज्ञ और पूरा२ न्यायकारी है,और बिना सबब किसी को दुःख नहीं देता इस बकरे के प्रमाण से आजके रोज परमेश्वर देखने वाले जीवों को उपदेश करता है कि हे जीवों! जिस प्रकार यह बकरा पाप कर्मों के आधीन होकर सिर काटने या भूखो मरने या जिस प्रकार भी चाहो कष्ट देने के लिये असमर्थ होकर तुम्हारे आधीन है अगर तुम लोग भी यही पाप कर्म करोगे तो तुम्हारी भी यही दशा होगी।

पादरीसाहब—हम तुम्हारे सदृश्य पागल आदमी के साथ और अधिक नहीं बोल सकते हैं केवल यही कहते हैं कि पवित्र पुस्तक के अन्दर जो मुक्ति का मार्ग है वह यह है कि केवल खुदावन्द ईसामसीह के ऊपर विश्वास लाने से वैकुण्ठ मिलता है दूसरे तौर से नहीं?

भोंदूजाट—यद्यपि मैं मूर्ख हूं परन्तु एक कथा आप को सुनाता हूं कृपा करके कान लगा कर सुनो। देखो एक पक्षी होता है जिसे पतंग कहते हैं वह वर्षा ऋतु में बहुधा रात के समय दीपक जलता हुआ देख कर

बहुत प्रसन्न होकर यह चाहता है कि किसी तरह पर उसके पास पहुँच जाऊँ तब मुझको बड़ा सुख मिले मगर अपनी अल्पज्ञता के कारण वह यह नहीं समझता कि पहुँचने के साथ ही दीपक की बू से अधमरा होकर तेल के भीतर गिर पड़ूँगा और इसी प्रकार विह्वल होकर तेल के भीतर डूब कर मर जाऊँगा। इसी तरह आप लोगों का हाल है जो अपने बुरे कर्मों की ओर नहीं ध्यान देते मगर एक साढ़े तीन हाथ के आदमी के भरोसे पर मूड़ मुँड़ाये बैठे हो और फिर पेट को पाप कर्म करते चले जाते हो परमेश्वर से नहीं डरते। वह बिचारा जब खुदा से अपने को न बचा सका बड़े कष्ट के साथ जानदी फिर तुमको क्या बचावेगा? याद रक्खो जिस प्रकार उसकी दशा हुई उसी प्रकार तुम्हारी होगी अगर इन झूठे ढकोसलों को न छोड़ोगे तो भला ऐसे२ हजरत बिचारे दूसरों को क्या बचावेंगे उन्होंने तो खुद अपने पैरों में अपने हाथों से कुल्हाड़ी ऐसी कड़ी मारी है कि उसका घाव सदैव के लिये अच्छा होना असम्भव है क्यों कि वे लोग जो इनका कलमा पढ़कर भरोसे पर पाप कर्म करते चले जाते हैं जब तक पाप कर्म करना न छोड़ेंगे तब तक मुक्ती उनको असम्भव है। बड़े आश्चर्य की बात है आप लोग ईसामसीह को अपना खुदावन्द भी मानते हैं और लाल रंग की शराब में उस खून की भावना करके उसको पीते हो और तमाम अपने पापों

को उसके गले मढ़ते जाते हो। पाप का फल दुःख है- तमाम दुनियां के पापों के दुःख एक आदमी साढ़े तीन हाथ का किस तरह पर सहन कर सकता है? इसके लिये तो खुद उसके कहे हुए पापों का दण्ड विषतुल्य है। ऐसी ऐसी झूठी बातों को माने बैठे हो और फिर अपने आप को बुद्धिमान्, कहते हो उस पतंग जन्तु के दृष्टान्त से तुमको परमेश्वर उपदेश करता है। कि हे मनुष्य लोगों! जिस प्रकार वह जन्तु झूठा विश्वास करके दुख पा रहे हैं उसी तरह तुम लोग भी जो पापी आदमियों के भरोसे पर पाप करोगे तो तुम्हारी भी ऐसा हाल होगा क्योंकि परमेश्वर दयालु है, वह हर तरह पर उसको बचाना चाहता है जब कि कोई आदमी कुछ बुरा काम करना चाहता है परमेश्वर उसके दिलके अन्दर भय लज्जा इत्यादि उत्पन्न कर देता है, और अच्छा काम करने से उन्हें प्रसन्न कर देता है जो कोई उनकी आज्ञा को तोड़ कर उलटे काम कर बैठता है वही महापापी है। ऐसे आदमी की उम्मेद है कि नरक को जावेगा, इसमें कोई संदेह नहीं है। आप लोगों ने परमेश्वर को एक मिट्टी का खिलौना समझ रक्खा है जो किसी ने चौथे आकाश पर जा बैठाया और किसी ने सातवें पर,, आश्चर्य यह है कि फिर भी उसे सर्वत्र व्यापक कहते तनिक लज्जा नहीं आती परमेश्वर हमारी आत्मा के अन्दर विद्यमान है। ऐसा

कोई स्थान नहीं है जहां वह विद्यमान न हो यदि उसके पीछे आगे पीछे दायें बायें या किसी ओर को विद्युत प्रवाह के तुल्य शीघ्रगामी विना ठहरे लगातार चले जावें तो भी कोई उसका किनारा नहीं । पावेगा वह अनन्त है अनन्त वस्तु का अन्त नहीं वाहरे बड़े मूर्ति पूजको । धन्य ! आपकी हिम्मत पर जो जंगली आदमियों के ऊपर मूंड मुंड़ाने बैठे हो तुम लोग पुराण मतवालों के भी बाबा हो क्योंकि उनकी छोटी २ मूर्ति उनके घरों में रहती हैं अगर कोई शत्रु उनके मारने को आवे तो उस मूर्ति को उठाकर दुश्मन के सिर में भी मार सकते हैं तुम्हारे मूर्ति इतनी २ बड़ी हैं जो सब संसार में भी नहीं समा सकतीं इस वास्ते उनको चौथे और सातवें आकाशों पर जा बैठाया । ऐ प्यारे भाई लोगो आजकल विद्या का समय है इन झूठी बातों को छोड़ो अपनी २ बातों का वेद के साथ मिलान करो । परमेश्वर ने जो तुमको बुद्धि व विद्या दी है उनको काम में लाओ हठ छोड़ कर सोचो और देखो जो सच्ची बात हो उसे स्वीकार करो झूठी बातों को छोड़ो इस अल्पकालिक जीवन को अमोल जानो इस समय वह अवसर तुम्हारे हाथ में है । जीवन के व्यतीत होजाने के पश्चात् तुम कुछ भी न कर सकोगे देखो बड़े २ बादशाह कहां चले गये अब वे लोग जिनको सब तरह की शक्ति थी यहाँ न रह सके फिर भी तुम भी न रहोगे तो पाप कर्मों को

एक दम से छोड़ दो आत्मा और परमात्मा के पहचानने का प्रयत्न करो क्योंकि जब तक आदमी को इनका ज्ञान नहीं होता तब तक ठीक २ भले बुरे में वह भेद नहीं कर सकता। यदि वेदको आप कठिन समझते हों तो अपनी किताबों का सत्यार्थप्रकाश के साथ मुक़ाबला करो छः महीने के अंदर नागरी सीखने से इसका अर्थ समझ सकते हैं हम तुम लोगों को श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज को धन्यवाद देना चाहिये कि जिस बातको सब उम्र तक परिश्रम करने से भी हम प्राप्त न करते थे उसे ऐसा सरल कर दिया है कि केवल छः महीने तक परिश्रम करने से उसको समझते हैं, धन्य है उन मनुष्यों को जो सत्य बातों को जानते हैं और प्रयत्न करते हैं और जाकर दूसरों को समझाते हैं और शोक इन पर जो अपनी भूलों को आँखों से देखते हैं और मन से जानते हैं निरुत्तर हो रहते हैं परन्तु फिर भी उनको नहीं छोड़ते। शोक की बात है कि अल्प-कालिक जीवन के लिये शरीरिक रोगों की औषधि करते हैं परन्तु सर्वदा के लिये आत्मा के रोगों का निदान नहीं करते और वायु प्रबल बह रहा है और अफीम के नशे में वैकुण्ठ के ध्यान को देख अपने आप वहाँ का राजा समझते हैं। सर्वशक्तिमान दयालु परमेश्वर से प्रार्थना है कि जो ऐसे आदमियों पर कृपा करके कुमार्ग को छोड़ ठीक सुमार्ग पर चलावे।

इति शुभम्।

ओ३म्

मीराँ-पूजा

जिसको

श्री पं० शङ्करदत्त शर्मा जी उपदेशक
ने निर्माण किया

और

पं० शंकरदत्त शर्मा ने अपने
"शर्मामशीन प्रिंटिंग प्रेस" मुरादाबाद में
छापकर प्रकाशित किया।

द्वितीयवार २००० } सं० १९७० वि० { मूल्य)।

मुफ्त बांटने वालों को ॥-) सैकड़ा

ओ३म्

मीरां की पूजा

अमरोहे में जिस मीरां की जात लगती है और सैकड़ों भोले भाले भाई जहां जाकर अपना धर्म नष्ट करते हैं और अपनी स्त्रियों की भी दुर्दशा कराते हैं आज मैं उन्हीं मीरां की कथा सुनाना चाहता हूं।

अमरोहे में जिस मकान में यह जात लगती है वह कहा जाता है कि असल में एक हिन्दूमन्दिर था। मुसल्मानी अविद्या और पक्षपात के दौर दौरे में वह मसजिद बनाया गया, मकान की सूरत स्वयं इस घटना की साक्षी दे रही है। इस मकान के ५ द्वार हैं, परन्तु मसजिद में सदैव ३ द्वार रक्खे जाते हैं, ५ नहीं होते और न इस मकान का रुख ही पूरी तौर से

काबे की ओर समझा जाता है। इस बनावटी मस-
जिद का मुल्ला सदरुद्दीन उपनाम सद्दो था। कहा
जाता है कि वह अपने जीवन में अन्धविश्वासी
लोगों के लिये गंडे तावीज़ लिखकर अपने टके
सीधे किया करता था। मरने पर इन के गंडे तावीज़
पर मोहित चेलों ने उसकी क़बर की पूजा शुरू करा
दी। इस प्रकार उस के चेलों ने अपने टके हो सीधे
करने के प्रबन्ध हो जाने पर सन्तोष नहीं किया
किन्तु उस मकान में एक ज़ंजीर लटका कर यह
प्रसिद्ध करदिया कि मकान मान देने वाले उस
ज़ंजीर को न छूलें उस समय तक मियाँ साहब मान
ही स्वीकार नहीं करते और इस प्रकार उन्होंने
विशेषकर स्त्रीजाति की अप्रतिष्ठा करने का सदा के
लिये सामान पैदा कर लिया। इन मियाँ के चेलों
ने अपने दूत भेज कर ग्राम २ नगर में यह प्रसिद्ध
कराया और कराते हैं कि सद्दो की मान देने से जि
किसी के लड़का न हो तो लड़का हो जाता है औ
इसी प्रकार अन्य कामनायें भी सिद्ध हो जाती हैं
बीमारों की बीमारी जाती रहती है या वे अच्छे हो

जाते हैं। अन्धविश्वासी जमाअत जिस में हिन्दुओंका और हिन्दुओं में भी हिन्दुस्त्रियों का पहला नम्बर है। झुण्ड के झुण्ड कोई पुत्र की लालसा से, कोई किसी और कोई किसी कामना की कल्पित पूर्ति की धुन में मग्न हो २ कर मीरां की जात देने अमरोहे पहुंचने लगे। वैसे तो हिन्दुओं में खान पान के सम्बन्ध में छूत छात का बड़ा विचार किया जाता है, परन्तु मीरां की जात देते समय मुसल्मानों की फूंकी हुई रेवड़ियों और गुलगुलों के चट करजाने में जिनमें फूंक और छूने के साथ कुछ न कुछ अंश हाथ की अशुद्धता और मुख की भाप का अवश्य जाता है, किञ्चिन्मात्र भी सङ्कोच नहीं किया जाता।

हिन्दूधर्म से पतित करने की एक और रीति की जाती है कि जो रोगी स्त्री पुरुष आराम होने की इच्छा से जात देने आते हैं उनको मोहम्मदी कलम का उच्चारण कराया जाता है।

जब स्त्रियां जिनमें बहुधा हिन्दुस्त्रियां ही होती हैं, जंजीर छूना चाहती हैं और छू नहीं सकीं तब जिनकी बहू बेटियां हैं उन के सामने ही मुसलमान

मुजावर उन के कमर और बगल में हाथ डालकर उनको उठाते हैं और इस प्रकार उनसे जंजीर छुलवाते हैं और ये निर्लज्ज पुरुष अपनी आंखों से इस निर्लज्जता के दृश्य को देखा करते हैं और देखा ही नहीं करते किन्तु खुश होते हैं कि उनकी जात सफल हो गई ॥

प्रिय पाठकवृन्दो ! एक समय था कि तुम्हारे पूर्वज अपनी आबरू और बात कायम रखने के लिए जान तक खोदिया करते थे । महारानी पद्मावती और राजपूताने की अनेक स्त्रियों ने अपने आप को जीता ही भस्म कर दिया किन्तु यह गवारा नहीं किया कि कोई यवन उनके शरीर को छूना तो कैसा उनकी ओर आंख उठाकर देख भी सके ।

महारानी सीता से जब वे महाराजा राम से पृथक और रावण की क़ैद में थीं, रावण ने यह इच्छा प्रकट की कि वे उसकी पटरानी बन जावें परन्तु पतिव्रतधर्म की जीती जागती मिसाल सीता ने उसको झिड़ककर उत्तर दिया कि उसकी गर्दन

तक तो श्रीराम ही का हाथ पहुंच सका है और किसी की तो यदि पहुंच सकी है तो तलवार ही पहुंच सकी है। स्पष्ट है कि महारानी सीता इस बात की अपेक्षा कि कोई परपुरुष उन के शरीर को छुए, मरना अच्छा समझती थीं, परन्तु शोक कि ऐसी पवित्र माताओं की भोली सन्तान, आज विधर्मियों का हाथ अपने सामने अपनी बहू बेटियों की कमर और बगलों में डलवाते हैं-छी! छी!! छी!!! मीरां को जात देकर पतित होने वालो! तुमने कभी यह भी विचार किया कि यदि मीरां ऐसा शक्तिशाली पुरुष होता कि अपने मरने के बाद भी वह किसी को लड़का दे सका अथवा और कोई कामना पूरी कर सका तो वह स्वयं क्यों मरता? जब वह उस जगत्पिता परमात्मा की आज्ञा "मौत" को न टाल सका और एक तुच्छ पुरुष की भांति उसको उस की आज्ञा के सन्मुख शिर झुकाना पड़ा तो फिर तुम भी उसी महान् प्रभु के सामने ही क्यों नहीं शिर झुकाते जिसकी आज्ञा के सामने मीरां स्वयं भी शिर झुकाने के लिये मजबूर था। तुम

आवागमन के मानने वाले हो, मीरां अपने कर्म्मा-नुसार और गंडे तावीज के अमल से प्रकट है कि वे अच्छे न थे। अवश्य किसी नीच योनि में गया होगा और वहां से ईश्वर जाने कहां फेंका गया होगा। उसकी क़बर में उसकी हड्डियों के चिन्ह तक शेष न रहे होंगे, फिर तुमको क्या हो गया कि नाम मात्र की क़ुबर और मकानों के सामने शिर झुकाते हो? एक फारसी कवि ने क्या अच्छा कहा है जिस का सार यह है कि यदि मरे हुए पीर भी काम में आ सक्ते हैं तो मरे हुए शाहीन (एक शिकारी परन्द) से भी शिकार का काम लिया जा सक्ता है। ऐ सद्दो को जात देकर वेजात होनें वालो! क्या तुमने कभी इसका भी विचार किया है कि जिस धन को तुम फटे पुराने कपड़े पहन, रूखी सूखी रोटी खा, उचिताऽनुचित सभी प्रकार से चोटी का पसीना एड़ी तक बहा, जमा कर इन सद्दो के मोटे ताजे मुजावरों, को देते हो उस धन का क्या होता है। इस तुम्हारे ही धन से कुरबानी के नाम से गायों के गले पर छुरी फिरती है। क्या जिस गाय को तुम गौमाता कह

कर पुकारते हो, जिस गाय की रक्षा तथा उसकी नसल की उन्नति करने के लिए स्थान२ पर पिंजरापोल बन रहे हैं और दयालु सरकार भी जिसकी रक्षा तथा नसल बढ़ाने के प्रश्न पर विचार कर रही है, कई दयालु मुसल्मान भी जिसके बध के प्रतिकूल पुस्तकें छाप रहे हैं तुम दुनियां में उसी गाय के रक्षक कहलाते हुए तुम्हें शर्म नहीं आती कि तुम्हारे ही कमाई के दामों से उसी गायके गले काटे जावें।

शोक ! शोक !! शोक !!!

देश में घी दूध का अकाल पड रहा है, घर २ बच्चे तक पर इस अकाल का असर पड़ रहा है, परन्तु यह अज्ञानी पुरुष गोरक्षा का दम भरते हुये हजारों गायों का गला अपने ही दामों से कटवाते हैं। कलियुग का प्रभाव इसी को कहते हैं। ऐ सदो को जात देकर अपना परलोक बिगाड़ने वालो! क्या तुम नहीं जानते हो कि उस चढ़ावे के सिवा जिसको तुम अपनी खुसी से वहां चढ़ाके नरक में जाने का सामान कर आते हो तुम्हारा कितना माल व असबाब

प्रति वर्ष चोरी जाता है, तुम्हारी गाड़ियों के बैल तक भी वहां चोरी जाते हैं ? यही नहीं कभी २ कोई न कोई तुम्हारी बहू बेटी भी चुराई जाती है और बलात् मुसल्मान करके उसका धर्म्म बिगाड़ा जाता है और तुम्हारे माथे पर सदा के लिये कलङ्क का टीका लगता है, फिर भी तुम्हें लज्जा नहीं आती और तुम कबरों पर जाना नहीं छोड़ते और मुसल्मान मुजावरों से नाता नहीं तोड़ते हो। अब और क्या कसर बाकी है जिस की तुम प्रतीक्षा करते हो और जिसके पूरे होने पर तुम इस घोर निद्रा से चौंकोगे। कुम्भकर्ण की ६ महीने की नींद में लङ्का गारत हो गई, परन्तु तुम कुम्भकर्ण के भी बड़े भाई निकले, तुमको ५००० वर्ष सोते हुये व्यतीत होगये। इस नींद में देश को तुमने रसातल को पहुंचाया, जाति से तुम पतित हुए, माल और धन प्राणोंसे भी अधिक प्रिय स्त्रियों के पतिव्रत धर्म को तुम ने नाश कराया, सैकड़ों बच्चे अनाथ कहकर तुम्हारी गोद से छीने जाते हैं, सैकड़ों स्त्रियां तुम्हारी इन कबरों की पूजा की बदौलत तुम से छीनी जाती हैं, तुम्हारा माल

और धन तुम्हारे ही खोज मिटाने में व्यय होता है। यह व्यय और कोई नहीं करता-तुम स्वयं खुसी २ अपने ही हाथों से करते हो, परन्तु तुम्हारी नींद है कि "शैतान की आंत" खत्म होनेही में नहीं आती।

कुछ मीरां पर ही नहीं और भी इधर उधर तुम जिन क़बरों पर नाक रगड़ने जाते हो क्या तुम ने कभी सोचा कि यह क़बरें किन की हैं? यह क़बरें उन की हैं जिनको तुम्हारे पूर्वजों ने अपने धर्म्म और अपनी स्त्रियोंकी रक्षा करने के लिये अपनी तलवार के घाट उतारा था, उन्हीं को उनके अनुयायियों ने शहीद आदि का खिताब देकर उनकी क़बरों की पूजा करनी शुरू करादी और तुम उन्हीं पूर्वजों की सन्तान होते हुए इन क़बरों पर नाक रगड़ने लगे। भाइयो! सोचो तो सही कि जब ये अपने जीवन काल मे कुछ न कर सके और तुम्हारे पूर्वजोंके हाथों से इस दशा को पहुंचे और इनको अपना जीवन खो वैठना पड़ा तो फिर मर कर इनमें कौनसी शक्ति आगई कि जिससे इन में सब कुछ करने का कल्पित ख्याल तुमने वांध रक्खा है-परन्तु तुम क्यों सोचोगे? तुम्हें तो

कच्चे घड़े की चढ़ रही है-जिनकी ये क़बरें हैं वे अपने जीवन में अपने हठ और पक्षपात से तुम्हारे धर्म्म पर कुल्हाड़ा मारते रहे और उनके मरने पर तुम उन की क़बरों पर जा जाकर अपने धर्म्मपर अपने ही हाथोंसे कुल्हाड़ा चला रहे हो। मुर्दा जीतेके हाथों में होता है, यह कहावत तो चली ही आती थी परन्तु तुमने अपने आपको इन क़बरोंके अर्पण करके उल्टी गङ्गा बहादी और सिद्ध कर दिया कि अब ऐसा समय आ गया है कि जिसमें जीते जागते पुरुष मुर्दों के हाथ में होने लगे।

यदि तुम्हारी उल्टी समझ के अनुसार यह कल्पना करली जावे कि मीरां में कुछ शक्ति है और यह कि वह तुम्हारी सन्तान को कोई आशीर्वाद दे सक्ता है तो भी तो सोचो कि वह आशीर्वाद क्या हो सक्ता है? क्या यह दुआ देगा कि तुम्हारी सन्तान वेद और पुराणों को मानने वाला अच्छा धर्म्मात्मा हिन्दू बने! नहीं!! कदापि नहीं !!! उसकी दुआ यदि हो सक्ती है तो यही हो सक्ती है कि चोटी कटवाकर और जनेऊ उतरवा कर मुसल्मान हो, क्या

तुम भी यही चाहते हो कि यही दशा हो ? यदि नहीं तो फिर क्यों बुद्धि के पीछे लठ लिये फिरते हो और क्यों कबरों से नाक रगड़ते फिरते हो।

कहा जाताहै कि-एक ब्राह्मण स्त्रियों को साथ लेकर मीरांकी जात देने चले, रास्ते में एकजाट के यहां ठहरे। ब्राह्मण ने प्रातःकाल स्नान आदि करके ठाकुर जी की पूजा की जो उनके साथ थे, जाटने पूछा कि कहां जाओगे ? ब्राह्मणने उत्तर दिया कि मीरांकी जातदेने। जाटने यह सुनकर ठाकुर की मूर्तिको उठालिया और कहा कि जब तुम एक मुसलमानकी कबर के सामने जातदेने जाते हो तो ऐसी जगह ठाकुर जी की मूर्ति को ले जाकर अशुद्ध मत करो, कि ब्राह्मण को इस से शर्म आई और उसने प्रतिज्ञा की कि वह अबसे इस नीच कर्म को न करेगा और अपने घर वापिस चला गया। एक और इसी प्रकारकी कहावत है कि-बरेली के बहुधा पुरुष जात देने जाया करते थे, वहां एक महात्मा तुलसीदास जी नामी वैरागी साधु आगये और उनके साथ बहुधा वहां के पुरुषों का सत्सङ्ग रहने लगा, इस सत्संग के कुछ आदमी कई दिनतक अनुपस्थित रहे, उनके वापिस आने पर महात्मा ने

इस अनुपस्थिति का कारण पूंछा। उत्तर मिला कि अमरोहे मीरां की जात देने गये थे। महात्मा ने उन को समझाया कि जब तुम एक मुसल्मानी कबर को जात दे आये हो अब तो तुम्हारी जात क्या रही ? इस का वहां के रहने वालों पर इतना असर पड़ा कि अब वहां से कोई आदमी अमरोहा मियां की जात देने नहीं जाता।

प्यारे भाइयो !

यदि तुम में कुछ भी शर्म बाकी है, यदि तुम्हारे शरीर में पूर्वजों के खूनका एक कतरा भी शेष रहा है तो तुम आज से प्रण करो कि किसी मुसल्मान की कबर को न पूजोगे और वहां जाकर अपनी स्त्रियों के सतीत्व को न भंग कराओगे और अपने घर से गायों के गले भी न कटवाओगे।

भला सोचो तो सही कोई मुसल्मान भी तुम्हारे देवतों की पूजा करने आता है, चाहे उसका कैसा ही प्यारा मरता हो या सत्यानाश जाता हो परन्तु

वह किसी भी तुम्हारी देवी देवता को पूजना स्वीकार न करेगा। वे स्वयं जिन क़बरों की तुमसे पूजा कराते हैं उनको नहीं पूजते। यदि इस प्रकार क़बरों का पूजना कोई अच्छी बात होती तो यह असम्भव था कि यह भलाई मुसल्मान तुम्हारे लिये ही रहने देते—वे तुम्हारे भोले भाले होने का अनुचित लाभ उठाते हैं। इस लिये तुमको इन बुराइयों से उसी तरह से बचना चाहिये कि जिस प्रकार मुसल्मान खुद इसको बुराई समझ कर इससे बचते हैं। ईश्वर तुम को सुमति दें जिस से तुम धर्म्माऽधर्म में भेद करके क़बरों की पूजा रूप खाई में गिरने से बच सको।*

(नोट) * अमरोहे के लकड़ी (काठ) के बर्तन रंगत दार मत ख़रीदो। वह फटे टूटे और सरेस जैसी अशुद्ध वस्तु से जुड़े होते हैं। चाकू से छील कर देखलो कि उस पर रंगत न हो।

॥ इति ॥

॥ ओ३म् ॥

ट्रैक्ट नम्बर १८

आत्मिक बल

जिस को

स्वामी दर्शनानंद सरस्वती जी ने

दयानन्द ट्रैक्ट सोसायटी के हितार्थ

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

ज्वालापुर हरिद्वार में

छपवाया

—=+:•:+=—

तृतीय बार ५००० प्रति] [मूल्य)।

ओ३म्

आत्मिक बल

प्रिय पाठकगण ! आज कल हमारे अधिक भ्राता कार्य्य का आरम्भ करके मध्यमें ही छोड़ देते हुए दिखलाई देते हैं जिससे ज्ञात होता है कि उनको उस काम के करने की शक्ति न थी आप कहेंगे कि जब कि वह शिक्षित चिन्तारहित और बलवान् है तो किस प्रकार कहा जा सक्ता है कि उनमें उस कार्य्य के करने की शक्ति न थी हमने जहां तक परीक्षा की है उससे विश्वास हो गया है कि प्रत्येक कार्य का होना आत्मिक बल के आधीन है यद्यपि शारीरिक बल और धनका बल भी सांसारिक कार्य्यों के करने के लिये एक आवश्यकीय पदार्थ है परन्तु आत्मिक बल के होने पर ये सब वस्तुएं उत्पन्न हो जाती हैं और इनके होने पर आत्मिक बल का होना निश्चित नहीं और नाही इनसे आत्मिक बल उत्पन्न हो सकता है—अब प्रश्न यह होता है कि आत्मिक बल क्या पदार्थ है जिसके होने से समस्त कार्य पूर्ण रूप से होसक्ते हैं और जिसके न होने से बहुसाधनों की विद्यमानता में भी कार्य्य नहीं हो सकता इसका उत्तर यह है कि

कि ज्ञान और प्रयत्न वाली शक्ति को आत्मा कहते हैं और ज्ञान और प्रयत्न उसके गुण कहलाते हैं और गुणों के बढ़ने का नाम बल का बढ़ना कहलाता है इसलिये आत्मा में ज्ञान और प्रयत्न की निर्बलता आत्मिक निर्बलता है और ज्ञान व प्रयत्न का बढना ही आत्मिक बल है, हमारे बहुत से मित्र कहदेंगे कि "न्यायशास्त्र" में जीवात्मा के ये लक्षण लिखे हैं सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष प्रयत्न और ज्ञान तुमने पहले चार क्यों छोड़ दिये और अन्त के दो क्यों रक्खे इसका उत्तर यह है कि पहिले चार तो शरीरस्थ आत्मा के गुण हैं, उदाहरण—कोई मनुष्य हाथ से लकड़ी कुल्हाड़ी की शक्ति से काटता है अब लकड़ी काटना कुल्हाड़ी से मिले हुए हाथ का कार्य है केवल हाथ का नहीं क्योंकि न तो विना कुल्हाड़ी के हाथ काट सकता है और न ही विना हाथ की सहायता के कुल्हाड़ी काट सकती है जब कि दोनों में से पृथक २ कोई भी काटने की शक्ति नहीं रखता और मिलकर बराबर काट सकते हैं तो वह मिले हुओं के धर्म्म है एक का नहीं इसी प्रकार सुख, दुःख और इच्छा, द्वेष सूक्ष्म शरीर के साथ आत्मा को प्रतीत होते है न एकाकी (अकेले) आत्मा को प्रतीत होते हैं और न अकेले शरीर को यदि अकेले आत्मा के गुण मान लिये जावें तो सुषुप्ति की दशा में भी इनका अनुभव होना चाहिये परन्तु सुषुप्ति की दशा में किसी को भी सुख दुःख इच्छा द्वेष विदित नहीं होते इससे निश्चय होता है

कि यह आत्मा के धर्म्म नहीं यदि अकेले शरीर के मान लें तो मृतक में भी होने चाहियें परन्तु मृतक में यह गुण नहीं जिससे प्रकट होता है कि ये गुण आत्मा और शरीर के मेल से उत्पन्न होते हैं।

प्रियपाठक महाशयो ! हमारे अनेक मित्र कहेंगे कि सुषुप्ति कालमें आत्मा को ज्ञान नही रहता इसीकारण उस समय सुख दुःख आदि विदित नही होत नही तो आत्मा में यह गुण सदैव रहते हैं परन्तु उनका यह कहना ठीक नही क्योंकि आत्मा किसी काल मेंभी ज्ञान और प्रयत्न से रिक्त नहीं हो सकता और किसी द्रव्य के गुण उस की विद्यमानता में उसे छोडकर जाही नही सकते फिर किस प्रकार माना जा सकता है कि चैतन्य आत्मा के गुण ज्ञान और प्रयत्न पृथक हो जावें वह विद्यमान हो जब कि प्रत्यके द्रव्य गुणों का समूह है तो द्रव्य के होने के लिये गुणों का होना आवश्यक है—परन्तु अधिकांश मित्र यह कहेंगे कि क्या कारण है, किजो सुषुप्ति कि दशा का ज्ञान प्रतीत नहीं होता, इस का उत्तर यह है, कि ज्ञान दो प्रकार का है एक स्वाभाविक दूसरा नैमित्तिक —स्वाभाविक ज्ञान तो वह है कि जो विना किसी इन्द्रिय और मन के सम्बन्ध के बना रहताहै जैसे अपने होने का ज्ञान दूसरा ज्ञान पदार्थो के सम्बन्ध से उत्पन्न होता है, जैसे-रूपज्ञान के लिये रूपवाली वस्तु और रूप के ग्रहण करनेवाली इन्द्रिय अर्थात् चक्षु

और रूप के प्रकाश करने कि शक्ति जैसे सूर्य दीपक इत्यादि का होनो आवश्यक है। आत्मा ज्ञानी होने पर भी विना इन तानि पदार्थों के रूप का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता और शब्द ज्ञान के लिये कान, आकाश और शब्द का होना आवश्यक है इसी प्रकार बाह्य पदार्थों का ज्ञान विना साधनों के हो नहीं सकता परन्तु अपने ज्ञान अथवा आन्तरीय पदार्थों के जानने के लिये किसी बाह्य साधन की आवश्यकता नहीं।

प्यारे पाठको! ऊपरके दृष्टान्तो से आपने समझ लियाहोगा कि जिन पदार्थों के लिये साधनों की आवश्यकता है वे बाह्य पदार्थ हैं और जिन का ज्ञान विना साधनों के होता है वहउस का अपना गुण है अब सुख दुःख इच्छा द्वेषका होना विना मन की वृत्ति संयोग के हो नहीं सकता जब हम किसी पदार्थ को देखते हैं तो इच्छा उत्पन्न होती है॥

जब उस को बुरा समझते हैं तो उस में द्वेष हो जाता है और जिस पदार्थ का संयोग आत्मा के अनुकूल प्रतीत होता है उसे सुख मानते हैं और जब आत्मा के प्रतिकूल होता है, उसे दुःख कहते हैं इस लिये यह गुण मन के कारण से उत्पन्न होते हैं और सुषुप्ति काल में जब कि इन्द्रिय मन और बुद्धि अपना २ काम छोडदेते हैं तब सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष सर्वथा नहीं रहते केवल ज्ञान और प्रयत्न जो आत्मा के स्वाभाविक गुण हैं वे शेष रह जाते हैं; अब यह शङ्का होगी कि सुषुप्ति समय में आत्मा को किस वस्तु का ज्ञान रहता है और वह

किस के लिये प्रयत्न करता है इसका उत्तर यह है कि सुषुप्ति काल में आत्मा को अपने होने का ज्ञान होता है और वह शरीर की उस न्यूनता को जो जागृत अवस्था के दुःखों से उत्पन्न होगई है पूरा करने के लिये प्रयत्न करता है।

अब यह शङ्का हो सकती है कि जब महात्मा गौतम ऋषि ने अपने दर्शन में जीवात्मा के छः गुण माने हैं और महर्षि कणाद ने इस से भी अधिक तो तुम्हारा कहना किसी प्रकार सत्य नहीं हो सकता इस का समाधान यह है कि विचार पूर्वक महात्मा गौतम का दूसरा सूत्र तो पढ़ो जिस-में महात्मा गौतम ने इन गुणों को मिथ्या ज्ञान की सन्तान में वतलाया है इस लिये ये चार जीवात्मा के गुण नहीं हो सकते, प्रियपाठको ! महात्मा कणाद जी ने अपने वैशे शास्त्र में आत्म संयोग से ही कर्म्म माना है और विना के कर्म्म हो ही नहीं सकता जैसा कि लिखा है—

आत्म संयोगाद्धस्तेकर्म ।

जब आत्मा का हाथ के साथ सम्बन्ध होता है तब ही हाथ में कर्म्म अर्थात् कार्य करने की शक्ति होती है । आत्मा के संयोग के नहीं होती ।

हस्त संयोगान्मुसले कर्म ॥

और जब आत्मा से युक्त हाथ मूसल से संबंध उत्पन्न करता है तो मूसल में कार्य करने की शक्ति आजाती है यहां हाथ से सारे शरीर के अङ्ग प्रयोजन हैं और मूसल से सर्व प्रकार के बाहरी शस्त्र अर्थात् साधन जिन से मनुष्य कार्य्य लेते हैं इसी प्रकार अन्य भी समझना चाहिये॥

मित्रवर्गों ! अब यह निश्चय होगया कि आत्मा के ज्ञान और प्रयत्न दो गुण हैं और इन दोनों का नाम आत्मिक बल और घटने का नाम आत्मिक बल की हानि है।

अब प्रश्न यह उपस्थित हुआ कि इन के बढने और घटने का कारण क्या है ? इस का उत्तर यह है कि संसार में हमें एक नियम विदित होता है कि जहां जिस के सदृशपदार्थ मिलते हैं वहां उस की उन्नति होती है जहां विरुद्ध मिलते हैं वहां हानि जैसे वर्षा ऋतु में जब कि चारों ओर पानी बरस रहा हो और ठण्डी पवन के झोंके वेग से चल रहे हों उस समय यदि आप एक दियासलाई की तीली जलायेंगे तो कठिनता से जलेगी परन्तु उस को ग्रीष्म ऋतु में जब कि लू अर्थात् गर्म वायु बह रही हो जलाना चाहो तो बड़ी आसानी से जल जायगी दूसरे यदि रोगी को जिस को गर्मी के कारण ज्वर आता है गर्म औषधि देतेचले जावें तो गर्मी के बढने से रोग बढता जायगा यदि ठण्डी औषधियां दी जावें तो रोग निवृत्त हो जायगा इस से प्रकट है कि सदृश पदार्थों के संयोग से उन्नति और विरुद्ध के संयोग से हानि होती है।

अब जानना चाहिये कि कौन २ से पदार्थ हैं जो आत्मा को मिलते हैं उन से कौन २ अनुकूल और कौन प्रतिकूल हैं। इस का विचार करने से जहां तक ज्ञात होता है वे दोही पदार्थ हैं एक प्रकृति दूसरा परमेश्वर जिन से आत्मा का सम्बन्ध उत्पन्न होता है, जीव चैतन्य और शरीर के सम्बन्ध से गति वाला प्रकृति परिवर्त्तन वाली और ज्ञान शून्य है, परमेश्वर ज्ञान स्वरूप और स्वाभाविक क्रियावान् और आनन्द स्वरूप हैं प्रिय पाठक! जब कि प्रकृति ज्ञान शून्य और क्रिया रहित है और जीव ज्ञान सहित और क्रियावान् है तो जो प्रकृति से अपना सम्बन्ध करेगा तो उस से जब कि ज्ञान और क्रिया की उन्नति तो होती नहीं हां प्रकृति गुणके उस में प्रतीत होनेलगेंगे यद्यपि प्रकृति में जीव के सम्बन्ध से क्रिया उत्पन्न हो जायगी तथापि कुछ अंश ज्ञान काभी संयोग से प्रतीत होगा, परन्तु जीव के यह दोनों गुण न्यून होते चले जायंगे जितनी प्राकृति क शक्तियां बढ़ती चली जायंगी उतनी ही आत्मिक अवस्था न्यून होती जायगी दूसरी ओर जब आत्मा ज्ञान स्वरूप क्रियावान् और आनन्द स्वरूप परमात्मा से सम्बन्ध करेगा तो उस के ज्ञान और क्रिया की शक्ति अधिक होती जायगी, जैसे जितने समय तक दीप शलाका धूप में पड़ी रहेगी उतनीही तीव्र होती चली जायगी।

भ्रातृवर्ग! अब यह तो सिद्ध हो गया कि आत्मा का बल ईश्वरोपासना है॥

अनेक पाठक कहेंगे कि यह केवल कथन मात्र ही है परन्तु यदि वे विचार पूर्वक लौकिक इतिहासों को अवलोकन करें तो उन पर विदित हो जायगा कि आत्मिक बल ईश्वर भक्तों का ही भाग है।

अर्थात् अनुसन्धान तो कीजिये कि क्या कारण था कि राजा हरिश्चन्द्र इतनी आपत्तियों के उपस्थित होने परभी अपने सत्य पर दृढ़ स्थिर रहा। क्या कारण था कि महात्मा रामचन्द्र जी ने पिता की आज्ञा पाते ही राज्य को तुच्छ समझ कर त्याग दिया। और वन को चले गए, क्या कारण था कि लक्ष्मण जी ने सब प्रकार के सुखों का परित्याग कर भाई के साथ वन को जाना स्वीकार किया ? क्या कारण था कि सीता जी ऐसी सुकुमाररानी ने वनों में भ्रमण करना स्वीकार किया और राज्यादिक आनन्दों की कुछभी इच्छा न की, क्या कारण था कि राजा मोरध्वज का शरीर चीरा गया तौ भी आनन्द पूर्वक चीरेजाने से प्रसन्न चित्त रहा, क्या कारण था कि महात्मा भर्तृहरि जी ने अपने सारे राज्य को तुच्छ जान जङ्गल जाना स्वीकार किया ? क्या कारण था कि गुरु तेग बहादुर यवनों के हाथ से मृत्यु को प्राप्त होने से भयभीत न हुए ? क्या कारण था कि गुरु गोविन्द सिंह के दोनों लड़के दीवार में चुने जाने पर मृत्यु से न डरे, क्या कारण था कि महात्मा पूर्ण भक्त ने सहस्रों आपत्तियों को सहन किया परन्तु उस का आत्मा पाप की ओर आकर्षित न हुआ, क्या कारण

था कि महात्मा हकीकत राय ने १६ वर्ष की अवस्था में यवनों के हाथ से मरना स्वीकार किया परंतु धर्म को न त्यागा ? क्या कारण था कि महर्षिस्वामी दयान्द सरस्वती जी महाराज ने सारे भारतवर्ष का शत्रु बनना ईंट पत्थर खाना उत्तम समझा परन्तु अधर्म का मूलोच्छेद किया और धर्म्म के विरुद्ध चलना महापाप समझा आप विचारोगे तो प्रत्यक्ष ज्ञात होगा कि यह आत्मिक बल का ही कारण था कि जिस ने इन महात्माओं को संसार के सन्मुख विजयी किया।

प्रिय पाठकवृन्द ! क्या आपने कभी विचार नहीं किया कि वह कौन से कारण है जिन्होंने रानी पद्मनी को प्रचण्ड अग्नि में भस्म होकर मरना स्वीकार कराया, परन्तु यवन बादशाह की बेग़म बनना अस्वीकार किया ? क्या काणर था कि जिसने राजा दाहर की रानी को चिता में जलकर मरने पर कटिबद्ध किया वह कौनसी शक्ति थी कि जिसने कृष्णकुमारी को जलती हुई चिता पर बिठा दिया ? कहां तक गिनायें इस भारतभूमि में असंख्यात दृष्टांत हैं जिनके नाम सूर्य्य के समान इस संसार में प्रकाशित है। आप इसका उत्तर यही देंगे कि धर्म भाव इनमें था जिसने इन सुकुमारसतियों का प्रसन्नता पूर्वक इन आपत्तियों के सहने पर सन्नद्ध करदिया यह धर्म्म क्या है वस्तु है केवल ईश्वरोपासना ! बस आप समझ गये होंगे तो संसार में धर्म्म और अधर्म्म या पाप और पुण्य जो दो शब्द

है इनका आशय केवल ईश्वरोपासना और प्रकृतिकी उपासना है ईश्वर उपासना धर्म्म है जिससे आत्मिक बल मिलता और वह ऐसे उन्नति के कार्य करता है जिससे संसार में सुखों को प्राप्ति होता है दूसरे ईश्वरोपासना से ईश्वरीयशक्ति अर्थात् वैदिकज्ञान की प्राप्ति होकर जीव की ज्ञान शक्ति बढ़ जाती है संसार में जितने योगी हुये हैं जिन्होंने अपने आत्मा को प्रकृति से अलग करके ज्ञानको ओर लगायाहै वे सब संसार में ज्ञानी और विद्वान् कहलाय और अद्य पर्य्यन्त उनका नाम कार्य्य संसार में विख्यात है परन्तु जितने प्राकृति के उपासक हुये जिन्होंने आत्मिक हानि को प्राप्त किया वे दास होकर चले गये उन्हें जीवन में मूर्खता और दुःख ने आक्रमण किये रखना मरने के पश्चात् भी कष्ट के अतिरिक्त कुछ न मिलर और आज कोई जानता भी नहीं।

प्रियवरो! आत्मा एक राजा हैजिसका राजधानी यह शरीर है, इन्द्रिय, बुद्धि इत्यादि मन इसके कर्म्मचारी है यदि यह राजा बलवान् होता है तो अपने कर्मचारियों पर शासन करता है और अपनी इच्छानुसार इनसे काम लेता है उस समय उसके कर्म्मचारी उसके दास होकर उसको प्रत्येक प्रकार का सुख देते हैं, परन्तु जिस समय निर्बल हो जाता है उस समय कर्म चारी उसको दबा लेते हैं और वह प्रत्येक से विनय करता है और वह उनके लिये भोजन का यत्न करता रहता है यद्यपि

यह कार्य इन कर्म्मचारियों का था कि अपना भोजन प्राप्त करते अर्थात् अपने विषयों को भोगते हुये भोजन अर्थात् बाह्य पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करते परन्तु आत्मा को निर्बल देखकर ऐसे आलसी और अहंकारी हो जाते हैं कि राजा को स्वयम् इनके भोजन का सन्देह लगा रहता है उसकी सारी स्वतन्त्रता और प्रधानता छिन जाती है वह अपने आप को राजा के स्थान में दास अनुभव करने लगता है अब उसका कार्य्य यह होता है कि साईस की भांति घोड़ों के

पालन पोषण में लगा रहे उसे अपने उस मार्ग का ध्यान तक नहीं रहता जहां जाना है और वह जिन कार्य्यों को प्रबलता की दशा में तुच्छ समझता था उस निर्बलता की दशा में उस को एक आवश्यकीय कार्य समझ लेता है और पदार्थों का ज्ञान उसे प्रबलता की दशा में सुगमता से हो सकता था अब वह उसके विचार में अधिक गुरु दृष्टि आते हैं भ्रातृवर्गो ! यह तो आप जानते हैं कि जिस प्रजा का राजा अयोग्य है वह प्रजा सदैव अकृतकार्य रहती है इसी प्रकार जिस जाति का मुखिया अयोग्य है उस की भी यही दशा होती है राजा का कार्य राजा से होता है दास से नहीं इसी प्रकार प्रबल आत्मा के कार्य निर्बल आत्मा से हो नहीं सकते और संसार में भी देखा जाता है कि जिस मनुष्य की इन्द्रियें उसके वश में नहीं उस का कुटुम्ब उसके वश में नहीं रहता और जो अपने कुटुम्ब पर शासन न कर सके वह अपने मुहल्ले पर शासन नहीं कर सकता और

जो अपने मुहल्ले पर शासन नहीं कर सकता वह अपने ग्राम पर शासन नहीं कर सकता और जो ग्राम पर शासन नहीं कर सका वह प्रान्त पर शासन नहीं प्राप्त कर सकता और जो प्रान्त के योग्य नहीं वह देश पर क्योंकर शासन कर सकता है और जोएक देश परभी शासन नहीं कर सकता है वह संसार पर किस प्रकार हकूमत कर सकता है यहां से पता मिलता है कि संसार में सबसे बडी उत्तीरणता की सोपान आत्मा का इन्द्रिय और मन पर शासन है, इन्द्रिय और मन पर शासन के लिये आत्मा को अत्यन्त भारी शक्ति की आवश्यकता है. क्यों कि ये इन्द्रिये संसार के सहस्रों पदार्थों की मन के द्वारा सन्मुख कर के आत्मा को धोका देना चाहती हैं परन्तु प्रबल आत्मा जिस का ज्ञान गुण परमात्मा की प्रबल शक्ति से सहायता पाकर उन्नति कर चुका है जिस को प्रत्येक पदार्थ का यथार्थ ज्ञान है वह इन इन्द्रिय और मन के वशी भूत नहीं हो सकता जो इन्द्रिय और मन को वश करने योग्य बल आत्मा में रखता है वह कृत कार्य्य हो सकता है ॥

इति शुभम्

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गौशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

॥ ओ३म् ॥

मृतकश्राद्ध विषयक प्रश्न ॥

ये प्रश्न १५ वर्षसे बराबर विचारार्थ बांटेजारहे हैं- आशा है कि विचारशील अवश्य विचार करेंगे।

धनि धन्य वही जग धन्य भये, जिनके पित मात प्रसन्न गये। करि तर्पण जीवित तृप्त किये, सुख श्रद्धहिसे कर श्राद्ध दिये॥ कबहूं नहिं शासन भङ्ग कियो, सब भांतिन पूजि अनन्द दियो॥ जिन पित्रनकी सुअशीस लही, सत सन्तति है जग मांझ वही॥ कवि शर्मन् भीष्महु राम भये, जगमें निज कीरति छांड़ि गये। सुख पित्रनको न दियो जिनने, जग व्यर्थहि जन्मलियो तिनने॥

Printer B. D. S. Brahm Press Etawah.

एकादशवार ४००० } सम्वत १९६८ { मूल्य)। ।।।) सैकड़ा

प्रकाशक—बाबूरामशर्मा इटावा.

ओ३म् ॥

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते । तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥यजुः३२॥

हे परमात्मन् ! जिस विज्ञानवती यथार्थ धारणा वाली बुद्धिको देव (विद्वानों)के वृन्द उपासते (धारण करते) हैं तथा यथार्थ पदार्थ विज्ञान वाले पितर जिस बुद्धिके उपाश्रित होते हैं उस बुद्धिके साथ इसी समय मुझको मेधावी कर"स्वाहा"इसको आप अनुग्रह और प्रीतिसे स्वीकार कीजिये जिससे मेरी जड़ता सब दूर हो।

श्राद्धतर्पणम् ॥

जिस कर्मसे विद्वान् रूप देव, ऋषि मुनि और पितरोंको सुख युक्त करते हैं उसे तर्पण कहते हैं । उसी प्रकार जो उन लोगोंका श्रद्धासे सेवन करना है सो श्राद्ध कहाता है, यह तर्पणादि कर्म प्रत्यक्ष–जीवितोंमें ही घट सकता है मृतकोंमें नहीं । क्योंकि उनकी प्राप्ति करना असम्भव=दुर्लभ है । इसीसे मृतकोंको भोजनादि सुख पहुंचाना भी असम्भव है–अतः जीवित पितरोंका ही श्राद्धतर्पण नित्य नियमसे कीजिये (इसे वर्षों बन्द करना पितरतलफाना है) क्योंकि श्राद्धतर्पण नित्य वैदिक कर्म हैं ॥

ओ३म् परमात्मने नमः ॥

मृतक श्राद्ध विषयक प्रश्न ॥

(१)-पौराणिक दन्तकथानुसार मृतकश्राद्धको च-लाने वाले राजा करण हुए हैं। इससे स्पष्ट विदित होता है कि उक्त राजासे पूर्व मृतकश्राद्धकी परिपाटीका सर्वथा अभाव था अतएव मृतकश्राद्ध वैदिककर्म नहीं होसकता है ॥

(२)-राजा करणसे पूर्व मृतकपितरोंकी गतिके निमित्त लोग क्या क्या कर्म धर्म किया करते थे ?

(३)--* कौओं और पितरोंमें क्या सम्बन्ध (रिश्तेदारी) है जो श्राद्धमें विशेष कर उन्हेंही भोजन (कागौर) दिया जाता है ? क्या कौआ पितरोंके बीचमानी (मध्यस्थ), प्रतिनिधि, कारिन्दा, (पितृदूत) या हलकारा हैं ?

(४)--तीन पीढ़ी तकही श्राद्ध करनेका नियम है उनके पहिले (५।६ पीढ़ी आदिके) पुरुषोंकी क्या गति होती है ?

(५)-जो निस्सन्तान मरते हैं उनको अपने धर्मके

* बलिवैश्वदेव भूतयज्ञमें काकादिकोंको नित्य भाग देना कहा है सो ठीक है--देखो मनुस्मृति ३ अ० श्लोक ९२

अनुसार स्वर्ग प्राप्त होता है वा नहीं क्योंकि शुकदेवजी, भीष्मपितामहजी, पञ्चशिखादि अनेक ऋषियोंने अपना विवाहही नहीं किया था--क्या उन धर्मात्माओंको उनके सुकर्मानुसार स्वर्ग प्राप्त नहीं हुआ होगा ?

(६)--जो मनुष्य गयानगरमें अपने पुरुषोंका श्राद्ध कर आता है उसके पुरुषोंका फिर श्राद्ध नहीं होना चाहिये परन्तु क्यों होता है और गयानिवासी ही क्यों करते हैं?

(७)--३६० दिनमेंसे १५ दिन पितरोंके श्राद्ध तर्पण करने का क्यों नियम बांधा (कि सब हिन्दुओंके एकदम श्राद्ध करनेसे सुपात्र ब्राह्मण और आवश्यक पदार्थोंका मिलना कठिन होजाता है) और १ ही दिनके पिण्डोंसे वर्ष भरकी तृप्ति कैसे होजाती है? क्या ३५९ दिन पितर कहीं विलायत दौड़ा करने चले जाते या उपासे रहते हैं?

(८)--पितर लोग कौनसे शरीरसे पिण्ड ग्रहण करते हैं? यदि स्थूल शरीरसे तो दीखते क्यों नहीं और यदि सूक्ष्मशरीरसे तो स्थूल भोजनको वे कैसे ग्रहण कर सकते हैं?

(९)--यदि एक ही मनुष्यके ४ पुत्र ४ नगरोंमें एक ही दिन और एक ही समयमें एक सङ्ग श्राद्ध करें तो वह क्या चारों पुत्रोंका भोजन कर सकता है वा नहीं? किन्तु

शास्त्रोंके मतसे जीव अल्पशक्ति वाला और एकदेशी है)

(१०)--स्त्रियोंको मृतकश्राद्ध करनेका अधिकार नहीं है तो फिर पानेका अधिकार क्योंकर है ?

(११)--कनागतोंमें हजामत (बाल) बनवाने और कपड़े धुलाने सिलाने आदिका किस शास्त्रमें निषेध है? क्या मैले कुचैले फटे लत्ते रहनेसेही पितर प्रसन्न होते हैं ?

(१२)--माता पिता इत्यादि सम्बन्ध सशरीर जीवसे है वा निश्शरीरसे ? यदि सशरीरसे है तो शरीर वियुक्त जीव किसका माता पिता है और उसके लिये श्राद्धकरनेका कौन अधिकारी है? (नैव स्त्री न पुमानेष०श्वेता०)

(१३)--मोक्षगत जीवोंके निमित्त श्राद्ध करना चाहिये वा नहीं? यदि चाहिये तो वे किसप्रकार पाते हैं, यदि नहीं चाहिये तो क्या निश्चय है कि जीव मोक्षमें हैं वा अलग?

(१४)--जीवकी निज कर्मानुसार गति होती है वा नहीं यदि होती है तो मृतकश्राद्ध करनेका क्या फल है?

(१५)--सपिण्डी करणमें तीन शाखोंमें मेल किया जाता है सो क्या तीनों शाखें विना योनियोंके कहीं विद्यमान हैं या यह मेल करना गुड़ियोंका खेल बनाना है?

(१६)--यदि वे जीव निज कर्मानुसार किसी योनिको-

पाचुके हैं तो उनशरीरोंके साथ दूसरेका क्या मेल और वे कौन २ शरीरोंमें हैं इसका निर्णय क्या है ?

(१७)--सपिण्डी करण श्राद्धमें वह पिण्ड जोकि जीवका शरीर माना जाता है काटकर स्त्री पुरुषमें मिलाया जाता है ऐसी अवस्थामें घातदोष लगता है वा नहीं?

(१८)--यदि वे जीव जिनमें सपिण्डीसे मेल कियाजाता है बैल सिंह पश्वादि अज्ञात योनियोंमें हैं तो जिसका मेल किया है वह उस मेलके कारण उन्हीं योनियोंको जायगा अथवा और कोई दूसरी गति पावेगा ?

(१९)-श्राद्धमें जो २ पदार्थ दिये जाते हैं यदि वे उन२ योनियोंके (जिन २ को जीवात्मा पाचुके हैं) अनुकूल नहींहैं तो पुत्र आदिके दिये श्राद्धगत पदार्थ व्यर्थ हैं वा नहीं यदि कालान्तरके लिये सार्थक माने जावें तो सम्प्रति वे क्या खाते पीते हैं क्योंकि विना श्राद्ध उन्हें भूखोंही मरनाहै यदि निजकर्मानुसार भोजनपातेहैं तो श्राद्धव्यर्थ

(२०)-श्राद्ध करनेका अधिकार कौन २ जातियोंको है और जिन२ जातियोंको श्राद्धाधिकार माना जावे उन २ जातियोंके अनुकूल वे २ पदार्थ श्राद्धमेंक्योंनहीं दिये ?

(२१)-यदि प्राणीकी तृप्ति होनी अभीष्ट है तो सन्

मांसाहारी, गंजेड़ी, भंगेड़ी अफीमचीआदिके लिये मद्य, मांस, गांजा, भांग,अफीम आदि ही देना उचित होगा अन्यपदार्थोंसे वे कैसे तृप्त होते होंगे (उन्हें तो अमल विन तलब अवश्य लगती होगी) ?

(२२)-जिन जातियोंको श्राद्धाधिकार नहीं है उनजा-तियोंके पितर आदि दूसरोंसे छीन,झपट खाते वा भूखे रहतेहैं । उन विचारोंके दिन कैसे व्यतीत होते होंगे ?

(२३)-श्राद्ध करनेका कोई नियत देशहै वा सर्वदेश है यदि सर्वदेश है तो गयामें क्या विशेषताहै? यदिकोई नियत देश है तो जिनमें श्राद्ध अधिकार नहीं है वहांके पितर भूखे प्यासे मरते वा दूसरे मुल्कोंको धावा लगाते होंगे या दूसरे पितरों पर डांका डालते होंगे—क्योंकि पेट पापी है चाहे सो करावे धरावे ? बुभुक्षितःकिम्न करोति पापम्० भूंखा क्या २ पाप नहीं करता है ?

(२४)-जीवकी जीवती अवस्थाके उत्सव दिनोंको छोड़ श्राद्धके लिये क्षयाह नियत किया गया यह बड़ा असम-ञ्जस है क्योंकि इस जीवको जब घोर क्लेशका स्मरण आता है तब इसका खाना पीना सब छूट जाता है फिर मरण क्लेशको स्मरण करके जीव रोता होगा वा श्राद्ध पानेकी आशा करता और आनन्द मनाता होगा ?

(२५)-कन्यागत सूर्यमें मरनेके दिन नियत नहीं किये गये जो सब जीव इन्हींमें मरें तो फिर श्राद्ध करनेकी इनमें क्या विशेषता है ?

(२६)-सयाह श्राद्धमें पायस खीर देनेसे यदि वर्ष भर पितृ गन तृप्त रहते हैं तो बीचमें (कन्यागतमें) उनका श्राद्ध करना उन्हें बीमार बनाना है ऐसी अवस्थामें पितरोंको औषधि कौन देता होगा ? विना औषधि पितृ विचारे महा क्लेश भोगते होंगे क्योंकि अजीर्ण रोगका मूल कारण है-अजीर्णं रोगस्य मूल कारणम्० ॥

(२७)-वर्षा ऋतु आश्विन (क्वार) मासमें जब नदी नाले, तालाब, झील, पोखरे पानीसे लबालब भरेहोते हैं तब जलदान--तर्पण करनेकी क्या आवश्यकता है ? और ग्रीष्म ऋतुजेठ वैशाखमें क्यों नहीं जलदान करते?

(२८)--क्या "तृप्यन्ताम्२" कहने से पितरोंको जल मिलजाता है ? यदि ऐसा है तो किसान अपने २ पुरोहितोंको जलके पास बैठाकर गाजर मूली तृप्यन्ताम् २ गेहूं बेझर तृप्यन्ताम् २ कह २ कर अपने २ खेत क्यों नहीं सहजहीमें सींच लिया करते हैं क्यों वृथा लिहंडी ढोल पुर चलाते, कुआ बावड़ी बम्बा नहर खुदाते हैं ?

जीवित माता पिता ऋषि मुनि विद्वान् सुपात्रआश्र-
मादि परोपकारी देवताओंका श्राद्ध तर्पण अवश्य करना
उचित है--उत्तम २ भोजनीय सतोगुणी पदार्थ खीर-पुरी
हलवा फलादिसे नित्य सत्कार करे। जीवित पितरोंको
अन्नदान करे स्नानकरावे--प्यासोंको पानी पिलावेकुआ
बावरी तालाब खुदावे जिससे प्यासे मनुष्य गौ बैल पानी
पियें सड़क किनारे पंसरा (प्याऊ) बैठावे पक्षियोंकेलिये
जलखप्पर टांगे जीवित दशामें श्राद्ध तर्पण करना ठीक
है सो इससे लोग विरुद्ध हैं--जीते माता पिताको अन्न ज-
लादि बिन तरसाते और मरोंकेसुखार्थपिण्डभराते हैं!!!

जियत पितासे दंगमदंगा--मरे पिता पहुंचायदये गंगा
जियत पिताको लातमलाता-मरे पिताको दालऔरभाता
जियत पिताकी करें न सेवा--मरे पिताको लड्डू मेवा
जियत न दीहैं रोटी कौरा, मरे चढेंहैं छतुरी चौरा।
कहो धर्म कब है यह भाई। जोमृतन को भोगलगाई।
मरे पितर कहुं जेमें आई। वृथहिं लोगन लीक पिटाई॥
मातपिता प्रत्यक्ष हैं देवा। जियतहिं करे लाय चित
को प्रसन्न हुय देंय अशीशा। देय स्वर्ग इनकोजगदी

परोपकारी विद्वान् सुपात्र ब्राह्मण जीवितपितरोंके अन्न जल (श्राद्ध तर्पण) आदिमें कभी बाधा (खलल) नहीं डालते हैं और न मुर्दहा टैक्स (मुर्दोंके बहानेमाल उड़ाना) जारीरखनेको झगड़तेऔर न पेटकोचिल्लातेहीहैं॥

☞ मर्द मरे नामको, नामर्द मरे पेटको।

ऋषिपञ्चमीव्रत कथाका उपदेश है—

कि मरने बाद प्राणीको कुछभी नहीं मिलताहै अपना किया कर्मधर्मही काम आता है ऋषिपञ्चमीमें लिखा है कि एक ब्राह्मण और ब्राह्मणीने कर्मवश मरकर अपने पुत्रके ही घर बैल और कुतियाकी देह योनि पाई उनकी श्राद्ध तिथिके दिन अन्यसभोंने खूब भोजन उड़ाया परन्तु बैल कुतियापर उलटी मारपड़ीजो नित्य घास फूस टुकड़ा जूठन भूसी मिलती थी वह भी न मिली—देखो ऋषि पञ्चमी व्रतकी कथा मूल्य =)

मिलनेका पता—बाबूराम शर्मा—इटावा॥

(प्रश्न)—पितृ शब्दका क्या अर्थ है ?

(उत्तर)—पितृशब्द—सामान्य करके पिता-जन्मदाता वा विद्यादाताका वाचक है।

वेदप्रदानादाचार्यं पितरं परिचक्षते । मनुः।

वेद विद्याके दानसे गुरुकुलवासी छात्रके आचार्य-को पिता कहते हैं, इन्हीं सम्बन्धोंसे अन्य चाचा, का-का, ताऊ, दाऊ, दादा आदि पितृ वा पिता कहाते हैं॥

कोई२ महाशय यह भी शङ्का करते हैं कि पितृशब्दसे जीवित पितादिके स्थानमें मृत पितरोंका तात्पर्य क्यों न समझा जावे। क्योंकि वेदादिमें साक्षात् मृतकका वाचक शब्द नहीं है तो जीवितार्थ द्योतकभी कोईशब्द नहीं है अतः पितृ शब्दसे मृत पितर जानना ठीक है॥

उत्तर--पितृ शब्दसे जीवित ही पितर समझना और जानना मानना वेदानुकूल है क्योंकि जीवात्माका शरीरमें स्थितरहने तक ही नाता रिश्ता है देहान्तोपरान्तकोई नाता (रिश्ता) नहीं जैसा कि वेद बतलाते हैं॥

नैव स्त्री न पुमानेष न चैवायं नपुंसकः।
यद्यच्छरीरमादत्ते तेन तेन स युज्यते॥

अर्थात् न जीवात्मा स्त्री है, न पुरुष है और न नपुं-सक ही है जैसा २ शरीर पाता है वैसा २ कहा जाता है और मरणोपरान्त जीवात्मा दूसरा शरीर धारण कर

लेता है जैसाकि श्रीकृष्णचन्द्रजी गीतामेंवतलाते हैं कि

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानिगृह्णाति नरोऽपराणि। तथाशरीराणिविहायजीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही (गीता २ अ०२२श्लोक)

जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रोंको छोड़कर नये वस्त्र ग्रहण करता है वैसेही जीवपुराने शरीरकोछोड़कर नये शरीरको धारण करता है। मरणवाद जबकि जीवात्मा दूसरे शरीरको पाचुका तब उसे सुख पहुंचाना व्यर्थ है।

☞ और वेदपितृशब्द जीवित पितरोंहीकेलिये वतलातेहैं

मानोवधीः पितरं मोतमातरम् । यजुः १६।१५

हमारे माता पिताको मत मार (हन)

क्या यहांपर यह अर्थ होसकता है कि हमारे मरे हुए माता पिताको मत मार (हन) ?

यजमानस्य पशून्पाहि । यजु: १ । १ ।

क्या यहां कोई पशुरक्षाका अर्थ मृतपशुरक्षा करसकता है? और गीतामें भी पितृ शब्दजीवित पितरोंके ही लिये आया है। देखो गीता १ अध्याय श्लोक ३५

* पांच पैरकी गौ *

आरत होकर गौ पुकारै
कोई पूत जो हमें उबारै
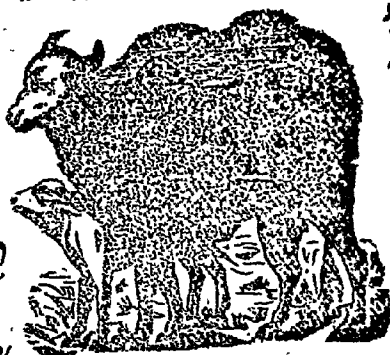
महादेवका नादिया

नादिया कैसे वनता है, यदि यह गुप्त भेद (रहस्य) और गोकष्ट जानना तथा)। में-कोटि २ गौओं का पुण्य लूटना चाहते हो तो यह पुस्तक एकवार अवश्य पढ़िये औ-रोंको पढ़ाइये मूल्य)। धर्माथ बांटने वा-लोंको १) रु० सैकड़ा और ८) रु० हजार ॥

विशेष पुस्तक बड़ा सूचीपत्र मंगाकर पढ़िये ॥

मिलनेका पता=बाबूराम शर्मा-इटावा.

श्राद्धव्यवस्था

जिस को

स्वामी दर्शनानंद सरस्वती जी ने

दयानन्द ट्रेक्ट सोसाइटी के हितार्थ

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

ज्वालापुर हरिद्वार में

छपवाया

—=+:*:+=—

२००० [प्रति] [मूल्य)।

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गौशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

ओ३म्

श्राद्धव्यवस्था

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा

अर्थ—हे ज्ञानस्वरूप अग्ने परमात्मा! जिस मेधा नामक धारणावती बुद्धि को देवगण अर्थात् विद्वान् लोग प्राप्त हैं और जिस को प्राचीन ऋषि, मुनि प्राप्त थे आप उस धारणावती बुद्धि से हम को बुद्धिमान् कीजिये ॥

धर्माधर्म के विचारने में समर्थो! सत्यशीलो! वेदादि सत्य शास्त्रों को मानने वालो! वर्णाश्रमी धर्म के सहायको! आप लोग थोड़े काल के लिये संसार के संस्कारों को अलग करके सत्यासत्य विचार करने वाली बुद्धि की कसौटी को हाथ में लेकर अपने नित्य नैमित्तिक व्यवहारों को जांचो और संसार की प्रणाली से जगत्कर्त्ता की महिमा को स्वाभाविक गुणों के अनुसार खोज करो विचार कर देखो ईश्वर ने कैसे २ उत्तम नियम तुम्हें दुःखों से छुडाने को बनाये हैं कैसी २ उत्तम २ वस्तुयें तुम को जगत् रूपी शत्रु से बचने

की दी है परमात्मा के नियमों को ध्यान दो परमात्मा ने जगत् में जब जीव को उत्पन्न किया तो साथ ही उस अल्पज्ञता को देख कर माता पिता के हृदय में प्रीति उत्पन्न करदी जिस से यह असमर्थ जीव सहायता पाकर समर्थ होजावे और ईश्वर के नियम को पलटे के नाम से उसने प्रचार किया है संसार के लोग भली भांति जानते हैं जो बीज भूमि में संसार में डाला जाता है वह बीज थोडे दिनों के पश्चात् बहुत गुणा होकर मिलता है जड भूमि भी दिये हुवे बीजका पलटा देती है और बीज के लगाने में जो कष्ट हुआ है उस के प्रतिफल में दिये हुवे बीज से कई गुणा बीज लौटाया जाता है इसी प्रकार जो जल सूर्य की किरणों को भूमि समर्पण करती है सूर्य उस के पलटे में उस की पुष्टि वृष्टि द्वारा करते हैं जिस पशु को मनुष्य अन्नादि से पालन करता है वह पशु उस की सेवा करके उस को पलटा देता है जिस कुत्ते को दो दिन टुकडा डाल दो वह उस के बदले उस के घर की रखवाली करता है इसी भांति संसार के जड चैतन्य पदार्थ पलटे के नियम से बंधे हुये हैं प्यारे पाठको! जब मनुष्य को माता पिता संसार में असमर्थावस्था से पालन करके समर्थावस्था को पहुंचा देते हैं अज्ञान के गर्त्त से निकाल कर ज्ञान के शिखर पर बिठा देते हैं माता पिता स्वयम् लाखों दुःख उठाकर पुत्र को सुख देने का यत्न दिन रात करते हैं माता गर्मी के दिनों में जब आग बर्षती है पुत्र को पंखा झुला

कर सुलाती है शरदी के दिनों में जब विस्तर पर बालक मूत्त ता है आप उस गीले स्थान पर लेटती है पुत्र को अच्छे स्थान-पर सुलाती है यह क्या ही सच्चा प्रेम है गूढ दृष्टि से देखिये क्या ही ईश्वरकी माया का विचित्र चमत्कार है कि पिता अपने जीवन में कष्ट पाकर जो कमाता है वह बालक के पालन पोषण और संस्कारों के करने पढाने विवाहादि कार्यों में खर्च कर देता है जो कुछ बच रहता है उस का भी पुत्र को मालिक बना देता है क्या ही मोहजाल है कि सारी आयु उस के निमित्त लगा देता है। क्या इस का पलटा मनुष्य को न देना चाहिये जब भूमि आदि जड़ पदार्थ संसार में पलटा देते हैं तो मनुष्य को चैतन्य होकर पलटा न देना चाहिये ? जब कुत्ते आदि नीच योनि के जीव कृतघ्नता नहीं करते तो क्या मनुष्य को यह उचित है कि जिन माता पिता ने लाखों कष्ट उठाये हैं यह उन का पलटा न दे ॥

यदि आप विचार कर के देखेंगे तो अवश्य कहेंगे कि मनुष्यको अवश्य पलटा देना चाहिये जैसे माता पिता प्रीतिवश पुत्रका कष्ट मिटाते हैं पुत्रको श्रद्धासे उसका पलटा देना चाहिये भारतवर्षके लोग जो सनातनसे आर्य्यधर्मको मानते चले आते हैं यह आर्य्यधर्म ईश्वरीय विद्या अर्थात् वेदोंके अनुकूल सदा चला आता है वेदों मे उस पलटेका नाम जो पुत्रको माता पितादिके निमित्त करना चाहिये पितृश्राद्धके नामसे कथन कि-

या है। हे आर्य्यवर्त्तवासियो! आप के बड़े ऋषि मुनि सनातन-से श्राद्ध करते हैं परन्तु भारतमें मतविवादके फैलनेसे यह री-ति कुछ पलट गई है अब इस छोटेसे पुस्तक में प्रश्नोत्तरमें पौ-राणिक और अर्य्यसामाजिक के विचार से इसका तत्व दिख-लाते हैं॥

एक रोज़ एक पौराणिक महात्मा एक बनियेकी दूकान पर बैठे स्वामी दयानन्दजी को बुरा भला कहकर बनियेको समझा रहे थे कि आर्य्यसामाजी पितरों का श्राद्ध नहीं करते मुंहसे कहते हैं हम वेदको मानते हैं परन्तु वेदमें लिखे श्राद्धको कभी नहीं करते यह नास्तिक हैं इन के दर्शन करनेमें पाप है इत्या-दि —उस समय एक आर्य्यसामाजिक भी आ निकले उन्होंने यह बातें सुनकर कहा क्यों महाराज! झूठ बोलते हो यदि आपको अपने पक्ष की सत्यता पर भरोसा हो तो शास्त्रार्थ क-रके निर्णय कर लीजिये। पौराणिक ने कहा अच्छा शास्त्रार्थ होजाय, तुम कुछ पढ़े भी हो! इसके पश्चत् प्रश्नोत्तर होने लगा॥

(आ०) कहो महात्माजी पितृकर्म नित्य है या नैमित्तिक?।

(पौ०) यह नित्यकर्म है।

(आ०) तो महाराज सब को रोज़ करना चाहिये?।

(पौ०) हां रोज़ करना चाहिये न बन पड़े तो वर्ष भरमें १५ दिन पितृपक्ष के और जिस दिन पितर मरे हो॥

(आ०) महाराज जिसके पितर जीते हों वह किस दिन करे ?

(पौ०) उसको करनेका अधिकार नहीं वह न करे॥

(आ०) तो महाराज जो मनुष्य के वास्ते पञ्चयज्ञ करना नित्यकर्ममें लिखा है वह न करे ?

पौराणिक और यज्ञ तो करले परन्तु पितृयज्ञ उसके पितादि कर लेंगे॥

आर्यसामाजिक तो महाराज बाकी चार यज्ञ भी वही कर लेंगे ?

पौराणिक नहीं बाकी ज़रूर करना चाहिये।

आर्यसामाजिक महाराज ! जब एकांश छोड़नेका दोष न होगा तो सर्वांश छोड़नेकाभी दोष नहीं ?

पौराणिक सन्ध्यादि कर्मकरले बाकी मातापिताने कर लिये ?

आर्यसामाजिक तो क्या पुत्रके किये पिताको और पिताके कियेसे पुत्रको फल होसकता है ?

पौराणिक हां भाई होता है तभी तो संसार करता है।

आर्यसामाजिक क्या महाराज पितरोंका मरे पर श्राद्ध हो, जीते जी नहीं ?

पौराणिक हां भाई मरे हुये पितरोंका श्राद्ध होना चाहिये क्योंकि जीते जी तो वह स्वयम् खा पी लेते हैं जब मरने के पश्चात् पितृलोकमें उनको भूख लगती है तो पुत्रका दिया अन्न

उनको मिल जाता है इस कारण उनके मरनेके पश्चात् ब्राह्मणों को खिलायें ॥

आर्यसामाजिक महाराज सब लोग मर कर पितृलोकको जाते हैं चाहे वह धर्मात्माहो वा पापी सब एक स्थलमें जावें यह अन्याय है और आप यह बतायें कि पितृलोकमें पितर कब तक रहते हैं ?

पौराणिक इसका काल तो ठीक ज्ञात नहीं पण्डितोंसे सुन ते हैं सैकड़ों वर्ष तक रहते हैं ।

आर्यसामाजिक जब आपको ज्ञान नहीं कि वह कब तक रहेंगे तो आप उनको विना जाने क्यों माल भेजते हैं ?

पौराणिक इसमें कुछ हानि नहीं जब तक पितृलोग वहां रहेंगे उनको पहुंचेगा पश्चात् हमारा पुण्य होगा ॥

आर्यसामाजिक कहिये तो मरोंके साथ जीवितोंका सम्बन्ध बना रहता है ?

पौराणिक हां सम्बन्ध बना रहता है ॥

आर्यसामाजिक तो मरनेके रोज़ जो लोग तिनका तोड़कर कहते हैं कि जिसने किया उसको मिले या जैसा करता है वैसा फल पाता है ॥

पौराणिक यह संसारका व्यवहार है ।

आर्यसामाजिक महाराज पिता पुत्रका सम्बन्ध जीवमें रहता है वा शरीरमें या जीव और शरीर विशिष्टमें ? ।

पौराणिक जीव और शरीर विशिष्टमें ।

आर्यसामाजिक जब जीव और शरीर विशिष्टमें पिता पुत्रका सम्बन्ध रहता है तो जब शरीर नष्ट हो गया जीव अलग हो गया उस समय सम्बन्ध तो न रहा जब सम्बन्ध न रहा तो उनका नाम पितृश्राद्ध कैसे होगा ?

पौराणिक क्या जो श्राद्ध वेदोंमें लिखा है वह झूंठ होसकता है ?

आर्यसामाजिक क्या वेदोंमें मरे हुये पितरोंका श्राद्ध लिखा है ॥

पौराणिक क्या जीतेका भी श्राद्ध होता है ? ।

आर्यसामाजिक श्राद्ध तो जीतोंका ही होता है और जीतोंका ही सम्बन्ध है ।

पौराणिक इसमें क्या प्रमाण है ?

आर्यसामाजिक इसमें ईश्वरका सृष्टि नियम और तुम्हारा तीन पीढ़ीके पितरोंका श्राद्ध करना ही प्रमाण है ? ।

पौराणिक इसमें ईश्वरका सृष्टि नियम किस प्रकार से प्रमाण है ?

आर्यसामाजी देखो बालपनमें जब पुत्र असमर्थ था तबमाता पिताने पाला रक्षा की इसी प्रकार जब वृद्धावस्थामें मातापिता असमर्थ होते है तबपुत्र अपने धर्मके अनुसार श्रद्धा पूर्वक उनका सेवन करे ।

पौराणिक क्या पितरों की श्रद्धा पूर्वक सेवा करने का नाम नाम श्राद्ध है और वह जीते पुरुषों का होना चाहिये इस में क्या प्रमाण है ?

आर्यसमाजी तुम्हारा तीन पीढी के पितरों का श्राद्ध करना औरों का न करना ॥

पौराणिक-इस से क्या जीते हुये पितरों का श्राद्ध सिद्ध होता है ॥

आर्यसमाजी-हां ठीक२ यह हमारे पक्ष को सिद्ध करता है

पौराणिक-किस प्रकार करता है ? युक्ति तो बताओ ॥

आर्यसमाजी-देखो वेदों में मनुष्य की आयु सौ वर्ष की लिखी है और २५ वर्ष तक न्यून से न्यून विवाह करना लिखा है तो कमसे कम २६ वर्ष में पुत्र और ५२ में पौत्र ७८ में प्रपौत्र हो सकता है अब जब तक इसके पुत्र हों तब तक उसका प्रपितामह अर्थात् परदादा मर गये इस का परपोता अपने पिता, पिता मह, वृद्ध पितामह तीन पुश्त वालों का श्रद्धापूर्वक सेवन कर सकता है और इससे पञ्चमहायज्ञ जो कि नित्यकर्म हैं सध सकते हैं और इस पर भी निश्चय प्रतीत होता है कि जितने समय तक एक पुरुष अपने पितरों का सेवन कर सकता है इस में पितृ लोक में जो पापी और पुण्यात्माओं के एक संग रहने से ईश्वर के न्याय में दोष आता है वह भी न रहेगा ॥

पौराणिक—तुम्हारी इन बातों से तो गरुड़पुराण झूंठा प्रतीत होता है क्या व्यास जी का बनाया झूंठा हो सकता है ?

आर्यसमाजी-तुम्हारे गरुडपुराण का मिथ्या होना तो उस

की बातों से स्वयम् सिद्ध ही है और कृष्ण जी की बनाई
और गौतम ऋषिके बनाये न्यायदर्शन के देखने से यह
मिथ्या प्रतीत होता है ॥

पौराणिक—क्योंकर मिथ्या है ? जरा कहो !

आर्यसमाजी–सुनो तुम्हारे गरुड़ पुराण में लिखा है
जब जीव मरताहै तब यमके दूत उसको लेने आतेहैं और
लिखा है वैतरणी नदी के किनारे तक पहुंचाते हैं जिस
पुत्र वैतरणी पार कराने को गोदान कर देते हैं वह पार जाता
नहीं तो नदी में डूब जावे। भला यदि कोई पूछे महाराज
के दूत निकम्मे हैं क्या जिस को यमद्वार में लेजाने को
आये थे वह नदी में डूब जावे तो फिर यम के दूत क्यों
थे और जो यहां नदी में डूब जावें वह तो यम के दूतों के
यमलोक जावें वैतरणी में डूबकर कहां जाना होगा
जीव तो नित्य है और नदी आदि में शरीर डूबता है सो
यहां फूंक दिया गया हमारे बहुत से भोले भाई यह कह देंगे
दश गात्र करने से दश रोज़ मे शरीर त्यार होजायगा
दश रोज तक जीव कहां रहेगा और जो लोग वन में
पाते हैं उन का दशगात्रादि कभी कुछ नहीं हुआ वह
जायेंगे ? हमारे पौराणिक भाई कहेंगे कि वह प्रेत होगा
उन से प्रेतभाव पूछा जावे तो वह योनि बता देंगे परन्तु गौ
तम ऋषि के सूत्र से—

" पुनरुत्पत्तिः प्रेत्यभावः "

यह सिद्ध होता है कि प्रेत्यभाव पुनर्जन्म का नाम है इस सूत्र के व्याख्यान में वात्स्यायन मुनि ने अच्छे प्रकार निर्णय कर दिया है और कृष्णचन्द्र महाराज गीता में लिखते हैं—

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय । नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ॥ तथाशरीराणिविहायजीर्णान्यन्यानिसंयाति नवानि देही

जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को छोड कर नये वस्त्रों को ग्रहण करता है इसी प्रकार पुराने शरीर को छोडकर नये शरीर को धारण करता है। हे देश के सुजनो ! आप जीते माता पिता का सत्कार और सेवन कीजिये धर्म के सिवाय और सब पदार्थ देकर भी उनका मान कीजिये जहां तक बन पडे उन की आज्ञा पालन करो कभी भी उन का अनादर न करो इसी में तुम्हारा कल्याण है यही मनुष्य जीवन का फल है ॥

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः

दयानन्दट्रेक्ट सोसाइटी के सामान्य नियम

१—इस टरेक्ट सोसाइटी का आशय ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों का प्रचार करना वेद मन्त्रों के शब्दों को सरल भाषा में व्या- करके और दर्शनों के प्रत्येक सूत्र पर एक टरेक्ट लिख कर उन के आशय को अच्छी त समझा कर आर्य पुरुषों को इस लायक बनाना है कि वह वैदिकधर्म के विरोधी के मुकाबले स्वयं काम चला सकें बाहर से सहायता आवश्यकता न रहै ॥

२—यह टरेक्ट सोसाइटी एक वर्ष में १ पृष्ट के)॥ वाले ३६० टरेक्ट प्रकाशित कि करेगी जिस में वेद मन्त्रों की व्याख्या

टरेक्ट में एक मन्त्र १२५ दर्शनों के सूत्रों की व्याख्या एक टरेक्ट में एक सूत्र १२५ आर्य सिद्धान्तों पर विचार २५ टरेक्ट (मुख़ालिफ़ान) वैदिकधर्म के जवाब मे ७५ आर्यसमाज के सुधार पर १० टरेक्ट ॥

३—जो मनुष्य इस टरेक्ट सोसाइटी के ग्राहक बनकर सहायता देंगे उन को १० दिन के पीछे इकठे १० टरेक्ट)॥ के टिकट में भेजदिये जावेंगे जिस जगह १० ग्राहक होंगे उन को नित्य प्रति रवाना किये जावेंगे जिस जिले में १० समाजें १० टरेक्ट रोज़ाना लेने वाले होंगे या जिस जिले में १०० ग्राहक रोज़ाना टरेक्टके होंगे उस जिले को एक उपदेशक टरेक्ट सोसाइटी की ओर से विना वेतन के दिया जायगा ॥

जिस जिले में २२५ टरेक्टों के खरीदार होंगे उस जिले को एक उपदेशक और एक भजन मण्डली (बिला वेतन) के दीजावेगी प्रत्येक ग्राहक को ३० टरेक्टों का मये महसूल डाक ॥-) मासिक या ६॥।) वार्षिक देना होगा और उपदेशक और भजन मण्डली का प्रबन्ध किसी समाज के आधीन किया जायगा टरेक्ट नागरी उर्दू दोनों जबानो में होंगे ग्राहकों को जिस जबान के लेने हों दरख्वास्त के साथ लिख देना चाहिये ॥

४—जो मनुष्य ५००) इस टरेक्ट सोसाइटी को दान देंगे उन के नाम से १००००० एक लाख टरेक्ट छपाये जावेंगे जो गरीबों को बिना मूल्य और दूसरों को)। टरेक्ट के हिसाब

से दिये जावेंगे जो मूल्य प्राप्त होगा वह टरेक्ट सोसाइटी का कोष फण्ड होगा या गुरुकुल ज्वालापुर में खर्च होगा और जो लोग २५) टरेक्ट सोसाइटी को दान देंगे उनके नाम से ५००० टरेक्ट भाषा में छपवाये जायेंगे और जो लोग ८) रुपये दानदेंगे उनके नाम से एकहज़ार देव नागरी टरेक्ट और ७) रुपये दानदेंगे उन के नाम से एक हजार उर्दू टरेक्ट प्रकाशित किये जायेंगे धर्मप्रचार से इज्जत बढ़ाने का अवसर इस से उत्तम नहीं मिलेगा ॥

५-जो महाशय इस टरेक्ट सोसाइटी के एजेण्ट होना चाहें उन्हें ३०) फीसदी कमीशनदिया जायगा हर एक दरख्वास्त मैनेजर महाविद्यालय ज्वालापुर हरिद्वार के पते से आनी चाहिये ॥

॥ ओ३म् ॥

ट्रैक्ट नम्बर १०

षटशास्त्रों की उत्पत्ति का क्रम

जिस को

स्वामी दर्शनानंद सरस्वती जी ने

दयानन्द ट्रेक्ट सोसाइटी के हितार्थ

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

ज्वालापुर हरिद्वार में

छपवाया

—=+:※:+=—

२००० [प्रति [मूल्य ।)।

ओ३म्

षटशास्त्रों की उत्पत्ति का क्रम।

प्रियपाठक! आजकल भारतवर्ष क्या प्रत्युत सारे संसार में शास्त्रों के प्रचार के न्यून होने से हमारे शास्त्रों के विरुद्ध बहुत से विषय प्रकाशित होरहे हैं- कुछ महाशय तो यह कहरहे हैं कि शास्त्रों के विषय एक दूसरे के विरुद्ध हैं कुछ लोग यह कहते हैं कि यह सांख्यसूत्र नहीं प्रत्युत यह तो विज्ञान भिक्षुका बनाया हुआ है-अनेक गौतम और कणादादि को नास्तिक और वेदविरोधी बतलाते हैं बहुत महाशय कपिल जीको अनीश्वरवादी अर्थात् नास्तिक कहते हैं-अनेक मनुष्यों को इन दर्शनों के विषय और क्रम में भ्रम है-प्रयोजन यह कि शास्त्रों के विषय में बहुत से संशय उन लोगों ने फैलाये हैं जिनको शास्त्रों के मुख्य अभिप्राय से सर्वथा अनभिज्ञता है और उन्होंने विषयों के क्रमको न समझकर केवल शब्दों से अपने मनमाने विचार को पुष्ट किया है-बहुत लोगों ने शास्त्रों के विषय में नवीनग्रन्थों को जो शास्त्रों के मुख्य सिद्धान्तों से अनेकस्थलोंपर दूर निकलगये उनको शास्त्र मानकर उनके विरोध से शास्त्रों में

विरोधमान लिया है-अतएव हम अपना कर्तव्य समझते हैं कि शास्त्रों के बारे में विचार आरम्भकरके मनुष्यों के चित्त से इस अयुक्त विचार को पृथक करने का प्रयत्न करें कि जिससे शास्त्रों के मुख्य सिद्धांतसंसारमें प्रचलितहोजावें जिनसे मनुष्यों को इन अमूल्य रत्नों से जो मनुष्य जीवन के मुख्य उद्देश्य के जतलाने वाले हैं प्रीति होजावे और वह इससे लाभ उठावें यद्यपि हम अपने आपको इस योग्य नहीं समझते कि इस महान विषयको भली भांति विचार सकें और न यह कि सामाजिक कामों से इतना अवकाश है कि जिससे इस गंभीर विषय को पूर्णतया विचार सकें परन्तु तोभी परमात्मा का आश्रय ले जहांतक साध्यहोगा हम अपने लेक्चरों के क्रम से इस कर्तव्यको पूरा करनेका यत्न करेंगे ॥

प्यारे मित्रो ! सबसे प्रथम जबकोई मनुष्य किसी वस्तुको ग्रहण करे अथवा उसको निकृष्ट जान त्यागने का प्रयत्न करे इस बातकी आवश्यकता है कि वह उस वस्तु से भिज्ञ हो जावे कि जिससे भले, बुरे सत्य और असत्यका ज्ञान होजावे जब तक मनुष्यों को इस कसौटी का ज्ञान नहीं होता तबतक उस का सब काम अधूरा रहता है और जब मनुष्य इस कसौटी को प्राप्त कर लेता है उस समय वह उन वस्तुओं को परखना आरम्भ करता है जो उसकोसामने आती है और वहउनको प्रत्यक्ष दशा में कार्य और कारण से अनुभव करता है और जिस समय उसको यथार्थ रीति से जान जाता है तो वह उनको दुःख

सुखानुसार आत्मा के अनुकूल अथवा प्रतिकूल होनेका ज्ञान करदो भागों में विभाजित करता है जब भाग होगये तो अनुकूल से मेलकरना प्रारम्भ करता है और प्रतिकूल से बचता है जब वह अनुकूल भागसे प्रीति करता है तो उस के स्वभाव से जो अनकूल भागके मेल से उत्पन्न होगई थी उसे प्रतिकूल शाक्ति यों से मिलने नही देती अतएव उसे प्रतिकूल स्वभाव के दबाने के हेतु अनुकूल शक्तियों को पैदा करना पड़ता है जब अनुकूल स्वभाव से प्रतिकूल को दबा लेताहै तब वह अनुकूल शक्तियों की खोज आरम्भ करता है जहां २ से वह मिलती हैं ग्रहण करता चला जाता है और उससे पूण सुख प्राप्त करता है ॥

प्यारे पाठको ! इसीसृष्टि क्रमके अनुसार बराबर हमारे ऋषि चले है और उन्होंने छः दर्शनों में इन्ही छः प्रयोजनोंको जो मनुष्यों केमुख्य उद्देश्य के निमित्तआवश्यक हैं सिद्ध करादिया है प्रथम दर्शन न्याय दर्शन है जिसको महात्मा गौतम ऋषि ने बनाया है इसमें प्रमाण वादही पर विचार किया गया है और प्रमेय के सिद्धकरने के वास्ते जो २ प्रमाण आवश्यकीय हैं और जिन साधनों से विचार करने की आवश्यकता होती है और जिनकारणों से विचारों में त्रुटि आजाती है और जिन कारणों से ज्ञात होजाता है कि विचार पूरा होगया उनकी व्याख्याकी गई है और यह भी सूचित कर दिया गयाहै कि मनुष्य जीवन

का उसके मुख्य उद्देश्य पर पहुंचना बिना इन वस्तुओं के ज्ञान के असम्भव है और इसकेनिमित्त महात्मा गौतम ने १६ पदार्थों का ज्ञान आवश्यकीय समझा है-१ प्रमाण, २ प्रमेय,३ संशय,४-प्रयोजन,५दृष्टान्त, ६—सिद्धांत, ७ अवयव, ८—तर्क, ९ निर्णय, १० वाद, ११ जल्प,१२-वितंडा,१३-हेत्वाभास, १४—छल, १५-जाति, १६-निग्रहस्थान।

पाठक गण ! जब इसप्रकार सेमहात्मा गौतमजीने प्रमाणवाद को स्पष्ट करदिया तो महात्मा कणाद जीने प्रमेयवस्तुओं का साधर्म्य और वैधर्म्य जतलाने के निमित्त वैशेषिक दर्शन बनाया इस दर्शन में महात्मा कणाद जीने प्रमेयको छः भागों में बांट दिया १ द्रव्य, २-गुण, ३ कर्म्म, ४ सामान्य, ५ विशेष, ६ समवाय। अब उन्होंने द्रव्य में ९ पदार्थ लिये अर्थात् १ पृथ्वी २ जल, ३ तेज, ४ वायु, ५ आकाश ६ काल ७ दिशा ८ मन ९ आत्मा अर्थात् जीवात्मा व परमात्मा। इसी प्रकार २४ गुण बतलाये १ रूप २ रस, ३ गंध, ४ स्पर्श ५ संख्या ६ परिमान, ७ पृथक्त्व, ८ संयोग, ९ विभाग, १० प्रत्व, ११ अप्रत्व, १२ बुद्धि, १३ सुख, १४ दुख, १५ इच्छा, १६ द्वेष, १७ प्रयत्न १८ गुरत्व, १९ द्रवत्व २० स्नेह, २१ संस्कार २२ धर्म २३ अधर्म २४ शब्द

इसी प्रकार पांच तरह के कर्म हैं। १-उत्क्षेपण अर्थात् ऊपर उठना, २—अवक्षेपन अर्थात् नीचे गिरना ३- आकुंचन अर्थात् सुकुड़ना, ४-प्रसारण अर्थात् फैलना, ५-गमन अर्थात्

जाना और सामान्य विशेषादि बतला बडी योग्यता से प्रमेय व्याद की व्याख्या करदी। प्यारे पाठको! जब इस प्रकार महात्मा गौतम और कणादादि अपने न्यायदर्शन और वैशेषिक को लिख कर चलेगये तब महात्मा कपिल जी आये उन्होंने कहा कि प्रमाण और प्रमेय का ज्ञान तो हो गया परन्तु गम्भीर विचारों में प्रत्येक पुरुष कृतार्थ नहीं हो सकता अतः दुःख और सुख जो दो गुण हैं उन के आधार की खोज करनी चाहिये जिस से तीन प्रकार के दुःखों की निवृत्ति होजावे अब उन्होंने देखा कि संसार में दो प्रकार के पदार्थ हैं एक जड दूसरे चेतन अतएव उन्होंने प्रकृति पुरुष का पृथक २ जानना मुक्ति का कारण बतलाया कारण यह कि वैशेषिक में बतला चुके थे कि साधर्म्य से सुख और वैधर्म्य से दुःख की प्राप्ती होती हैं इसी कारण चेतन जीवात्मा को चेतन और अचेतनका ज्ञान आवश्यक है उन्होंने सिद्ध किया कि जितना जगत् है उसका उपादान कारण प्रकृति है परन्तु प्रकृति जड और दुख देने वाली है अतएव उस के कार्य जगत् से जितनी प्रार्थना की जावेगी कुछ भी सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती इस लिये प्रकृति पुरुष का विवेक करने वाला सांख्य शास्त्र बतलाया और अच्छी प्रकार से अपने विषय को सिद्ध किया॥

पाठकवृन्द जब महात्मा कपिल इस प्रकार जड और चेतन को अलग २ बतलाकर चलेगये तब महात्मा पातंजलि ऋषि आये और उन्होंने कहा कि संसार में जिस कदर दुख हैं सब चित्त की वृत्तियों के विक्षेप से अर्थात् मन के विचारों के स्थिरन

होने से उत्पन्न होते हैं और प्रकृति के पदार्थों को मन जानकर आगे चले देता है जिस से चित्तवृत्ति एकान्त नहीं होती और चित के एकान्त न होने से सुख की प्राप्ति नहीं होती अतएव उन्होंने कहा कि योग करके चित्त की वृत्तियों को रोकना चाहिये क्योंकि संसार के समीप पदार्थों से चित्त की वृत्तिका अनुरोध नहीं होसकता अतः अनन्त परमेश्वर के साथ अथवा चैतन्य जीव आत्मा का परमात्मा के साथ योग होना चाहिये इस के लिये उन्होंने अंग नियत किये हैं ॥

१—यम २—नियम ३—आसन ४—प्राणायाम ५—प्रत्याहार ६—धारणा ७—ध्यान ८—समाधि ॥

इस प्रकार महात्मा पातंजलि ने अविद्या को दूर करके जड से प्रीति हटाकर चैतन्य परमात्मा से योग करके सुख की प्राप्ती का निश्चय करादिया ॥

महाशयगण जब इस प्रकार महात्मा पातंजलि योग से चित्त की वृत्तियों के रोकनेकी आज्ञा देकर चले गये तो महात्मा जैमिनि जी महाराज आये उन्होंने कहा कि योग से चित्त के रोकने में जो बुरे कर्मों के संस्कार पैदा हुये अविद्या के संस्कार विघ्नकारक होंगे उन से कभी भी मन की वृत्तियां रुक न सकेंगी अतएव पहिले मन के मल रूपी दोष दूर करने के लिये शुभ नैमित्तिक कर्मों को करना चाहिये जिस के चित में दोष का लेप न रहे और मन का प्रवाह जो दुष्कर्मों की तरफ लग रहा है हट कर अच्छे कर्मों की तरफ लगजावे फिर उस मल दोष के दूर होने के बाद विक्षेप के दूर करने के

साधन उपासना योग से काम चल जायगा उन्होंने व्रतदान इत्यादि बहुत से कर्म मल दोष के दूर करने के लिये बतलाये और उन की विधि अपने मीमांसा शास्त्र में अच्छे प्रकार से प्रकाशित करदी ॥

प्रियपाठको जब महात्मा जैमिनी जी महाराज ने अपने को इस भांति पर बयान कर दिया तब महात्मा व्यास जी ने कहा कि प्रमाण का भी ज्ञान होचुका और प्रमेय भी जान लिया और जड़ चैतन्य अर्थात् प्रकृति पुरुष को भी पृथक २ समझ लिया और योग करने का विचार भी ठीक है और योग में जो विघ्न पड़ेगा उन के रोकने के लिये मीमांसा शास्त्र के कर्म भी ज्ञात होगये परन्तु जिस चेतन के साथ योग करना है अभी तक उस को तो नितान्त जाना ही नहीं अतः ब्रह्म के जानने की इच्छा करनी चाहिये अतएव उन्हों ने वेदान्त शास्त्र बनाया जिस में केवल ब्रह्म के यथार्थरूप का ज्ञान होजावे उन्होने उस को इस प्रकार अरम्भ किया ॥

अथातो ब्रह्म जिज्ञासा ।

अर्थ–प्रमाण प्रमेय, प्रकृति पुरुष और धर्मादि के पश्चात् ब्रह्म ज्ञान की इच्छा करते हैं जब उन से प्रश्न हुआ कि ब्रह्म क्या है तो उन्होंने उत्तर दिया ॥

जन्माद्यस्य यतः ।

अर्थ–जिस से इस सृष्टि की स्थिति और उत्पत्ति और नाश

होता है इस कारण सम्पूर्ण शास्त्र में ब्रह्मज्ञान बतलाया ॥

प्रियपाठक आप कहेंगे कि इन शास्त्रों के यह नाम किस प्रयोजन से हुवे और तुम जो कहते हो कि शास्त्रों का यह प्रयोजन है इस में क्या प्रमाण है इस का उत्तर यह है कि शास्त्रों के नाम यौगिक हैं और वह अपने २ विषय को प्रतिपादन करते हैं ॥ (१) न्याय का लक्षण यह है-

प्रमाणैरर्थ परीक्षणमून्यायः ।

अर्थ—जिसने प्रमणों के द्वारा अर्थ अर्थात् सुख दुःखके कारण की परीक्षा करना बतलाया हो उसे न्याय कहते हैं वैशेषिक जिसमें विशेष तौर पर साधर्म्य और वैधर्म्य को बत लाकर पदार्थों के यथार्थ ज्ञान को मुक्तिका सच्चा साधन बतलाया हो जिसमें संख्या की गई हो उसे सांख्य कहते हैं और योग के तो अर्थ चित्तवृत्ति के रोकने और मिलने के हैं और मीमांसा में मन के दोषों को दूर करने के लिये कर्म काण्ड है अब रहा वेदान्त इसका नाम इस प्रयोजन से रक्खा है कि वेद नाम है ज्ञान का और अन्त नाम है सीमा का अर्थात् ज्ञान की सीमा क्योंकि ज्ञान से बढ़ कर और कोइ ज्ञान नहीं इस कारण ब्रह्मज्ञान बतलाने वाले शास्त्र को वेदान्त कहा दूसरे यजुर्वेद के अन्त के अध्याय में वेदान्त का मूल है जिसे ईश उपनिषद कहते हैं शेष उसका व्याख्यान है वह ईश उपनिषद् वेद के अन्त में है इस वास्ते भी वेदान्त कहा

पाठक वृन्द हमारे बहुत से मित्र यह समझरहे हैं कि सब से पहला शास्त्र सांख्य है परन्तु यह कथन सर्वथा अयुक्त है क्योंकि सांख्य दर्शन में न्याय और वैशेषिक का प्रयोग किया है जैसा कि लेख है।

नवयमषटपदार्थ वादिनो वैशेषिकादिवत्।

अर्थ अविद्या वादी जो सांख्य शास्त्र में पूर्व पक्ष करता है वह कहता है हम वैशेषिककी तरह छः पदार्थों के मानने वाले नहीं और यह भी कहा है कि सोलह और छः पदार्थों के ज्ञान से मुक्ति नहीं होती इसी प्रकार सांख्य दर्शन में बहुत से ऐसे प्रमाण मिलते हैं जिससे प्रत्यक्ष विदित होजाता है कि सांख्य शास्त्र न्याय और वैशेषिक के पश्चात बना सांख्य दर्शन के आरम्भ में रखने से क्रम में सर्वथा भ्रम पड़जाता है अनेक महाशय उन शास्त्रों को विरोधी जानते हैं परन्तु यह मिथ्या है, वेद जो तत्व ज्ञान का मुख्य पुस्तक है प्रत्येक शास्त्र उस का एक अंग है जिस प्रकार प्रथम सीढ़ी के बाद दूसरी सीढ़ी तो ठीक मालूम होती है परन्तु तीसरी के बाद पहिली और दूसरी बिल्कुल बेढंग कहलाती है योरोपियन ग्रन्थ रचयताओं ने जिन को वास्तव में दर्शनों की फिलासफी का यथार्थ ज्ञान नहीं उन्होंने सांख्य दर्शन को प्रथम और कपिल को नास्तिक माना है परन्तु कपिल नास्तिक है यानहीं इस का आशय तो हम दूसरे स्थान पर देंगे परन्तु सांख्य तीसरा शास्त्र

है इस के लिये हम विज्ञान भिक्षुका भाष्य जो सांख्यदर्शन पर है प्रमाण में देते हैं देखो भूमिका सांख्य भाष्य पृष्ठ २

तत्रश्रुतिभ्यः श्रुतेषुपुरुषार्थतद्धेतुज्ञानतद्वि षयात्मस्वरूपादिषुश्रुत्यविरोधिनीरुपपत्ती षडध्यायीरूपेण विवेकशास्त्रेणकपिल- मूर्त्तिर्भगवानुपदिदेश। ननुन्यायवैशेषि- काभ्यामप्येतेष्वर्थेषुन्यायः प्रदर्शित इति ताभ्यामस्यगतार्थ त्वंसगुणनिर्गुणत्वादि विरुद्धरूपैरात्मसाधक नयातद्युक्तिभिरि- ति। मैवम्। व्यावहारिक पारमार्थिक रूपविषयभेदेन गतार्थत्वविरोधयोर भावात्॥

अर्थ-श्रुति में जो मनुष्य जीवन का उद्देश्य तीन प्रकार के दुःखों की निवृत्ति बतलाई है और उस का कारण आत्मा का

यथार्थ ज्ञान बतलाया है उस के लिये महात्मा कपिल ने छः अध्याय रूप वेदानुकूल युक्तियों की एकत्रता अपने शास्त्रों में लिखी अब वादी शंका करता है कि यह युक्ति से तत्वज्ञान न्याय व वैशेशिक में कहा गया है इस कारण यह उस में आचुका है यदि किसी भाग में यह उन से विरुद्ध है तो युक्तियों के आपस में विरुद्ध होने से दोनों का ही प्रमाण मुशकिल होगा। विज्ञान भिक्षु उत्तर देता है कि ऐसा मत कहो कारण यह कि व्यावहारिक और पारमार्थिक रूप विषय का भेद है अतएव न तो सांख्य का विषय न्याय और वैशेशिक में आगया है और न उन का विरोध ही है॥

प्रिय पाठक! आपने समझ लिया होगा कि विज्ञानभिक्षु जिसने कई दर्शनों का टीका किया है और वर्तमान् काल के पंडित उस को प्रामाणिक मानते हैं वह भी इस पक्ष की पुष्टि करता है कि न्याय वैशेषिक प्रथम के हैं जैसा कि सांख्य-दर्शन के मूल में न्याय वैशेषिक का कथन किया गया है है और टीका कार विज्ञानभिक्षु भी उन को सांख्य से प्रथम का मानता है फिर कुछक महाशयों का कथन कि जो दर्शनों के मत से अनभिज्ञ हैं किस प्रकार प्रमाणिक हो सकता है॥

बहुधा लोग यह कहते हैं कि यह सांख्य दर्शन कपिल का बनायाहुआ नहीं प्रत्युत तमाम सांख्य सूत्र जो कि कपिल जी ने केवल तत्व की व्याख्याके निमित्त बनाये हैं वह सांख्य सूत्र है और यह विज्ञान भिक्षु के बनाये हुये हैं परन्तु उनका कहना किसी प्रकार से ठीक नहीं होसकता क्योंकि इसी सां-

ख्य के सूत्रों को पेश करके बहुत से लोगों ने सांख्य को नास्तिक वा अनीश्वर वादी सिद्ध करनेका यत्न किया है अगर यह सूत्र न हो तो कपिल जी को कोई नास्तिक कहही नहीं सक्ता था केवल इन सूत्रों में इस सूत्र को देख कर लोगों को भ्रम होगया।

ईश्वरासिद्धे।

अर्थ—ईश्वर की सिद्धि नहीं होती क्योंकि ईश्वरमें प्रत्यक्ष प्रमाण तो होही नहीं सकता क्योंकि वह इन्द्रियों का विषय नहीं और प्रत्यक्ष इन्द्रिय जन्य होता है जिसका तीन काल प्रत्यक्ष नहो उसका अनुमान भी हो नहीं सकता क्योंकि अनुमान ज्ञान व्याप्ति यानी संबन्ध से होता है और जिसका तीन काल मे प्रत्यक्ष नहीं उसकी व्याप्ति होही नहीं सकती रहा शब्द सो वह आप्त के होने से प्रमाण होता है और आप्त कहते हैं जो धर्म्म से धर्म्मी का ज्ञान प्राप्त करके उपदेश करे—ईश्वर के परोक्ष न होने से उसके धर्म्म का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं होता अतएव ईश्वर में कोई प्रमाण नहीं और प्रमाण के न होने से उसकी सिद्धी सांख्य के माने हुये प्रमाणों से नहीं होसक्ती।

प्रिय पाठको अब आप समझ गये होंगे कि दर्शनों का यह क्रम है गोतम का न्याय दर्शन १— कणादि का वैशेषिक दर्शन २—कपिल का सांख्य दर्शन ३—पातंजलि का योग दर्शन ४—

जैमिनि का मीमांसा दर्शन ५—व्यास का वेदान्त दर्शन ६—यह सिद्धान्त तो आज तक के विद्वानों का चला आया है ॥

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गौशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

॥ ओ३म् ॥

टेरेक्ट नम्बर २०

वर्ण व्यवस्था

जिस को

स्वामी दर्शनानंद सरस्वती जी ने

दयानन्द टरेक्ट सोसाइटी के हितार्थ

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

ज्वालापुर हरिद्वार में

छपवाया

—=+:※:+=—

तृतीय वार ४००० प्रति] [मूल्य)।

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गौशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

ओं परात्मने नमः

वर्ण व्यवस्था ॥

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासेद्बाहू राजन्यः कृतः
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याᳪशूद्रो ०७

प्यारे नाजरीन ! इससे पहिले वेद मन्त्रमें ये सवाल कि. गया था कि मनुष्य जाति का मुंह क्या है बाहू क्या है और पांव क्या है अर्थात् इस बातको अलंकार से जाहिर करने की कोशिशकी गई थी कि जिसे तरह संसार में अहलदा २ अङ्ग हैं परन्तु सब मिलकर पुरुष कहलाता है यद्यपि भिन्न भिन्न इन्द्रियां भिन्न भिन्न काम करती है लेकिन सबका फायदा एक एक ही पुरुषको पहुंचता है और जिस तरह एक इन्द्रिय दूसरी इन्द्रियकी मोहताज है इसी तरह इस मनुष्य जाती में बावजुद मुखतालिफ किस्म के वर्ण और आश्रम होनेके ये सब एक हैं बावजूद कि हर एक वर्ण और आश्रम के गुण और कर्म बिकुल अहलादा २ हैं लेकिन उनका फल कुल मनुष्य जाती के वास्ते होता है और हर एक किसमके मनुष्य दूसरे के मौहताज है

ौर जिस तरह एक इन्द्रियें निकम्मी होजानेसे शरीर की हालत
। फ़र्क आना शुरू होजाता है उसी तरह ...र एक वर्ण और
ाश्रममें कमज़ोरी आजाने से संसार का कारोबार गड़बड
ोजाता है जिस तरह हर एक इन्द्रियें अपने कामके साथ दूसरी
न्द्रियों को मुआवनत करती है उसी तरह हर इन्सानको अपने
काम करके दूसरों के काम करने की मदद भी करनी चाहिये
मसलन आंख का धर्म, रूप देखना है और वो देखती है लेकिन
वो पांवको रास्ता दिखलाती है हाथ को पकड़ने वाली चीज़
दिखलाती है ग़रज़े कि ये मन्त्र इनसानों के काम और सोसा-
इटी के काम को ठीक तरह पर बतलाने वाला है ॥

प्यारेनाज़रीन ! इस मन्त्र का अर्थ ये है कि ब्राह्मण इस संसार को मुख है और क्षत्रिये बाहु है और वैश्य ऊरू यानी जंघ, है और शूद्र पांव है गोया मनुष्य जातिके चारों वर्णको शरीर के चारों अङ्गों से मिसाल दी है बहुत से लोग यहां पर एतराज़ करेंगे कि चार ही क्यों बनाये गए इससे कम या ज़्यादा होस-कते हैं लेकिन उनका एतराज़ ठीक नहीं क्योंकि ये नियम कुद-रती क़ायदे पर बनाये गये हैं और कुदरतने शरीरको चार टुकड़ों ही में तक़सीम किया है पहिला टुकड़ा गर्दन से सिर तक अल-हदा नज़र आता है दूसरा बाहुसे कमर तक अहलदा तीसरा कमर से ज़ानों तक अलहदा है और चौथा ज़ानों से पांव तक अलहदा है॥ अब पहिले टुकड़े को ब्राह्मण कहा कि ब्राह्मण मनुष्य जाति का सिर है लेकिन कुदरतने अपने इस नियम को ऐसा बनाया है कि हैरत होती है "

प्यारे दोस्तो ! ये तो आपको मालूम है कि सि व
हिस्सा नीचके हिस्सोंसे माद्दी ताक़तमें बहुत ही कमज़ोर
क्योंकि वो सबसे छोटा है और इस मिसालमें कुदरतने त
है कि जिसे तरह ये हिस्सा दूसरे हिस्सोंसे माद्दी ताक़त
कमज़ोर है उसी तरह ब्राह्मण सांसारिक चीजों या अन्य
दौलतमें कुल दुनियांसे कमज़ोर होगा यानी तीनो वर्ण इस
जियादा धनी होंगे लेकिन इस हिस्से में ये भी दिखला दि
गया है कि जिसे तरह पांचों ज्ञान इन्द्रिय इस हिस्ससे में ज्ञ
के वरूनी साधन मौजूद हैं इसी तरह ब्राह्मणों में ज्ञानके सा
का होना लाजमी है ॥

अब आप देख लीजिये कि चक्षु ज्ञानेन्द्रिय यानी आं
और कान नाक जीभ और खाल पांचों ज्ञान के साधन मौ
हैं और ये भी बतलाया गया है कि खाल जो स्पर्शज्ञानेन्द्रि
है वो तो सारे शरीर में मौजूद है गोया सामान्य ज्ञान
एक प्राणी में मौजूद है लेकिन विशेष ज्ञान ब्राह्मणों के वा
है या जिस को विशेष ज्ञान और धन आदिकी कमी व
वैराग्य होता है वो ब्राह्मण कहलाता है और यहां पर ये
बतलाया गया है कि ज्ञानेन्द्रियों में उत्तम और अफज़ल क
है क्यों कि आंख और कान को करीबन उचाई में बर
रक्खा है जिस का मतलब ये कि प्रत्यक्ष ज्ञान और
शब्द यानी इलहाम हासिल होने वाला ज्ञान बराबर है
उस के बाद गन्ध से ज्ञान होता है उस के बाद रस ज्ञान ॥

प्यारे नाज़रीन ! यहां से आप को येभी मालूम हो जायगा के जितनी दूर तक हम ठीक रूप देख सकते हैं करीबन वहीं तक ठीक शब्द सुन सकते हैं लेकिन गन्ध यानी बू इतनी दूर से ठीक मालूम नहीं होती और रस तो जब ही मालूम होता है कि जब चीज मूंहमें आपडती है। गोया इन्द्रियों की ताक़त का अन्दाजा होगया कि सब से अव्वल आंख और कान दूसरे नाक तीसरे जिव्हा। बहुत से लोग यहां पर ये एतराज करेंगे कि स्पर्शेन्द्रिय को क्यों छोड दिया वो सब से ऊपर मौजूद है लेकिन दोस्तो ! स्पर्श तो सारे शरीर में व्यापक होने से सामान्य होगया इस के वास्ते ऊपर नीचे की तरतीब का अन्दाजा ठीक नहीं ।

प्यारे नाज़रीन ! यहां से आप को ये मालूम होगया कि ब्राह्मण के गुण, ज्ञान और वैराग्य हैं लेकिन कर्म क्या है इस का जवाबभी कुद्रत ने दिया है कि कर्मेन्द्रिय इस हिस्से शरीर में कौन है वाणी या जबान इसका काम क्या है जो आंखों से देखा कान से सुना और नाक से सूंघा हो उस का दूसरों को बतलाना गोया ब्राह्मण का काम ये है कि पांचों ज्ञानेन्द्रियों से जो ज्ञान हासिल हो संसार में उस का उपदेश करे गोया ब्राह्मणका काम करना यानी कान से हासिल करना और वाणी से पढना और यज्ञ करना कराना यानी वाणी से मन्त्रों द्वारा क्रिया करना और दूसरों से कराना है और जिस गुरु से पढा है उस को गुरु दक्षिणा देना यानी दान देना और

जिस को पढाया है उस से दक्षिणा याने दान लेना या
ने ब्राह्मण के घर में यज्ञ कराया है उस को यज्ञ की
देना याने दान देना और जिस के घर में जाकर खुद यज्ञ
राया है उस से दक्षिणा यानी दान लेना है पहिले चार
याने पढना पढाना और यज्ञ करना कराना तो लाजमी
हैं पिछले दो कर्म उन का फल हैं ॥

प्यारे नाज़रीन ! बाहु को राजा यानी क्षत्रिय कहा
है अब आप देखिये सारे शरीर में हिफजत का काम
करता है जब आंख में चोट लगे तो इलाज कौन करे पांव
चाहे तकलीफ हो व बदन के और किसी हिस्से में
हो उस का इलाज करना बाहु का काम है और ये भी
गया है कि ये हिस्सा माद्दे की ताकत में बाकी तीनों से
दह होगा सो आप इस टुकडे को जो गले से कमर तक
हुआ है मुलाहेजा कर सकते हैं कि ये सारे हिस्सों से
दा माद्दा रखता है—

इसी तरह राजा के पास दुनियां के सब वर्णों से
धन होना लाजमी है और यहां ये भी बतलाया गया है—
कि बल, विद्या के बाद दूसरा दर्जा रखता है याने संसार
अव्वल दर्जा विद्या का है क्यों कि बाहु, बगैर आंख की
के काम नहीं कर सकती और आंख बगैर बाहु की मदद
काम कर सकती है आंख की हिफाजत के वास्ते तो बाहु
होना लाजमी चीज है लेकिन उस के काम की मदद बाहु

कुछ भी नहीं हो सकती जिस का मतलब ये है कि विद्या की रक्षा के वास्ते बल की जरूरत है और बल को काम में लाने के वास्ते विद्या की जरूरत है बल विद्या के बगैर ठीक तौर पर काम नहीं कर सकता और बल के बगैर विद्या की हिफाजत नहीं हो सकती लेकिन याद रहे कि बल अपने काम करने के वास्ते विद्या का मोहताज है इस वास्ते अव्वल दरजा विद्या को दिया गया है और तीसरा हिस्सा जंघा यानी ऊरू कह-लाता है उसको वैश्य से तशबीह दी गई है क्यों कि यह हिस्सा ऊपर और नीचे के दोनों हिस्सों का हिन्दी स्थान है यानी शूद्र बगैर वैश्य की पदवी के गुजरे क्षत्रिय, ब्राह्मण नहीं हो सकता और वैश्य की बुजुरगी धन से बतलाई गई है।

गोया धन दुनियां में तीसरे दर्जे पर है क्यों कि विद्या और बल से धन पैदा होता है लेकिन धन से विद्या और बल प्राप्त नहीं हो सकते॥

हमारे बहुत से दोस्त ये एतराज करेंगे कि हम धन से विद्या हासिल कर सकते हैं रुपया खरच करके पढ़ लेंगे, लेकिन याद रहे कि बगैर पुरुषार्थ और मेहनत किये धन से विद्या हासिल नहीं हो सकती और जिस कदर मेहनत से दौलतमन्द इनसान विद्या हासिल कर सकता है उसी कदर मेहनत से गरीब आदमी भी विद्या हासिल कर सकता है। गोया हसूल इल्म के वास्ते धन का होना न होना बराबर है सिर्फ मेहनत दरकार है। दूसरे ताकत वाला आदमी धन को हासिल कर सकता है और धन से ताकत हासिल नहीं हो-

सकती ॥ बाज लोग ये एतराज करेंगे कि धनसे उमदा खुराक मिलती है और उस से ताकत हासिल होती है लेकिन ये बात गलत है क्यों कि तमाम दौलतमन्द आदमी कमजोर नजर आते हैं बल्कि आराम तलबी का सबब दौलत ही नजर आती है जो कमजोरी की अलामत है ॥

प्यारे नाजरीन ! धन को विद्या और बल से नीचे दरजा देने का ये भी सबब है कि विद्या और बल जीवात्मा और शरीर का गुण है यानी विद्या तो चेतन जीवात्मा का गुण है और बल जीव और शरीर दोनों का मिलावटी गुण है लेकिन धन इन दोनों से अलहदा एक बेरूनी शै है ॥ और जितनी देर में धन नाश होता है बल उस से ज्यादा देर में नाश हो सकता है और विद्या अव्वल तो जन्म जन्मान्तर तक नाश भी नहीं होती हां अविद्या के सबब से कमजोर या देर में नाश होजाती है ॥

चौथा हिस्सा पांव का है जो पांव से घुटने तक है ये हिस्सा दर्मियानी दो हिस्सों से मादे में कम है लेकिन ऊपर के हिस्से से जियादा है जिस से बतलाया गया है कि शूद्र ब्राह्मण से जियादा धन वाला हो सकता है लेकिन क्षत्रिय वैश्य से कम धन रखता है और इस हिस्से का काम सिवाय सारे बदन को उठाकर ले चलने के कुछभी नहीं होता गोया कुदरत ने शूद्र को तीनों वर्णों की खिदमत के वास्ते बनाया है।

प्यारे नाजरीन ! ये खिदमतगार फिर्का दुनियां में आलिमों से ज्यादा मालदार हो सकता है। हमारे बहुत से दोस्त एत-

राज करेंगे कि अगर विद्या से ज्यादा खिद्मत से धन पैदा होता है तो विद्या सब से कमजोर चीज है।

लेकिन याद रखना चाहिये कि आलिम शख्स हरगिज धन की ख़ाहिश नहीं रखता और न दौलत के वास्ते अपनी जिन्दगी को खर्च कर सकता है क्यों कि उस के ख्याल में जिन्दगी के मुकाबिले धन बहुत ही हेच चीज है वो जानता है कि अगर दुनियां का एक भारी बादशाह अपनी मौत के वक्त सारी बादशाहत पांच मिनट की जिन्दगी के एवज देने का ख्याल करे तो उसे सारी बादशाहत की एवज पांच मिनट की जिन्दगी नहीं मिल सकती फिर वो क्यों अपनी बेश कीमत जिन्दगी धन के एवज में खर्च करेगा जो जिन्दगी एक बाद-शाहत की एवज थोडे वक्त के वास्ते नहीं मिल सकती उस-के बडे हिस्से को थोडे धन के वास्ते खर्च करना आला दर्जे की जहालत या बेवकूफी है पुराने जमाने में ब्राह्मण हमेशा धन से मुतनफ्फिर रहा करते थे इस वास्ते सब से अफजल गिने जाते थे और लिखाभी है॥

परोक्षप्रिया हि देवाः प्रत्यक्षद्विषः।

यानी देवता लोग परोक्ष के प्यारे होते हैं परोक्ष उसे कहते हैं जो बेरूनी हवास से महसूस न हो और इस संसार में जो तीन पदार्थ हैं उन में से जीवात्मा और परमात्मा दोनों हवास खम्सा से महसूस नहीं होते सिर्फ प्रकृति यानी माद्दा हवास

से मालूम होता है गोया यहां ये बतलाया गया है कि आलिम लोग जीवात्मा और परमात्मा को प्यार करते हैं और माद्दे से नफ़रत करते हैं, हमारे बाज़ दोस्त ये ऐतराज़ करेंगे कि मन्त्र में तो ब्राह्मण शब्द है और इस फ़िक़रे में देवता शब्द है ब्राह्मण और देवता से क्या निसबत। लेकिन याद रखना चाहिये कि देवता और ब्राह्मण मुरादिफ़ लफ़्ज़ हैं जैसा कि लिखा है—

विद्वाꣳसो हि देवाः।

अर्थ—विद्वान् ही देवता होते हैं। बाज़ यहां पर ऐतराज़ करते हैं कि विद्वान् शब्द देवता का मुरादिफ़ नहीं बल्कि देवताकी तारीफ है यानी देवता विद्वान् होते हैं मूर्ख नहीं होते लेकिन उनका ये फरमाना ठीक नहीं महाभाष्य में लिखा है कि देवता शब्द का अर्थ पण्डित है।

देखो महाभाष्य का दूसरा अध्यायः—

किं पुनरर्थस्य तत्त्वं देवा ज्ञातुमर्हन्ति।

देवाइति दिव्यदृशः देवाइति पण्डिताः इत्यर्थः। इस पर कैयट लिखते हैं॥

यानी पातञ्जलि मुनि ने कहा था कि अर्थ के तत्व यानी चीज की असलीयत को विद्वान् ही समझ सकते हैं हर शख्स को ताकत नहीं कि चीज़ की असलियत को समझ सके॥

प्यारे नाज़रीन ! मुतज़क्किरे बाला बयान से आप को मालूम होगया होगा कि वेद मन्त्र चारों वर्णों को गुण और कर्मसे अलहदा बतला रहा है और साथ ही विद्या, बल, धन और ख़िदमतके फराइज के सिलसिलेको बतला रहा है और ये भी बतला रहा है कि जिस तरह इनमेंसे एक हिस्सेके नकारा होजाने से शरीर की हालत ख़राब होजाती है जैसे एक आंख न होने से काणा और दोनों न होनेसे अन्धा, कान के निकम्मा होनेसे बहरा वाणी के निकम्मा होनेसे गूंगा होजाता है इसी तरह पर जिस मुल्कमें ब्राह्मण याने विद्वान् न हो या वो अपने फरायज को अदा वो करें वा मुल्क अन्धा गूंगा व्यहार गिना जाता है दूसरे जिसे तरह बाहुक निकम्मा होजानेसे मनुष्य डुंडा हो जाता है और अपने शरीर की हिफाजत नहीं कर सकता इसी तरह पर जिस मुल्कमें क्षत्रिय याने बलवान् सिपाही मौजूद न हो वो मुल्क भी डुण्डा हो जाता है और अपना हिफाजत नहीं कर सकता और हमेशा गुलामी में दबा रहता है और जिसे तरह जंघाका कमज़ोरी से आदमी चलने और व्यहार करनेमें कमजोर होजाता है इसी तरह जिस मुल्का में वैश्य याने व्यापारी और काश्तकार न हो वा मुल्क भी निकम्मा और कमजोर हो जाता है जिसे तरह पांव बिगड जानसे याने निकम्मा हो जानेसे आदमी लंगडा डूडा होजाता है इसी तरह पर जिसे मुल्का में ख़िदमतगार और दस्तकार लोग मौजूद न

हो वो मुल्क बिलकुल तरक्कीसे महरूम और दुनियावी ताकतों से खाली रहता है ॥

प्यारे नाज़रीन ! अब आप समझ गये होंगे कि वेद मन्त्र क्या बतलाता है और जो लोग इसकी आज्ञाका पालन नहीं करते वो ज़रूर तकलीफमन्द होगा चूंकि आजकल भारतवर्ष के चारोंवर्ण अपने २ गुण कर्मोंको छोड कर जाति और कर्मने अपना २ कर्म छोड़कर देशको जो नुकसान पहुंचया है उसकी कोई हद्द नहीं लगा सकता इस वास्ते जब तक सारे वर्ण अपने गुण कर्म वेदमन्त्रके अनुकूल न करलें तब तक भारतवर्ष किसी तरह पर तरक्की नहीं करसकता और चारों वर्णोंका अपने गुण कर्मों पर आजाना उपदेश के बगैर नामुमकिन मालूम होता है इस वास्ते जबतक सारे मुल्क में बाकायदा तौर पर वैदिक धर्म चारोंवर्ण अपने २ गुण कर्मों को छोड़ कर जाति और कर्म से होगये इस वास्ते तमाम दुःखों का का उपदेश करके हर एक आदमी को उसके वर्णके फरायज़ न सुझाये जायें और अविद्याके सबब जो खराब रस्में या आदतें देश में प्रचरित होगईं वो बिलकुल बन्द न होजायें और आजकल जो वर्ण आश्रम की जगह पर सम्प्रदाय और भीख जारी होगए हैं जब तक ये सुधर कर फिर वर्ण के साप में न आजायें तब तक भारत गारत होता चला जायगा ॥

प्यारे नाज़रीन ! इस वक्त अगर आप सम्प्रदाइयों का खण्डन और भीखों को कम करने की कोशिश करेंगे तो जरूर एक किस्म का भारी हलचल दुनियां में फैल जावेगा जैसा महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के उपदेश से सारी दुनिया के अन्दर जो एक किस्म का विचार शुरू हुआ था वो आर्य-समाज के आम मेम्बरों के खण्डन मण्डन और आचरणों से उलटा होगया लेकिन आप सोचते होंगे कि इस की क्या वजे है कि स्वामी जी की ज़िन्दगी में आर्य समाज में प्रेम और प्रीतिका प्रचार अधिक था और अब वो इस से कुछ कम हो-गया अगरचे बहुत से भोले भाई इस को समाज के मेम्बरों की जियादती पर महमूल करते हैं लेकिन उनका ये कहना ठीक नहीं स्वामी जी की जिन्दगी परोपकार की जिन्दा मिसाल मौजूद थी और वैदिक धर्म का उपदेश भी बराबर जारी था स्वामी जी के मरते ही धर्म की जगह राजनीति और उपदेश की जगह कालिज और स्कूल और संस्कृत की बुज़ुर्गी की जगह अङ्गरेजी की बुज़ुर्गी ने स्थान पालिया जिस से वो सारा प्रेम कम होने लगा और आर्य धर्म का वो पौदा जो महर्षि ने उपदेश के जल से सींच कर तैयार किया था कमजोर होनेलगा और विद्या का काम आम मुल्क के वास्ते कम हो गया ॥

प्यारे नाज़रीन ! चूंके कानून कुदरतने एक हिस्सेमें ज्ञानेन्द्रियें और बाकी हिस्सोंमे कर्मेन्द्रियें देकर और सिर्फ एक लाख

ज्ञानेन्द्रियें देकर ये मुकरिर कर दिया है कि सामान्य ज्ञान तो कुल संसारको होसकता है और विशेष ज्ञान सारी दुनियां को हो नहीं सकता इस वास्ते ज्ञानीका फर्ज है कि अज्ञानियों को उपदेशके जरियेरास्ता दिखलावे लेकिन आजकल मूर्खलोग उस उपदेशको तुच्छ समझने लगगये गोया उनके ख्यालमें कुदरतकी शिक्षा भी नामुकम्मिल है सिर्फ उनकी अक्ल मुकम्मिल है ॥

प्यारे नाज़रीन! इस वास्ते आप वेद के तहरीरी और तकरीरी प्रचारसे चारों वर्णोंके गुण कर्म सुधारने का फिक्र करो ।

ओ३म् शान्ती ३

☞ इसे दयालु धर्मात्मा धर्मार्थ बांट दया धर्म बढ़ावें।

परहित सरिस धर्म नहिं भाई—पर पीड़ा सम नहिं अधिमाई ॥

* ओ३म् *

☞ "अहिंसा परमोधर्मः"

Not to kill any one is the supreme virtue.

दया धर्मका मूल है, दया रूप भगवान्।
तुलसी दया न छोड़िये, जब तक घटमें प्राण ॥

मांस भक्षण निषेध।

Evils of Flesheating.

जिसे

बाबूराम शर्मा इन्दरावली इटावा
निवासीने अहिंसा परमधर्म प्रचारार्थ
प्रकाशित किया।

पञ्चदशवार ५००० } सम्वत् १९७२ { मूल्य)॥ २) सैकड़ा

printer B. D. S. Brahm press Etawah.

☞ मिलनेका पता—बाबूराम शर्मा—इटावा ॥

☞ संजीवनबूटी ☜

यह बूटी मूर्छितोंकी मूर्छा दूर कर श्रीलक्ष्मणयती, शूरवीर, रणधीर बनाती है, इसके सेवनसे चिर प्रतापी, तेजस्वी, वर्चस्वी, यशस्वी, ऋषि, मुनि, योगी, सन्यासी, महावीर, योधा, बलधारी, जगत्गुरु, परिब्राट् तथा सम्राट् जगत् प्रसिद्ध अमर नाम कर गये हैं। केवल इसी के बल बालब्रह्मचारी भीष्मपितामह महामृत्युञ्जयकर शरशय्यापर सुखासीन हो धर्मोपदेश करते रहे।

यह बूटी सत्यार्थप्रकाशके प्रकाशमें तृतीय खण्ड पर जग मगा रही है। यह अमरबूटी =) निछावरमात्र करनेसे मिलेगी

☞ मिलनेका पता—बाबूराम शर्मा इटावा ॥

ओ३म् परमात्मने नमः ।

मांस भक्षण निषेध ।

(१)—मांसाहारी-ईश्वरने पशु पक्षी मनुष्यके खानेही कों बनाये हैं फिर आप मांस खाना क्यों वृथा रोकते हो ?

पण्डित—भाईजी ! मांस निषेध करना वृथा नहीं है लाभ कारक है बड़े २ डाक्टर हकीम वैद्य साक्षी देते हैं कि मांस बीमारीकी जड़ है और जो ईश्वर पशुओं को तुम्हारे खानेके लिये ही बनाता तो अन्न कन्दमूल, फल, फूल, शाक पात, दूध, दही, घृत, मिठाई आदिको न बनाता। देखो गाय, भैंस, हाथी, घोड़ा, बकरी आदि घासपात खाते मांस नहीं खाते और सिंह बाघ मांस खाते जबकि वे एक दूसरेका आहार नहीं खाते तब फिर आप अपना आहार छोड़कर हाड़ मांस क्यों खाते हो ?

(२)—मांसाहारी,—और भी कुछ दोष है पण्डित हां जीवहत्या हुए विना मांस नहीं मिलता और दूसरे

दयाको मिटाती है वह दया मनुष्य का अति उत्तम गुण है इस लिये दया गुण मिटाने वाले मांस को कदापि नहीं खाना चाहिये कहावत है कि—(मांसाहारिणः कुतो दया)—मांसभक्षीको दया कहां ? " सन्त सहें दुख परसुख लागी, परदुख हेतु असन्त अभागी,, ।

नाऽकृत्वाप्राणिनांहिंसामांसमुत्पद्यतेक्वचित् ।
न च प्राणिवधःस्वर्ग्यस्तस्मान्मांसंविवर्जयेत् ॥

प्राणियोंकी हिंसा किये विना मांस कहीं कभी (भी) उत्पन्न नहीं हो सकता और प्राणियोंका वध स्वर्ग का देने वाला नहीं। अतः मांसको वर्ज देवे (मनु० ५ अ० ४८ श्लोक)

समुत्पत्तिं च मांसस्य वधवन्धौचदेहिनाम् ।
प्रसमीक्ष्यनिवर्त्तेतसर्वं मांसस्यभक्षणात् ॥

मांसकी (घिनौनेशुक्रशोणित से) उत्पत्ति और प्राणियों के वध और वन्धन (कर्म) को देखकर सव प्रकारके मांस भक्षणसे वचे (मनुस्मृति ५ अध्याय श्लोक ४९) ।

(३)मांसाहारी—इन जीवों को ज्ञान नहीं है पंडित—जो आप को ज्ञान है तो आप ही शेर भेड़िया का आहार न खाओ—देखो मांस शब्द का अर्थ यह है कि जिस के मांस को इस लोक में मैं खाता हूं वह पर लोक में मुझको खायगा यदि आप ज्ञानी ध्यानी हो तो मांस न खाओ ।

मांसभक्षयिताऽमुत्रयस्यमांसमिहाद्म्यहम् ।
एतन्मांसस्यमांसत्वंप्रवदन्तिमनीषिणः ॥म० ५॥

इस लोकमें जिसका मांस मैं खाता हूं परलोक में (मांसः) वह मुझे खायगा । विद्वान् लोग यह मांस का मांसत्व कहते हैं ।

(४)—मांसाहारी—अच्छा मांस न खावें पर हिंसक दुष्ट जीवों को दण्ड देने मारने में क्या दोष है ? पण्डित-आवश्यकता पड़नेपर मारना (दण्ड देना) राज धर्म है किन्तु सोभी हिंसक दुष्ट पशुओंको दण्ड देना ठीक है जो प्रजाको सताते हैं और उपकारी पशुओंको दुख देने वाले हैं जैसे सिंह, बाघ, तेंदुआ, भेड़िया, चीता आदि जैसे भले मनुष्योंको दुःख देने वाले डाकुओं के

मारने में राजा को कुछ दोष नहीं वैसे ही सिंह भे-
ड़ियाका मारना है पर उनके मांसको खाना नहीं चाहिये

(५)—मांसाहारी—जब दुष्ट हिंसक को मार डाला
तब मांस खानेमें क्या दोष है? पण्डित—तब तो उन्हीं
से आप भी हो गये जैसे वे मांस के लोभसे दूसरों को
मारते थे वैसे ही आपने भी उसी लोभसे मारा न्याय
से नहीं फिर मांसकी चाट लग जाने से सर्वोपकारी
भेड़ बकरी सुअर मछरी गवादि को भी मार मांस से
थोंद फुलाना—मांस बढ़ाना चाहोगे।

(६)—मांसाहारी—मनुष्यों के दांत पैने (मांस
खाने योग्य) हैं फिर क्यों न खावे? पण्डित—आप म-
नुष्य वे पशु, आप ज्ञानी विद्वान् वे अज्ञानी विवेक
रहित—देखो बन्दरके दांत मनुष्य कैसे होते हैं और
उसका शरीर भी आप से बहुत मिलता हुआ है प-
रन्तु वह मांस नहीं खाता फल फूल खाता है आप को
भी उस पशु बन्दर से शिक्षा लेनी चाहिये। बहुधा
कुत्ता बिल्ली गीदड़ भेड़िया मांस भक्षी पशु पक्षी बड़े
ही चालाक छली निर्दयी निठुर पर प्राण नाशक होते
हैं औरों के घर उजाड़ने, प्राण लेने, अंडे बच्चे खानेमें

तनक भी संकोच दया नहीं करते धोखेसे पांव दाव औरों की गर्दन तोड़ मरोर हड़प कर जाते हैं। क्या आप सरीखे सज्जन दयालु भी इन निर्दय मांसभक्षी पशुओं कैसा क्रूर व्यवहार करना पसन्द करेंगे?

(७)—मांसाहारी—मांस खाने वाले बलवान् होते हैं इसलिये मांस खाना चाहिये—पण्डित—मांसाहारी बलवान भी नहीं होते देखो मथुरा के चौबे जो । अन्न दूध घी मिठाई खाते हैं मांस खाने वालोंको पछाड़ते हैं और अन्न घास खाने वाले दो बैल जिस गाड़ी को सदैव खींचते उसे मांसभक्षी ४ या ६ शेर नहीं खींच सकते।

(८)—मांसाहारी—मांस खाने वाले अधिक साहसी और बीर होते हैं—पण्डित—कदापि नहीं देखो शेर भेड़िया मांस खाते हैं और गेंडा अरणा भैंसा, जंगलीसुअर घास पात खाते हैं पर उन्हें देखकर शेर भेड़िया दुम (पूंछ) दबाकर भाग जाते हैं कभी सामना नहीं करते हैं। अधिकांश भांड़, भंडुआ, हिजड़ा, महिरा, धीमर, खटीक, चिकुआ, गन्दे अंडे मांस मछली आदि आदि खाते हैं फिर इनमें क्या साहस बीरता आगई? निर्बल भेड़ बकरीके मारनेमें क्या बीरता (बहादुरी)?

(९)—मांसाहारी—जिस देशमें मांसके सिवाय और कुछ भी नहीं मिलता वहां तो खाना चाहिये—पण्डित—जहां मनुष्य रहते होंगे वहां पेड़ घास खेती अवश्य होती होगी और जहां ये नहीं होते वहां मनुष्य भी नहीं रह सकते जो रहते भी हैं तो पशु प्रकृति वा जंगली होते हैं आप तो अपनेको सभ्य मानते हो इस लिये मांसभक्षी पशु न वनो जंगलियोंको भी सभ्य बनाओ और आप भी सभ्य दयालु—धर्मात्मा बनो—

(१०)—मांसाहारी=आपत्काल और रोगादि निवृत्तिके लिये क्या दोष है? पण्डित—आपत्कालमें भी किसी और उपायसे निर्वाह हो सकता है जैसे कि मांसके न खाने वाले करते हैं और विना मांसके औषधियों से रोगोंका निवारण होता रहता है—मांसभक्षी पशु कुत्ता बिल्ली आदि रोगी होने पर हरी दूब घासादि जड़ी बूटी बनस्पति खाकर अच्छे चंगे हो जाते हैं (मांससे तो और भी रोग दोष बढ़ते हैं) देखो मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक ५० ॥

न भक्षयति यो मांसं विधिंहित्वापिशाचवत् ।
सलोकेप्रियतांयाति व्याधिभिश्चनपीड्यते ॥

जो विधि (शास्त्रीयाऽहिंसाधर्म पालनाऽज्ञा) छो-ड़कर पिशाचवत् मांसभक्षण नहीं करता वह लोगोंमें प्यारा होता और रोगोंसे कभी पीड़ित नहीं होता (इससे मांसभक्षण रोगकारक भी समझना चाहिये और प्रत्यक्ष जबसे मांसभक्षणादि दुराचार फैले हैं तबसे रोग भी अधिक देखे सुने जाते हैं) ॥

(११) मांसाहारी जो मांस न खायं तो पशु इ-तने बढ़जांय कि पृथ्वी पर न समा सकें–पण्डित–मनु-ष्यका मांस तो कोई भी नहीं खाता फिर मनुष्य इतने क्यों न बढ़गये ॥

(१२)–मांसाहारी–जब पशु और कामके न रहैं तब खानेमें क्या हानि ? पण्डित–कामके तबही न र-हेंगे जब वे बूढ़े थके मांदे होंगे–ऐसोंका मांस खाना और भी बुरा है जवानीमें जिस पशुकी कमाई खाई, सवारी चढ़ी, दूध पिया, फिर बुढ़ापेमें हाड़मांस और चाम के लालचवश उन्हींकी गुधी (गर्दन) कटादी वा-हरी कृतघ्नता स्वार्थपरता !!! क्या यह मनुष्यताका काम है ? क्या कोई अपने माता पिताको काम न क-रनेसे मार डालेगा ?

(१३) मांसाहारी—अच्छा जो कामके पशु हैं उन न मारना चाहिये परन्तु मुर्गा, सुअर, मीनादिके मारने में क्या दोष है ?

पण्डित—यह भी बड़े कामके जीव हैं यह ईश्वरीय ताजीरातकी दफा ३४ हैं देखो १०० भंगी जो मैला उठाते हैं उससे अधिक मुर्गा सुअर उठाते हैं भंगी तो इधरसे उठाकर उधर फेंक आते हैं जिसकी दुर्गन्धि वैसी ही बनी रहती है परन्तु ये मैला खाकर हमारे पास ही खड़े रहें और दुर्गन्धि नहीं आती है मछली भी जलमें पड़ा थूक खकार मैलादि खा जल साफ रखती है ऐसे ही औरभी पशुओंसे अनेक लाभ हैं चाहे स्वार्थतावश आज आपकी समझमें भले ही न आवे ॥

(१४) मांसाहारी—जो पशुको आप न मारे बिकता हुआ मांस लेलें तो क्या दोष ? पण्डित—खाने वालों ही के लिये तो पशु काटे मारे जाते हैं जो कोई मांस खावे ही न तो वे मारे ही क्यों जावें इसलिये खानेमें बड़ा दोष और पाप है ।

(१५)—मांसाहारी—जो देवीके मन्त्र या ईश्वर (खुदा) के कलमासे मारकर प्रसाद लेलें तो कुछ भी पाप—

नहीं लगेगा पण्डित—देवीका नाम जगदम्बा और ईश्वर जगत्पिता है पशु भी जगत्के बाहर नहीं हैं तो क्या देवी और ईश्वर अपने बच्चोंको ही मरवाते और खाते हैं ? कभी नहीं यह तो वाममार्गी, नीच, नाचते, स्याने दिवाने मांसाहारियोंका देवी और ईश्वरका बहाना करके मुफ्ती मांस उड़ाना—अपनी थोंद बढ़ाना वृथा खून बहाना है।

(१६) मांसाहारी—पण्डित जी ! क्य॰ आप इन प्रमाणोंके सिवाय और भी इस विषयके युक्ति सिद्ध प्रमाण दे सकते हो ? पण्डित--हां सुनिये, मनुष्यकी शारीरिक बनावट ही इस बातका पुष्ट प्रमाण है कि वह मांसाहारियोंमें नहीं है वनस्पति सागपात फल-फूल खाने वालोंमें है जैसा कि अच्छे २ पण्डित और विद्वान् सरइवर्टस होम, वैरन क्वीवर रे, प्रोफैसर ला-रेंस लार्डमिनवुड मिस्टर टामसवैल आदिने बड़े २ प्रमाणोंसे प्रकट किया है कि मनुष्य शारीरिक बना-वटसे मांसाहारियोंमें पैदा नहीं हुआ है।

(१७)—महाशय लार्ड बुक और मिस्टर सिगलट जो रसायन विद्यामें बड़ेनिपुण हैं लिखते हैं कि पेड़ों और

पशुओंकी बनावटमें बहुतसी वस्तुयें एकसी हैं देखो सा-
इंका पुस्तक एम, एस, एल, आर, लैटर्स ओन केमिष्ट्री।

(१८) मांसमें १०० भागमें केवल ३६ भाग वह सत रहता है जिससे मनुष्य पुष्ट रहता है शेष ६४ भाग पानी रहता है और अन्नमें ८० तथा ९० भाग उस सतका रहता है, ऐसा ही हाल और सन्तोंका भी है—(समझे)

(१९) मांसमें मीठा खट्टा आदि स्वाद (जायका) कुछ भी नहीं है उसमें घी मसालेका स्वाद आजाता है जब यही घी मसाला चना मौठ आदि अन्नमें मिलाया जाता है तब मांससे अधिक स्वादिष्ट मजेदार होजाता है।

(२०)-बनस्पति खाने वालोंका ईश्वर रचित स्वभाव है कि वे बहुधा रात सोने और आराम करनेमें बिताते हैं और मांसाहारी रातको जागकर शिकार खेलते और पशुओंको मारते हैं इसलिये मनुष्य मांसाहारी नहीं है।

(२१)—मनुष्यके शरीरसे और बनस्पति खाने वाले पशुओंके शरीरसे पसीना निकलता है परन्तु मांसभक्षी पशुओंके शरीरसे नहीं निकलता इसलिये मनुष्य व-नस्पति खाने वालोंमें है मांस खाने वालोंमें नहीं है॥

(२२) मनुष्य, गौ, बैल और भैंस आदि अपना आहार चबाकर खाते हैं और मांसभक्षी पशु अपने आ-

हारको वैसाही लील (निगल) जाते हैं इस हेतुसे मनुष्य वनस्पति खानेवालोंमें है और मांस खानेवालोंमें नहीं है।

(२२)–मनुष्य और बनस्पति खाने वाले पशु घूंट बांधकर पानी पीते हैं परन्तु मांस खानेवाले पशु जीभसे चाटते हैं इसलिये मनुष्य मांस खाने वालोंमें नहीं है।

(२४)-मनुष्य और वनस्पति खाने वाले पशु निःकपट सरल स्वभाव होकर बहुधा किसीको नहीं सताते और मांसाहारी पशु क्रूर (निष्ठुर) छली चालाक नित्य ही दूसरोंके खानेका उपाय करते यहां तक कि कभी २ अपने बच्चोंको भी खाजाते हैं–इस लिये मनुष्य बनस्पति खाने वालोंमें हैमांस भक्षकोंमें नहीं है॥

(२५) मनुष्यके दांतोंकी वनावट बनस्पति खानेवालों कैसी है मांसाहारी शेर कुत्ताके दांतों कैसी नहीं है इस लिये मनुष्य वनस्पति खाने वालोंमें है मांसभक्षी नहीं॥

(२६)–जो मांसाहारी कुत्ते भेड़ियाको बालकाल से ही मांसका बचाव रक्खा जाय तो उनकी निष्ठुरता (बेरहमी) कम हो जायगी और भेड़को (जो अतिसीधा पशु है) मांस ही खिलाया जाय तो वह भी दुष्ट स्वभाव होकर दूसरोंको सताने लगेगी (बिना-

खून बहाये चैन नहीं पड़ेगा) मांसका खाना—खून ब-हाना गला काटना—औरोंकी जान लेना प्रत्यक्षही है—जो मांस खाता है औरोंके प्राण लेते नहीं घबड़ाता है।

(२७) मांस खानेमें खर्च अधिक पड़ता है और अन्नमें कम क्योंकि बहुधा मांससे अन्न सस्तामिलता है।

(२८) मांस सब जगह और सब समयपर नहीं मि-लता परन्तु अन्नादि सब जगह सुगमतासे मिल सकता है॥

(२९)—आजका मांस कलके कामका नहीं रहतासड़-कर दुर्गन्धित हो जाता है परन्तु आटा, दाल, फल तर-कारी शाकादि बहुत दिनों तक खाने योग्य बने रहते हैं॥

(३०)—दूध घी अन्न महंगे अकरे तेज हो जाते हैं इसका मुख्य कारण मांस ही खाना तो है=

नष्टे मूले नैव फलं न पुष्पम्० ॥

अर्थात् जड़ नहीं तो डाली कैसे हो जड़रूप उ-कारी गवादि चौपाये तो लोग खा रहे हैं फिर डाली-रूप दूध घी अन्नके न मिलनेसे मनुष्य दुःखी क्यों न होवें—इस दुःखका दोष (पाप) मांस खाने वालों पर नहीं है तो भला बतलाइये किस पर है? मनुस्मृति देखो-

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी ।
संस्कर्त्ता चोपहर्त्ता च खादकश्चेतिघातकाः ॥

[मनुस्मृति (धर्मशास्त्र) अध्याय ५ श्लोक ५१]
अर्थ—(१) मारनेकी सलाह देने वाला (२) अङ्गोंको काट छांट करने वाला (४) खरीदने वाला (५) बेंचने वाला (६) रांधने पकाने वाला (७) परोसने वाला (८) खाने वाला धर्मशास्त्रमें ये ही ८ घातक हिंसक हत्यारे कसाई बताये गये हैं और कसाइयोंके सिर पर कहीं सींग नहीं होते हैं।

हत्यारे आठ कसाई महाराज मनू बतलाते। प्रथम सलाह दे पशू कटावे—हाड़ मांसके मजा बतावे (हरे) वनके नाचते जीव मरावे। गूंगे पशू कटाते। (महाराज मनु०) ॥१॥ दूजा कसाई वह कहलावे—हाड़ मांस जो काट गिरावे (हरे) क़तल पशूकी खल छुड़ावे। खट खट छुरी बजाते (महाराज मनु० ॥ २ ॥) तीजा कसाई काटन वाला—और बलिदान चढ़ावन वाला (हरे) पशूके प्राण निकारन वाला। कल्मा पढ़ जिबह कराते—महाराज मनु० ॥ ३॥ चौथा मांस खरीदन वाला—सट्टा कर पशु लाने वाला—(हरे) बधिकको पशू दिलाने वाला। बूचड़की दलाली खाले। (महाराज मनु० ॥) मांस पांचवें तोलन वाला—मरणहेतु पशु देने वाला ॥ (हरे) बूढ़े चौपे बेंचने वाला। कसाईके

खूंटा बंधाते। (महाराज मनु० ॥ ५ ॥) छठवां मांस प-
काने वाला डेगमें लाश जलाने वाला—चौका मरघट क-
रने वाला। घर भीतर लाश जलाते। (महाराज मनु० ॥६॥
सप्तम मांस परोसन वाला—परशादी कह बांटन वाला
(हरे) मोल बजारसे लाने वाला, मांससे थोंद फुलाते
(महाराज मनु० ॥७॥) अष्टम मांस निगलने वाला—
कौपे चौआ खाने वाला (हरे) शर्म्मन् ! मुर्दा भखने
वाला—पेटकों कबर बनाते। (महाराज मनु० बतलाते०८)॥

चौपाई—(विश्रामसागर छापा नवलकिशोर पृष्ठ ४२)
आठ जो हिंसाके गृह जानों—सो भारतमें साखि बखानों
जीव बधन इक १ आज्ञा देई—दूजो २ मारै ३ गहि लेई॥
चौथा ४ सुना सवांरनहारा—पचवां ५ बेंचनहार निहारा
छठां रसोई जौन चढ़ावै—७ सतवां सो जो परसि जिमावै
अठवां ८ खानहार जो होई—परे नरक महिं आठों सोई॥

दोहा—मोल मंगावे घरहते ताहि द्रव्य दे कोच।
सुख सम्पति सब नाशही, मोक्ष लहै नहीं सोच॥

वर्षे वर्षेऽश्वमेधेन यो यजेत शतं समाः।
मांसानि च न खादेद्यस्तयोः पुण्यफलं समम्॥ मनु०

जो १०० वर्ष तक प्रति वर्ष अश्वमेधयज्ञ करता है
औ जो जन्म पर्यन्त मांसभक्षण नहीं करता, दोनोंको
पुण्यफल समान है। ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

* श्रीमच्छंकराचार्य कृत *

कौपीनपंचक यतिपंचक

व आत्मपूजा व निरंजनाष्टकम्

जिसको

प्रबन्धकर्त्ता दयानन्द ट्रेक्ट सोसाइटी ने,
महाविद्यालय मैशीन प्रेस हरिद्वार में छपवाया.

मिलने का पताः—

दयानन्द ट्रेक्टसोसाइटी
(दफ्तर) पुलिस के सामने
बाजार हरिद्वार.

२००० प्रति] [मूल्य ३ पाई.

ओ३म्

कौपीन पंचक

वेदान्तवाक्येषु सदारमन्तोभिक्षान्न मात्रेण
चतुष्टिमन्तः। विशोक मन्तःकरणे चरन्तः
कौपीनवन्तः खलुभाग्यवन्त ॥ १ ॥

जो वेदान्त शास्त्रोक्त वाक्यों में सदा प्रीति प्रदर्शन क-
रते हैं और जो केवल भिक्षान्न से ही संतुष्ट होते हैं, जो शोक
विकार रहित होकर विशुद्ध चित्त में सदा विचरण करते हैं,
वह वेष भूषणादि से रहित कौपीन धारी पुरुषही भाग्यवान हैं
इस में किसी प्रकार का संदेह नहीं है ॥ १ ॥

मूलंतरोःकेवलमाश्रयन्तःपाणिद्वयं भोक्तु
ममन्त्रयन्तः कन्थामिव श्रीमपि कुत्सयन्तः
कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः । २ ।

केवल वृक्षमूल (वृक्षकी जड़) ही जिनका आश्रय स्थल
है, दोनों हाथ ही भोज्यवस्तु आहरण के लिये हैं

[गुदड़ी] की अपेक्षा धनको खराब समझनेवाले कौपीन पुरुष निःसंदेह भाग्यवान कहेगये हैं ॥ २ ॥

स्वानन्द भावेपरितुष्टि मन्तः
द्रिय वृत्तिमन्तः। अहर्निशं
कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः ॥ ३ ॥

अपने हृदय के आनन्द में हो जो सर्वकाल तृप्त जिनकी समस्त इन्द्रिय वृत्ति शान्तभाव में रहती हैं. जिनका हृदय परब्रह्म में ही क्रीडा करता है, ईदृश [इस के] कौपीनधारी पुरुष निःसंदेह भाग्यवान कहेगये हैं ॥

देहादिभावं परिवर्त्तयन्तः स्वात्मा
त्मन्य वलोकयन्तः। नान्तन्नमध्यं
स्मरन्तः कौपीनवन्तः खलुभाग्यवन्त

जो शरीर और इन्द्रियादि विषय का परिवर्त्तन अपने आत्मा में ही जो परमात्मा का दर्शन जो शेष एवं मध्यभाग और बाहर की कुछ भी चिन्ता रते हैं ईदृश कौपीनधारी पुरुष निःसन्देह भाग्यमान हैं

ब्रह्माक्षरंपावन मुच्चरन्तो ब्रह्माहमस्

भावयन्तः । भिक्षाशिनो दिक्षु परिभ्र-
न्तः कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः ॥५॥

जो पवित्र ब्रह्मनाम के अक्षर सदा उच्चारण करते हैं मैं ही
हूं, जो सदा इस विषय की चिन्ता करते हैं, जो भिक्षा
वस्तु भोजन करे हुवे संपूर्ण दिक परिभ्रमण करते हैं, ऐसा
न धारी पुरुष निःसन्देह भाग्य मान कहे गये हैं ॥ ५ ॥

इति परमहंस परिव्राजकाचार्य्य श्री मच्छंकरभगवद्
विरंचित कौपीन पञ्चक समाप्तम् ॥

——○○※○○——

* यतिपंचक *

मनोनिवृत्तिः परमोपशान्तिः सातीर्थ व
मणिकर्णिकावै।
साकाशिकाहं निजबोधरूपः ॥ १ ॥

मनोवृत्ति निवृत्ति पंथ [मार्ग] आश्रय करने में जो शांति प्राप्त होती है वह निवृत्ति पथ आश्रयीभूत मनही स्वरूप होता है. इस प्रकार से चित्त क्षेत्र में जो शांति जमान है, वही तीर्थ प्रधान मणिकर्णिका कह कर हुई है निर्मल अर्थात् दिव्य ज्ञान प्रवाह गंगा तीर्थ आत्म में ही वह काशी हूं ॥ १ ॥

यस्यामिदं कल्पितमिन्द्र
मनोविलासं । सच्चित्सुखैकं
साकाशकाहं निजबोधरूपा ॥ २ ॥

कोलाहलमय सब लोक इन्द्रजाल की समान कल्पित मात्र है, इस दृश्यमान सम्पूर्ण चराचर को मानसिक

काशित करती है। जो नित्य एवं ज्ञानस्वरूप सूत्र के एक आकर [खान] और जो जगत् के आत्मरूपी हैं आत्म स्वरूप मैंही वह काशी हूं ॥ २॥

कोषेषु विराजमाना बुद्धिभवानीप्रति गेहं। साक्षीशिवःसर्व्वगतान्तरात्मा सा शिकाहं निजबोधरूपा ॥ ३ ॥

ल भूतप्रपंच रूप कोष के भीतर जो बुद्धिभवानी रूप से राजमान है, प्रतिदेह जिसका गृह रूप से विद्यमान रहता है। त् के साक्षी स्वरूप मंगल विधाता सम्पूर्ण साधु पुरुषों के तर में आत्मरूप से स्थिति करते हैं, वही निज तत्वबोध स्वरूप काशी क्षेत्र हूं ॥ ३॥

र्य्यंहिकाश्यतेकाशी काशीसर्व्वंप्रकाशते। काशीविदिता येनतेन प्राप्ताहिकाशिका ४

काशी क्षेत्र केवल कार्य कोही प्रकाश करता है, और काशी ही सम्पूर्ण प्रकाश करती है, जो काशी क्षेत्र को इस प्रकार अवगत करते हैं, वही काशी क्षेत्र लाभ करसके हैं ।

काशीक्षेत्रं शरीरं त्रिभुवन जननी व्यापिनी
ज्ञानगंगा। भक्तिश्रद्धागयेयं निजगुरु चरण
ध्यानयोगः प्रयागःविश्वेशोऽयंतुरीयंसकल
जनमनःसाक्षी भूताऽऽत्मा देहेसर्व्वं मदीये
यदि वसति पुनस्तीर्थ मन्यत् किमस्ति।५।

काशी क्षेत्र जिनका शरीर स्वरूप है। स्वर्ग, मर्त्य, पाताल यह त्रिभुवन की अधिष्ठात्री पतितपावनी ज्ञान गंगा के सवर्त्र व्याप्त रहये हैं। उपासकी श्रद्धा और भक्तिही गयाक्षेत्र हैं। निजमन्त्र दाता के श्री चरणों का ध्यान परायण होनेसे, प्रयाग तीर्थ लाभ होता है, क्यों कि यही विश्व संसार के अधिपति और सब प्रकार लोकोंके मनके साक्षी स्व रूप हैं, और अंतरात्म रूपसे सपूर्ण देहोंमे स्थिति करते हैं, यदि यह बात सत्य है तो मेरे फिर अन्य तीर्थ मे गमन करने कीक्या प्रयोजन है॥ ५॥

॥ आत्मा पूजा ॥

आनन्देसच्चिदानन्दे निर्विकल्पेकरूपिणि
स्थितेद्वितीयाभावेवैकथं पूजा विधियते १

जो आनन्दस्व रूपएक मात्र रूपविशिष्ट सच्चिदानन्द और विकल्पहीन होकर स्थिति करते हैं। जिन को तुल्य अन्य कोई नहीं हैं, सुतरां द्वितीय के अभाव प्रयुक्त किस प्रकार पूजाका विधान होगा ॥ १ ॥

पूर्णस्या वाहनं कुत्र सर्व्वाधारस्य चासनं।
स्वच्छस्यपाद्य मर्घ्यञ्च शुद्धस्याचमनंकुतः

जो सर्वत्र परिपूर्ण होकर रहते हैं, कहां उनका आवाहन किया जाय? जो संपूर्ण चराचर के आधार हैं, उनका और आसन क्या है? जो निर्म्मल अर्थात् स्वच्छ पदार्थ हैं उनको फिर पाद्य अर्घ्य किस प्रकार से संभव है? विशुद्ध शरीर का आचमन किस प्रकार से संभव होसकता है ॥ २ ॥

निर्मलस्य कुतः स्नानं वस्त्रं विश्वम्भरस्यच।
निरालम्बस्योपवितं रम्यस्या भरणं कुतः ३

जिनके शरीर में किंचित् मात्र भी मलीनता नहीं है, निर्मल पुरुष हैं, उनके और स्नान करने का क्या ... सम्पूर्ण विश्व संसार जिनके उदर के भीतर स्थित है, उन अन्य आवरण वस्त्र की क्या आवश्यकता है ? जो निराल [बिना सहारे] रूप से स्थिति करते हैं, उनको ... क्या प्रयोजन है ? कारण कि जो वस्तु स्वभाव से ही मनोहर है उसकी अन्य भूषण क्या शोभा बढावेंगे ॥ ३ ॥

निर्लेपस्य कुतोगन्धः पुष्पं ...

निर्गन्धस्य कुतोधूप स्वप्रकाशस्य ...

किसी प्रकार के गंध द्रव्य का बिना लेप किये जिस सुगंध प्राप्त होने की आशा नहीं है, बुझेहुए दीपक से प्रकार प्रज्वलित दीप्ति की संभावना नहीं रहती; गंध वस्तु से जिस प्रकार धूप की सुगंधि प्राप्त नहीं होती, वैसे जो स्वयं प्रकाशित है, उनमें भी किसी प्रकार अन्य दीप्ति प्रयोजन नहीं होता ॥ ४ ॥

नित्यतृप्तस्य नैवेद्यं निष्कामस्य फलं ...

ताम्बूलञ्च विभोः कुत्र नित्यानन्दस्य दा...

जो नित्य प्रति तृप्त रहते हैं, उनको फिर अन्य पूजा उपकरण सामग्री नैवेद्यादि का क्या प्रयोजन है ? निस्पृहा

स व्यक्ति को जिस प्रकार फल प्राप्ति की कुछ आशा नहीं
जो सबके प्रभु हैं, उनको फिर अन्य प्रकार के भोग्य ताम्बू-
दि का क्या प्रयोजन है जिनको सदा आनन्द विराजमान
उनको फिर अन्य दक्षिणा की क्या आवश्यकता है ।

स्वयंप्रकाश मानस्य कुतोनीरा जनाविधि ।
दक्षिणामनन्तस्या द्वितीयस्य चकास्थितिः

जो स्वयं प्रकाशमान है, उसकी आरति नहीं होसक्ती और जो
द्वितीय रूप से स्थिति करते हैं, उनको फिर प्रदक्षिणा करनी
भी यह नियम किस प्रकार से संभव होसकता है ? ॥ ६ ॥

अन्तर्वहिश्च पूर्णस्य कथंभद्रासनं भवेत् ।
इदमेव परापूजा विष्णुः सत्वस्वरूपिणी ७
देहो देवालयः प्रोक्तो जीवोदेवः सदाशिवः
त्यजेत् ज्ञान निर्माल्यं सोहं भावेनपूजयेत् ८

जो भीतर और बाहर परिपूर्ण रूप से अवस्थिति करते हैं
उनका फिर भद्रासन अर्थात् निर्दिष्ट अवस्थिति स्थान किस
प्रकार से संभव होसकता है ? परम विष्णु की सत्व स्वरूपिणी

श्रेष्ठ पूजा अन्य कुछ नहीं केवल अन्तर [भीतर] और बाहर स्थिति करने हैं उनका मनन करने में उनकी पूजा होजाती है ७।८

तुभ्यंमह्यमनन्ताय मह्यंतुभ्यंशिवात्मने।
नमोदेवादिदेवाय परायपरमात्मने ॥९॥

तुमको और अपने को अनन्त देव रूप से प्रणाम करता हूं एवं अपने और तुम्हारे शिव अर्थात् मंगलमय आत्मा को प्रणाम करता हूं। देवादि देव परम देवता परमात्मा को प्रणाम करता हूं ॥ ९ ॥

योगीदेहाभिमानीस्याद्भोगीकर्म्मणितत्पर:
ज्ञानीमोक्षाभिमानेव तत्वज्ञेनाभिमानता ॥

जोगी देह के अभिमानी होते हैं और भोगी कर्म विषय में पारगता प्रदर्शन करते हैं, तत्वज्ञ तत्व ज्ञान के लाभ में अभिमानी रहते हैं और ज्ञानी जन मोक्ष लाभ का अभिमान करते हैं ॥ १० ॥

किंकरोमि क्वगच्छामि किं गृहणामि त्यजामिकिम्। आत्मना पूरितं सर्व्वं महा कल्पाम्बुना यथा (१) ११

मैं क्या करूं! और मैं कहां जाऊं? क्या ग्रहण करूं? और क्या त्याग करूं? और यह दृश्यमान भूत प्रपंच क्या है! महा प्रलय के जल में जिस प्रकार सम्पूर्ण होजाता है, आत्मा में भी इसी प्रकार यह सर्व ब्रह्माण्ड परिपूर्ण होरहा है॥ ११॥

॥ निरंजनाष्टकम् ॥

स्थानंनमानं नचनादबिन्दुं रूपंनरेखा नच धातुरन्यः। दृष्टा नदृश्यंश्रवणं न श्राव्यं तस्मै नमो ब्रह्मनिरञ्जनाय॥ १॥

जो किसी स्थान में व्याप्य नहीं है अथवा किसी प्रकार परिमाण के योग्य भी नहीं है। किसी प्रकार के शब्द से भी वह ज्ञातव्य [ज्ञात] नहीं हैं। वह रूप नहीं है, रेखा अर्थात् चिन्ह विशिष्ट नहीं है। किसी प्रकार वह धातु भी नहीं है वह द्रष्टा नहीं और किसी प्रकार के उपाय से उनको नहीं देखा जाता। वह श्रोता नहीं और किसी प्रकार श्रवण योग्य भी नहीं होते। जो इस प्रकार विश्व व्यापक रूप होते हैं, उन्हीं निरञ्जन परब्रह्म को मैं प्रणाम करता हूं॥ १॥

वृक्षोनमूलंनचबीजपुष्पं शाखानपत्रंनच वाल्लीपतं। पुष्पंनगन्धं नफलंनछाया तस्मैमनोब्रह्मनिरञ्जनाय ॥ २ ॥

जो वृक्ष नहीं; मूल नहीं और वीज वा फूल, शाख किम्वा पत्र, इनमें भी कुछ नहीं है, जो लता वा पल्लव, इनमें कुछ नहीं हैं और जो पुष्प, गन्ध, फल छाया इन सब से अतीत हैं, उन्हीं निरञ्जन परब्रह्म को प्रणाम करता हूँ ॥ २ ॥

नवेदंनशास्त्रंनचशौचसन्ध्या मन्त्रंनदाप्यं नचध्यानधेयं। होमंनयज्ञोनचवेदपूजा तस्मै नमोब्रह्मनिरञ्जनाय ॥ ३ ॥

जो ऋग, यजु, साम, अथर्व, इन चारों के भी जानने योग्य नहीं है, शौच आचार अथवा सन्ध्या वन्दनादि सेवा मन्त्र पाठ करके भी उनको प्राप्त नहीं किया जाता। वह सब के लोचन गोचर दीप्यमान पदार्थ भी नहीं है, किम्वा ध्यान करने से भी जिनका स्वरूप भली प्रकार ध्यान में नहीं आता होम, यज्ञ, पूजा और देवार्चनादि किसी प्रकार का अनुष्ठान करने से जिनको प्राप्त नहीं कियाजाता, जो इस प्रकार ध्याना तीत, लोकातीत,

और शास्त्रादि ज्ञान से भी अतीत महान् पुरुष है. उनही निरञ्जन परब्रह्म को प्रणाम करता हूं ॥ ३ ॥

अधोनऊर्द्ध्वंनशिवोनशक्तिः पुमान्ननारी, नचलिंगमूर्त्तिः । नविष्णुर्नब्रह्मानचन्द्रेन्द्रस्तस्मैनमोब्रह्मनिरञ्जनाय ॥ ४ ॥

जो ऊपर भी नहीं और अधोदेश अर्थात् नीचे भी नहीं है, जो शिव अथवा शक्ति इनमें भी कुछ नहीं है, जो पुरुष अथवा स्त्री नहीं है, जिनका कोई लिंग अथवा मूर्त्ति नहीं है जो ब्रह्मा, रुद्र, देवता इनमें कोई नहीं, जो एतादृश इस प्रकार महान् विश्वव्यापी हैं उन्हीं निरञ्जन परब्रह्म को प्रणाम करता हूं ॥ ४ ॥

अखण्डखण्डंनचदण्डदण्डं कालोनदिव्यः न गुरुर्न शिष्यः । न ग्रहो न तारा नच मेघमाला तस्मैनमोब्रह्मनिरञ्जनाय ॥५॥

जो अखंड अर्थात् सर्वव्यापक रूप से व्याप्त हैं, जिनका शासन दण्ड चराचर शासन करता है, जिनके ऊपर अन्य कोई शासन कर्त्ता नहीं है, काल जिनका परिच्छेद नहीं करसक्ता, और स्वर्ग भी जिनका सीमा निर्द्धारण करने मेंसमर्थ नहीं है वह गुरु भी

नहीं और शिष्य भी नहीं हैं, ग्रह आकाश स्थित कोइ ग्रह हैं एवं नक्षत्र मण्डल और मेघमाला में भी कुछ नहीं है, प्रकार गुणातीत सर्वमय हैं. उन्हीं निरंजन पर ब्रह्म प्रणाम करता हूँ ॥ ५ ॥

श्वेतंनपीतंनचरक्तरेतं हेमंनरौप्यंनचव
वर्णं । चन्द्रार्कराहोरुदयानचान्तं
बूह्मनिरञ्जनाय ॥ ६ ॥

जो शुक्ल वर्ण अथवा रक्त वर्णादि किस प्रकार के व
नहीं है. वह सुवर्ण अथवा रजतमय कोई पदार्थ नहीं और
प्रकार वर्ण के अनुरूप वर्ण विशिष्ट भी वह नहीं है, चन्द्र अ
सूर्य के समान उन का उदय व अस्त गमन नहीं होता
अग्नि के समान वह दीप्ति और निर्वाण नहीं होते, जो इस
जन परब्रह्म को प्रणाम करता हूं ॥ ६ ॥

स्वर्गेनपंक्तिर्नगरेनक्षेत्रे जातेरतीतंनच
भिन्नं । ताहंनतत्वंनपृथक्पृथक्त्वा
नमोबूह्मनिरञ्जनाय ॥ ७ ॥

जो स्वर्ग में भी स्थिति नहीं करते और नगर में भी अवस्थित नहीं हैं, जो किसी क्षेत्र में विराजित नहीं और जिन का नहीं एवं जो मृत्यु के भी आधीन नहीं हैं, वह भेद भी और भिन्न भी नहीं हैं, वह मैं भी नहीं और तुम भी हो, वह किसी पदार्थ से पृथक नहीं हैं और सम्पूर्ण पदार्थ से अतीत जो विश्वमय महान पुरुष रूप से विराजित हैं, निरंजन परब्रह्म को प्रणाम करता हूँ ॥ ७ ॥

भीरदीसंनिर्वाणशून्यः संसासारंनच पपुण्यंव्यक्तंन चाक्तंनचभेदभिन्नंतस्मै मोब्रह्मनिरञ्जनाय ॥ ८

जो गम्भीर दी तिव्यञ्जक अथवा निर्वाण विशिष्ट नहीं हैं जो सार के एक मात्र सार पदार्थ हैं, जिन में पाप पुण्य नहीं हैं, व्यक्त नहीं और अव्यक्त भाव से भी अवस्थित नहीं हैं जो और भिन्न दोनो अवस्था में विरामान हैं, उन्हीं निरंजन ह्म को प्रणाम करता हूँ ॥ ८ ॥

॥ इतिः भूयात् ॥

॥ ॐ ॥

जैनमत लीला

नम्बर १

अर्थात्-

जैनईश्वर स्तुति

जिसको

पंडित मूलराज अम्बेहटा निवासी जिलासहारनपुरने सर्व सज्जनों के हितार्थ रचकर प्रकाशितकिया

और

पं० शंकरदत्त शर्माने अपने शर्मा मैशीन प्रिंटिगप्रेस मुरादाबाद में छापा

प्रथमबार १००० मूल्य)।

॥ ओ३म् ॥

जैनमत लीला

हे कृपा सिन्धु दीनदयालु ईश्वर तेरी महिमा अपार है। योगी और महायोगी तक तेरे गुणोंका वर्णन नहीं कर सकते नास्तिक से नास्तिक मनुष्य तेरे कर्त्ता धर्त्ता दीनदयालु न्यायकारी होने में सन्देह नहीं करसकता।

मित्रवर देखिए कि निम्न लिखित जैन पुस्तकों में जो प्रातःकाल पाठ करने योग्य हैं ईश्वर के विषय में किस प्रकार लिखा हुआ है।

भक्तामर भाषा स्तोत्र

अनंत नित्य चित्त की अगम्य रम्य आदि हो।
असंख्य सर्व व्याप विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो॥

समीक्षा—मित्रवर जब जैनी अर्हन् ईश्वर (मुक्त-जीव) को एक ही स्थान (सिद्ध शिला) पर विराजमान बतलाते हैं तो फिर नित्य व सर्वव्यापक-विष्णु ब्रह्म हो, अनादि इत्यादि शब्दों से कौन से ईश्वर का ग्रहण है— क्योंकि मुक्त जीव नित्य व अनादि और एक ही स्थान पर रहने वाले अनेक

विश्वनाथ निर्मल गुण ईश । विहर मान वंदो जिन बीस ॥ ब्रह्मा बिष्णु गण पति सुंदरी । वर दीजे मुझे वागेश्वरी ॥ तुम बिन कौन करे सुझकार । तुमबिन कौन उतारे पार । दयावंत तुमदीनदयाल ॥ तुमकर्त्ता हर्त्ता कृपाल । मैं अनाथ तुम त्रिभुवन नाथ । मात पिता सज्जन संघात ॥ तुम कर्ताहर्ता कर्तार । कीरी कुंजर करतनधार ॥ कर जोरूं और न्याऊँ सीस । मुझ दुखदूर करो जगदीस ॥ ३९ ॥

समीक्षा— विद्वान् लोगों देखो और सोचो कि क्या यह स्तोत्र सपष्ठ ईश्वर को कर्ता हर्ता और दयालु न्यायकारी इत्यादि प्रगट नहीं करते ॥ २ ॥

पार्श्वनाथ स्तोत्र ।

दुखीदुख कर्त्ता सुख सुखकर्त्ता । सदा सेवकाकू महानंद भर्त्ता ॥ १ ॥ हरै यक्षराक्षस स भूति पिशाचं । महाडाकनी विघनके भयअवाचं ॥ द्रिनिकूँ द्रव्यके दानदीने । अपुत्रिनिकूं तैं भलेपुत्रकी महा संकटोंसे निकाले विधाता । सबै संपदा कोईददाता । पशुनर्कके दुःखते तू छुड़ावै । महास्त्र में मोक्ष में ले वसावे ॥ जपेजाप जाको कहां प लागे धरे ध्यान थारा सभीपाप भागे ॥ इति ॥

समिक्षा—मान्यवर पाठकगण अपने अमूल्य समय को दानदेकर थोड़े समय ध्यान देकर देखो कि जब जैनी लोग कर्मोंका फल मिलजाना स्वयं ही मानते हैं तो फिर दुःखों के हर्त्ता सुखोंके कर्त्ता पुत्रधनादि के देनेवाला नरक दुख से निकालकर स्वर्ग में बसानेवाला पापोंको दूर करनेहारे इत्यादि नामोंसे क्यों पार्श्वनाथ इत्यादि तिर्थंकरों अर्थात् ईश्वरों (मुक्तजीवों) की झूठी स्तुति करते हैं क्यों-कि वे बिचारे-तो किसीको कुछ देतेलेते नहीं उन्हें तो सांसारिक जीवोंके झगड़ेसे कुछ कामनहीं है पूजनीय जैनियों तुम्हीं बताओ कि क्या यह झूठी स्तुति भोलेभाले अनपढ़ोंके बहकानेके लिये लिखी गई और कीजाती है ॥ ३ ॥

कल्याण मंदर स्तोत्रभाषा ।

परम ज्योती परमात्मा परम जोत प्रवीन । बँदु परमानंदमय घटघट अंतरलीन ॥ तुम निरखत जन दीनदयाल ॥ संकट तै छुटै तत्काल ॥ ४ ॥

समिक्षा—जैनी भाइयों घट २ के अंतर वासकर-नेवाला दीनदयालु परमात्मा कौनसा है जिसकी तुम स्तुति करते हो । क्योंकि तुम्हारे (मुक्तजीव)

ईश्वर तो सर्वव्यापक और दयालु आदि गुणोंवाले नहीं हैं। तुमवृथा झूंटी स्तुति करके क्यों हँसी कराते हो ॥ ४ ॥

शान्तिनाथस्तोत्रभाषा ।

शांतिही शांती जपै जपै जबकोई। ता घर शांति सदा सुखहोय ॥ अलख निरंजन ज्योति प्रकाशी। घट २ भीतर के प्रभुवासी ॥ तू त्रिलोक-तना प्रतिपालक। हों अनाथ तू दीनदयालक ॥ जन्म मरण निवारो तारो। भवसागरते लेपउतारो ५

समिक्षा—क्योंजी जब शान्तिनाथके जपनेसे सर्व शान्ति होजाती है, तो शान्तिनाथ जीने किसका नाम जपाथा जो उनकी आत्माको शान्ति प्राप्त हुई औरवह मोक्षको चलेगये औरजब जैनियों के ईश्वर अर्थात् मुक्तजीव एक ही स्थानपर विराजमान हैं तो घटघट के बासी और तीन लोक के पालने वाले और दयालु आदि नामोंसे किसकी अस्तुति करते हैं ॥ ५ ॥

श्रीपाल दर्शनस्तोत्र ।

तुमचिंता संशय दुखहरे। तुम सुमरण अजर अमर करे ॥ कृपा तुम्हारी ऐसीहोय। जन्म मरण

मिटाओ माय ॥ तुमबिन प्रभू न दूजा कोय । तुम बिनरोको काज न होय ॥

समिक्षा—मित्रों क्यायह स्तोत्र ईश्वरका अजर अमर कृपालु एकहोना प्रकट नहीं करते ॥ ६ ॥

भाषापूजा संग्रह ॥ ७ ॥

जो जैन धर्मप्रचारक पुस्तकालय देववन्दमें छपा है पृ० ६ के देवपूजा प्रकरणमें इसतरह लिखा है ।

दोहा—प्रभु तुम राजा जगत के, हमेंदेय दुखमोय ।
तुमपद पूजा करतहूँ, हमपै करुणा होय ॥

छंद त्रिभंगी ।

बहू तृषा सतायो, अति दुखपायो, तुमपै आयो जललायो । उत्तम गंगाजल, शुचिअति शीतल प्राशुक निर्मल गुणगायो ॥ प्रभु अंतरयामी त्रिभुवन नामी, सबके स्वामी, दोषहरो । यह अरज़ सुनिजे कीजे, न्याय करिजे दयाधरो ॥ ७ ॥

समीक्षा— क्यों भाई जैनी लोगों जब तुम्हारा ईश्वर कर्ता हर्ता और दयालु आदि गुणों वाला नहीं है । तो फिर अंतरयामी सबके स्वामी दोष हरने वाला अरज सुनने वाला न्याय करने वाला दया करने वाला जगतका राजा या ईश्वर या मुक्त जीव कौन सा है ।

क्योंकि यह समस्त लेख ईश्वर विषय ही क है इस लिए जैनी भाइयों से सविनय प्रार्थना है कि इस निम्न लिखित प्रश्न का उत्तर सत्य और न्यायानुकूल लक्षण और प्रमाण से युक्त भले प्रकार देवें ।

प्रश्न— ईश्वर नित्यहै वा अनित्य यदिनित्य है तो जैनशास्त्रोंमें जहांयह (जीव१ अजीव२ धर्म३ अ... काल५ आकाशादि) छः द्रव्य अनादि मानेहैं इनमें ई... को अनादि नहीं माना फिर आप ईश्वर को नित्य कैसे मानते हो यदि ईश्वर को अनित्य मानते हो तो कृपा करके बतलाइए कि जो बन्धन के जीव पूर्वकाल में मुक्ती को गए या जो भविष्यत काल में मुक्ती को जावेंगे वह किसके उपदेश से मुक्ती को प्राप्त हुये या होंगे क्योंकि जैनी भाई ईश्वर का लक्षण सर्वज्ञ हितोपदेश मानते हैं जब बिना हितोपदेश के मुक्ती नहीं होती तो बन्धन के जीव किसके उपदेश से मुक्ति को गए वा जावेंगे यदि कहोकि ईश्वर नित्यभी है और अनित्य ... तो यह भी नहीं बन सकता क्योंकि नित्य अनि-

रूप होता है जैसे अजीव द्रव्य जिसमें (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु) रूपी द्रव्य माने गये हैं जिन का वर्णन द्रव्य संग्रह आदि पुस्तकों तथा तत्वार्थ सूत्रादिकों में भलेप्रकार दिखाया है और न्याय ग्रन्थोंमें भी लिखा है यथा । गंधवती पृथिवीसाद्वी विधा नित्या अनित्याश्च ॥ नित्य परमाणू रूपा अ- अनित्या कार्यरूपा पुद्गल द्रव्य जो स्थूल वा सूक्ष्म रूपहोता है वहकारण रूप कार्यरूप होनेसे नित्य अनित्य कहाता है ईश्वर अपरणामी है जो कारण और कार्यरूप कभी नहीं होता इसलिये ईश्वर में नित्य अनित्यता कभीनहीं घटसकती । ईश्वर चेतन है पृथिवीआदि जड़पदार्थ स्थूल सूक्ष्मरूप होते हैं चेतन ईश्वर स्थूलसूक्ष्म अर्थात् कारण रूपवा का॰ कभीनहीं होता । यदि कोई भाई यहकहे जीवकी मुक्ती स्वयंही विना हितोपदेशके होजाती है ऐसा मानने पर भी बहुतदोष आवेगा, जैनीलोग ईश्वरका लक्षण सर्वज्ञ हितोपदेश मानते हैं सब वृथा होजावेगा । और जैनशास्त्र के माननेकी भी कुछ आवश्यकता न रहेगी ॥

॥ ओ३म् ॥

जैनीपण्डितोंसे प्रश्न।

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वतीजीकृत

तथा

सत्यासत्य विचारार्थ

बाबूराम शर्म्मा

इटावास्थ द्वारा प्रकाशित।

द्वितीयवार }	संवत् {	मूल्य)॥
५००० }	१९६९ {	सैकड़ा ॥)

Printed by B.D.S. at theBrahm

Press Ftawah·

मिलनेका पता—बाबूराम शर्मा इटावा

ओ३म्

जैनीपण्डितोंसे प्रश्न ।

(१) जिस मुक्तिके वास्ते आप जैन धर्मको ग्रहण किये हैं वह जीवका स्वाभाविक गुणहै या नैमित्तिक? अगर स्वाभाविक धर्म है तो इसके लिये जैनधर्मकी क्या आवश्यकता है? यदि नैमित्तिक धर्म है तो उसका निमित्त अर्थात् सबब क्या है?

(२) मुक्ति नित्य है या अनित्य यदि नित्य है तो उसका किसी कारणसे होना किस प्रकार सम्भव है? क्योंकि नित्यकी तारीफ (लक्षण) ये है जो किसी कारणसे उत्पन्न न हो। यदि अनित्य है तो उसका अनन्त होना बन नहीं सकता क्योंकि सृष्टिमें ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसका आदि हो और अन्त न हो। क्या किसी जैनीने एक किनारा वाला दरिया या एक सीमा वाली वस्तु देखी है?

(३) जैन धर्ममें सृष्टिकर्ता तो ईश्वरको मानते ही नहीं। जिस परमाणु पुद्गल या भूतोंके स्वभावसे सृष्टि-

की उत्पत्ति स्वीकार करते हैं वह स्वभावसे गतिवाला यानी मुतहर्रिक बालेजात है या गतिशून्य यानी हर्कत से मुअर्रा अगर गतिवाला है तो संयोग परमाणुओंमें हो नहीं सकता क्योंकि सबकी गति यानी हर्कत बराबर होनेसे जो दरम्यानमें फासला है वह बना ही रहेगा। अगर ग़ैर मुतहर्रिक यानी गति शून्य तसलीम करें तो भी संयोग नहीं हो सकता लिहाजा कोई वस्तु बन नहीं सकती।

(४) क्या जैन धर्मके वे आचार्य जिन्होंने जैनधर्मके शास्त्रको लिखे हैं रागसे रहित थे या राग वाले यदि रागसे रहित थे तो उन्होंने शास्त्र कैसे बनाये? यदि राग वाले थे तो उनके बनाये ग्रन्थ किस तरह प्रमाण हो सकते हैं?

(५) आप लोग जो जगतको अनादि मानते हैं तो जगत् प्रवाहसे अनादि है या स्वरूपसे? यदि प्रवाहसे अनादि है तो उसका सबब (कारण) क्याहै। क्योंकि कोईप्रवाह बिला सबब हो नहीं सकता। यदि स्वरूप से मानते हैं तो विकार क्योंकर हो सकते हैं? क्योंकि विकारोंमें पहिला विकार पैदा होना है। जो चीज़

पैदा होती है वो ही बढ़ती है। ऐसी कोई चीज़ तलाशो जो पैदा न हो और बढ़ती हो।

(६) जो कर्मका बन्धन अनादि है उसका किस प्रकार हो सकता है ? क्योंकि अनादि चीजके दोनों किनारे नहीं हो सकते। जिसका एक किनारा है उसका दूसरा भी होना लाज़मी है।

(७) कर्म जो जीव करता है उसका फल देने वाला तो आप मानते ही नहीं और यह नियम है कि जो जिससे पैदा होता वो उससे कमज़ोर होता है और कमज़ोर किसी ज़बरदस्तको बांध नहीं सकता। लिहाज़ा कर्मोंका फल किस तरह होता है ?

(८) जो दृष्टान्त शराब वग़ैरहके पीनेमें नशा आनेका दिया जाता है वो सही नहीं क्योंकि शराब द्रव्य है और पीना कर्म है। यह नशा शराब द्रव्यका है न कि पीने कर्मका। अगर पीने कर्मका फल कहो तो पानी पीनेमें भी नशा होना चाहिये क्योंकि पीना कर्म इस जगह भी है।

(९) इसमें क्या प्रमाण है कि जैन शास्त्रोंको जैनियों के आचार्योंने लिखा है ? क्योंकि आज जैन आचार्य

प्रत्यक्ष लिखते हुये तो नज़र नहीं आते। जब प्रत्यक्ष नहीं तो अनुमान किस तरह हो सकता है। अगर प्रत्यक्ष और अनुमान दोनों नहीं तो शब्द प्रमाण हो ही नहीं सकता। पस जैन शास्त्रोंके बनाने वाले कोई आचार्य नहीं॥

(१०) जैन लोग जिस प्रत्यक्षको प्रमाण मानते हैं वह किसी द्रव्यका हो ही नहीं सकता क्योंकि हरएक चीजकी छः सिफ्त होती हैं। प्रत्यक्ष एक तरफके गुणोंका होता है। जैसे एक किताबको जब देखते हैं तो उसके रूप और परिमाणका प्रत्यक्ष होता है। जब किसी दीवारको देखते हैं तो भी रूप और परिमाण का प्रत्यक्ष होता है। तब किस तरह कह सक्ते हैं कि यह रूप किताबका है और यह दीवार वग़ैरह का?

(११) जैन लोग जिस जीवको मानते हैं उसके होनेमें क्या प्रमाण है? क्योंकि जीव रूप नहीं जो आंख से दृष्टि आये। रस नहीं जो रसनासे नज़र आये। बस फिर जैनमतका जीव साबित नहीं होता।

[१२] जैन लोग जिन इन्द्रियोंसे देखकर ईश्वरको जगत कर्ता मानना चाहते हैं तो इन इन्द्रियोंको किस

प्रमाणसे साबित करते हैं। क्या इन्द्रियोंका प्रत्यक्ष है जवाब मिलता है नहीं। अनुमान होता है। अनुमानमें व्याप्तिका होना लाज़मी है। जिसका तीन में प्रत्यक्ष न हो उसकी व्याप्ति नहीं और जिसकी व न हो अनुमान नहीं हो सकता अतएव जैनियोंको इ- न्द्रियोंकी हस्ती (अस्तित्व) से इनकार करना चाहिये

[१३] जैन लोग जिस सप्तभङ्गी न्यायको लेकर ईश्वर की हस्ती के मुतल्लिक पेश किया करते हैं अगर उसी सप्तभङ्गी न्यायको तीर्थङ्करों के मुतल्लिक इस्तेमाल कि- या जावे तो उसका नतीजा बतलाइये।

[१४]धर्म्म गुण है, कर्म्म है, स्वभाव है क्योंकि आप उसको एक पदवी पदार्थ मानते हैं जिससे द्रव्य, गुण कर्म वगैरह सब हो सकता है। वह नित्य है या अनित्य।

(१५) शरीरसे अलाहिदा कभी जीव रहता है या नहीं अगर रहता है तो किस परिमाण वाला होता है अणु मध्यम विभु।

(१६) क्या एक ही शयमें दो मुतज़ाद धर्म रह स- कते हैं या नहीं जैसे नफ़ी व हस्ती, सर्दी व गर्मी। अगर नहीं रह सकते तो सप्तभंगी न्यायका खात्मा। अगर रह सकते हों तो उसकी मिसाल दो। अगर मिसाल नहीं तो उसको न्याय किस तरह कह सकते हो॥

(१७) जिसकी उपासना की जाती है उसके सर्व गुण आते हैं या कोई २ अगर सब (गुण) आते हैं तो मूर्ति पूजनके साथ जड़ता आना लाज़िमी है। जहां जड़ता और चैतन्यता दो शामिल हो जावें उसे अविद्या कहते हैं। अगर कोई गुण आता है तो उसमें न्याय बतलाइये कि किस नियमसे आता है।

(१८) क्या जीव और अजीव जिन दोनों पदार्थों को आप स्वीकार करते हैं इनको सप्तभंगी न्यायसे मुबरी जानते हैं।

(१९) पाप व पुण्य को तमीज करनेके वास्ते आप किस कसौटी को मानते हैं? वह कसौटी किसी आचार्य्य ने बनाई है या अनादि कालसे चली आती है।

(२०) आपके जीवोंकी संख्या अनन्त है और काल भी अनन्त है। जीवों की तादादमें कमी नहीं और जो जीव मुक्त हो जाता है (लौटता नहीं) गोया जीव की तादाद कभी ख़तम या बहुत कम तो न हो जायगी। जिससे सृष्टि का सिलसिला ख़तम हो जावे क्योंकि जिसमें आमदनी न हो खर्च हो उसका दिवाला निकलना आवश्यक है॥

☛ सजीवनबूटी

यह बूटी मूर्छितोंकी मूर्छा दूर कर श्री· लक्ष्मणयती, शूरवीर, रणधीर, बनाती है, इसके सेवनसे चिरप्रतापी, तेजस्वी, वर्चस्वी, यशस्वी, ऋषि, मुनि, योगी, संन्यासी, महावीर, योधा, बलधारी, जगत्गुरु, परिव्राट् तथा सम्राट् जगत् प्रसिद्ध अमर नाम करगये हैं। केवल इसीके बल बाल ब्रह्मचारी भीष्मपितामह महामृत्युञ्जय कर शर शय्यापर सुखासीन हो धर्मोपदेश करते रहे।

पूर्वोक्त बूटी सत्यार्थप्रकाशके प्रकाशमें तृतीय खण्डपर जगमगा रही है। यह अमरबूटी =) निछावरमात्र करनेसे मिलेगी।

☛ मिलने पता—बाबूराम शर्मा—इटावा

जैनमतदर्शन

अर्थात्

जैनबौद्धमतकी एकता पर विचार

ट्रेक्ट नम्बर १

जैन ग्रन्थोंसे तथा समाचारपत्रों से उद्धृत

जिसको

पं० रामदयाल शर्म्मा सर्वेयर इटावा ने

छपाकर प्रकाशित किया।

Printed by B. D. S. at the Brahma
Press—Etawah.

प्रथमबार १००० } संवत् १९६७ { मूल्य -)

इकट्ठी खरीदनेवालों को ३।) रु० सै० मिलेंगी

भूमिका

वाचकवृन्द ! वेदमत मार्त्तण्ड को बौद्ध (जैन) घटा ने ऐसा दबाया है कि संसार में घोर रात्रि प्रतीत होती है यद्यपि श्री स्वामी शंकराचार्य्य आदि महा-पुरुषों ने कठिन प्रयत्न से वेद भगवान् भास्कर के अ-गणित गुण गण समझादिये थे अतः अधिकतर ना-स्तिकों की पोल खोलने के कारण आस्तिक भाई शं-कराचार्य्य स्वामी को अवतार मानने लगे वास्तव में ऐसी ही उनकी प्रतिष्ठा होनी चाहिये। क्योंकि उन्हों ने-नास्तिक मत का खंडन करके वैदिक धर्मका उद्धार किया था उनके कुछ काल बाद यही बौद्ध, जैन के नाम से प्रगट हुए इस समस्त बातों को आदर्श रूप से दिखलाया गया है। आशा है कि सत्यग्राही पुरुष इस पुस्तक को देख अवश्य आनंदित होंगे--

वाचकवृन्द ! इस पुस्तक के लिखने से मेरा अभि-प्राय यही है कि जैन महावीर और गौतम बुद्ध एक ही हैं निम्न लिखित लेख से आप को मालूम होगा कि इन दोनों में कुछ भी भेद नहीं है।

जैन महावीर ।	गौतम बुद्ध ।
(१) जैनी धर्म फैला कहते हैं	बौद्ध धर्म भवक मानते हैं
(२) महावीर नाम गौणिक विख्यात है	गौतमको भी द्वीप वंश में महावीर के नाम से लिखा है
(३) महावीर के पिता का नाम सिद्धार्थ कहते हैं	गौ० सिद्धोदन था
(४) स्त्री का नाम जसोदा	गौ० जसोदरा
(५) राजा का पुत्र	राजा का पुत्र
(६) ३० वर्ष की उम्र में गृह त्याग	३० वर्ष की उम्र में गृह त्याग
(७) महावीर के सिंह का चिन्ह	गौतम भी शाक्यसिंह
(८) पैदायश काल में पृथ्वी हिली	पैदायश काल में भूकम्प आया
(९) पैदा होनेसे पहले मा ने स्वप्न देखे	” ” ” ”
(१०) पैदायशी तीनकालका धारक है	पैदायशी अन्तर्यामी है

(११) एकाएक स्वयं दीक्षाली	एकाऐकी स्वयम्‌दीक्षाली
(१२) पहला व्रत खीर से पारना किया	पहला व्रतखीर से पारना किया (देखो ललित विस्तर)
(१३) तपकालमें देवताने उपसर्ग दिया	तपकालमें देवता ने उपसर्ग दिया
(१४) तपकालमें सर्प ने आकर फराकी छाया की	तप काल में आकर सर्प ने छाया की
(१५) समोसर्ण देवनयवना	देवमय बोद्ध मंडप रचा गया
(१६) चवंर छत्र देव में आये	चवंर छत्र देवमें आये
(१७) धर्म चक्र प्रवर्त्तन किया	गौतम ने धर्मचक्र परिवर्तन किया
(१८) भामंडल था	मुख पर भामंडल था
(१९) वाणी पशु पक्षी सुनने आये	वाणी पशु पक्षी समझते थे
(२०) इक्ष्वाकु वंश मानते हैं	गौतम को भी इक्ष्वाकु वंश मानते हैं
(२१) उत्पन्न होतेही इन्द्रने अभिषेककिया	उत्पन्न होते ही इन्द्रने अभिषेक किया

(२२) शरीर में चक्रवर्ती के चिन्ह थे	शरीर में चिन्ह थे
(२३) महावीरका अनुयायी बिम्बसार मरते २ तक रहा	गौतम का अनुयायी बिम्बसार मरतेद् म तक रहा
(२४) राजा से पहले चेला नारायणी अनुयाई हुई	राजासे पहले चेलानारायणीअनुयाईहुई
(२५) महावीर का केवल समय शरीर ५ हजार धनुष आकाश में उठा	गौतम का शरीर केवल ५ ताल वृक्ष समान आकाश में उठा
(२६) महावीरका शिष्य मोगलायनथा	गौतम का शिष्य मोगलायन था
(२७) महावीर पर मोगलायन रुष्टहुआ	गौतम से मोगलायन रुष्ट हुआ
(२८) महावीर गौशाला शास्त्रार्थ करने गया	गौः मोगलायन शास्त्रार्थ करने गयाथा
(२९) साधू चातुर मास करते थे	चातुर मास करते थे
(३०) जिन २ नगरोंमें चातुर मासकिया	उन २ नगरों में चातुर्मास किया

(३१) आनंद महावीरका परम भक्त था	आनंद गौतम का परमभक्त था
(३२) महावीर केवल ज्ञानी अरहन्तों को मानता है	गौतम भी अरहन्त को ज्ञानी बतलाता है।
(३३) विना अरहन्त मुक्त नहीं होसक्ता	विना अरहन्त मुक्ति नहीं होती
(३४) अपनी स्त्री को संगत में शामिल किया	स्त्री को सङ्घमें सम्मिलित किया
(३५) उदायनचन्द्र पद्योत आदि राजा अनुयायी थे	उदायन चन्द्र पद्योत आदि राजा अनुयायी थे
(३६) महावीर की चंदन की प्रतिमा उदायन राजा के पास थी। (देखो जैन कथा रत्न कोश)	गौतम की चंदन की प्रतिमा उदायन राजा रखता था।
(३७) महावीर की पूजा करने मेंढ़क चला [illegible] थी	गौतम की पूजा करने मेंढ़क चला बारह किस्म का धर्म बतलाया है

(३९) आठ वर्ष के बालक साधू होतेथे	आठ वर्ष के बालक साधू होते थे
(४०) त्रिरत्न धर्म बतलाया है सम्यक् दर्शन आदि	त्रैविद्या युक्त (देखो ललित विस्तर अध्याय २५)
(१४) महावीर का शिष्य एक नामी लुटेरा हुआ	गौतमका एक शिष्य नामी लुटेरा हुआ
(४२) १४, ५, ८ तिथि पुण्य तिथि मानी	१४, ५, ८ पुण्य तिथि मानी ।
(४३) मैतारय महावीर का अनुयायी था (जैनकथा ५ भाग पृ० ५५०)	मैतारय गौतम का शिष्य था
(४४) राजा चन्द्रपद्योत ने उज्जैन से आकर उपदेश लिया.	राजा चन्द्रपद्योतने मालवे अर्थात् उज्जैन से आकर उपदेश लिया
(४५) एक बार राजा अजात शत्रु महावीरके पास आया और कहा कि मैं चक्रवर्ती हूं महावीर ने कहा	गौतम से भी अजात शत्रु शत्रुता रखता था अर्थात् उसकी बातको ठीक नहीं मानता था

तू चक्रवर्ती नहीं है उस ने कहा नहीं मैं ज़रूर हूं तुम ठीक नहीं कहते इस बात से मालूम पड़ता है कि अजातु शत्रु महावीर पर विश्वास नहीं रखता था	
(४६) चंदन बाला नामी साध्वी को मृगावती साध्वी ने इस कारण बहुत बुरा भला कहा कि तू महावीर तीर्थंकरके समोसर्ण में अकेली इतनी रात्री तकक्योंरही इत्यादि	गौतम पर भी चंचा नामी स्त्री से ऐसा ही हुआ और लोगों ने अनसा पाप धारण किया
(४७) केवली था	केवली था (ललित विस्तर)
(४८) महावीर के गृहस्थी अनुयायी श्रावक कहलाये	गौतम के अनुयाइयों को श्रावक भी लिखा है

(४९) महावीरका सबसे बड़ा चेला अग्निहोत्री ब्राह्मण बतलाया जाता है	गौतम का सब से बड़ा चेला अग्निहोत्री ब्राह्मण लिखा है ॥
(५०) ये प्रथम बड़े शिष्य तीनभाई थे	ये बड़े शिष्य प्रथम तीन भाई थे ॥
(५१) महावीर की भस्म राजाओं ने बांटली ॥	गौतमकी भस्म भी बांटीगई
(५२) महावीर की डाढ़ देवता स्वर्गमें लेगये ॥	गौतमकी २ डाढ़ देवता लेगये लिखा है
(५३) महावीर का शिष्य गुरू के बाद ५०० शिष्योंसे युक्त गद्दी पर बैठा,	गौतम का शिष्य भी ५०० साधुओंसे युक्त गद्दीनशीन हुआ ॥
(५४) नौ नन्द जैनी जैन बतलाते हैं	बुद्ध बौद्ध बतलाते हैं ॥
(५५) चन्द्रगुप्तको जैनी जैन कहते हैं	बुद्ध बौद्ध कहते हैं ॥
(५६) चन्द्रगुप्त का बेटा विंदूसार जैनी कहते हैं ॥	बुद्ध बौद्ध कहते हैं ॥

(५७) अशोकको जैनी जैन बतलाते हैं	बुद्ध बौद्ध बतलाते हैं
(५८) अशोक के पुत्रको जैनी कहते हैं	बुद्ध बौद्ध कहते हैं
(५९) नागार्जुन को जैनाचार्य कहते हैं	बौद्धाचार्य कहते हैं ॥
(६०) स्कंदलाचार्य जैनी मानते हैं	स्कन्दा स्वामी बौद्ध मानते हैं ॥
(६१) दांयां कंधा श्वेताम्बर साधू वस्त्र रहित रखते हैं।	बौद्ध साधूके दायें कंधे पर वस्त्र नहीं होता ॥
(६२) जैनी कहते हैं कि महावीर को वस्त्र सहन थी।	बौद्ध भी बतलाते हैं
(६३) प्राकृत में ग्रन्थ।	प्राकृत में ग्रन्थ ॥
(६४) महावीर बिम्बसारके बागमें ठहरा और वे मौसम फूल आये ॥	गौतम बिम्बसार के बाग में ठहरा और बेमौसम फल फूल आये ॥
(६५) महावीरके शरीरमें रुधिरकी जगह दुग्ध कहते हैं ॥	गौतम के शरीर में रुधिर की जगह दुग्ध बतलाते हैं ॥

(६६) महावीरको सांपने काटा दूध निकला (श्वेताम्बरी)	गौतमको सांपने काटा दूध निकला
(६७) जिस सर्पने काटा वह देवता बना	जिस सर्पने काटा वह देवता बना
(६८) महावीरके चरणों के तले देवता पुष्प कमल विछाते ॥	गौतम के चरणोंके तले देवताओं ने कमल पुष्प विछाये
(६९) महावीरकी बाल्यावस्था में देवताओं ने परीक्षा की ॥	गौतमकी बाल्यावस्था में देवताओं ने परीक्षा की
(७०) महावीर का उपदेश सुनने देवी देवता आये ॥	गौतम का उपदेश सुनने देवता देवी आये ॥
(७१) महावीरका रंग गोरा जर्दी मायल था ॥	गौतमका रंग गोरा जर्दी मायल था
(७२) महावीरमें अतौल बल लिखा है	गौतमके अतौल बल मानते है

(१३) महावीरके शरीरमें चक्रवर्ती आदि के चिन्ह थे ॥	गौतमके चक्रवर्ती आदिके चिन्ह थे
(१४) महावीर देव मय गंधोदक पुष्प वर्षा होती थी ॥	गौतम पर देवमय गन्धोदक पुष्प-वृष्टी होती थी ॥
(१५) महा० की दिव्यध्वनि बतलाते हैं	गौतमकी भी दिव्यध्वनि लिखी है
(१६) महावीरके दुन्दुभी बाजे बजते थे जैनी कहते हैं ॥	गौतमके दुन्दभी बाजे बजते थे ॥
(१७) महावीर चन्द्र सूर्य आदिको देवता मानता था ॥	गौतम भी देवता मानता था । (देखो ललित विस्तर)
(१८) जैन साधू आलोचना करते हैं अर्थात् जो कुछ करे गुरुसे कहे ॥	बौद्ध साधू आलोचना भी करते हैं ॥ अर्थात् सब गुरुसे कहे ।
(१९) जैनी २४ तीर्थंकर बतलाते हैं	बुद्ध २४ बौद्ध बतलाते हैं

(८०) जैनी महावीर को ईश्वर विमुख कहते हैं ॥	बुद्ध बौद्ध को ईश्वर विमुख ख्याल करते हैं ॥
(८१) जैनी कहते हैं २४ तीर्थंकर गंगादि सिंधके बीच पैदा होते हैं ॥	बुद्ध कहते हैं कि बौद्ध भी मध्यदेश ही में पैदा होते हैं ।
(८२) ((श्वेता०) महावीर को वृद्ध अवस्था में पेचिश की बीमारी हुई और खून के दस्त आये ॥	बुद्ध कहते हैं बौद्ध को वृद्ध अवस्था में दस्तोंकी बीमारी हुई और रुधिर आया ॥
(८३) महावीरने औषधकी अभक्ष्य थी । किन्तु बहुत जैनी अभक्ष्यको नहीं मानते ॥	बुद्धने भी आजीविक वैद्यकी बताई औषधिकी जो अभक्ष्यथी बहुतसे बुद्ध अभक्ष्य नहीं मानते ।
(८४) जैन शास्त्रों में मामा की पुत्रीसे विवाह करना जायज़ लिखा है ॥	बुद्ध कुलमें भी जायज़ था ॥
(८५) अमरसिंह अमरकोशमें महावीर	बौद्धग्रन्थोंमें बुद्ध की माताका नाम

की माता का नाम मायादेवी लिखता है ॥	मायादेवी लिखा है ॥
(८६) अमरकोष में अमरसिंह जैनी ने गौतम और महावीर को एक ही माना है ॥	" " "
(८७) महावीरका विवाह बाल्य अवस्था में हुआ ॥	गौतम का विवाह उसी अवस्था में हुआ ॥
(८८) महावीर पाठशाला में (चन्दनकी तख्ती क़लम संयुक्त) पढ़ने गया ॥	गौतम भी चन्दनकी तख्ती कलम युक्त पाठशालामें गया ॥
(८९) महावीरने उलटा अपने गुरु को ज्ञान बतलाया ॥	गौतम ने भी उलटा अपने गुरु को उपदेश किया ॥
(९०) महावीर आदि तीर्थंकर जिस कुलमें उत्पन्न होवें मूर्त्तिपूजक होता है	बौद्ध ग्रन्थ ललित विस्तरमें लिखा है कि जिस कुलमें, बुद्ध उत्पन्न हों वह मूर्त्तिपूजक होता है ॥

(९१) महावीरके मृतक शरीरकी भस्म आदि पवित्र समझी गई और स्तूप आदि बने (किन्तु कोई स्तूप महावीर का जैनी नहीं दिखा सके)	गौतमबुद्धकी मृतक देहके वस्त्र भस्मी अस्थी पविश्र समझे उनकी पूजा हुई (और अब तक स्तूप और मृतक वस्तु विद्यमान हैं)
(९२) अर्हंत, जिन, प्रत्येक बुद्ध, श्रमण क्षपण, अस्थवीर इत्यादि पदवी जैनसिद्ध की है	अर्हंत, जिन, श्रमण, क्षपण अस्थवीर यह सब पहलेगौतमने अपने साधुवों को पदवी दीं
(९३) महावीर और उसके शिष्य आदि वेश्या नटनी आदिके घर जा २ कर भिक्षा लाते थे (देखो श्वेताम्बर) नंदीसेन महावीर का शिष्य वेश्याके घर	गौतम बुद्ध भी और उसके शिष्य भी वेश्या नटनीके भिक्षा ग्रहणकरलेते थे। अम्बापाली में गौतम ने वेश्याकी भिक्षाली और रहा उग्रसेन नटको संगतमें मिलाया

भिक्षा लेने गया, असाढ़ भूती म-
हावीर का तपस्वी साधू नटनी
के घर गया इत्यादि ।

(९४) बहुत से (श्वेताम्बरी) साधू आ-
पसमें मिलकर सामलात भोजन
एक ही पात्र में करलेते हैं ।

(९५) इस समय जैन साधू जिन २ फलों
को मांसके तुल्य हिंसा मानते
हैं और अपने शिष्योंसे उमर प-
र्यन्त त्याग कराते हैं लेकिन अगर
उनको वही फलादि वस्तु भिक्षा
में मिल जावें तो खालेते हैं उप

बौद्ध साधू भी करलेते हैं ॥

इसी तरह बौद्ध साधू जीवके मारने
में तो हिंसा मानते हैं लेकिन अगर
मांस भी भिक्षामें मिल जावे तो पाप
नहीं समझते ।

में हिंसा नहीं मानते ।	
(९६) श्वेताम्बरी साधू प्याले या पात्र रखते हैं।	बौद्ध साधू भी प्याले या पात्र रखते हैं
(९७) जैन साधू उपवास करते हैं ।	बौद्ध साधू उपवास करते हैं
(९८) जैनी (कल्पित) स्वर्गादिक्रमस मानते हैं और जो बड़े २ स्वर्ग हैं वहांसे लौटकर आने वाला फिर निर्वाणको ही जाता है ऐसा कहते हैं ।	बुद्ध लोग भी ऐसा ही मानते हैं ।

जैन मुक्तियां निर्वाण मिट जाने के ही तुल्य लेकिन बौद्धों से विशेष इन्होंने एक कल्पित सिद्ध शिलाकी कल्पना करली है तो भी न वहां आनन्द है न चैतन्यता है। केवल पाषाणवत पड़े रहते हैं एक जैनी परिडतसे सवाल किया कि तुम्हारी सिद्धि शिला सीमायुक्त है और तुम अनंत जीवों को मुक्ति गये बतलाते हो और अनंत जांयगे तो उस हदवाली शिला पर क्योंकर समावेंगे। उसने उत्तर दिया कि जिस तरह एक मकानके कमरेमें चिराग़ वाल कर गुल करते चले जाव देखो!!! चाहे कितने ही चिराग़ उस महदूद कमरेमें गुल करदो लेकिन कमरेमें जगह बराबर रहेगी इसी तरह हमारी सिद्धशिला है। हास्यप्रद दृष्टान्त–

यही दृष्टान्त गौतम बुद्धके मौजूदा ग्रन्थोंमें है और अर्हतका निर्वाण ऐसा होता है जिस तरह चिराग़ गुल होजावे इत्यादि ॥

प्यारे जैन भ्राताओ! इस उपरोक्त लेखोंसे साबित है कि जैन महावीर और गौतम बुद्ध एक ही मनुष्यका नाम है अर्थात् बौद्धमत और जैनमत एक ही मतहै

इतना अवश्य भेद होगया है कि जिस तरह अब श्वेताम्बरी और दिगम्बरिओंमें भेद होगया है ॥

आप लोगों के ग्रन्थों से भी सिद्ध है कि जैन और बौद्ध एक ही हैं फिर आप लोग क्यों वौद्ध मती कहलाने से चिढ़ते हो। आप अपने मतके धर्म ग्रन्थों को देखिये उन से भी यही सिद्ध होता है कि जैन वौद्ध एकही हैं देखो धर्म परीक्षा अमितगत जैनाचारीकृत। यह दिगम्बर जेनियों का धर्म शास्त्र है इस का अनुवाद दिगम्बर आम्नाय के मुख्य पं० पन्नालाल बाकलीवाल दिगम्बरी ने किया है और जैन हितैषी पुस्तकालय कर्णाटक प्रेस में छपी है (१९०१ ईस्वी)

इस पुस्तक के प्रथम पृष्ठ पर मोटे अक्षरों में लिखा है कि जैन दिगम्बरी समुदाय के लिये है। पाठक जैन महाशयो सुनो २ यह पुस्तक साधारण नहीं है किन्तु यह आप का ही परमहित कारक धर्मशास्त्र है प्यारे जैन भ्राताओ ! अपने धर्म शास्त्र के पृष्ट २५७ पंक्ति २४ को देखो जो में यहां आपके परमधर्म शास्त्र का प्रमाण जैसा है वैसा ही लिखे देता हूं ।

इष्टश्रीवीरनाथस्य तपस्वीमौगलायनः ॥
शिष्यःश्रीपार्श्वनाथस्य विदधेबुद्धदर्शनम् ॥

इस श्लोक का यथार्थ अर्थ यह होता है कि श्री पार्श्वनाथ के तपस्वी चेलेने वीरनाथ अर्थात् महावीर से रुष्ट होकर बुद्धमत चलाया। लेकिन आप के पंडित ने आप की पुस्तक में ऐसा ही अर्थ किया है कि महावीर शिष्य के तपस्वी शिष्य ने मुसलमानों का मत प्रगट किया और पार्श्वनाथके शिष्यने बौद्धमत प्रगट किया। अब प्यारे जैन भ्राताओ! आप के धर्मशास्त्र से भी जैन और बौद्ध एकही साबित होगये क्योंकि मौगलायन को तपस्वी शब्द से माना है और दूसरी बात इस लेख से यह भी पाई जाती है कि पार्श्वनाथ का ही नाम वीरनाथ था अर्थात् महावीर था क्योंकि गुरूसे रुष्ट होकर शिष्यने अपना मत प्रगट किया और आप के धर्मशास्त्र से यह बात भी पाई गई कि पार्श्वनाथ महावीर से २५० साल पहले कोई नहीं हुआ और आप के पंडित ने यह अर्थ किये हैं कि महावीर के शिष्यने मुसलमानों का मत जारी किया तो मुसलमानों को

सो १३०० तेरहसौ वर्षके लगभग हुए इससे पहले मुसलमा-
नों का नाम निशान भी न था फिर आप गौर करिये
कि महावीर का चेला जिस को आप २४३० साल पह-
ले का मानते हो मुसलमानों का मत क्योंकर चला स-
कता है ? दर असल बात यह है कि मौजूदा जैनमत
बुद्ध गौतम या महावीर या पार्श्वनाथ ये सब गौण
नाम एक ही के हैं ॥

यह बहुत काल पश्चात् निकला और इसकी पुष्टि
में बहुत से प्रमाण दे सकते हैं इसमें जैनमत की बहु-
त बड़ी दो शाखा हैं एक श्वेताम्बरी दूसरे दिगम्बरी
इन दोनों में श्वेताम्बर शाखा दिगम्बर से बहुत बड़ी
है (इसका विस्तार के साथ हाल हम आगे लिखेंगे)
क्योंकि श्वेताम्बरी दिगम्बरी की निस्बत चौगुने हैं
और जैन मत के बड़े २ तीर्थ उन के कब्ज़े में हैं लेकिन
श्वेताम्बरी जैनी तो महावीर तीर्थंकर को विवाहित
मानते हैं और एक सन्तान भी मानते हैं किन्तु दिग-
म्बरी आम्नाय कहती है कि उन का विवाह ही नहीं
हुआ इस बात से साफ़ मालूम होता है कि मौजूदा

जैन शास्त्रों का महावीर के समय का कुछ भी हाल नहीं मालूम है और दोनों जैन शाखाओं से पाया जाता है कि दोनों शाखाओं के ग्रन्थ महावीर से अनुमान एक हजार या नौ से वर्ष बाद बने; अब जैन भाइयो ! यह कोई बार विचार कीजियेगा यदि कोई पुरुष आज से ५०० वर्ष पूर्व का हाल लिखने लगे तो क्या लिख सकता है। हम आगे चलकर जैनग्रन्थों की पट्टावली भी लिखेंगे जिसको दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों मानते हैं ॥

दिगम्बर पट्टावली देखो रत्नकरण्ड श्रावकाचार पृष्ठ २१४ ॥

ऐसे काल के निमित्ततैं बुद्धि वीर्यादिक की मन्दता होते श्रीकुन्द कुन्दादि मुनि निर्ग्रन्थ वीतराग अंगक वस्तुन के ज्ञानी होते भये, तथा उन के स्वामी होते भये इत्यादि तिनमें श्री कुन्द २ स्वामी सीसार प्रवचन सार पंचास्तिकाय, नियमसार, अष्टपाहुड़, कुआदि लेकर अनेक ग्रन्थ रचत भये जो आज काल प्रत्यक्ष बांचने पढ़ने में आते हैं ॥

दिगम्बर पट्टावली महावीर से तीसरी पुश्त से शुरू

होती है अर्थात् महावीर गौतमके पश्चात् सुधर्मा स्वामीकी गद्दी आधीशय आचारी माना ॥

(३) सुधर्मा स्वामी, ४ जम्बू स्वामी ५ विष्णु आचारी, ६ नन्दीमित्र ७ अपराजित ८ गोवर्धन ९ भद्रबाहु १० विशाखाचार्य ११ प्रोष्टलाचार्य १२ क्षत्रिये १३ जयसेन १४ नागसेन १५ सिद्धार्थ १६ धृतषेण १७ विजय १८ बुद्धिमान १९ गंगदेव २० धर्मसेन २१ नक्षत्र २२ जयपाल २३ पाण्डुनाम २४ ध्रुवसेन २५ कंसाचार्य २६ सुभद्र २७ यशोभद्र २८ भद्रबाहु २९ महीयश, ३० लोहाचार्य ३१ कुन्द कुन्द आचार्य ३२ उमास्वामी ॥

श्वेताम्बरी पट्टावली ॥

[३] सुधर्मा स्वामी [४] जम्बू स्वामी [५] श्री प्रभव स्वामी [६] स्वयम्भव स्वामी [७] यशोभद्र स्वामी [८] भद्रबाहु स्वामी [९] स्थूलभद्रबाहु [१०] महावीर सुहस्ती [११] बहुवलिस्सह [१२] स्वत सूर्प [१३] श्यामाचार्य [१४] जीतधर [१५] आर्यसमुद्र [१६] आर्यमन्गु [१७] आर्यनादिलखल [१८] आर्यनागहास्ते [१९] रेवती नक्षत्र [२०] सिंहाचार्य [२१] स्कन्दलाचार्य (स्कन्दा स्वामी)

अब जैन भ्राताओं तथा सभ्य जैन समुदायको न्याय

पूर्वक विचार करना चाहिये कि महावीर स्वामी की ३१ वीं गद्दीसे मौजूद दिगम्बर ग्रन्थों की रचना हुई इससे पेश्तर का कोई ग्रन्थ नहीं है और श्वेताम्बर सूत्रोंकी रचना जिनको श्वेताम्बरी माननीय सूत्र मानते हैं स्कन्दलाचार्य या स्कन्दास्वामी ने की है जो महावीर से २१ पीढ़ी बाद हुआ है ॥

इस के समय को श्वेताम्बर महावीर से १००० वर्ष पश्चात् बतलाते हैं बौद्ध मत के ग्रन्थों में स्कंदा स्वामी का हाल है। चीनी पथिक अपनी यात्रा में इस का हाल लिखता है जो अब से पूर्व १३०० वर्ष हमारे देश में आया था-उसके समय से पूर्व स्कंदा स्वामी मरचुका था। बौद्ध मत वाले कहते हैं यह गौतम बुद्ध से १००० वर्ष पश्चात् मरा इसका मुख्य मठ पेशावरमें था (ह्यून ष्यांग) चीनी पथिक लिखता है कि स्कंदा स्वामी का मठ बिलकुल उजड़ चुका है इस ने बौद्ध मत में बहुत गड़ बड़ डाली और अपना नया मत चलाया (जैन) और बहुत से कल्पित बुद्ध माने और कल्पित शास्त्र रचे और मूर्त्तिपूजा को रौनक़ दी ईसा के लगभग कुछ काल पूर्व नागार्जुन तांत्रिक हुआ जिस को

बौद्ध वाले बौद्ध के तुल्य और जैनी तीर्थंकर के स-
मान मानते हैं-और शिवमतावलम्बी शिवका अवतार
मानते हैं मालूम पड़ता है कि नागार्जुनके समय तक जैन
बौद्धों में कुछ विशेष भेद न था और यह दोनों ही
तांत्रिक हुए हैं । शिवमतावलम्बियों ने स्कंदला-
चार्य्य को स्कंद के नाम से माना है और इसको शिव
के पुत्र की उपाधी दी है इस कारण से इन तीनों
मतों की एकता ही मिलती है । और एक सबूत यह
भी जैन बौद्ध की एकता का है कि श्वेताम्बर जैन आ-
म्नाय और बौद्ध की प्रतिमा में फ़र्क नहीं है देखो जैन
श्वेताम्बर कान्फ्रेन्स हैरल्ड मासिक पत्र नं० १ जौलाई
७ सन् १९०५ ई० सम्पादक गुलाब चंद ढिट्ठा एम० ए०
पृष्ठ २३६, २३७ (हमारे सुप्रसिद्ध श्री हरी भद्र सूरी जी
के दो शिष्य हंस और परमहंस ने व्याकरण न्याय
अलङ्कार काव्य कोष जैन शास्त्रों का पूरा अभ्यास क-
रके बौद्धधर्म का न्याय युक्त खंडन करने की अभिला-
षा से बौद्ध धर्म के ग्रन्थोंमेंअभ्यास करने के लिये गुरू
महाराज की आज्ञा के अनुसार दोनों शिष्य भेषान्तर
करके (रूप बदल कर) बौद्ध धर्म के आचार्य्यों से उन

के धर्म का ज्ञान प्राप्त किया और ऐसी चैतन्यता और चातुरता से रहे कि बौद्धों को उन के जैनी होने का हाल मालूम नहीं होने दिया कालान्तर में कई कारणों से बौद्ध धर्म के आचार्यों को उन पर शंका उत्पन्न हुई कि यह जैनी न हों इस लिये उन की परीक्षा करने के लिये धर्मशाला की नाली के पगथिये पर जैन श्वेताम्बर की प्रतिमा का चिन्ह लिखा और विद्यार्थी लो उस चित्र को उल्लंघन करके चले गये लेकिन उन दोनों ने उस चित्र पर बुद्ध मुनि की तीन रेखा करके फिर उसको उल्लंघन किया और वहां से तत्काल अपने जैनी गुरुकी ओर चले। लेकिन बौद्धों ने उन का पीछा किया और हंसको तो रास्ते ही में मारडाला किन्तु परम हंस बचकर चित्तौर में आया अपने गुरू से मिला और अपनी पुस्तकें गुरू को दे कर छुपकर एक मकान में सो गया। बौद्धों ने वहां पर भी उस को मारडाला, जब यह बात श्रीहरीभद्र सूरी जी को (जो जैन मत के आचार्य्य थे) मालूम हुई तो उन्हों ने आकर एक शक्ति से चूल्हों पर तेल के कड़ाह गर्म कराकर बौद्धों को खेंच २ कर धाएंदम होमना शुरू

किया (अर्थात् बौद्धों के बड़े समुदाय को लाल तेल डालकर भस्म करने लगे) जब यह ख़बर उनके गुरूको लगी तो उन्हों ने दो शिष्य भेजकर उनका क्रोध शान्त किया इस उपरोक्त लेख से हमारा तात्पर्य यह है कि जैन प्रतिमा और बौद्ध प्रतिमा एक हैं जैन समुदाय ने बौद्धमत से पृथक् होकर केवल तीन रेखा हटाकर अपनी प्रतिमा बनाली है इसके अतिरिक्त एक पुस्तक जैन धर्म प्रचारक सभा भाव नगर सं० १९४८ अ-हम्दाबाद् यूनीयन प्रिन्टिंग प्रेसमें छपवाई उसके पृष्ठ १२० पर यह प्रश्न नं० ८५ आत्माराम जैनी साधू से अ-मरसिंह जैनी साधू ने किया है, प्रतिमा भी तीन प्र-कार की हैं श्वेताम्बरी, दिगम्बरी और बौद्ध मत की इसमें सत्य कौन सी इत्यादि लेख भी यही प्रगट कर रहा है कि जैन बौद्ध दो नहीं आत्माराम अपने अ-ज्ञान तिमिर पृष्ठ ३५ खंड २ पर लिखते हैं कि इतिहास तिमिर नाशक का लिखने वाला लिखता है कि जैन और बौद्ध एक मत है सो उन की बड़ी भूल है फिर आगे चलकर जब श्री महावीर विद्यमान थे तब बौद्ध मत का शाक्यसिंह गौतम नाम का कोई गुरू नहीं था

केवल इतिहास लिखने वालोंने महावीर भगवंत को ही शाक्यसिंह गौतम करके लिखा है (यह अक्षर जिनपर हमने रेखा की है ध्यान से पढ़ने के लायक हैं) वास्तव में सत्यता लुप नहीं सकती और आत्माराम जैनी को अंत में यही लिखना पड़ा कि गौतम बुद्ध तो जो हुआ लेकिन महावीर का ही नाम गौतम बुद्ध रखो चाहे गौतम बुद्ध का नाम महावीर रखो लेकिन अमरसिंह अमर कोष का कर्त्ता जिसकी तारीफ आत्माराम जैनी अपने ग्रन्थोंमें लिखते हुए बड़े अभिमान से कहता है कि जैन समुदायमें अमरसिंह अमरकोषके कर्त्ता जैसे पंडित उत्पन्न हो चुके हैं सो अमरसिंह तो इन तारीख लिखने वालों से बहुत पहले हो चुका है वह भी अमर कोष में लिखता है ॥

सर्वज्ञःसुगतोबुद्धोधर्म्मराजस्तथागतः ।
समन्तभद्रोभगवान् मारजिल्लोकजिज्जिनः ॥१॥
षडभिज्ञोदशवलोऽद्वयवादीविनायकः ।
मुनीन्द्रःश्रीघनःशास्तामुनिःशाक्यमुनिस्तुयः२

शाक्यसिंहःसर्वार्थःसिद्धःशौद्धोदनिश्चसः ।
गौतमश्चार्कबन्धुश्चमायादेवीसुतश्चसः॥३॥

अमरकोष १ वर्ग १ श्लोक १२ से १५ तक ।

बात यह है कि विद्वानों को चाहे किसी भी मत में उत्पन्न हों पक्षपात नहीं होता किन्तु अविद्वान अपने हठ को नहीं त्यागते चाहे वह एम. ए. या शास्त्री क्यों न हो जावें ।

इस बात को सिद्ध कर चुके हैं कि बौद्ध मत से पृथक् जैन मत का नाम भी नहीं मिलता तौ भी जैन समुदाय अपनी हठ धर्मी नहीं छोड़ता वो मुर्गी की १ टांग वाली नकल इस पर चरितार्थ है चाहिये तो यह कि हमारे इस लेख को पढ़कर जैन मतावलम्बी जो सत्य है उसको ग्रहण करें और असत्य को तिलाञ्जली देदें ।

मैं ने देखा है कि जैनी अप्रमाणिक विवाद किया करते हैं लेकिन यह नई बात नहीं है अपने आचार्यों के अनुकरणीय है जिस तरह एक दिगम्बरीय पक्षपाती ने मोक्षमार्गप्रकाश नाम मात्र पुस्तक रखकर वेद

और मनुके कल्पित प्रमाण जैनमतके सनातन ठहराने के लिये लिखमारे हैं हम जैन मतावलम्बियोंसे बल पूर्वक कहते हैं कि वह अपने आचार्यों व पण्डितोंके कल्पित प्रमाणोंको साबित कर उनके शिरसे कलंक हटावें और मनु और वेदोंसे साबित करें यदि पाठ भेद होगा और अर्थभेद न हो तौ भी हम मानने को तैयार हैं यदि वेद का प्रमाण उन्होंने दिया है और उस जगह वह प्रमाण नहीं है तो वह चारों वेदों में कहीं भी दिखादें तो वह कलंकित न रहेंगे यदि इतना भी न कर सकेंगे तो ऐसों को पण्डित मानना और उनके ग्रन्थोंको मोक्षमार्ग प्रकाश नाम रखना दिगम्बरों को मोक्ष का नमूना है ॥

मोक्षमार्ग पृष्ठ २१६ (ऋग्वेदके नामसे मन्त्र)

ओ३म्—त्रैलोक्यप्रतिष्ठितानां चतुर्विंशतितीर्थंकराणाम् । ऋषभादिवर्द्धमानान्तानां सिद्धानां शरणं प्रपद्ये ॥

क्या यह ऋग्वेदमेंसे या चारों वेदोंमें से कोई जैनी या नग्न आम्नाई दिखा सकता है ? । पाठक वृन्द !

इस समुदाय के नामी पण्डितों और आचार्यों की तो यह करतूति है कि अपने मत को प्राचीन ठहराने के लिये मिथ्या ग्रन्थ रच २ कर उन का नाम मोक्षमार्ग-प्रकाश नाम रक्खा है। हमारी सम्मति में तो इस के विरुद्ध नाम होता तो ठीक था फिर यजुर्वेद के नाम से प्रमाण ॥

ओ३म्—पवित्रनग्नमुपवि (ई) प्रसामहे येषांम्ना (नग्न) जातिर्येषां वीरा॥

(फिर यजुर्वेद)

ओ३म्=नमोऽर्हन्तो ऋषभो ॥

पाठक वृन्द ! यह वेद मन्त्र जैनमत विशेष कर नग्न आम्नायकी प्राचीनतामें नग्न आम्नाई ने उपस्थापित किये हैं।

विशेष हाल दूसरे भाग में पढ़िये।

निवेदक—रामदयालु शर्मा सर्वेयर-इटावा।

इति ॥

निवेदन ॥

हमने इस पुस्तकमें निष्पक्षतासे बौद्धकी एकताको दर्शाया है इससे सिद्ध है कि जैन मत बौद्ध मत ही से चला है अनादि नहीं है क्योंकि कोई भी जैनी २४३६ सालके पहलेके इतिहासोंमें जैनियोंके होने का प्रमाण नहीं देसकता है। इस मतको २४३६ सालसे गौतम बुद्ध (महावीर) ने चलाया इन महावीरसे पहले २३ तीर्थंकरों का कोई भी जैनी जन्म सम्वत् नहीं व-तला सकता है इसीलिये इन्होंने अपने मतको प्राचीन ठहराने के लिये कल्पित ग्रन्थ रचे जिनको देखकर आप लोग हं-सेगे इन ग्रन्थोंका हाल हम नं० २ ट्रैक्टमें लिखेंगे हम आशा करते हैं कि जैन भ्राता निष्पक्ष भावसे विचारें यदि कुछ भ्रम हो तो हम समझने वा समझानेको उद्यत हैं॥

ओ३म्।

॥ जैन धर्म्म को ॥

असम्भव बातें तथा पं० दुर्गादत्त

शास्त्री का खुला चैलेञ्ज।

जिस को

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती जी

ने

ऋषिदयानन्द वेद प्रचारक मिशनके हितार्थ

रचकर

लाला बंशीधर दूदानी के निज

बम्बई

मैशीन प्रेस सेवका बाजार आगरा में

छपाकर प्रकाशित किया।

प्रथमबार५,००० सन १९१२ की०)।

ओ३म्

शास्त्रार्थ अजमेर में।

जो जैनियों ने छापा है उसकी समीक्षा।

अजमेर का शास्त्रार्थ एक ऐसा विचित्र शास्त्रार्थ था। जो स्वभावतः आर्य समाज की प्रबलता का सूचक है। जैनियों ने इस शास्त्रार्थ को टालने के वास्ते बहुतही यत्न किया परन्तु आर्यसमाजजो सत के खोजमें लगा हुआ है उसने जैनियों के सारे बहानों को किनारे रखकर शास्त्रार्थ करके जैनियों की पोल खोलदी स्थान जैनियों का सभापति। जैनियों का प्रबन्ध। जैनियों का ऐसी दशा में शास्त्रार्थ का होना जतलाता है कि आर्यलोग अपने सिद्धान्त की सच्चाई पर विश्वास रखते हैं यादिगज केसरी शास्त्रार्थ में ऐसे घबराये कि अपने सिद्धान्त के विरुद्ध कहने लगे कि जीव ईश्वर बनता है और ईश्वर जीव बनता है यह जैन सिद्धान्त के विरुद्ध था जब उससे पूछा कि ईश्वर कैसे जीव बनता है तो उन्हीं ने कहा कि इसके लिये बहुत समय चाहिये प्रधानने उनको रोक दिया कि यह

दिपयान्तर है अतपव जैनियों ने उनकोविजिमज केसरी की उपाधी है।एक जैनपंके लिये केसरी की उपाधी है आश्च र्य जनक है क्योंकि केसरी कहवें सिंहको जो हिंसक पशु है और जैनीय हिंसाके विरोधी मनुष्य हैं मैंने इस शास्त्रा र्थ में कोई नोट नहीं किये मैं चाहता था कि दोनों ओर का शास्त्रार्थ लिखा जावे जिस से किसी को झूठ छिपानेको न मिले परन्तु जैनी लोगों ने लेखको स्वीकार न किया मुझे पता लगा कि यह इसी बहानेसे शास्त्रार्थको टालना चाहतेहैं मुझे निश्चै थाकि अनीश्वर वाद जैनमत वालोंसे परीश्रमहैं यदिशास्त्रार्थहो तो कुछ न कुछ पोल खुलही जा यगी जो मेरा अनुमान सत्यही निकला जैनियों की एक ही दिन में ऐसी दशा हुई कि दूसरे दिन जबकई भद्र पुरषों को साथले कुंवर दिग्विजयसिंहजी मुझे वादिगज केसरीके व्याख्यानका निमन्त्रण देनेआये। तोमैंने शास्त्रार्थ को आगे चलानेके लिये उनसे कहातो उन्होंने एकतारीख के लिये कहाकि हमें और कार्य करने हैं २-३ दिनके लिये जब कहा तो कहाकि आपतो सन्यासीहैं और हम गृहस्त आश्रम के कार्य करनेहैं जब मुझे निश्चै होगया कि अब शास्त्रार्थ नहीं होगा तो मैं एक तारीख तक पंडित दुर्गादत्त का व्याख्यान हो रहाथा देहली को चल दिया.

शिवोदत्त तथा शम्भूदत्त तथा दो जैन उपदेशकों को आर्य समाजमें जैनियोंकी हार प्रत्यक्ष होगई उसमें-कि शास्त्रार्थ को-छपाहुआ देखकर मुझे निश्चय होगया कि जैनपंडित शास्त्री परिभापाओंसे सरवथा अनभिज्ञ हैं । मैंने चार प्रकार के गुण वतलाये ! १ स्वभाविक, नैमितक, औपाधिक, पांकज, आप औपाधिक को उतपादिक लिखतेहैं जो किसी शास्त्र की परिभापा नहीं जंव मेरे शब्दोंको ही जैन विद्वान नहीं समझे तो उनके; भाव कैसे समझे होंगे देखो छपा शास्त्रार्थ पूरवरंग प्रष्ठ-८३ सफा:३६

॥ पण्डित दुरगादत्त जी का पत्र ॥

मेरा जैनी बनने का असली उद्देश्य क्या था

वर्ष के कई मासो तक यह प्रसिद्ध हो चुका है कि मैं जैनोपदेशक हूँ मुझको ऐसी प्रसिद्ध की बिल्कुल आवश्यकता नहींथी और नही मैं चाहता था कि जैन धर्म के प्रचार में अपना अमूल्य समय नष्टकरूं किन्तु मेरा विचार जैन धर्म के वास्तविक तत्त्वों के देखने का था जिनका गुप्त रीति से जानकर शुभ परिणाम निकालने की प्रवल इच्छा थी, परन्तु आप जानते हैं कि किसी छोटे आकार वाले पात्र में विशेप सामग्री आ जावे तो

उस को अपनी सीमा का (व्यतिक्रम) उल्लंघन करना पड़ेगा और अपने धैर्य को जलाञ्जलि देनी पड़ेगी ठीक इसी प्रकार जैन धर्म में हमारे आने से एक तरह का (आल्हाद) आनन्द पैदा होगया।

और मेरे प्यारे भाई फूले न समाते हुये जामेसे बाहर होगये (जो कि लक्षण धैर्य से हीन और तुच्छता का है) जिसको अमल में लाना हमारे जैनी भाइयों ने उचित समझा और मुझको उत्सवों पर निमंत्रित करना आरम्भ कर दिया जिनका परिणाम गत वर्षके जौलाई आदि मासों में निकल चुका है, जिसको मैं दूसरी वार यहां लिख करके पबलिक के समय को नष्ट करना अभीष्ट नहीं समझता अस्तु। इस लेख से जैनी भाई मुझे धोके बाज़, धर्मच्युत, पामर अवश्य कहेंगे, किन्तु अकलंक देव जैसे भट्ट को प्रमाणिक पुरुष मानेंगे जिन्होंने बौद्ध धर्म के नाशार्थ और जैन धर्म की रक्षार्थ बौद्ध पाठशालाओं से बौद्ध सिद्धान्तों को जानकर पुनः उन्हीं का खंडन करने के लिये धर्म में नीति से काम लिया था, जिन के ग्रन्थ आज भी जैन समुदाय प्रमाणिक मानता है, अतः इस दृष्टान्त से मैं भी निर्दोष हूं मेरे ऊपर धोखे बाजी का या

मामरता का कोई दोष नहीं लगा सक्के, गत वर्ष में कल-कत्ता के प्रसिद्ध और मान्य पुरुषों ने जैन धर्म के तत्त्वों की व्याख्या सुनकर सहस्रानन से उनकी प्रशंसा की थी कि जैन न्याय बड़ा ही गूढ है और उसको मर्मज्ञ ही जान सक्के हैं, अतः पाठको? मैं भी इस गूढ फिलास्फी की खोजमें पूर्ण उद्योग कर रहा था और चाहता था कि मैं भी मर्मज्ञ बन जाऊं, परमात्मा की दया से मेरे पुरुषार्थ का फल मुझे अनुभव होने लगा और मैंने मुरैना आदि नगरों में रहकर जैन तत्त्व के प्रसिद्ध विद्वानों से न्याय में, १ परीक्षामुख, २ प्रमेयकमल मार्तण्ड और स्याद्वाद मंजरी, देखी दूसरे सिद्धान्त में, १ तत्वार्थसार, २ पुरु-षार्थ सिद्ध्योपाय, ३ राजवार्तिकादि देखे, पढकर मुझे "उभयपक्ष,, अर्थात षट्दर्शन और जैन न्याय का परस्पर मिलान करने का अवसर मिला, दोनों तरफ के मिलान से और निष्पक्ष भाव से मैंने परिणाम निकाला कि जैना चार्यों ने भूमण्डल में कीर्तिस्थम्भ गाडने के लिये और निज प्रतिष्ठा बढाने के लिये वेदों से विमुख होकर ईश्वर के अस्तित्व पर अस्तव्यस्त व्यर्थ कटाक्ष करते हुए द्वेष दृष्टि को लक्ष्य में रखकर पक्षपात से काम लिया है और अपने तत्त्वों का तत्त्वाभास से वर्णन करते हुए "महनीयं

पश्यतो हरता,,”इस वाक्य के अनुकूल संसार में एक व्यभिचारी अर्थात अनेकान्तवाद का प्रचार किया जिस अनेकान्त को हेत्वाभास से भी नैय्यायिक लोग पुकारते हैं, इस व्यभिचारी हेतु के साथ अनेकान्तवाद रूपी जैन धर्म की उपमा मुझे इस लिये देनी पड़ी है कि वामृत चंद्र सूरी कहते हैं “लिंग प्रसिद्ध सामान्यमनुमानोपमानयो:,, सारे कथन का सारांश यह है कि मैंने जैन धर्म को अपने अन्त:करण से ग्रहण नहीं किया था, किन्तु मेरा अभिप्राय तात्विक ग्रन्थों को देखकर वैदिक धर्म की रक्षा या सेवा करने का था इसलिये जो मेरी प्रसिद्धि नोटिसों और पत्रों द्वारा “कि मैं जैनी हूं,, इस विषय में होचुका है उसके निवार्ण करने के लिये सर्व साधारण और जैनी भाइयों को सूचना दी जाती है कि वह मुझे जैनी न समझे किन्तु वैदिक धर्मका तुच्छ सेवक समझें।

जो नोटिस मेरे विषयमें निकाले गये थे उन सब का तात्पर्य मैं अपने निज व्याख्यान में बताऊंगा, परन्तु अन्तिम नोटिस “ एक सन्यासी के विलापसे मेरी भूल” शीर्षक निकाला गयाथा वह सब करतूत जैनतत्व प्रकाशनी सभा की है न कि मेरी, केवल मैं हस्ताक्षर करने का दोषीहूं जिसकी पुष्टि के लिये मेरे पास जैन तत्व

प्रकाशिनी सभा के सैकडों पत्र मौजूद हैं जिनको यथा अवसर पर काममें लाया जावेगा । मेरा जैन विद्वानों से खुला चैलेञ्ज है कि वे मेरे सामने अपने ग्रन्थों को सत्य सिद्ध करने की चेष्टा करें क्योंकि मैं कूप मण्डूक नहीं हूं, बल्कि मैंने दोनों तरफ के सिद्धान्त अच्छी तरह देखे हैं, आज कल जो लिखित शास्त्रार्थ जैनसमाज और आर्यसमाज का मुद्रित होकर प्रकाशित होरहा है उस को मैं अपने अन्तःकरण से सत्य नहीं मानता हूं क्योंकि जिस समय मैं मुरैना में था उस समय इस शास्त्रार्थ के निकालने में जैन विद्वानों की तरफ से छल किया गया था जिस छल का वर्णन मैं अपने व्याख्यान या दूसरे लेख में प्रकाशित करूंगा, इस लिये कृपया सर्व साधारण इसके ऊपर अन्ध विश्वास न कर बैठें किन्तु विचार पूर्वक काम लें, यही मनुष्यत्व है ॥

निवेदक वैदिकधर्म का तुच्छ सेवक—
दुर्गादत्त शर्म्मा,

* कल्पित ईश्वर *

जैनियों का ईश्वर जगत कर्त्ता कैसे हो सकता है

सज्जन पुरुषों संसार में दो प्रकार के पदार्थ प्रतीत होते हैं एक स्वाभाविक दूसरे कृत्रिम जैसे एक तो सोना है दूसरे मुलम्मा चांदी और जर्मन की बनावटी चांदी गुण कर्म स्वभाव वाला सच्चा राजा और पंजाबका नाम धारी नाई राजा यदि कोई सोने का काम मुलम्मे से लेना चाहे तो कैसे होसकता है जैसे राजा दुष्टों से श्रेष्टों की रक्षा करता यह कार्य नाई राजा कैसे चला सकता है जैन लोगों का कल्पित और बना हुआ ईश्वर जो स्वयम् जगत में सम्मलित है वह कैसे जगत बना सकता है जैन लोगों का एक देशी ईश्वर कर्मों का फल कैसे दे सकता है जैन लोगों ने जो ईश्वर के सम्बन्ध में जो परस्पर विरुद्ध कल्पना की है जिस से पता लगता है कि जैनाचार्य ईश्वर के स्वरूप से सदा अन भिज्ञ रहे अब भी अनाभिज्ञ हैं॥

श्री जैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्य्यालय बम्बईके एक छोटे पुस्तक से ईश्वर सम्बन्धी जैन कल्पना का नमूना पेश करके इस पर समीक्षा करते हैं

न द्वेषी हो न रागी हो, सदा नंद बीतरागी हो।
वह सब विषयोंका त्यागी हो,जो ईश्वर हो तो ऐसाहो॥

(समीक्षा) जैनियों का ईश्वर ऐसा नहीं परन्तु वह ईश्वर को ऐसा बनाना चाहते हैं यदि जैनियों को ईश्वर का लक्षण विदित होता तो ऐसा न लिखते क्यों कि ईश्वर का लक्षण योग शास्त्र ने यह किया है कि क्लेश कर्म विपा काश्यै रपरामृष्टः पुरुष विशेषःईश्वरः

(भाषा) जो किसी कालमें क्लेश और कर्मसे लिप्त न हुआ हो ऐसे पुरुष विशेष को ईश्वर कहते हैं, जब पांचों क्लेशों में राग द्वेष वर्तमान हैं जिन से ईश्वर का काम सम्बन्ध नहीं हो तो द्वेष उस शय से होता है जिसे कभी दुःख मिला हो जैसा कि लिखा है॥

दुखा नुशयि द्वेषः योगद

और राग का लक्षण यह किया है॥

सुखा नुशयि रागः

जब ईश्वर को सुख दुःख होते ही नहीं क्यों कि वह मन के धर्म हैं ईश्वर का मन नहीं क्योंकि मन और इन्द्रियों की आवश्यकता एक देशी जीव को होती ईश्वर सर्व व्यापक है उसका मन नहीं राग द्वेष और सुख दुःख मनके धर्म हैं जहां धर्मी नहीं वहां धर्म कहां सदा नन्द

और वीतरागी दो विरोधी गुणहैं क्योंकि सदानंद उसे कहतेहैं जिसका आनंद तीन कालमें बना रहे वीत रागण उसे कहतेहैं जिसको राग होकर नाश होगया हो जिसका रागके नाश पर आया है वह आनन्दसत्र नहीं कहला सक्ता क्यों राग के नाश के पूर्व नहीं था स्थूल वस्तु के गुण सूक्ष्म में नहीं जा सक्ते यह नियम है ईश्वर विषयों से सूक्ष्म है फिर ईश्वर में विषयका संग हो नहीं सक्ता त्याग प्राप्त का होता है जब ईश्वर में विषय हो नहीं सक्ता तो त्यागी कैसा।

(जै) नखुद घट घट में जाताहो मगर घट घट का ज्ञाता हो।

(समीक्षा) किस प्रमाण से घट घटका ज्ञाताहो यदि कहो प्रत्यक्ष प्रमाण से तो एक देशी सबको प्रत्यक्ष कर नहीं सकता यदि कहो अनुमानसे तो विना प्रत्यक्ष के व्याप्ति नहीं और विना व्याप्ति के अनुमान हो नहीं सक्ता यदिकहो शब्द प्रमाण से तो इश्वर वढकर आप्त पुरुष कौनहै जिसे ईश्वर को ज्ञानहै जैन लाग इश्वर जिनवर आदिको एकदेशी और सर्वज्ञ मानतेहैं जो असम्भव है जो प्रमाण से सिद्ध नहीं हो सक्ता यदि किसी जैन विद्वान में साहस है तो अपने कल्पित जिनेन्द्र और

ईश्वर की सत्ता प्रमाणों से सिद्ध करे इसमें न हेतु है न उदा हरण।

(जै) वहसत् उपदेश दाता हो जो ईश्वर होतो ऐसाहो केवल दूसरों को धोखे में डालनेके वास्ते है जिससे कोई इनको अनीश्वर वादिन कहे जैन लोग न तो ईश्वर को मानतेहैं न जानतेहैं इसलिये असम्भव कल्पना करके कहते हैं कि हमारा यह ईश्वर है कि हमारे भारत वर्ष के समस्त जैन विद्वानों को खुला चैलेंजहै कि वह कल्पित अनस्था दोप ग्रस्त ईश्वर को प्रमाणों से सच्चिदानन्द सिद्ध करें जैसा कि उन्होंने लिखा है वरुन अपने को ईश्वर वादि कहकर धोखा देना छोडदें।

ओ३म् शम

जैनियों जबकोई स्थिर ईश्वर हैही नहीं सब ईश्वर अनवस्था दोप ग्रस्त और बने हुये हैं तो वह जगकर्ता कैसे हो सक्तेहैं जगत कर्ता नित्य ईश्वर दूसरा है और जैनियों के कल्पित ईश्वर हैं दूसरे जैनि जो ईश्वर को जगत कर्ता नहीं मानते वह अपने कल्पित ईश्वरों को जो मुक्त जीवहै जगत कर्ता नहीं मानते मुक्त जीव को जगत कर्ता कोई मतवाला नहीं मानता।

जैनियों की असम्भव बातें ।

(१) जैनियों का ईश्वर एक देशी और सर्वज्ञ है कोई ऐसा उदाहरण हो जहां एक देशीके गुण विभु हो।

(२) जैनियोंके जिनेन्द्र बनेहैं नाश नहीं होंगे जैनियोंके ईश्वर आदि हैं अंत नहीं संसार में एक किनारे वाला या एक सीमा वाला वस्तु दिखावे।

(३) जैनियोंका कर्म बन्ध अनादिहै परन्तु उसका अन्त है ऐसा कोई उदाहरण जहां अनादि सान्त हो दिखायें।

(४) जैनियों के सब मुक्त जीव समान हैं परन्तु उन में जिनेन्द्र और जिनवरभी हैं मुक्त जीवोंमें बाहर की उपाधि तो हो नहीं सकती तो उनका भेदक क्या है और किस प्रमाण से सिद्धहै।

(५) मोक्ष शिलासे १२ योजन ऊपर तक लोका काश है तो मुक्त जीव मोक्ष शिलापर कैसे स्थित होते हैं और धर्म द्रव्यकी सहायता से ऊपर क्यों नहीं जाते।

—:*:—

* सूची *

* दयानन्द वेद प्रचारक मिशन अजमेर *

साम संहिता स्वर सहित मोटा टाइप	१।)
सुश्रुत मूल	१)
न्याय सूत्र विश्वनाथ कृत वृत्ति	१)
भर्तृ शतक भाषा टीका सहित	॥।)
सांख्य सूत्र वृत्ति	॥=)
सांख्य दर्शन भाषा टीका सहित स्वामी दर्शनानंद कृत	॥)
वैराग्य शतक भाषा टीका	=)॥
तत्व वेत्त रिषिकी कथा	≡)
शास्त्रार्थ आगरा	=)
महाशंका वलिका उत्तर	)॥
जैन भ्रान्ति निवारण आर्यों के तत्व ज्ञानका उत्तर	)॥।
जैनि पंडितों के उत्तरों की समीक्षा	)।
जैनमत समीक्षा	)।
जैनियों का जीव	)।
जैनियों की मुक्ति	)॥

ईश्वर जगत् कर्ता है)।

जैनियों का कल्पित और अनवस्था दोष युक्त ईश्वर)।

सृष्टि कैसे रच सक्ता है)।

सृष्टि प्रवाह से अनादि है)।

ईसाई मत परीक्षा)।

बाल शिक्षा)॥

धर्म शिक्षा)।

उन्नीस बीस दीवली छन)।

संध्या भाषा टीका सहित)।॥

ईसाई विद्वानोंके प्रश्न ॥)

ओ३म्

भागवतपरीक्षा

जिसको

पं० छुट्टन लाल स्वामी माननीय पुरुष

परीक्षितगढ़ निवासी ने रचा

और

बन्शीलाल आर्य्यसभासद आर्य्यसमाज मुवाना मे०

ने

कर्जन प्रिंटिंग प्रेस मेरठ में छपवा कर

प्रकाशित किया

२००० आर्य्य संवत् १९७२९४९०१४ मूल्य)॥

PRINTED BY B. DALIP SINGH AT THE CURZON PRINTING PRESS, MEE

ओ३म्

श्रीमद्भागवतपरीक्षा

शुकदेवस्वर्गारोहण

विदित हो कि आज कल श्रीमद्भागवत को सभी [पौरा]णिक महापुराण कह कर महामान्य समझते हैं और [यह] भी प्रसिद्ध है कि [विद्यावतां भागवते परीक्षा] [विद्व]ानों की भागवत में परीक्षा है। अधकचरे विद्वान् भागवत की माया में आ ही जाते हैं इस में [सन्]देह भी नहीं है। पढ़े लिखे बड़े २ काशी के पंडित [इ]सी में फसे पड़े हैं, फिर अन्योंकी तो क्या गतिहै [जो] निकलें, बस यही परीक्षा है। पौराणिक मनुष्य [ऐसा] कथन करते हैं कि भागवत सबसे प्रथम श्रीशुकदेव ने राजा परीक्षित को गंगा तट पर जाकर सुनाई थी [औ]र सात दिन जब सुना चुके तब राजा की मृत्यु हुई [औ]र स्वर्ग को गये॥

यही कथा भागवत के प्रथमस्कन्ध में भी पाई जाती परन्तु महाभारत में इस के विरुद्ध लिखा है। शान्ति

पूर्वान्तर्गत आस्तीकपर्व में इन का वर्णन है । अध्याय ४० में कृश नामक बालक ने शमीक के पुत्र शृंगीको यह समाचार सुनाया कि-

(तेजस्विनस्तव पिता तथैव च तपस्विनः । शवं स्कन्धे निवहति मा शृङ्गिन् गर्वितो भव ३० व्याहरत्स्वृषिपुत्रेषु मा स्म किंचिद्वचो वद ॥ अस्मद्विधेषु सिद्धेषु ब्रह्मवित्सु तपस्विषु ३१ क्वतत्पुरुषमानित्वं क्वते वाचस्तथाविधाः॥

संक्षेप से अर्थ तपस्वी तेरे पिता के गले [कांधे] पर मुर्दे सर्प का धारण किया है, यहां गर्वकी बात मत करो हम ऋषिपुत्रों में बात करते हुओं से कुछ मत बोलो तेरी वह बात और पुरुषमानीपन कहां गया ? ऐसे वचन सुनते ही उसे क्रोध आया और ४१ वें अध्याय में उसने शाप दिया कि जिसने मेरे पिताके गले में सर्प डाला है उसे सातवें दिन तक्षक सर्प खा जायगा । और पिता के पास जाकर कहा कि आप के गले में जिसने सर्प गेरा है मुझे उस पर क्रोध आया और शाप दिया है कि आज से सप्तम दिन सर्प काटे और वह मर जावे यह सुन दयालय शमीक महर्षिने कहा कि हे पुत्र ! तुमने यह अच्छा नहीं किया और ४२ वें अध्यायमें शमीकने

अपने शिष्य गौरमुख को राजा परीक्षित के पास भेजा कि उसे खबर करदो, तब गौरमुख ने आकर खबर दी कि हे राजन् ! ऋषिपुत्र ने आप को शाप दे दिया है, मुझे आपको खबरदार करने के लिये गुरुजी ने भेजा है ॥

राजाको यह बात सुन अपना पाप जान बड़ा दुःख हुआ और गौरमुख ऋषिशिष्य से कहा कि जाइये महाराज को प्रसन्न कीजिये और इधर मन्त्रियोंसे सलाह करने लगा। यहां तक तो भागवतमें भी यही वर्णन है फिर आगे भागवतमें तो कहा है कि राजकार्य को त्याग राजा गंगा तट पर चले गये और सात दिन तक भागवत सुनी परन्तु महाभारत आदि पर्व अ०४२में यह लिखा है कि-

[सदनन्तरं मन्त्रिभिश्चैव स तथा मन्त्रतत्ववित् प्रासादं कारयामास एकस्तम्भं सुरक्षितम् २९ रक्षां च विदधे तत्र भिषजश्चौषधानि च। ब्राह्मणान्मन्त्रसिद्धांश्च सर्वतो वैन्ययोजयत् ३० राजकार्याणि तत्रस्थः सर्वाण्येवाकरोच्च सः। मन्त्रिभिस्सह धर्मज्ञस्समन्तात्परिरक्षितः ३१ न चैनं कश्चिदारूढं लभते राजसत्तमम्। वातोपि निश्चरंस्तत्र प्रवेशे विनिवार्यते ३२ प्राप्ते च दिवसे तस्मिन् सप्तमे द्विजसत्तमः ॥

भावार्थ-मन्त्रियों से सलाह करके एक स्तम्भ वाला बड़ा रक्षित ऊंचा महल बनवाया, वहां वैद्य और दवाई से रक्षा रक्खी। मन्त्रविद् सिद्ध ब्राह्मण चारों ओर नियुक्त किये ३७ वह वहीं राज काज सब करता था । मन्त्री जिसका पहरा देतेथे। कोई भी उसे वहां ऊंचेपर बैठेको नहीं छू सकता था, वहां वायुभी रुककर कर जाता था ३, जब सातवां दिन आया तब अध्याय ४३ में लिखा है कि सर्प ब्राह्मण तपस्वियों का रूप बनाकर आये सायं काल होगया था आशीर्वाद पढ़कर कुशा और देगये फलों हीमें सूक्ष्म रूप धरके तक्षक भी आया राजाने मन्त्रियों से कहा कि सातवां दिन भी बीता सो फल खाओ। मन्त्रियों को कुछ फल देकर आप भी एक फल खाने को तैयार हुये कि फल में छोटा सा लाल नेत्रका जन्तु नज़र पड़ा, तब राजाने कहा कि यह कीड़ा ही काटलेगा जिस से ब्राह्मणका वाक्य झूंठा भी न हो। अ०४४ में लिखा है कि जब तक्षकने फुंकारमारी उस समय [ततस्तु ते तं गृहमग्निनावृतं प्रदीप्यमानं विषजेन भोगिनः। भयात्परित्यज्य दिशः प्रपेदिरे पपात राजाऽशनिताहितो यथा ४। भावार्थ उस जहरी सर्प के फुंक

की अग्नि से जलते हुवे स्थान को छोड़ कर मनुष्य चारों दिशाओं को भाग गये, और राजा विशुनों केभ मारा नीचे गिर पड़ा। इस में भागवत सुनना और राज्य का छोड़ना, गंगा तटपर आना कुछ भी नहीं लिखा। इति हासों में इस से बड़ा पुस्तक कोई है ही नहीं। इस लिये हम को तो यही निश्चय है कि भागवत शुकदेव जीने राजा परीक्षित को नहीं सुनाई॥ महाभारत ही के शान्तिपर्व के अ० ३२३ में यह भी लिखा है कि भीष्म जी शरशय्या पर पड़े युधिष्ठिर से वर्णन करते हैं कि शुकदेव का जन्म और अन्त भी मैं तुझे सुनाता हूं। और अ० ३३१ में भी लिखा है कि नारद जी से ज्ञान सुनकर शुकदेव मुनि संसार से विमुख होगये और अपने पिता व्यास जी के पास गये और नमस्कार अभिवादन करके सब वृत्तान्त सुनाया और आज्ञा मांगी-

[श्रुत्वा ऋषिस्तद्वचनं शुकस्य, प्रीतो महात्मापुनराह चैनम्। भो भोः पुत्र स्थीयतां तावदद्य यावच्चक्षुः प्रीणयामि त्वदर्थम् ६२) भावार्थ-शुकदेव जी के अभिवादन और संसार की असारतादि तत्वज्ञान को सुनकर व्यास जी प्रसन्न हुये और जब यह जाना कि यही देहत्यागार्थ

जाता है तो हे पुत्र हे पुत्र भो भोः पुत्र रे रे पुत्र त ठहर जब तक मेरे नेत्र तुझे देखें। अर्थात् जब त जाता हूं तब तक ठहर ऐसा कहने लगे। परन्तु-

[निरपेक्षः शुको भूत्वा निःस्नेहो मुक्तसंशयः। मो वानुसचिन्त्य गमनाय मनोदधे ६३ पितरञ्च परि जगाम मुनिसत्तमः। कैलासपृष्ठं विमलं सिद्धसङ्घनिषेवि

अर्थ-शुकदेव ने स्नेह छोड़, निरपेक्ष हो, मोक्ष ही हृषि कर, चलने को ठानी॥६३॥ पिता को छोड़ ... ऊपर चले गये ॥६४॥ इति ३३१ अध्यायः-

आगे अध्याय ३३२ में श्लोक

(कैलासपृष्ठादुत्पत्य स पपात दिवं तदा। अन्तरिक्ष श्रीमान् वायुभूतः सुनिश्चितः) अर्थ-कैलासके ऊ उटकर वायुरूप शुकदेव आकाशमें होकर द्युलोक (स्व. में पहुंचे॥ अब अ० ३३३ में लिखा है कि जब शुक रोहण व्यास जी ने सुना तो बड़ा भारी दुःख माना कि- (ततः शुकेति दीर्घेण शब्देनाक्रन्दितस्तथा। पिता स्वरेणोच्चैस्त्रींल्लोकाननुनाद्य वै॥) भावार्थ- हे शुक! ऐसा उच्चस्वर से रोते व्यास तीन लोक हुलाते भये॥ २२॥ आगे पुत्रशोक में मन्दाकिनी त पर आये और वहां महादेव जी ने समझाये।

वाच महादेवः शान्तिपूर्वमिदं वचः । पुत्रशोकाभि-
न्त कृष्णद्वैपायनं तदा ॥३२॥) महादेव शान्तिपूर्वक
पुत्रशोक से दुःखी व्यासजीसे यह वचन बोले कि:-
भूमेरपां वायोरन्तरिक्षस्य चैव ह । वीर्येण सदृशः
पुरा मत्तस्त्वया वृतः ॥ ३३ ॥ अर्थ-अग्नि, पृथ्वी,
वायु और आकाश के समान बलधारी
तुमने मुझ से मांगा था ॥ ३३ ॥ (स तथालक्षणो
स्तपसा तव सम्भृतः । मम चैव प्रसादेन ब्रह्मतेजोमयः
: ३४ स गतिं परमां प्राप्तो दुष्प्राप्यामजितेन्द्रियैः ।
रपि विप्रर्षे तं त्वं किमनुशोचसि ३५) (जैसा कि
था) वह वैसे लक्षणयुक्त ही शुक तेरे तप और
कृपा से शुद्ध वेद का तेजधारी हुआ ॥३४॥ वह उस
गति को प्राप्त होगया जो (गति) अजितेन्द्रियों
नहीं मिलती और वेदतत्वविदों को भी नहीं मिलती
लिये उस का तू क्यों शोक करता है ॥३५॥ इत्यादि
गे भी फिर भीष्मजी राजा युधिष्ठिर से कहते हैं कि
इति जन्म गतिश्चैव शुकस्य भरतर्षभ ! विस्तरेण
ाख्याता यन्मांत्वं परिपृच्छसि ३९) हे भरतकुलश्रेष्ठ
शुकदेव की जन्म से मृत्यु तक की गति विस्तारसे

सुनाई जो तू मुझसे बूझता है ॥ ३९ ॥ पाठकगण भला अब भी इस में कोई सन्देह रहगया कि जब परीक्षित के दादा धर्मयुधिष्ठिर को उसके भी दादा श्रीभीष्म जी महात्मा सत्यवादी शुकदेव जी की मृत्यु का वृतान्त सुना चुके तो फिर ये वही व्यास पुत्र शुकदेव परीक्षित को कहां से भागवत सुनाने के लिये आये थे । और इसी भारत के अ० १ में लिखा है कि व्यास जीने साठ लाख भारत रचा है, जिस में स्वर्गलोक में तीस लक्ष भेजा, जिसे नारद जी सुनाते हैं । और पितृ लोक में पन्द्रह लक्ष भेजा, जो असित देवल जी सुनाते हैं । १४ लक्ष गन्धर्वों को शुकदेव जी सुनाते हैं । बाकी एक लक्ष पृथ्वीपर है जो सूत जी को वैशम्पायन सुनाते हैं । जब शुकदेव जी को गन्धर्वों के लोक में भारत सुनाने॥ को व्यास जीने ही भेजा है तो परीक्षित को सुनाने कैसे आगये ? जैसा कि महा० भा० आ० प० अ० १ में लिखा है (इदं द्वैपायनःपूर्वं पुत्रमध्यापयच्छुकम् । ततोन्येभ्योनुरूपेभ्यः शिष्येभ्यः प्रददौ विभुः षष्टिशतसहस्राणि चकार न्यां स संहिताम् । त्रिंशच्छतसहस्रं च देवलोके प्रतिष्ठितम् १०४ पित्र्ये पंचदश प्रोक्तं गन्धर्वेषु चतुर्दश । एकं शतसहस्रं तु मानुषे तु प्रतिष्ठितम्।१०५ नारदोऽश्रावयद्देवा नऽसितो देवलः पितॄन् । गन्धर्वयक्षरक्षांसि श्रावयामास

...पुत्र (...) ... वैशम्पायन उक्तवान् शिष्यो व्यासस्य धर्मात्मा सर्ववेद विदांवरः ॥ एकं शत सहस्रं तु मयोक्त वै निबोधत १०७

देवी भागवत में भी शुकदेव जी का गृहस्थ होना और चार पुत्र होने अन्तमें स्वर्ग पधारना, स्पष्टही लिखा है जैसा कि देवी भागवत१८११ शाके वैंकटेश्वर प्रेस मुंबई प्रथम स्कन्ध अ० १९ पृ० ३८ पं० ४ से आगे श्लोक ३६ श्री शुकदेव जी विवाह को मना करते थे, व्यास जी कहते थे कि (अपुत्रस्य गतिर्नास्ति) इत्यादि कहकर राजा जनक के पास गये हैं व्यास जी के भेजे वहां जनक को गृही ज्ञानी देख बात चीत करके, यह कथा पूर्व के अध्यायों में सविस्तर कह कर ३६ वे श्लोक से-

(तच्छ्रुत्वा तस्य वचनं शुकः प्रीतमनाभवत् । अच्छपयतं जगामाशु व्यासस्याश्रममुत्तमम् ॥ आगच्छन्तं सुतं दृष्ट्वा व्यासोपि सुखमाप्तवान् । आलिङ्ग्याघ्राय मूर्धानं पप्रच्छ कुशलं पुनः ॥ स्थितस्तत्राश्रमे रम्ये पितुः पार्श्वे समाहितः । वेदाध्ययनसंपन्नः सर्वशास्त्रविशारदः ॥ ३८ ॥ जनकस्य दशां दृष्ट्वा राज्यस्थस्य महात्मनः । स निर्वृतिं परां प्राप्य पितुराश्रमसंस्थितः ३९ पितृणां सुभगा कन्या पीवरी नाम सुन्दरी ॥ शुकश्चकार पत्नीं तां योगमार्गस्थितोपि हि ४० स तस्यां जनयामास पुत्रां चतुर एव हि । कृष्णं गौरप्रभं चैव भूरिदेवश्रुतं तथा ४१

कन्यां कीर्तिं समुत्पाद्य व्यासपुत्रः प्रतापवान् । ददौ विभ्राजपुत्राय त्वणुहाय महात्मने ॥ ४२ ॥ अणुहस्य सुतः श्रीमान् ब्रह्मदत्तः प्रतापवान् । ब्रह्मज्ञः पृथिवीपालः शुककन्यासमुद्भवः ॥ ४३ ॥ कालेन कियता तत्र नारदस्योपदेशतः । ज्ञानं परमकं प्राप्य योगमार्गमनुत्तमम् ॥ ४४ ॥ पुत्रे राज्यं निधायाथ गतो बदरिकाश्रमम् । मायाबीजोपदेशेन तस्य ज्ञानं निरर्गलम् ४५ नारदस्य प्रसादेन जातं तद्योगविमुक्तिदम् । कैलासशिखरे रम्ये त्यक्त्वा संगं पितुः शुकः ॥ ध्यानमास्थाय विपुलं स्थितस्संगपराङ्मुखः । उत्पपात गिरेः शृंगात् सिद्धिं च परमां गतः । आकाशगो महातेजा विरराज यथा रविः । गिरेःशृंगद्विधा जातं शुकस्योत्पतने तदा उत्पाता बहवो जाताः शुकस्त्वाकाशगोऽभवत् अन्तरिक्षे तथा वायुः स्तूयमानः सुरर्षिभिः ४९ तेजसातिविराजन्वै द्वितीय इव भास्करः ॥ व्यासस्तु विरहाक्रान्तः क्रन्दन्पुत्रेतिचाऽसकृत् ५० गिरेःशृंगेनतस्तत्र शुको यत्र स्थितोऽभवत् ॥ क्रन्दमानं तदा दीनं व्यासं तस्याऽश्रमाकुलम् ५१ सर्वभूतगतः साक्षात् प्रतिशब्दं तदा ददौ ॥ तत्राद्यापि गिरेःशृंगे प्रतिशब्दस्फुटोऽभवत् ५२ रुदन्तं तं समालक्ष्य व्यासं शोकसमन्वितम् । पुत्र पुत्रेति चापार्तं विरहेण परिप्लुतम् ॥ ५३ ॥ शिवस्तत्र समागत्य पाराशर्यमबोधयत् ॥ व्यास शोकं मा कुरुत्वं पुत्रस्ते योगवित्तमः ॥५४॥ परमां गतिमापन्नो दुर्लभां चाकृतात्मभिः ॥

तस्य शोको न कर्त्तव्यस्त्वया शोकं विजानता कीर्त्तिस्ते विपुला जाता तेन पुत्रेण चानघ ॥

व्यास उवाच

न शोको यातिदेवेश किं करोमि जगत्पते ५६

अर्थ उस जनक के वचन को सुन कर शुकदेव जी बड़े प्रसन्नमन हुए और जनक की आज्ञा लेकर अपने पिता व्यास के स्थान आये ॥ ३६ ॥ आते हुए पुत्र को देख कर व्यास जी भी सुखी हुए । पुचकार कर हृदय से लगा कर फिर कुशल बूझी ॥ ३७ ॥ उस रम्य आश्रममें पिता के पास एकाग्रचित्त हो, शास्त्रचतुर शुकदेव वेदपाठ करते रहे ॥ ३८ ॥ राजा जनक के गृहस्थ होने पर भी योगिदशा को देख कर पिताके आश्रम में वह शुकदेव निर्वृतिको प्राप्त हुए ॥ ३९ ॥ अर्थात् गृहस्थ होकर भी योगवृत्ति धार सकुंगा जैसे जनक की वृति देखी थी इस लिये विवाह में कुछ डर नहीं, यह शोच कर । पीवरी नाम की पितरों की सुन्दर कन्याको योगमार्ग में रहते भी शुकदेव जी पत्नी करते भये ॥ ४० ॥ उन शुकदेव जीने उस में से चार पुत्र उत्पन्न किये १ कृष्ण २ गौरमुख ३ भूरि, तथा ४ देवश्रुत ॥ ४१ ॥ और शुकदेव जी ने कीर्त्ति नाम की कन्या को भी उत्पन्न करके

विभ्राजके पुत्र महात्मा अणुको दान की ॥ ४२ ॥ अणुह का पुत्र ब्रह्मदत्त तेजस्वी बड़ा ब्रह्मज्ञ पृथिवी पालक, शुकदेव की कन्या से उत्पन्न हुआ ॥ ४३ ॥ कुछ के अनन्तर नारद के उपदेश से परमज्ञान को और उस योगमार्ग को पाकर ॥ ४४ ॥ पुत्र को राज्य देकर अणुह जी बदरिकाश्रम को चले गये, मायाबीज के उपदेश उस अणुह को ज्ञान हो गया ॥ रम्य कैलास के शिखर पर पिता के संग को छोड़ कर नारद की कृपा से श्री मुक्तिदायक मार्ग प्राप्त हुआ, शुकदेव संग से मुख मो विपुल ध्यान में बैठ पर्वत के शिखर से उड़कर परम धाम को प्राप्त हुवे ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ महातेज धार कर आकाश में जाते सूर्यवत् शोभा को प्राप्त हुवे शुकदेव जी की ऊर्ध्वगति हुई तब पर्वत के दो खंड गये ॥४८॥ बहुतसे उत्पात हुए और शुकदेव आका हुए । आकाश तथा वायु ऋषियों से स्तुत किये तेज से शोभित दूसरे सूर्य के समान हुवे ॥ ४९ ॥ व्यास जी विरह से व्याकुल हकराते, रोते बार २ हे पुत्र ! ऐसा जहां शुक रहते थे वहां कहते फिरे ॥ ५ तब दीन दुख, रोते २ थके हुवे व्यास को जानकर प्राणिमात्र में स्थित परमात्मा ने यह सवाद ॥ ५

वहां अब भी पर्वत की चोटी पर गुंजार मालूम होता है ॥ (पुत्र! पुत्र! ऐसे विरहमें भरे उस रोते हुवे व्यासको शोक समुद्र में देखकर) वहां शिव ने आकर पराशरपुत्र व्यास को समझाया कि हे व्यास ? शोक मत करे तेरा पुत्र योगज्ञाता परमगति को जो अपुण्यात्माओं को दुर्लभ है, प्राप्त हुआ है। हे शोक के जानकार व्यास तुझे उस का शोक नहीं करना चाहिये ॥ ५५ ॥ हे निष्पाप तेरी कीर्ति उस पुत्र से विपुल हो गई । व्यास जी कहते हैं कि हे देवेश जगत्पते क्या करूं शोक जाता हो नहीं ॥ ५६ ॥ जिस से यह भी ज्ञात होता है कि भागवत में जो यह लिखा है कि शुकदेव जी से पर्दा स्त्रियों ने इस लिये नहीं किया कि शुकदेव जी स्त्री पुरुष भाव को तो जानतेही नहीं थे, परन्तु देवी भा० में इनके सन्तान होना भी लिखा है । और पीवरी इन को स्त्री भी होनी लिखी है। जैसा कि हम ऊपर कहीं लिख चुके हैं। अब पुस्तक बढ़ने के भय से हम अधिक नहीं लिखते। देवी भागवत की भूमिका कलकत्ते की छपी में बहुत से प्रमाण अन्य पुराणों के यह सिद्ध भी किया है कि देवीभा० ही १८ पुराणों में है श्रीमद्भागवत नहीं ॥

ओ३म्

आर्य्य समाज के नियम।

१। सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्यासे जानेजाते हैं, उन सब का आदिमूल परमेश्वर है।

२। ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र, और सृष्टि कर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३। वेद सब सत्यविद्याओंका पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है॥

४। सत्य ग्रहण करने और असत्य के छोड़नेमें सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५। सब काम धर्मानुसार, अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके, चाहिये।

६। संसारका उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७। सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिये

८। अविद्याका नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये

९। प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये॥

१०। सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतंत्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतंत्र रहें॥

ओ३म्

ट्रैक्ट नं० १

हिन्दुओं की छाती पर ज़हरीली छुरी।

लेखक और प्रकाशक
आयुर्वेदाचार्य
वैद्य श्री चतुरसेन शास्त्री
कल्याण औषधालय अजमेर

पं० शङ्करदत्त शर्म्मा ने अपने
शर्म्मा मैशीन प्रिंटिंग प्रेस मुरादाबाद में छापा।

संवत् १९७३ विक्रमी

द्वितीयवार २०००] सन् १९१६ ई० [मूल्य -)

॥ ओ३म् ॥

हिन्दुओं की छाती पर ज़हरीली छुरी ।

हिन्दुओं के प्राणों का संहार जिस ज़हरीली छुरी ने किया है वह किसी ज़ालिम कसाई ने उनके कलेजे में नहीं भोंकनी है प्रत्युत अपने हाथ से ही हमने इस हत्यारी छुरी को छाती में खुपा लिया है-यह छुरी बाल्यविवाह है ।

बालविवाह की नीच और घिनौनी चाल नेजितनी बड़ी चोट हिन्दू जाति को पहुंचाई है उतनी किसी ने नहीं पहुंचाई । ब्रह्मचर्य की उत्तम चाल को जड़ से उखाड़ने वाला सब से तेज और जबरदस्त कुल्हाड़ा बालविवाह है ।

'इन्सान का जानी दुश्मन, तन्दुरुस्ती का हलाहल ज़हर सदाचार का भारी विरोधी, बालविवाह ने जब से संसार की मुकुट हिन्दू जाति में अपना पैर बढ़ाया है तभी से चौपट कर दिया है । मुकुट की मणि मुकुट से गिरकर पैरों से कुचली जाने लगी और सबसे ज्यादा अफ़सोस की बात यह है कि इस प्लेग और हैजे से भी भयानक रोग को अभागे हिन्दू सदा आनन्द से स्वागत करते रहे हैं, और कर रहे हैं।

इसके भयंकर परिणाम को लिखते सचमुच लेखनी थ-

रोती है। रोंगटे खड़े हो जाते हैं। हमारी सारी इज्जत, तमाम आबरू, सारा बड़प्पन, और हमारे शिरकी पगड़ी तक इस डायन प्रथा ने धूल में मिलादी है। कहां तक हम रोवें-इसके भयंकर नतीजे को देख कर सारे शरीर में हजारों बिच्छू काटने जैसा दर्द होता है। १५ वर्ष के बुढ्ढे और ९-१० वर्ष की बालिका जिस देश में मां बाप बन कर इस महान् पद को कलंकित करें उस देश का क्यों न सत्या नाश जाय? पकने से पहले ही जिस के खेत को कुचल कर बर्बाद कर दिया गया है उस कमबख्त किसान की बदनसीबी का भी कुछ ठिकाना है? जिसके फूल खिलने से पहिले ही मसल कर मोरियों में फेंक दिये उस के दुर्भाग्य पर शत्रु को भी दया आवेगी।

आपने क्या देखा नहीं है? छोटे २ बच्चे दुल्हा दुल्हिन बन कर विवाह करने चले हैं। बच्चा धोती पहरना नहीं सीखा, लड़की रोकर रोटी मांगती है और वे इस नादानी की उम्र में गृहस्थ की जबरदस्त गाड़ी में अपने जालिम मा बापों से जोत दिये जाते हैं। बड़े अभागे ही बच्चों को ऐसे जालिम मा बाप मिलते हैं जिनकी वह खुशी उस कसाई की खुशी से किसी प्रकार कम नहीं है जो अपने सामने तड़फते जानवर को देख कर होती है।

विवाह की बात दूर रहे उनके संस्कारमें भी यही विषैली स्प्रिट भरी जाती है-क्यों बेटा! कैसी बहू लावेगा? गोरी

दा काली ! देखा यों ही तोतली बातों से कह देता है ताती, मा बाप ही-ही करके हंस देते हैं बच्चा भी ताली बजा२ कर हंस कर बारंबार ताती २ पुकारता है। बच्चा हंसी को स-मझता है हंसी की वजह को नहीं। बच्चों को खुशी ही चा-हिये, जिस बात को सुनकर सभी हंसते हैं उसी बात को बार २ कहना बच्चे को अच्छा लगता है जन्म से ही प्रभाव कुसंस्कार का रहता है दीयासलाई में मसाला लगा रहता है, विवाह होते ही रगड़ने मात्र की देर है. रगड़ा लगा फक से सारी शक्ति भस्म हो गई, जीवन की आशायें धूल में मिल गईं। न तो उसे संसार का तजुर्बा है और न उस के प्रबल प्रवाह में ठहरने की शक्ति ही है और नहीं उसे भविष्य का ज्ञान ही है। हो कहां से उसे ऐसा करने का अवसर ही नहीं दिया गया। वह अनाथ गरीब संसार की तपती भट्टी में भस्म होने को झोंक दिया जाता है शोक ???

इसके भयानक परिणाम को क्या हमें बताना पड़ेगा ! इसे कौन नहीं जानता ? सारा भारत इस आग में तप रहा है। तमाम समुदाय में जो यह आग भड़क रही है—दिनरात नोन तेल की चिन्ता में यह अमूल्य जीवन जर्जर होरहा है। हमारा जीवन जो विषमय होरहा है—सदा मौत की भीख जो हम मांगते हैं—इन सब का कारण क्या है ? यह दुख कहां से हमारे ऊपर आया है ? इन सब का उत्तर है बाल विवाह।

लड़के लड़कियों के बालविवाह, विषयभोग की अधिकता, और व्यभिचार की प्रवृत्ति से मनुष्य में वीर्य की कमी और निर्बलता आगई है, जिस से एक तो गर्भस्थिति ही कम होती है दूसरे गर्भ रह भी जाय तो क्षीण हो जाते हैं, अथवा सन्तान होकर तुरन्त मर जाती है. जो भाग्यसे बचे भी रहे तो यह दशा है कि अत्यन्त निर्बल निस्तेज, स्वरफटे बांस के जैसा, सूरत बन्दर की, प्रमेह की बहुतायत स्मरण शक्ति का नाश, कम अकल, आंखों के अंधे, चश्मों के खरीदार-जरा के रोगी, वैद्य डाक्टरों के यार. चुपड़ी रोटी खावें तो खट्टी डकार, पाव भर दूध पीवें तो दस्तों की भरमार, कितनों को बाई का शिकार, बुढ़ापे की भरमार-तोंद के भार से चलना दुश्वार। पेट लटकना, घुटने पकड़ कर उठना-बोलने में हांफना धमनी से कांपना, किसी का पेट पचक रहा है, कमर कमान हो रही है, गालों में गढ़े आंख भीतर बैठी कोस भर मार्ग चलना-महाभारत की लड़ाई और नीचे से कोठे पर चढ़ना पहाड़ की चढ़ाई है, यह जवानी की दशा है? यह हमारी बिगड़ी कुप्रथाओं का नमूना है। बुढ़ापे की दशा को तो आप समझ ही लें-बुढ़ापे का स्यापा अब जवानी में ही भुगत जाता है, अब ३० वर्ष का पुरुष बूढ़ा कहाता है। आप ही कहिये ऐसे स्त्री पुरुषों के वंश कैसे चलेंगे? और चलेंगे तो के दिन जीवेंगे? मित्रो! इसी से पीढ़ी दर पीढ़ी सन्तान कम होती जा रही है।

बचपन ही से कामकला को भड़का कर जिनको मनो-

वृत्ति गन्दी करदी गई हैं, वे अपने बच्चों के रुधिर में इस विषैले प्रभावको उतार देतेहैं, जिससे उनकी सन्तान बचपन ही से विषयी लम्पट और अधर्मी हो जाती है-उनकी जड़ में उत्पन्न होते ही कीड़ा लग जाता है और जब वे फलते फूलते, अपनी सुगन्ध को संसार में फैलाते, अपने प्रताप से भूमण्डल को कंपाते, उससे प्रथम ही मुर्झा कर संसार से उठ जाते हैं। उनकी हार्दिक, स्नायविक, मानसिक दुर्बलता उन्हें अधम और नीच ही बनाये रखती है।

हमारे शरीर में उत्साह नहीं है-बल नहीं है-साहस वीरता नहीं है। और दुनिया के किसी भी फल को भोगने में क्षमता नहींहै। ये सब संकट बालविवाह द्वारा ब्रह्मचर्य का नाश करके ही क्या हमने मोल नहीं लिये हैं?

हमारी नहत बर्बाद होगई, जिन्दगी घट गई-तन्दुरुस्ती मिट्टी में मिल गई, रह गई हड्डी की ठठरी, रह गई अधमरी देह। इसका कारण क्या है? वही तुम्हारे जालिम मां बापों का प्यार। और वही बहू देखने की लालसा—!!!

पन्द्रह सोलह वर्ष की उम्र हुई है, बच्चा स्कूल में ऊंचे दर्जे में पहुंचा है, दिमागी मेहनत का ज़ोर है-उधर गौना होकर भी आगया। बच्चे की जान पर बलैया लेने वाली उसकी मां आंचल पसार कर दांत निकाल कर गिड़ गिड़ा कर-कहती है। हे विश्वनाथ बाबा! हे काली भवानी! हे चौराहे कि चामुण्डा! अब तो पोते का मुंह दिखा दे। यही नहीं इसकी तैयारी भी होने लगी-दोनों जोड़ी एक कोठरी के

अन्दर बन्द की गई। इधर दिमागी मिहनत, पढ़ने का जोर उधर खाने की तंगी, घी दूध का नाम नहीं, उधर पोते बनाने की लालसा, इन सब में बच्चा पिस मरा। हाड की ठठरी रह गई मां कहती है अजी देखो बच्चे को क्या हो गया है? पीला पड़ता जाता है किसी सय्यद पैगंबर का छाया तो नहीं पड़ गया है? किसी शाह साहेब को ही दिखलाओ?

बाप देवता बोल उठे पढ़ने में बड़ी मेहनत है, अब हम स्कूल न भेजेंगे बहुत पढ़ गया है इतना तो हमारे कोई पढ़ा भी नहीं था। बस सब होगया तालीम का द्वार बंद होगया पर सत्यानाश का द्वार सोलह आना खुल गया, रोगभी बढ़ता ही गया। अन्तमें जल्दी ही रामर सत्य खुल गई। जब कली खिलने के दिन आये थे जब उसकी सुगन्ध फैलनी थी हाय उससे पहलेही कुचल डाला गया मसल डाला गया सो भी प्यार करने वालों के हाथोंसे, उस पर न्योछावर होने वालोंके हाथोंसे, तब वही मा बाप छाती पीट कर रोते हैं हाय बेटा! अन्धों की लकड़ी छिन गई, तब उनका रोना आकाश फाड़ता है, वे अभागे नहीं जानते कि उन्हीं के नापाक हाथ उन मासूम और बे गुनाह बच्चों के खून से रंगे गये हैं, उन्हीं ने अपने वंश का नाश किया है, उन्हीं ने अपने पैर में कुल्हाड़ी मारी है, कोई शक्ति है जो उनके दामन से उस खून के दाग को छुड़ा सके?

अभागो? क्या अब भी चेत न होगा! जालिमो! गजब है। घर में अपना ही खून करते तुम्हें कैसे बन आता है!

जिन के वंश में तुम पैदा हुए हो जिनका खून तुम्हारे शरीर में बह रहा है। उनकी वाणी तुम सुनते उनकी आज्ञाओं को तुम पालन करते तो तुम भी वैसे ही रहे होते, तुम्हारा सर्व नाश तुम्हारे ही सामने न होता। तुम्हारा जीवन तुम्हारे देखते ही देखते विध्वंस न बनता। और जिन फूलों की सुगन्ध ही तुम्हारी बड़ी खुशी थी वे फूल वे तुम्हारे हृदय के रत्न, वे तुम्हारी आशाओं के तारे, तुम्हारे प्यारे बच्चे, यों अकाल में काल के गाल में न जाते। तुम महा अभागे रहे, हां हजार बार अभागे हो जो अपने रत्न को अपने सर्वस्व को अपनी सन्तति को, यों पैरों से कुचल कर फेंक दे उससे अधिक अभागा और कौन हो सकता है? उस अभागे की मूर्खता पर एक बार नहीं लाख लाख धिक्कार है।

भाइयो! तुम्हें अपनी दया का बड़ा अभिमान है, पर सच तो यों है कि तुम्हारे बराबर संसार में कोई कसाई और क्रूर नहीं है। छोटे २ भुनगे, चींटी, मकोड़े, कौवे, कुत्ते, आदि पशुओं के लिए तुम्हारे पास दया का भंडार भर रहा है। पर अपनी सन्तानों पर यह जुल्म कि उनकी सारी आशाओं को कुचल कर, उनकी उठती जवानी पर कुछ भी तरस न खाकर, उन्हें हाय ऐसी बुरी मौत मार रहे हो कि कसाई गाय को भी न मारेगा। कसाई गाय को एक ही हाथमें साफ कर देता है वह बेचारी दुख से छूट जाती है पर तुम जो एक वर्ष की दूध पीती कन्याओं को विधवा बना कर पापों की नदी बहा रहे हो, उन्हें रोम २ में विष पैदा करने

वाले दुःख सागर में धकेल कर जीते जी दुःखाग्नि में डाल कर जो भून रहे हो, उनके तड़पने को देख कर जो पुण्य की उत्पत्ति समझ रहे हो ? हाय ! ऐसा होने पर तुम्हारा पत्थर का कलेजा नहीं पिघलता ? तुम्हारी छाती पर सांप नहीं लोट जाता ? ये जो लाखों विधवायें तुम्हारी छाती पर मूंग दल रही हैं, कोई चुपचाप सर्द आह भर कर भारत को रसातल पहुंचा रही हैं। कोई कहार, धीवर, कसाई, के साथ मुंह काला करके हिन्दूवंश की नाक कटा रही हैं फिर भी जो तुम आर्य सन्तान कहलाने की इच्छा रखते हो। अब भी जो तुम्हें अपने रक्त और वंश का, अभिमान है, तो शर्म है और लाख २ शर्म है।

अपने पुरखाओं को तो देखो ! जो लोग दीन दुखियों का आर्तनाद सुन कर भोजन और भजन छोड़ देते थे जब दुखी जन का दुःख दूर करके जल पान करते थे या जान खो देते थे। हाय ! उनकी आज संतान ऐसी अधर्मी होगई करोड़ों विधवाओं की बिलबिलाहट और हाहाकार सुन कर भी उन्हें सुख की नींद आती है ? जिन की छाती पर सिल रक्खा रहे—आठों पहर जवान विधवा कन्या चुप चाप कलेजे का खून पिया करे—उसकी आत्मा फूट २ कर रोती रहे—और इन धर्मधुरियों के हलक में मज़े से छत्तीसों व्यञ्जन सरक जाय ! पहचानने से प्रथम ही जिस का एक मात्र जीवन का आधार जगत् से उठ जाय—वह गरीब अभागिनी तुम्हारे पाप से ही इस अंधेरी दुख भरी दुनिया

में चक्की पीस २ कर भुसे भी न खांय, ऐसे रूखे टुकड़े खा कर दिन काटे? सूअर भी न रहें ऐसी सड़ी मैली कोठरी में रहे? बीमार पड़ने पर बिना सहाय भूखी प्यासी तड़फ २ कर मरजाय पर तुम्हारे इत्र फुलेल और लकझक पोशाक में कुछ भी कसर न रहे उनके लिये तुम्हारे हृदय में राई रत्ती भर भी सहानुभूति न रही अधर्मियो! मुसलमान ईसाई और कसाई भी जिन पर तरस खाते हैं पत्थर हृदय जल्लाद को भी करुणा हो जाती है—उन स्त्रियों पर इन दयालुओं (दयाके अभिमानियों) को तनिकभी दयानहीं आती। जो लोग अपनेको अहिंसा धर्मधारी कहकर रहे हैं-जो होग दयावान् ऋषि मुनियों की सन्तान होने का अभिमान रखते हैं, उन्हीं की दया का यह दृश्य है यह उनकी सभ्यता का नमूना है? क्या यह सब घोर पाप नहीं है? क्या ऐसे अत्याचार किसी दूसरी जाति में बता सकते हो? कसाई को सब से अधिक क्रूर, निर्दई कह कर तुम घृणा करते हो· गाली देते हो, और उसका मुंह नहीं देखना चाहते, पर वे तुम से अधिक घृणित नहीं हैं? बिना सींगो की गायों पर, अपनी बहन बेटियों पर—उन की छुरी कदापि नहीं उठती हिंसक पशु, पक्षी, सिंह, भेड़िया आदि भी स्त्री जन्तुओं पर दया करते हैं, स्त्रियों को सब ही ने अवध्य माना है जंगली जाति भी स्त्री को नहीं सताती, पर हिन्दू जाति के सुपूत इन्हीं का गला घोंट कर अपने लिये स्वर्ग का द्वार खोल रहे हैं। मनु कहते हैं—

शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्।

जिस जाति में स्त्रियां शोकित रहती हैं वह कुल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। मैं आश्चर्य है कि इतने घोर पाप करने पर भी हिन्दू जाति अब तक कैसे रह गई वह क्यों न डूब गई क्यों न गजब का पहाड़ उस पर टूट पड़ा अब यह पाप अपनी अन्तिम सीमा तक पहुंच चुके हैं इसके जहरीले फल फलने लगे हैं देखिये—

(१) लाखों घराने निर्वंश होगये बड़े२ घरोंमें ताले ठुक गये

(२) बहुत से स्त्री पुरुष कंगाली के कारण धर्मसे पतित होकर ईसाई मुसलमान होगये।

(३) व्यभिचार के कारण भी लाखों स्त्री पुरुष हिन्दू जाति से टपक २ कर गिर रहे हैं।

(४) बिरादरी के पञ्चों के अनुचित बर्ताव से सताये हुए कितने ही स्त्री पुरुष धर्म में लात मार कर विरोधी हो बैठे हैं, क्योंकि आज कल के चौधरी पंच थोडी २ बातों पर जात से निकाल फैंकने में ही बहादुरी समझते हैं पुचकार कर सुधारना तो सीखे ही नहीं।

(५) अनाथ बालक बालिकाओं का निरादर होने से वे भी भूखे प्यासे ईसाई मुसलमानों की शरण में जाते हैं।

(६) दहेज की महाभयंकर कुरीति से सताई हुई २०।३० वर्ष की क्वारी रहने वाली कन्याओं में से बहुत सी लड़कियां कुसंग वश या मन के उद्वेग से बाहर भाग जाती हैं।

(७) विधवाओं की खेप की खेप हिन्दू जाति की छाती पर सिर पटक रही है जरा छाती कड़ी करके सुनिये।

सन् १९११ की मर्दुम शुमारी के अनुसार विधवाओं की संख्या ।

उम्र विधवाओं की	हिन्दू विधवा	आर्य्य विधवा	जैन विधवा	बाकी सब जाति की	भारत की सब विधवाओं का जोड़
१ वर्ष से कम	८६६	०	१५	१३३	१०१४
१ ,, ,, २ तक	७१५	०	५	९६	८१६
२ वर्ष से ३ वर्ष तक	१५६४	२	१७	२२४	१८०७
३ ,, ,, ४ ,, ,,	३९८७	४	२०	७४२	४७५३
४ ,, ,, ५ ,, ,,	७६०३	०	३५	१६३५	९२७३
जोड़ पांचसाल तक की	१४७३५	६	९२	२८३०	१७६६३

पांच से १० वर्ष तककी	७७५८५	२२	२६१	१६३६२	६४२७०
१० से १५ तक	१८१५०७	७४	४०६	४०५५५	२२२०४२
१५ ,, २० ,,	३६२८६६	२४३	२७०६	१००६१६	४६६८२४
२० ,, २५ ,,	७०२०१३	५०२	७३४४	१६१८४५	६०१७४४
२५ ,, ३० ,,	१०७१८४५	५८८	११३१२	३०५८६०	१३८६६३५
३० ,, ३५ ,,	१६७१६०२	८०१	१६०४६	५७४१३७	२०८२४०६
३५ ,, ४० ,,	१५८८००६	७६३	१२७६७	४७६८४३	२०८२४०६
४० ,, ४५ ,,	२८५६३४६	१४०२	२२२६७	८४८६५६	३७३१६७४
४५ ,, ५० ,,	१८२४३६६	१८६७	१५५४६	५६६२१२	२४०८१२४
५० ,, ५५ ,,	३२४४६४३	१८०६	२४२८३	१०१७६५६	४२८३६८८

अब आप देखें कि आप की छाती पर जो छुरी है, वह कितनी ज़हरीली है। जब वृक्ष छोटा होता है तो ज़रा से हवा के झोंके से या ज़रा सी धूप से मुर्झा जाता है, परन्तु ज्यों२ बढ़ता जाताहै दृढ़ तथा स्थायी बनता जाताहै। बच्चों की भी यही दशा है। छोटी उम्र के बच्चों पर ज़रा सी भी सर्दी गर्मी का भरपूर असर होता है और वे रोगी हो कर प्रायः मर जाते हैं: ज्यों २ बड़े होते जाते हैं उनके रग पुट्ठे दृढ़ होते जाते हैं उनके शरीर में सहनशक्ति का अभ्यास हो जाता है, और वे रोग तथा उसके प्रबल धक्के को सहन कर सकने योग्य हो जाते हैं। यही कारण है जो इतनी बड़ी तादाद् बाल विधवाओं की दीख पडती है—इस सब पाप की जड़ बाल्यविवाह है।

इन सब बातों को सुन समझ कर भी जो तुम बालवि-वाह की सत्यानाशी प्रथा के पक्ष पाती रहे तो हम कहेंगे कि सांप को गले लटकाये फिरते हो पल्ले में आग बांध कर रुई के गोदाम में घुसते हो। सरासर जिस प्रथा ने तुम्हें दीन दुनिया से निकम्मा करदिया है, उसे हलाहल से भी अधिक भयानक जान कर भी जो तुम आंख मींच कर उसी लकीर के फकीर बने रहो तो निस्सन्देह तुम्हारे रक्त से, तुम्हारे रग २ से मनुष्यत्व निकल गया है। और तुम मनुष्य नहीं रहे हो।

हमारा विनीत निवेदन ।

देश और जाति से जिन्हें चार पैसे देकर अपने पसीने की कमाई को धर्मकार्य में लगाने की रुचि दी है । अथवा जिन्हें देशसेवा में सहाय देने वाले मित्रों की कमी नहीं है उन से हमारा विनीत निवेदन है कि इस दुःख की पुकार को अमीरों के बुलन्द-महल और कंगाल की मैली झोंपड़ी तक में पहुंचा दें । इकट्ठी लेकर बांटने वालों को ४) सैंकड़ा में मिलेगी । यह आप का ४) का दान बहुत फले फूलेगा । इस पर विश्वास रक्खें । *

मिलने का पता—

आयुर्वेदाचार्य—

वैद्य श्री चतुरसेन शास्त्री

श्री कल्याण औषधालय

अजमेर

नोट—आर्य मारवाड़ी सभा दिल्ली, सेठ बृजलाल जी मक देहली—सेठ रामकुमार जी खोजथलिया कलकत्ता तथा अन्य सज्जन हमारे हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं जिन्हों ने इसकी सैंकड़ों प्रति खरीदकर मुफ्त वितीर्ण की हैं आशा है अन्य महाशय भी उक्त महानुभावों का अनुकरण करेंगे और इसकी लाखों प्रतियां भारत के घर २ अपनी पुकार सुनावेंगी । भवदीय—लेखक

॥ ओ३म् ॥

* कृषकस्तुतिः *

अथवा

(किसान–महिमा)

श्रीयुत पं० भीमसेनजीशर्मा मुख्याध्यापक गु० कु०
महाविद्यालय ज्वालापुरकी एक सानुवाद संस्कृत
कविता, जिसके अन्तमें कविवर 'शंकर' का
'भारतोदयाष्टक' भी सम्मिलित है,

जिसे

आषाढ़मासके "भारतोदय" से

(सम्पादककी आज्ञानुसार) उद्धृतकरके

पं० शङ्करदत्तशर्म्मा ने

अपने "धर्मदिवाकरप्रेस" मुरादाबादमें छापकर
प्रकाशित किया.

जुलाई, सन् १९०९ ।

प्रथमवार १०००] [मूल्य)॥

कृषकस्तुतिः ।

(श्रीपं० भीमसेनशर्मकृता)

१--हे हे कृषीवल ! परोपकृतौ समर्थो
न त्वादृशोस्ति मनुजो जगतीतलेऽस्मिन् ।
तस्मादहं द्विजवरो निजकर्मसेवी
स्तुष्टूषुरस्मि सततं शृणु सावधानः ॥

भावार्थ--हे किसान ! इस दुनिया में तुम्हारे बराबर कोई आदमी परोपकार करने में समर्थ नहीं, सब के अन्नदाता और पेटभरनेवाले तुम्हीं हो । इसीकारण मैं ब्राह्मण अपना कर्त्तव्य समझकर आज तुम्हारी स्तुति गान करना चाहताहूँ, सो सावधान होकर सुनिये ॥ १ ॥

२--रेलूतारनिर्मितिविधौ चतुरा वराका-
स्त्वत्साम्यलेशमपि नैव भजेयुरत्र ।
रेलादिकानि वितरेयुरघं कदाचित्,
त्वत्तस्त्वशक्यभवनं खलु तत्त्रिकाले ॥

रेल और तार आदि अन्य लोकोपकारक पदार्थों के वनानेवाले कारीगर, तुम्हारी बराबरी को भला कब पहुंच सक्ते हैं ? रेल पर बैठना और तार खड़काना सब पेट भरे परही सूझताहै। और फिर रेलके लड़ने और तार की विजलीसेतो कभी कभी बड़ा नुकसान पहुंचजाता है, पर तुम से कभी किसी को हानि नहीं पहुंचसक्ती ॥ २ ॥

३—अब्राह्मणोऽपि तप आचरसीह नित्यं
न क्षत्रियोऽपि तनुसौष्ठवमादधासि।
वैश्यो भवन्नपि न वेशविलीनचेता-
स्त्वं राजसे ननु विलक्षण एव धीरः ॥

ब्राह्मण न होकर भी तुम नित्यप्रति शीतोष्ण आदि द्वन्द्वसहनरूप तप कररहे हो, क्षत्रिय नहीं हो, पर परिश्रमद्वारा शारीरिक बल प्राप्त करने और शरीर को सुडौल बनाने में तत्पर हो। और वैश्य होकर भी (खेतीकरना शास्त्रानुसार वैश्यका कर्म है) बनाव सिंगार नहीं करते, इसलिये हे धीर ! तुम सब से विलक्षण हो ॥ ३ ॥

४—केचिद्वदन्ति धनहीनजनो जघन्यः

केचिद्वदन्ति गुणहीनजनो जघन्यः ।

त्वद्रीतिनीतिकुशलो नहि यो मनुष्यः

सैवास्ति मे मतिपथे नितरां जघन्यः ॥

कोई कहते हैं धनहीन आदमी बुरा है, और कोई कहते हैं कि गुणहीन मनुष्य अच्छा नहीं। परन्तु मेरी राय में वही बहुत बुरा है जो तुम्हारी रीति नीति में कुशल नहीं। धन और गुण के विना तो यथा-कथंचित् काम चलभी सक्ता है, पर अन्नके विना निर्वाह नहीं ॥ ४ ॥

५—स्वातन्त्र्यमस्ति तव यत् कृषिकारवीर !

किं तादृशं ह्यनुभवेज्जजनामधारी ।

स्वस्वामिसेवनपरोऽपि परापकारी

मद्यादिदोषदलितो जनताऽऽर्तिकारी ॥

हे किसान—बहादुर ! जो स्वतन्त्रता तुम्हें प्राप्त है, वह बड़े बड़े जज बहादुरोंको कहां नसीब है ! वे लोग अपने स्वामीकी सेवा करते हुए लोभादि के

वश होकर प्रायः दूसरों का अपकार कर बैठते हैं, और जो कहीं ऐसे आदमियों को मद्यादि का व्यसन लगगया (जोकि प्रायः लगजाता है) तो उस दशा में उन के हाथसे जो क्लेश प्रजा को न पहुंचे सो थोड़ा ! तुम्हारे निर्दोष, स्वतन्त्र और परोपकारपरायण जीवन से उनका क्या मुकाबला ? ॥ ५ ॥

६—सेवा श्ववृत्तिरतिगर्ह्यतमा जनानां
वाणिज्यकृत्यमपि मध्यममामनन्ति ।
सर्वोत्तमा कृषिरिति प्रथितः प्रवादो
लोकेषु मूलरहितश्चलितो न चापि ॥

श्ववृत्ति—कुत्ते कीसी दशा को पहुंचानेवाली सेवा नौकरी—तो विवेकी मनुष्यों के नज़दीक नीचकर्म है ही, वणजभी मध्यमकोटि में गिना जाताहै, परन्तु 'खेती सब से उत्तम है' यह कहावत बड़ी सारगर्भित और यथार्थ है ॥ ६ ॥

७—पातञ्जलोक्तयमसेवनधारणादौ
सौकर्यतस्तव भवेदिह संप्रवृत्तिः ।

राजन्यमान्यधनधान्यमहाजनानां
मूर्द्धन्य एव भवितासि तथाकृते तु ॥

हे किसानदेव! तुम्हारा चित्त विक्षेपादि दोषों से शून्य और शरीर द्वन्द्वसहिष्णु है, जंगल का एकान्त-वास तुम्हें स्वभाव से ही प्राप्त है, इस कारण योग-शास्त्रोक्त यम, नियमादि का सेवन तुम सहजहीमें-बहुत आसानी से करसक्तेहो। यदि ऐसा करलो तो सब लोग तुम्हारे पैर पूजें, और बड़े बड़े आदमी तुम्हें माथे पर बिठावें ॥ ७ ॥

८—त्वं श्रीमहेशो वृषपालकत्वात
ब्रह्मत्वमाप्तोऽसि प्रजापतित्वात् ।
विष्णुस्त्वमेव प्रतिभासि धीर !
सर्वत्र देशे विशसीतिहेतोः ॥

'वृषपाल' और 'पशुपति' होनेसे तुम 'शिव' हो। और 'प्रजापति' होने से ब्रह्मा भी तुम हो—अन्नादि-द्वारा प्रजा की पालना तुम्हीं करते हो (इसलिए प्रजा-पति हो) तथा सम्पूर्ण देशमें 'जातिरूपसे' व्यापक हो, इसलिए विष्णु (वेवेष्टि सर्वमिति विष्णुः) तुम्हीं हो। हे त्रिमूर्त्ते! तुम्हें नमस्कार है ॥ ८ ॥

९--शूलि[1]त्वहेतोरासि वा महेशो,
ब्रह्मा रजोमू[2]र्त्तितया त्वमेव।
गोविन्द[3]दामोदर[4]विष्णुविश्व-
म्भरादिनामान्यपि ते विभान्ति ‡ ॥

भावार्थ—अथवा 'शूली' होनेसे तुम शिवही और 'रजोमूर्त्ति' धारी ब्रह्मा भी तुम्हींहो, तथा विष्णुभगवान् के गोविन्द, दामोदर और विश्वम्भरादि नामभी तुममें बिलकुलही चरितार्थ होते हैं, खूब सादृश्य है ॥ ९ ॥

‡ नोट—यह पद्य गूढ़ार्थशाली अतएव विशेष व्याख्यासापेक्ष है। ८ वें, श्लोकमें शिव, ब्रह्मा और विष्णु इन तीनों के धर्मों का कृषकदेव में आरोप करके साम्य दिखलाया है, पर उतनेसे कविको सन्तोष नहीं हुआ अतः "पुनरपि तद्विषयमाह"—शूलित्व-हेतोरित्यादि। त्रिशूलधारी होनेसे शिवजी का नाम "शूली" है, और नाना प्रकार के दुःख दर्द = शूल उठाने से किसान भी 'शूली' है। अथवा 'शूलो विक्रय उच्यते' इस कोश के अनुसार किसी चीज़के बेचने को भी 'शूल' कहते हैं, और बेचनेवाले को "शूली," सो इस कर्म में कृषकदेव बड़े ही प्रवीणहैं। तकावी और बाकी चुकानेकी फ़सलसे पहिले ही रालीब्रादर्स के एजन्टों के हाथ अन्नबेच खोचकर कोरे कुल्लांच हो बैठते हैं, मुकद्दमा लड़ानेके लिये ज़मीन और कपड़े लत्ते बेचकर दिगम्बर बन बैठतेहैं, इसलिए यहभी "शूली" हैं—

१०-त्वत्कष्टदाने निरता मनुष्या
ये तुन्दिलाः सन्ति सहस्रशो वै।

(गतपृ०के फुटनोटकाशेष)रजोगुणके मुख्याधिष्टाता = सृष्टिकर्त्ता होनेसे ब्रह्माका नाम "रजोमूर्त्ति" है, किसान भी अन्नादिक का उत्पादक होनेसे 'रजोमूर्त्ति' है, अथवा रज-धूल या गर्द गुबारमें सदा लतपथ रहनेसे रजोमूर्त्तिहै-(रजोधूलिस्तद्विशिष्टा मूर्त्तिर्यस्य)। रहे, विष्णुके गोविन्द, दामोदर और विश्वम्भरादि नाम, इनकी व्यवस्था सुनिए-पुराणोंमें लिखाहै कि पृथिवी की खोज और रक्षा के लिए एकबार विष्णु को वराह बनना पड़ा था, इसीलिए उनका नाम 'गोविन्द' (गां विन्दति वराहरूपेणेति गोविन्दः) हुआ, सो किसानों को भी इसी भूमि के कारण न जाने कितनी बार हाकिमों और साहूकारों से यह पवित्र शब्द (वराह) सुनना पड़ता है! और इस की रक्षा के लिए वैसी ही दशा धारण करनी पड़ती है, सुतरां इन के 'गोविन्दपन' में कोई कमी नहीं, ये पूरे १६ आना गोविन्द हैं। रहे, "दामोदरदेव" उनकी कथा सुनिए-किसी दिन बचपन

जानन्ति ते नो निजधर्मरीतिं
हाहा! हतास्ते खलु मन्दभाग्याः ॥

(गत पृ० की नोटका शेष)

में कन्हैयाजी माता यशोदाको मक्खन चुरा चुरा कर दिक कर रहेथे, यशोदाने तंग आकर दहीबिलोने की रस्सी कृष्ण के पेट से लपेट कर उन्हें मथानी के डण्डे से बांध दिया, और इस प्रकार कन्हैया जी को शरारत की सज़ादी, इसी घटना के कारण कृष्णभगवान् का नाम "दामोदर" (दाम उदरे यस्य) पड़ा। सो कृष्ण के साथ तो ऐसी वारदात एक ही बार, वह भी बचपन में गुजरीथी, परन्तु किसानोंके साथ ऐसी२ घटनाएं रातदिन गुजरती रहती हैं, वाकी की इल्लत में, मालगुजारी की बाबत, साहूकार की डिगरी की गिरफ्तारियों में, न सिर्फ पेट पर ही किन्तु हाथ पैरों में भी रस्सियां लपेटकर इन्हें हवालात की हवा खिलाई जाती है। इस हेतु इन के 'दामोदरपन' में दमड़ीभर की कसर नहीं। और इनके "विश्वम्भर" होने में तो किसीको सन्देह होही नहीं सकता, सबका पेट यही तो भरते हैं। (इतिमल्लिनाथः)।

वे बहुत से बड़ी बड़ी तोंदवाले हज़रत जो रातदिन तुम्हें सतातेरहते हैं, बड़े मन्दभाग्य हैं, अपने धर्म को नहीं पहचानते, उनकी करतूत पर अफ़सोस है, वे कहीं के न रहे, नष्ट होगये। यदि वे अपना धर्म समझते तो तुम्हारी पूजाकरते, न कि उलटा सताते। तुम्हारा पैदाकिया अन्न खा खाकर ही तो उनकी तोंद फूली है, तुम अन्न न दो तो वह एकदिन में पिचक जाय। बेचारी तोंद तो ज़बानेहाल से तुम्हारे उपकारों का स्मरण कराती है, परवे मन्दान्ध मन्दभाग्य लोग नहीं समझते ॥ १० ॥

११--पूज्योऽसि सर्वस्य जगद्गतस्य
बालस्य वृद्धस्य तथेतरस्य।
तपस्विनस्ते परमार्थरूप-
मबोधयित्वा विचरन्ति लोकाः ॥

तुम सब संसार- क्या बालक क्या वृद्ध और जवान के पूज्य हो, परन्तु ज़ाहिरपरस्त लोग तुम्हारे तपस्विरूप को ठीक ठीक नहीं पहचानते, अन्यथा तुम्हारा अनादर न करते, इसीलिये वे भूले भूले औरफूले फूले

फिरते हैं, यदि तुम्हारे परमार्थरूप को पहचानते तो अवश्य कद्र करते ॥ ११ ॥

१२–हे भारतीयाः सुजना महान्तः !
स्वकीयदेशे यदि शान्तिरिष्टा ।
समुन्निनीषा च तदा भवद्भिः
कार्यः प्रयत्नः कृषिकारकार्ये ॥

हे भारत के रहनेवाले सज्जनपुरुषो ! और बड़े आदमियो ! यदि तुम अपने देश में शान्ति सुख और उन्नति चाहते हो तो तुम्हें खेती की हालत और किसानों की दशा सुधारने का प्रयत्न करना चाहिए । इसके विना इस कृषिप्रधान देशकी उन्नति का और कोई उपाय नहीं ॥ १२ ॥

१३--वाणिज्यकर्मण्यभिसंप्रवृत्ता
लक्षाधिपा कुत्सितमार्गसक्ताः ।
निजेन्द्रियारामविधानकामा
दिवानिशं त्वद्रुधिरं पिबन्ति ॥

बुरी तरह से धन बटोरनेमें तत्पर, अपने इन्द्रियाराम के पीछे पड़ेहुए, लखपति साहूकार, रातदिन तुम्हारा (किसानोंका) ख़ून पी रहे हैं ॥ १३ ॥

१४--प्रदाय किंचिद् द्रविणं पुरैव
कुसीदवृद्धिं समुपार्जयन्ति ।
प्राप्तव्यकाले द्विगुणं गृहीत्वा
धान्यं स्वपस्त्ये विनिवेशयन्ति ॥

वे लोग पहिलेही कुछ थोड़ा सा रुपया देकर, उसके बदले मनमाने भावसे, कई गुणा अनाज लेकर अपना कोठा भरलेतेहैं और तुम्हें छूंछ करदेतेहैं १४॥

१५--केचिच्च पट्वारिजना विरुद्धं
लेखं लिखित्वा परिभर्त्सयन्ति ।
स्वलाभलुब्धा निजधर्ममुग्धाः
साधुस्वभावान् कृषिकारधीरान्॥

कोई कोई लोभी पटवारी लोग जो अपना धर्म नहीं जानते, कुछका कुछ लिखकर सीधे सादे किसानों को धमकाकर लूटते हैं। पर धन्य है इन्हें कि सब कुछ सहते हुए भी धीर हैं ॥ १५ ॥ ❀ ❀ ❀

१६--दैवस्य कोपप्रभवातिवृष्ट्या-
दिकं कदाचित् प्रसरेत्तदा तु

उन्मत्तकल्पा इव राजभृत्या

दुःखं ह्यवर्ण्यं बहु दापयन्ति ॥

और जब कभी दैवके कोपसे अतिवृष्टि आदिके कारण कुछ पैदा नहीं होता, अकाल पड़ताहै, तो उस समय इन्हें (बाकी वसूल करनेवाले) राज-भृत्यों की ओरसे जो दुःख दिया जाताहै, वह कहा नहीं जा सकता॥१६॥

१७–हे विश्वसाक्षिपरमेश्वरदीनबन्धो !

कस्मान्निरागसि जनेऽपि दयाऽतिरेकम् ।

क्षेत्रेण जीवति तपस्विनि नो विधत्से

लोके प्रथामुपगतः "करुणैकसिन्धुः" ॥

हे संसारके साक्षी, दीनबन्धु परमात्मन् ! इन निरपराध दीन किसानोंपर आपही दया क्यों नहीं करते ? लोग तो तुम्हें 'करुणासिन्धु' कहते हैं ! ॥ १७ ॥

भारतोदय ॥

गीतिकात्मकामिलिन्दपाद (मुसद्दस)

१—ज्ञान जिसका ब्रह्मविद्या, का महाविश्रामथा ।
ध्यानजिसकालोकलीला, केलियेनिष्कामथा ॥
शुद्धजीवनकालजिसका, सर्वसद्गुणधामथा ।
"श्रीदयानन्दर्षि" मङ्गल, मूलजिसकानामथा ॥
बीज वैदिकधर्म का वह, ब्रह्मचारी बो गया ।
देखलो लोगो दुबारा, भारतोदय होगया ॥

२—धर्मरक्षक लेख लिखने में, जिसे आराम था ।
देशका उद्धार करना, मुख्य जिसका कामथा ॥
देह का बलिदान, जिसके प्रेम का परिणामथा ।
'लेखराम' प्रसिद्ध, जिसका लोकवल्लभनामथा ॥
धन्य अपने रक्त से वह, जातिका सुख धोगया ।
देखलो लोगो दुबारा, भारतोदय हो गया ॥

३—कर्मवीरों में विवेकी, साहसी बढ़ने लगे ।
सभ्यता की सीढ़ियों पै, सूरमा चढ़ने लगे ॥
वेदमन्त्रों को प्रतापी, प्रेम से पढ़ने लगे ।
वंचकों की छातियों में, शूलसे गढ़ने लगे ॥
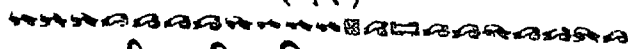
भारती जागी अविद्या, का अखाड़ा सोगया ।
देखलो लोगो दुबारा, भारतोदय होगया ॥
४–योगबलकी कामना, कुल केसरी करनेलगे ।
ध्यानद्वारा धारणामें ध्येय को धरने लगे ॥
हेकड़ोंकेसे कड़े दम, भीरुभी भरने लगे ।
धीर वीरों से प्रमादी, पातकी डरने लगे ॥
मोह माया मरगई, दल दुष्टता का रोगया ।
देखलो लोगो दुबारा, भारतोदय होगया ॥
५–तर्क-झंझा के झकोले, झाड़ते चलने लगे ।
युक्तियोंकी आग से घर, जाल के जलने लगे ॥
खोजकी टकसाल में पण, जांचके ढलने लगे ।
सत्य सत्ता के तपोवन, फूलकर फलने लगे ॥
पालियाचेतनखिलाड़ी,जड़खिलौनाखोगया ।
देखलो लोगो दुबारा, भारतोदय होगया ॥
६–खोपड़ी पाखंड खल की, खण्डनोंसे फटगई ।
घोर अत्याचार घनकी, घड़ घड़ाहट घटगई ॥

अन्धविश्वासीमतोंकी, खोखलीजड़ कटगई।
झक्कड़ों के झुंड की हट, होड़ हारी हटगई ॥
ऊतभूतों का बखेड़ा, डूब मरने को गया।
देखलो लोगो दुबारा भारतोदय हो गया ॥

७–धीर धरणी पर धरोहर, धर्म की धर जायँगे।
साधु संन्यासी इतिश्री, कर्मकी कर जायँगे ॥
संयमी संसार सागर को, खड़े तर जायँगे।
आलसी अंधेरखाते में, पड़े मर जायँगे ॥
क्याजिया जो जीव जीवन, भार भारीहोगया।
देखलो लोगो दुबारा, भारतोदय होगया ॥

८–राजपद्धति की प्रथा सब ओर से अनुकूल है।
दण्ड को काँटा न समझो कल्पतरु का फूल है ॥
धर्मचरचा के लिये यह, काल मंगल मूल है।
पर नहीं जो जागते हैं, हाय उन की भूल है ॥
होगया वह मुक्त शङ्कर, जान तुझको जोगया।
देखलो लोगो दुबारा, "भारतोदय" होगया ॥

॥ ओ३म् ॥

पुराणशिक्षा ॥

अर्थात्

पुराण क्या सिखलाते हैं ?

बाबूराम शर्मा

इन्दरावखी इटावा निवासी

द्वारा प्रकाशित ।

Printer B.D.S. Brahm Press Etawah.

दशमवारं ४००० } संवत् १९६९ { मूल्य)। सैकड़ा ॥)

—मिलनेका पता—बाबूराम शर्म्मा इटावा

॥ ओ३म् ॥

पुराणशिक्षा ॥

सर्वन्तु समवेक्ष्येदन्निखिलं ज्ञानचक्षुषा,
श्रुतिप्रामाण्यतो विद्वान् स्वधर्म्मेनिविशेतवै।

विद्वान्को उचित है कि सब बातोंको ज्ञान नेत्रसे देख कर वेदके प्रमाणसे अपने धर्म्मको स्वीकार करे ॥

ऊर्ध्वपुण्ड्र विहीनस्य स्मशानसदृशं मुखम् ।
अवलोक्य मुखंतेषामादित्यमवलोकयेत्॥१॥
ब्राह्मणःकुलजोविद्वान्भस्मधारीभवेद्यदि ।
वर्जयेत्तादृशंदेविमद्योच्छिष्टंघटंयथा॥२॥पद्म

जो लम्बा तिलक (त्रिफल्ला वैष्णवी मारका) धारण नहीं करता उसका मुंह स्मशान (मरघटा) के तुल्य है अतएव देखने योग्य नहीं-कदाचित् देख पड़े तो इसका प्रायश्चित्त करे अर्थात् तुरन्त सूर्य्यका दर्शन कर लेवे ॥१॥ ब्राह्मण कुलोत्पन्न जो विद्वान् होकर भस्मधारण करे उस-को शराबके जूंठे बासनकी नाईं (भांति) त्याग देवे॥२॥ अब देखिये इसके विरुद्ध शिवपुराणमें क्या लिखा है:-

विभूतिर्यस्यनो भाले नाङ्गे रुद्राक्ष धारणम्।
नास्येशिवमयी वाणीतंत्यजेदन्त्यजं यथा॥

विभूति (भस्म) जिसके माथे पर नहीं अङ्गमें रुद्राक्ष नहीं पहिने मुंहसे शिव शिव ऐसा न कहे उसको अन्त्यजकी नाईं त्याग देवे ॥

इसी भांति पृथिवी चन्द्रोदयमें भी वैष्णवोंको लताड़दी है:

यस्तुसन्तप्तशङ्खादिलिङ्गचिन्हधरो नरः।
स सर्वयातनाभोगी चाण्डालोजन्मकोटिषु॥

जो मनुष्य तपे हुए शङ्खादिकों के चिन्होंको धारण करता है वह सबनरक यातनाओं दुःखोंको भोगता है और कोटि जन्मपर्य्यन्त चाण्डाल होता है॥

ऊपरके श्लोकोंसे स्पष्ट विदित होता है कि तिलक धारण करनेके विषयमें पुराणोंमें सर्वथा परस्पर विरोध है अर्थात् शैवसम्प्रदायी चक्राङ्कित सम्प्रदायिओंके तिलकको बुरा कहते हैं और वैष्णव सम्प्रदायी-शैवादि सम्प्रदायियों के तिलकको निन्दित बताते हैं इससे यह निश्चित हुआ कि यदि पुराणोंको सत्य माना जाय तो सर्वप्रकारके तिलकधारी निन्दित और नरकाधिकारी ठहरते हैं-अतएव पुराण भ्रमजालमें फं-

ड़ाने वाले हुए जैसा कि पद्मपुराणमें स्पष्ट लिखा है.

व्यामोहायचराचरस्य जगतश्चैते पुराणागमास्तां तामेव हि देवतां परित्रकां जल्पन्ति कल्पावधि । सिद्धान्ते पुनरेक एव भगवान्विष्णुस्समस्तागमो व्यापारेषु विवेचनंव्यतिकरं नित्येषु निश्चीयते ॥

अर्थात्—जितने पुराण हैं सब मनुष्यको भ्रममें डालने वाले हैं उनमें अनेक देवता ठहराये गये हैं एक ईश्वरका निश्चय नहीं होता केवल एक भगवान् विष्णु पूज्य हैं

हे पौराणिक भक्तो ! जब सभी पुराण भ्रममें डालने वाले हैं जैसा कि ऊपरके वचनसे स्पष्ट है तो तुम्हें भ्रमसे बचाने वाला आर्यसमाजके अतिरिक्त और कौन है ॥

पुराणोंमें देवताओंकी निन्दा ।

भागवत्में लिखा हैः—

भवव्रतधरा ये च ये च तान् समनुव्रताः ।
पाखण्डिनस्ते भवन्तु सच्छास्त्रपरिपन्थिनः ॥

मुमुक्षवो घोररूपान् हित्वा भूतपतीनथ ।
नारायणकलाः शान्ता भजन्ति ह्यनसूयवः ॥

जो शिवके भक्त हैं और उनकी सेवा करते हैं सो

पाषण्डी और सत् शास्त्रके विरोधी हैं इस लिये जो कि मोक्षकी इच्छा रखते हैं सो भयानक वेष वाले भूतोंके स्वामी अर्थात् महादेवको छोड़ें और मन स्थिर और शान्त करके नारायणकी पूजा करें ॥

अब पद्मपुराणमें शिवकी स्तुतिमें ये श्लोक कहे हैं:—

विष्णुदर्शनमात्रेण शिवद्रोहः प्रजायते ।
शिवद्रोहान्न सन्देहो नरकं याति दारुणम् ॥
तस्माद्वै विष्णुनामापि न वक्तव्यं कदाचन ॥

अर्थ—यह है कि-विष्णुके दर्शन मात्र करनेसे महादेव जी क्रोधित होते हैं और उन (शिव) के क्रोध से दर्शन कर्त्ता निस्सन्देहमहानरकमें जाता है इस कारण विष्णुका नाम कभी नहीं लेना चाहिये ॥

इसी पुराणमें ये श्लोक हैं:—

यस्तु नारायणं देवं ब्रह्मरुद्रादिदैवतैः ।
समः सर्वैर्निरीक्षेत स पाषण्डी भवेत्सदा ॥
किमत्र बहुनोक्तेन ब्राह्मणा येऽप्यवैष्णवाः ।
नस्प्रष्टव्या न द्रष्टव्या न वक्तव्याः कदाचन ॥

अर्थ—यह है जो कहते हैं कि और देवता अर्थात् ब्रह्मा महादेव इत्यादि नारायणके समान हैं सो पाषण्डी हैं इनके विषयमें हम और बात न बढ़ावेंगे क्योंकि जो

आसुरा विष्णुको नहीं मानते उनको न कभी छूना न देखना और न उनसे बोलना चाहिये ॥

फिर पद्मपुराणमें विष्णुकी स्तुतिमें यह श्लोक है--

येऽन्य देवं परत्वेन वदन्त्यज्ञान मोहिताः ।

नारायणं जगन्नाथं ते वै पाखण्डिनो नराः ॥

अर्थ--यह है कि जो लोग किसी दूसरे देवताको नारायणसे जो जगत्का स्वामी है बड़ा करके मानते हैं सो अज्ञानी हैं और लोग उनको पाखण्डी कहते हैं ॥

पुनः इसी पुराणमें परस्पर विरोध देखो जैसेः—

एष देवो महादेवो विज्ञेयस्तु महेश्वरः ।

न तस्मात्परमङ्किञ्चित् पदं समधिगम्यते ॥

अर्थ-यह है कि महादेवको महेश्वर जानना चाहिये और यह मत समझो कि उससे कोई बड़ा है ॥

पुनः इसके विरुद्ध देखोः—

वासुदेवं परित्यज्य योऽन्यं देवमुपासते ।

तृषितो जाह्नवीतीरे कूपं खनति दुर्मतिः ॥

अर्थ यह है कि-जो विष्णुको छोड़कर दूसरे देवको मानता है सो उस मूर्खके समान है जो कि गङ्गाके तीर (किनारे) प्यासा बैठा कुआ खोदता है ॥

इसी प्रकार ब्रह्मा, विष्णु, श्रीकृष्ण, पराशर 'शिव'

चन्द्रमा, बृहस्पति, इन्द्र आदि महानुभाव को कि प्राचीन कालमें अत्यन्त प्रसिद्ध विद्वान् राजा महाराजा हुए हैं और सत् शास्त्रोंमें उनका बड़ा सत्कार किया गया है और जिन्हें ऋषिमुनी देवताओंकी पदवियां दी गई हैं पुराण उन्हींकी निन्दा करते हैं और कोई ऐसा दोष (इलज़ाम) नहीं उठा रक्खा जो इन देवताओं पर नहीं लगाते हैं !!!

(१) ब्रह्मा जी को पुत्री पर मोहित होने का (२) विष्णुको धोखेसे जालन्धरकी स्त्री वृन्दाके सङ्ग भोग करके उसके पातिव्रतधर्मको नष्ट करनेका (३) श्रीकृष्ण जी को १६००० गोपियों और कुब्जा कुबरीके साथ भी भोग विलास करनेका, (४) पराशरमुनिपर एक केवर्तकी लड़कीके सङ्ग व्यभिचार करनेका, द्रौपदीपर पांच पतियोंसे विवाह करनेका, शिवजीपर ऋषियोंकी स्त्रियोंपर मोहित होनेका, और उनके ००० गिर जानेका (५) देवीपर मस्तकपर छाजबांधे नग्न शरीर गर्दभपर सवार होने और मद्य मांस भक्षण करनेका ६ चन्द्रमापर अपने गुरु बृहस्पतिकी स्त्री तारा पर मोहित होकर वर्षों तक काम चेष्टा करनेका, इन्द्र पर गौतमकी स्त्री अहल्याके सङ्ग व्यभिचार करनेका ७ पुराणोंमें पूर्व महात्माओंको महाझूंठे २ कलङ्कलगाये गये हैं !!!

विचारशील पुरुष विचारकर समझते हैं कि पुराणोंमें प्राचीन महर्षि देवताओंकी कैसी निन्दाकी गई है, हिन्दू लोग प्रायः कहा करते हैं कि आर्यसमाजी देवताओं और बड़ोंकी निन्दा करते हैं परन्तु उनका यह कथन सर्वथा मिथ्या है क्योंकि आर्यसमाज सब प्राचीन महर्षियों और देवताओंको अत्यन्त श्रद्धा और मानकी दृष्टिसे देखता है और उनके पवित्र वेदानुकूल सराहने योग्य जीवनोंको सर्व प्रकारके कपोल कल्पित कलङ्कोंसे (जो कि पुराणोंके मानने वाले हिन्दू लोग बड़े घमंड फखरके साथ उनको लगाते हैं सर्वथा रहित बताता साबित करता और मानता है ।

हे पुराणमतावलम्बी महाशयो ! यदि अपने पूर्वज पुरुषाओं और देवताओंके निन्दक बनना नहीं चाहते हो, यदि धर्मका हित रखते हो तो इन मिथ्या, देव निन्दक और वेद विरुद्ध अष्टादश १८ पुराणोंके भ्रम जालसे अपने ताईं स्वतन्त्र करके पूर्ण सत्य भ्रमरहित वेदोंको मानों और तदनुकूल अपना आचरण बनाकर और आर्यपदवीको प्राप्त होकर वैदिकधर्मके प्रचारसे संसारको स्वर्गधाम बनाओ ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

* श्रीमच्छंकराचार्य कृत *

प्रश्नोत्तरी

भाषाटीका सहित

जिसको

प्रबन्धकर्त्ता दयानन्द ट्रेक्ट सोसाइटी ने
महाविद्यालय प्रेस हरिद्वार में छपवाया.

मिलने का पताः—

दयानन्द ट्रेक्टसोसाइटी
(दफ्तर) पुलिस के सामने
बाजार हरिद्वार.

४००० प्रति] [मूल्य ३ पाई.

॥ ओं परमात्मनेनमः ॥

अथ

भाषाटीका सहित

॥ प्रश्नोत्तरी ॥

अपारसंसारसमुद्रमध्ये संमज्जतोमे श-
रणंकिमस्ति । गुरोकृपालो कृपयावदैत-
द्विश्वेशपादाम्बुजदीर्घनौका ॥ १ ॥

टीका-प्रश्न—हे गुरो ! कृपालो ! कृपा पूर्वक यह कहो कि इस अपार संसार में डूबते हुए मुझको शरण क्या है। उत्तर—विश्व, अर्थात् संसार के मालक जो ईश्वर उनके चरणारविंद नौका है ॥ १ ॥

बद्धोहिकोयोविषयानुरागी कावाविमुक्ति-
र्विषयेविरक्तिः । कोवास्तिघोरोनरकःस्वदेह
स्तृष्णाक्षयस्स्वर्गपदंकिमस्ति ॥ २ ॥

टीका—प्र०—संसार में बंधा कौन है। उ०—विषयी प्र.—विमुक्ति क्या है। उ०—विषय त्याग ही विमुक्ति है। प्र०—और नरक क्या है। उ०—इच्छा सहित अपना देह है। प्र०—स्वर्ग क्या है। उ० तृष्णा का नाश होना ॥ २ ॥

संसारहृत्कः श्रुतिजात्मबोधः कोमोक्षहेतुः कथितस्सएव। द्वारंकिमेकन्नरकस्यनारी-कास्वर्गदाप्राणभृतामहिंसा ॥ ३ ॥

टीका—प्र०—संसार नाशक कौन है। उ०—वेद से उत्पन्न जो आत्मज्ञान है। प्र०—मोक्ष हेतु क्या है। उ०—आत्मा का जानना। प्र०—नरक का दरवाजा क्या है। उ०—स्त्री प्र०—स्वर्ग प्रद क्या वस्तु है। उ०—अहिंसा, अर्थात् जीवों का न मारना ॥ ३ ॥

शेतेसुखंकस्तुसमाधिनिष्ठो जागर्तिकोवा-सदसद्विवेकी। केशत्रवस्सन्तिनिजेन्द्रि-याणितान्येवमित्राणिजितानियानि ॥ ४ ॥

टीका-प्र०—सुख पूर्वक कौन सोता है। उ०—जो समाधि लगाता है। प्र०—जागता कौन है। उ०—जिसके चित्त में सत्

और असत वस्तु का ज्ञान है। प्र०—शत्रु कौन है। उ०—अपनी इन्द्री और काम, क्रोध, लोभ, मोह, शत्रु हैं, और वश की हुई इन्द्रियां मित्र हैं ॥ ४ ॥

कोवादरिद्रोहिविशालतृष्णः श्रीमांश्चकोयस्यसमस्ततोषः। जीवन्मृतःकस्तुनिरुद्यमोयःकोवामृतःस्यात्सुखदानिराशा॥५॥

टीका—प्र०—संसार में दरिद्री कौन है। उ०—जिसको तृष्णा अधिक है। प्र०—धनी कौन है। उ०—जो सब प्रकार से संतुष्ट है। प्र०—जीता हुआ मरे की सदृश कौन है। उ०—जो पुरुषार्थ हीन है, अर्थात् उद्यम रहित है। प्र०—अमृत क्या है। उ०—सुख देनेवाली निराशा, अर्थात् इच्छा रहित होना ॥ ५ ॥

पाशोहिकोयोममताभिमानःसम्मोहयत्येवसुरेवकास्त्री। कोवामहान्धोमदनातुरोयोमृत्युश्चकोवा पयशस्स्वकीयम् ॥ ६ ॥

टीका-प्र०-संसार में पाशरूप बन्धन क्या है। उ०-ममतारूप अभिमान। प्र०-मदिरा की तरह कौन मोहित करती है।

उ०-स्त्री। प्र०-संसार में विशेष अन्धा कौन है। उ०-काम वश हुआ पुरुष। प्र०-और मृत्यु क्या है। उ०-अपना अपयश, अर्थात् बदनामी॥ ६॥

कोवागुरुर्योहिहितोपदेष्टा शिष्यस्तुको-
योगुरुभक्तएव। कोदीर्घरोगोभवएवसा-
धोकिमौषधंतस्यविचारएव ॥ ७ ॥

टीका-प्र० संसार में गुरु कौन है। उ० जो हित का उपदेश करे। प्र० और शिष्य कौन है। उ० जो गुरुका भक्त हो। प्र. विशेष रोग क्या है। उ० संसार में वारम्वार जन्म लेना। प्र. तिस संसार रोग की औषधि क्या है। उ. परमात्मा का वि-चार करना॥ ७॥

किंभूषणाद् भूषणमस्तिशीलं तीर्थंपरं-
किंस्वमनोविशुद्धम्। किमत्रहेयंकनकंच-
कांताश्राव्यंसदाकिंगुरुवेदवाक्यम्॥८॥

टीका-प्र. आभूषणों में उत्तम आभूषण क्या है। उ. शील, अर्थात् शांतिवान होना। प्र. तीर्थों में श्रेष्ठ तीर्थ कौन है। उ. अपने मनका शुद्ध रखना ही तीर्थ है। प्र. इस संसार में क्या

त्यागने योग्य है। उ. धन और स्त्री। प्र. सदा क्या श्रवण करना चाहिये। उ. गुरु और वेद के वाक्यों को॥ ८॥

केहेतवोब्रह्मगतेस्तुसन्ति सत्संगति-
दानविचारतोषाः। केसन्तिसन्तोःखिल-
वीतरागाअपास्तमोहाःशिवतत्वनिष्ठाः९

टीका--प्र. परमात्मा के प्राप्त होने में क्या २ हेतु है। उ. सज्जनों की संगति करना, दान देना और विचार करना, तथा संतोष रखना। प्र. सज्जन कौन है। उ. जिन्होंने सब संसार के विषयों की प्रीति त्यागी है तथा मोह को त्यागकर परब्रह्म के विचार में तत्पर हैं॥ ९॥

कोवाज्वरः प्राणभृतांहिचिन्ता मूर्खो-
स्तिकोयस्तुविवेकहीनः।कार्य्यप्रियाका-
शिवविष्णुभक्तिःकिंजीवनंदोषविवर्जितंयत्

टीका--प्र. प्राणियों को ज्वर क्या है। उ. चिंता। प्र. मूर्ख कौन है। उ. जो ज्ञान रहित है। प्र. उत्तम कार्य्य क्या है। उ. कल्याण कारी विष्णु की भक्ति करना प्र. उत्तम जीवन क्या है। उ. सर्व दोषों से रहित होना॥ १०॥

विद्याहिकाब्रह्मगतिप्रदाया बोधोहिकोयस्तुविमुक्तिहेतुः । कोलाभआत्मावगमोहियोवैजितंजगत्केनमनोहियेन ॥ ११ ॥

टीका-प्र. विद्या कौनसी है । उ. जो ब्रह्मगति को प्राप्त करे। प्र. ज्ञान क्या है । उ. जो मोक्ष का कारण है । प्र. लाभ क्या है। उ. आत्मा की प्राप्ति होना । प्र. जगत् किसने जीता है । उ. जिसने मन जीतलिया है ॥ ११ ॥

शूरान्महाशूरतमोस्तिकोवा मनोजबाणैर्व्यथितोनयस्तु । प्राज्ञोथधीरश्चसमस्तुकोवा प्राप्तोनमोहंललनाकटाक्षैः ॥ १२ ॥

टीका-प्र. शूरों में महा पराक्रमी शूर कौन है । उ. जो कामदेव के बाणों से नहीं पीडित हुआ है, अर्थात् जो कामातुर नहीं है । प्र. बुद्धिवान् तथा धीर तथा समदर्शी कौन है । उ. जो स्त्री के कटाक्षों करके मोह को नहीं प्राप्त हुआ है ॥ १२ ॥

विषाद्विषंकिंविषयास्समस्ता दुःखीसदाकोविषयानुरागी । धन्योस्तिकोयस्तुप-

रोपकारी कः पूजनीयश्शिवतत्वनिष्ठः॥ १३

टीका-प्र. विषों में परम विष क्या है । उ. संसारी विषय ही विष है । प्र. सदा दुःखी कौन है । उ. जिसको विषयों में प्रीति है । प्र. धन्यवाद किसको है । उ. जो परोपकारी है । प्र. पूजन किसका करना योग्य है । उ. ब्रह्मज्ञानी का ॥ १३ ॥

सर्वास्ववस्थास्वपिकिंनकार्यं किंवाविधेयंविदुषाप्रयत्नात् । स्नेहंचपापंपठनंच धर्म्मंसंसारमूलंहिकिमस्तिचिन्ता॥ १४॥

टीका-प्र. ज्ञानी मनुष्य को सर्वदा क्या अकरणीय है, अर्थात् क्या करने योग्य नहीं है । उ. स्नेह, और पाप न करे । प्र. ज्ञानी को सदा क्या कर्त्तव्य है, अर्थात् क्या करना उचित है । उ. विद्या पठन करना और धर्म्म करना । प्र. संसार वृक्ष की जड़ क्या है । उ. चिंता, अर्थात् सन्देह ॥ १४ ॥

विज्ञान्महाविज्ञतमोऽस्तिकोवा नार्य्यापिशाच्यानचवंचितोयः। काशृंखलाप्राणभृतांहिनारीदिव्यंव्रतंकिंचसमस्तदैन्यम् ॥

टीका-प्र. ज्ञानियों में महाज्ञानी कौन है । उ. जो पिशाचनी रूपी स्त्री करके नहीं ठगा गया है । प्र. बन्धन क्या है ।

उ०—स्त्री। प्र०—उत्तमव्रत क्या है। उ०सेबस दीनभाव रखना।

ज्ञातुंनशक्यं चकिमस्तिसर्वै र्योषिन्मनो यच्चरितंतदीयम्। कादुस्त्यजासर्वजनैः दुराशाविद्याविहीनःपशुरस्तिकोवा॥१६॥

टीका-प्र०—सम्पूर्ण मनुष्यों को क्या जानने योग्य नहीं है। उ०—स्त्रियों का मन और उनका चरित्र। प्र०—सब मनुष्यों को क्या त्यागने योग्य है। उ०—दुराशा, अर्थात् खोटी इच्छा प्र०—पशु कौन है। उ०—विद्यारहित॥१६॥

वासोनसंगस्सहकैर्विधेयो मूर्खैश्चनीचैश्च खलैश्चपापैः। मुमुक्षुणाकिंत्वरितंविधेयं सत्संगतिर्निर्ममतेशभक्तिः॥१७॥

टीका-प्र०—किसका संग नहीं रहना चाहिये। उ०—मूर्खका नीच तथा पापी दुष्ट का। प्र०—मुमुक्षुओं का क्या शीघ्र करना चाहिये। उ०—श्रेष्ठ पुरुषों की संगति और निर्मोहता और परमेश्वर की भक्ति॥१७॥

लघुत्वमूलञ्च किमर्थितैव गुरुत्वमूलंयद्याचनञ्च। जातोहिकोयस्यपुनर्नजन्म कोवामृतोयस्यपुनर्नमृत्युः॥१८॥

टीका-प्र०-संसार में छोटाई का कारण क्या है। उ० किसी में याचना करना, अर्थात् मांगना। प्र०-और बड़ाई का कारण क्या है। उ०-किसी से नहीं मांगना। प्र०-इस संसार में कौन पैदा हुआ है। उ०-जिसका फिर जन्म नहीं। प्र०-और मराहुआ कौन है। उ०-जिसकी वारम्वार मृत्यु नहीं हो ॥१८॥

मूकोस्तिकोवा वधिरश्चकोवा वक्तुनयुक्तं समयेसमर्थः। तथ्यंसुपथ्यंनशृणोतिवाक्यं विश्वासपात्रंनकिमस्तिनारी ॥ १९ ॥

टीका-प्र० गूंगा कौन है। उ०-जो मनुष्य समय पर यथार्थ न कह सके। प्र०-बधिर कौन है। उ०-जो उत्तम बातों को न सुने। प्र०-विश्वास करने योग्य कौन नहीं है।

उ०-स्त्री, अर्थात् नारि ॥ १९ ॥

तत्वंकिमेकं शिवमद्वितीयं किमुत्तमंसच्चरितंयदस्ति। त्याज्यंसुखंकिंस्त्रियमेवसम्यग्देयंपरंकिंत्वभयंसदैव ॥२०॥

टीका-प्र०-एकतत्व क्या है। उ०-केवल शिवतत्व। प्र०-उत्तम क्या है। उ०-सुन्दर आचरण करना। प्र०-सुख कौनसा

त्यागने योग्य है। उ०—स्त्री सुख। प्र० देनेयोग्य क्या उत्तम है। उ०—अभय, अर्थात् निर्भयता ॥ २० ॥

शत्रोर्महाशत्रतमोऽस्तिकोवा कामःसकोपानृतलोभतृष्णाः। नपूर्य्यतेकोविषयैः सएव किंदुःखमूलंममताभिधानम् ॥२१॥

टीका—प्र०—शत्रुओं में महाशत्रु कौन है। उ०—क्रोध झूठ बोलना, लोभ, तथा तृष्णा सहित काम। प्र०—विषय से कौन तृप्त नहीं होता है। उ०—वही ऊपर कहा कामी पुरुष प्र०—दुःख का कारण क्या है। उ०—ममता, अर्थात् मोह ॥ २१ ॥

किंमंडनंसाक्षरतामुखस्य सत्यंचकिंभूतहितंसदैव । किंकर्म्मकृत्वानहिशोचनीयं कामारिकंसारिसमर्चनाख्यम् ॥ २२ ॥

टीका—प्र०—मुखकी शोभा क्या है। उ०—साक्षरता अर्थात् शास्त्रयुक्तवाणी। प्र०—संसार में सत्य क्या है। उ०—प्राणियों का हित करना। प्र०—कौन काम शोच करने योग्य नहीं है। उ०—शिव और परमात्मा का पूजन ॥ २२ ॥

कस्यास्तिनाशेमनसोहिमोक्षः क्वसर्वथा

नास्ति भयंविभुक्तौ । शल्यंपरंकिंनिजमूर्खतैव केकेह्युपास्यागुरुदेववृद्धाः ॥ २३ ॥

टीका-प्र०-किसके नाश होजाने से मोक्ष होता है । उ०-मनका चञ्चल धर्म दूर होकर चित्त शुद्धिसे । प्र०-सर्व प्रकारसे किस में भय नहीं है । उ०-विमुक्ति, अर्थात् मोक्षम प्र०-सब से दीर्घ दुःख कौन है । उ०-अपनी मूर्खता । प्र०-अच्छेप्रकार किसकी सेवा करनी उचित है उ०-गुरुदेव और वृद्धा की २३

उपस्थिते प्राणहरेकृतान्ते किमाशुकार्यं सुधियाप्रयत्नात् । वाक्कायचित्तैः सुखदं-यमघ्नं मुरारि पादाम्बुजचिन्तनं च ॥ २४ ॥

टीका-प्र०-बुद्धिमानों को यत्नपूर्वक मरण समय में क्या शीघ्र करना उचित है । उ०-वचन, शरीर, चित्त करके सुख के देनेवाले तथा यम के दंड के नष्टकरने वाले भगवान् के गुणों का ध्यान करना ॥ २४ ॥

केशत्रवः सन्तिकुवासनाख्याः कः शोभ-तेयः सदसिप्रविद्यःमातेवकायासुखदासु विद्या किमेधतेदानवशात्सुविद्या ॥ २५ ॥

टीका—प्र०—शत्रु कौन है। उ०—खोटी इच्छा। प्र०—सभा में कौन शोभा देता है। उ०—जिसको उत्तम विद्या है। प्र०—माता की समान कौन सुख देनेवाली है। उ०—उत्तम विद्या। प्र०—दान करने से किस वस्तु की वृद्धी होती है। उ०—विद्या दान करने से कभी न्यून नहीं होती है॥ २५॥

कुतोहिभीतिस्सततंविधेया लोकापवादाद्भव काननाच्च। कोवातिबन्धुःपितरश्च कोवा विपत्सहायाःपरिपालकाये॥ २६॥

टीका-प्र०—सदा किससे डरना चाहिये। उ०—लोकापवाद-अर्थात् अपयश और संसार रूपी कानन से। प्र०—अपना बन्धु कौन है। उ०—जो समय पर सहाय करे। प्र०—पिता कौन है। उ०—जो अपना पालन करे॥ २६॥

बुद्ध्वानबोध्यंपरिशिष्यतेकिं शिवप्रसादं सुख बोधरूपम्। ज्ञातेतुकस्मिनविदितं जगत्स्यात्सर्वात्मकेब्रह्मणिपूर्णरूपे॥२७॥

टीका-प्र०—जिसको जानकर कोई वस्तु जानने की शेष न रहे, ऐसा क्या है। उ०—सुख बोधरूप, अर्थात् मोक्षरूप शिवका ज्ञान। प्र०—और जिसके जानने से संसार ज्ञात होय ऐसा क्या है। उ०—सर्वात्मा परिपूर्ण ब्रह्म॥ २७॥

किंदुर्लभं सद्गुरुरस्तिलोके सत्संगति-
र्ब्रह्मविचारणाच । त्यागोहिसर्वस्यशिवा-
त्मबोधः कोदुर्जयः सर्वजनैर्मनोजः॥२८॥

टीका-प्र०-संसार में दुर्लभ वस्तु क्या है उ०-सतगुरु, और सत्संगति, और ब्रह्म विचार। प्र० सम्पूर्ण वस्तु का त्याग करने वाला कौन है। उ० शिवात्मबोध, अर्थात् आत्मा का ज्ञान। प्र०-सर्व मनुष्यों को दुर्जय क्या है। उ० मदन, अर्थात् कामदेव

पशोःपशुः कोनकरोतिधर्म्मं प्राधीतशा-
स्त्रोपिनचात्मबोधः। किन्ताद्विषम्भातिसु-
धोपमंस्त्री केशत्रवोमित्रवदात्मजाद्या, २९

टीका प्र० संसार में पशुओं में पशु कौन है। उ० जो शास्त्र को पढकर धर्म नहीं करता और आत्मज्ञान को नहीं प्राप्त है। प्र० वह कौनसा विषय है जो अमृत की समान विदित होता है उ० स्त्री, अर्थात् नारी। प्र. कौन शत्रु मित्र तुल्य ज्ञात है। उ० पुत्रादिक संतान ॥ २९ ॥

विद्युच्चलंकिंधनयौवनायु र्दानंपरंकिंचसु
पात्रदत्तम्। कण्ठंगतैरप्यसुभिर्नकार्यं किं
किंविधेयंमलिनैःशिवार्चा ॥ ३० ॥

टीका प्र. संसार में बिजलीकी समान् कौन वस्तु नाशवान है उ. धन, और युवा अवस्था और आयु प्र. उत्तम दान कौनसा है। उ. जो सुपात्र को दिया जाय । प्र. कण्ठगत प्राण होकरभी क्या न करना । उ. अधर्म प्र. सर्वदा क्या करना उचित है । उ. शिव पूजन अर्थात् परमात्मा की भक्ति ॥ ३. ॥

अहर्निशंकिंपरिचिन्तनीयं संसारमिथ्यात्म शिवात्मतत्वम् । किंकर्मयत्प्रीतिकरंमुरारेः क्वास्थानकार्यासततंभवाब्धौ ॥ ३१ ॥

टीका प्र० रातदिन क्या विचारना चाहिये। उ. संसार मिथ्या अर्थात् सुख का साधन नहीं और शिवतत्व ब्रह्म सत्य अर्थात् सुख का साधन है। प्र. कर्म कौनसा है । उ. जिस से परमेश्वर प्रसन्न हो प्र. निरन्तर कहां न विश्वास करना चाहिये । उ. संसार में ॥ ३१ ॥

कण्ठंगतावाश्रवणंगतावा प्रश्नोत्तराख्या मणिरत्नमाला । तनोतुमोदंविदुषांसुरम्यं रमेश गौरीशकथेवसद्य ॥ ३२ ॥

टीका प्रश्नोत्तरमणि रत्नमाला को पढे अथवा सुने तो पंडित आनन्द को प्राप्तहोय जैसे हरिहरकी कथा से ॥३२॥

॥ इति श्री प्रश्नोत्तररत्नमाला भाषाटीका सहित समाप्तः ॥

दयानन्द ट्रैक्टसोसाइटी
महाविद्यालय ज्वालापुर के नियम।

यह ट्रैक्टसोसाइटी वैदिकधर्म्म व देवनागरी प्रचार और महाविद्यालय के लाभ के लिये जारी कीजाती है।

२–जो महाशय २५) रुपये इस सोसाइटी की सहायतार्थ दान देंगे उनके नाम से एक देवनागरी ट्रैक्ट १००० छपवाया जायगा जो गरीबों को मुफ्त और आम लोगों को)॥ में दिया जायगा। और जो मूल्य प्राप्त होगा वह महाविद्यालय में खर्च किया जायगा।

३–जो महाशय १५००) महाविद्यालय की सहायतार्थ दान देंगे उनके नामसे १ लाख ट्रैक्ट छपवाकर जारी किया जायगा जो मूल्य प्राप्त होगा उससे एक कमरा बनवाकर उस पर दानी महाशय के नाम का स्मारक चिन्ह लगाया जायगा।

४–जो महाशय देवनागरी प्रचार के अतिरिक्त वैदिकधर्म के प्रचार के लिये इस सोसाइटी को ७) रु० ट्रैक्ट छपवाने के लिये दान देंगे उनके नाम से १,०००) उर्दू ट्रैक्ट छपवाया जायगा जिसकी मूल्य प्राप्ति महाविद्यालय में खर्च होगी।

मैनेजर ट्रैक्ट सोसाइटी
महाविद्यालय ज्वालापुर हरिद्वार.

ओ३म्

ट्रैक्ट नम्बर ५

अविद्या का दूसरा अंग
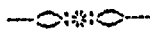
जिसको

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती जी ने रचा और

प्रबन्धकर्त्ता दयानन्द ट्रैक्ट सोसाइटी ने

महाविद्यालय मैशीन प्रेस ज्वालापुर में छपवाया.

मिलने का पता—

दयानन्द ट्रैक्टसोसाइटी

(दफ्तर) पुलिस के सामने

बाजार हरिद्वार.

४००० प्रति] [मूल्य ३ पाई.

॥ ओ३म् ॥

अविद्या का द्वितीय अंग।

अविद्या का प्रथम अंग तो ज्ञात होगया–कि अनित्य को नित्य मानना ही अविद्या है अब उसका दूसरा अवयव [हिस्सा] जतलाते हैं कि–अशुद्ध शरीर को शुद्ध मानना–प्रत्येक मनुष्य जो मोह [मोहब्बत] में फंसता है केवल एक सुन्दरत्व को देखकर। क्या कोई शरीर शुद्ध कहलासकता है कदापि नहीं क्योंकि शरीर के प्रत्येक अवयव से सिवाय मलों के और कुछ नहीं निकलता–चक्षु सब से प्रकाश वाली और शुद्ध है उस में भी जरासी मिट्टी पडजाने से जीवात्मा बहुत दुःख मानता है और जब देखोगे उस में से मल ही [ढीड] निकलता हुवा देखोगे यदि उसको तोडदो तो मांस और रक्त ही निकलता है मनुष्यों के शरीर का कौनसा अवयव है जिस के आभ्यन्तर से निकली हुई वस्तु को मनुष्य शुद्ध मानता हो रक्त को प्रत्येक मनुष्य अशुद्ध मानता है मांस भी अशुद्ध है ही, मेद और अस्थी भी शुद्ध नहीं निदान शरीर में सब ही अशुद्ध वस्तु अर्थात् घृणित पदार्थ भरेहुवे हैं कोई भी स्वच्छ पदार्थ नहीं–मनुष्य

नित्य जल से धोकर ऊपर की त्वचा को स्वच्छ करलेता है परन्तु आभ्यन्तर से मल मूत्रादिकों को कोई भी नहीं धोता है ऐसी दशा में शरीर के स्वच्छ होने की प्रतिज्ञा करना कैसी मूर्खता है--क्या शूद्र का शरीर अशुद्ध और ब्राह्मण का शुद्ध है नहीं २ महाराज शारीरिक दशा में तो ब्राह्मण और शूद्र एक हैं सब ही के शरीरों में वही भ्रष्ट पदार्थ भरेहुवे हैं जिस स्त्री को मनुष्य सुन्दर जानकर उस के मोह में प्राण तक देदेता है यदि विचार पूर्वक देखा जावे तो यही ज्ञात होगा कि सुवर्ण की घडी में पाखाना भरा हुवा है केवल बाह्य बनावट ने उसको सुन्दर बना रक्खा है वरन उस के आभ्यन्तर ऐसी वस्तु भरी हुई है कि जिस के स्पर्श से मनुष्य अपने हस्तपाद को बार २ धोता है चाहे कोई बाह्य दशा में कैसा ही सुन्दर हो-परन्तु मूल में निर्बलता होने से बच नहीं सकता जब शरीर की ऐसी गती है तो मनुष्य क्यों इससे मोह करता है केवल अविद्या के कारण से वरन कोई विद्वान् मनुष्य ऐसी मलीन वस्तु को स्पर्श करना भी अच्छा नहीं समझता--अविद्या के गहरे चक्र में गिरकर जीव की बुद्धि विनाश को प्राप्त होकर मनुष्य को धर्माधर्म का ज्ञान भी भुलादेती है यहां तक ही खराबी नहीं हुई किन्तु इस अविद्या के कारण से ऐसे मांस को कि जिसकी दुरगंध से मकानों में ठैरना कठिन ज्ञात होता था मनुष्यों ने उसको भी खुराक मान लिया है कोई नहीं विचारता कि भेड का संपूर्ण श-

और जिस खुराक से बना है वह भक्ष मनुष्यों की दृष्टि से गिरा हुवा है परन्तु मनुष्य उसको भी आनन्द से भक्षण करते हैं जब तक वह अच्छी दशा में है तब तो उसको अच्छा नहीं जानते परन्तु जब उस में दुरगन्ध आने लगजाती है तो वह मद्य बन जाती है और मनुष्य उसको पीने के वास्ते अधिक मूल्य पर भी लेते हैं।

निदान कि मनुष्यों ने अविद्या के कारण प्रत्येक भ्रष्ट से भ्रष्ट वस्तु को भी स्वच्छ समझकर अपनी आत्मिक दशा का विनाश करबैठे हैं जिसको देखकर विद्वान् लोग बहुत ही घबराते हैं यदि किसी का हस्त रक्त से स्पर्श होजावे तो वह बीसियों बार हाथ को मिट्टी से धोता है परन्तु रक्त के भरे हुवे मांस को भक्षण के लिए विचारे जीवों की मन्या नाडियों की चालको बन्द करदेते हैं अर्थात् वियोग कर डालते हैं प्रथम तो मनुष्यों का शरीर ही भ्रष्ट पदार्थों से भरा हुआ है परन्तु बहुत से मनुष्य कह बैठेंगे कि हमें तो मनुष्यों के शरीर में से दुरगंध नहीं आती यदि यह स्वच्छ नहीं होता तो दुरगन्ध अवश्य आती परन्तु आप को स्मरण रहे कि प्रथम तो दुरगन्ध उन पदार्थों में से आया करती है जो उनको कभी नहीं मिले—वरन आभ्यन्तर होने से अधिक समय तक जो गंध को गृहण करते हैं अतः उसकी ज्ञानशक्ती (तमीज) नहीं रहती और वह वस्तु अपने अनुसार होजाती है क्यों कि हम देखते हैं कि चमेकारी मनुष्य

चमडा धोने वाले खटीक चर्म की गंध के इतने शत्रु नहीं होते जितने हम तुम और मांस के बेचने वाले [कसाई] मांस की दुर्गन्ध से नहीं घबराने कारण यही है कि उनकी इन्द्रियों में उन वस्तुओं के समीप रहने से आपस में ऐसा सम्बन्ध होजाता है कि उन में कोई भेद ज्ञान नहीं होता—

जिस प्रकार इस जाति के मनुष्य दुर्गन्ध से घृणा नहीं करते उन को अस्वच्छ पदार्थ भी स्वच्छ ज्ञात होते हैं यही दशा उन मनुष्यों की है जो रात्रीदिन शरीर को ही जीव [रूह] समझकर उस की रक्षा में लगे रहते हैं उनको यह विचार नहीं होता कि जिस शरीर से प्रत्येक समय गंदगी के पदार्थ निकलते हैं वह शरीर किस प्रकार शुद्ध कहलासक्ता है—जब कि ऐसे ज्ञान के हेतु से स्थिती होजावे कि प्रत्येक शरीर गंदगी का थैला है चाहे वह थैला चमकदार मखमल का हो अथवा सनकी बोरी का परन्तु उस थैले के अन्दर दुरगंधित पदार्थ हैं तो वह कभी इस से मोह नहीं करसकता और कभी सुन्दर वस्तु को देखके उसपर मस्त (दीवाना) होसक्ता है क्योंकि वह जानता है कि यह सुन्दरता बाहर ही दृष्टिगोचर होती है; नाकि आभ्यन्तर भी उस में कोई वस्तु ऐसी नहीं है कि जिस से मोह किया जावे यह चलती हुई गाडी जो प्रत्यक्ष में चमकीली ज्ञात होती है प्रत्येक मनुष्य को अपनी तरफ खैंच सकती है परन्तु जिस

मनुष्य को इसके कारण का ज्ञान है वह जानता है कि यह पदार्थ सब दिखावटी हैं।

जो मनुष्य भक्षादिक की दुरगंधी को अच्छी तरह से जानते हैं—वह कदापि ऐसे अन्न के भक्षण का श्रम न करेंगे परन्तु जिन मनुष्यों को अविद्या के कारण से भ्रष्ट शरीर को स्वच्छ होने का निश्चय होजाता है वह शारीरिक उन्नति को समाजिक और आत्मिक उन्नति के बराबर समझते हैं नहीं २ किन्तुः इन से अधिक मानते हैं वह मनुष्य गंदी वस्तुओं को किस प्रकार अशुद्ध कहसक्ते हैं, और किस प्रकार उनके विचार से रुकसक्ते हैं संसार में यदि विचार पूर्वक देखा जावे तो बहुत थोड़े मनुष्य ऐसे मिलेंगे जो अविद्या के फंदे से पृथक हैं अविद्या के बल और पराक्रम ने संपूर्ण संसार को चक्र में डाल रक्खा है यद्यपि हजारों उपदेशकों के उपदेश होने पर भी जगत् में पापों का बल अपनी संपूर्ण शक्ती से कर्म कर रहा है, संसार की कोई शक्ती ऐसी नहीं है कि इसका निरोध करसके

गवरनमिंट (राजसभा) अधर्मियों को दंड देकर अर्थात् हिंसकों को वध का चोरों को कारागार इत्यादिक दंड देकर निदान कि हजारों प्रकार से यत्न करती हुई यह इच्छा प्रकट करती है कि मेरे राज्य में मनुष्य धार्मिक और सच्चे रहें और पापों का होना नितान्त छूट जावे परन्तु जहां तक पता मिलता है यही पाया जाता है कि पापों का होना इस प्रकार बढ़रहा

है कि जिस प्रकार वर्षा ऋतु में नदी की वृद्धि होती है—जहाँ पहिले एक स्थान पर व्यवहार होते समय तक कागज और मुकद्दमे बाजी का भय नहीं था वहां पर आज हजारों प्रकार के प्रबन्ध होनेपर नहीं नहीं किन्तु रजिस्ट्री और तमस्सुक के होने से यह झगडा समाप्त नहीं हुआ—भाई का भ्राता शत्रु होगया रात्री दिन राजसभा में जज बारिस्टर और इतर पंथी वकीलों की चांदी दृष्टि गोचर होती है प्रत्येक मनुष्य के मन में स्वार्थ ने अपना घर बनालिया है और अहंकार भी इतना चढरहा है कि अपने आपको न जान कि क्या (आत्मज्ञान) समझसकता है क्योंकि अविद्या के कारण वह नहीं जानता कि उसकी सत्ता क्या है जिस शरीर के लिये वह इतना झगड़ा कररहा है वह एक मिनट में विनाश को प्राप्त होनेवाला है आजकल की शिक्षा अविद्या को दूर करने के अतिरिक्त और भी अधिक वृद्धि को प्राप्त करादेती है बालक पाठशाला (स्कूल) में पीछे जाता है उसको तन की रक्षा का स्मरण प्रथम होता है छोटी सी अवस्था में बिना छाता और ऐनक के कार्य नहीं चल सकता कोट बूट और चुरट तो ऐसे आवश्यकीय हैं कि उनको एक दिन न मिले तो सभ्यता की पूंछ दूर होजाती है इस समय भारतवर्ष में अविद्या के द्वितीयाश्रय ने तो इतना बल प्राप्त करलिया है कि मनुष्य मूल से हजारों योजन दूर जापडे हैं क्या भारतवासियों ने शुद्धा शुद्ध का विचार नहीं

किया—क्या इस नियम का ज्ञान ही ऐसा, नहीं किन्तु भारत-वासियों को प्रत्येक में शुद्धा शुद्ध का विचार लगाहुवा है परन्तु शोक इस बातका है कि इसे उत्तम नियम का अर्थ उल्टा समझलिया है भोजन करते समय शुद्धा शुद्धी का बहुत कुछ विचार है परन्तु वह सब बेढंगा है कि अविद्या के दूर करने के अतिरिक्त उसको बढ़ाने का कारण होगया है भारत में कानकुब्ज ब्राह्मण शुद्धी का बहुत अहंकार करते हैं उनकी भोजनादि में तो यह दशा है कि वह ब्राह्मण के हाथ की रोटी तक नहीं खाते हैं यही नहीं किन्तु आपस में भी भाई २ के हाथ की नहीं भक्षण करते परन्तु क्या उन्होंने भ्रष्ट पदार्थों का त्याग किया (नहीं जी इन बातों को ओ३म् २ जपो) नहीं २ किन्तु उन में तो मांस के भक्षण करनेवाले प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होते हैं किन्तु उन में जो शुद्ध होते हैं वह मांस अहारी के अतिरिक्त मद्य को भी पान करते हैं काश्मीरी ब्राह्मण जो एक दूसरे के हाथ की बनी हुई रोटी नहीं खाते नहीं २ किन्तु पकवान भी नहीं खाते वह भी तो मांस को चट करजाते हैं किंतु इन दोनों प्रकार के पंडितों में हजारों मनुष्य इन पदार्थों का भक्षण करना धर्म समझते हैं और अपने इष्ट देवताओं को अज [बकरे] बलिदान देते हैं नहीं २ किंतु प्रायः मन्दिरों में भैंसों के कंठ पर शस्त्र रक्खा जाता है, काली कलकत्ते वाली का मंदिर जिस मनुष्य ने देखा होगा वह अच्छी तरह से जानता

है कि कहां तक इन विचारे पशुओं की हानी इस अविद्या के कारण से होती है प्रटियाले में विश्वपती नाथ महादेव के मन्दिर में हजारों भैंसे प्रत्येक वर्ष मारे जाते हैं विचारी बकरी और भेडों की क्या संख्या है विन्ध्याचल देवी के मंदिर में भी ऐसा ही हिंसा का बाजार गरम दृष्टि गोचर होता है वहां इस ही अविद्या के कारण से धर्म के स्थान में अधर्म करते हैं नहीं विचारते कि जिस दुर्गा को तुम माता कहते हो क्यों वह जगत में होने से इन बकरे भैंसों की भी तो माता होगी—क्या वह देवी है अथवा डायन है क्योंकि डायन अथवा सर्पनी के अतिरिक्त और कोई माता अपने बच्चों का भक्षण करना नहीं चाहती है सामान्य दृष्टान्त प्रसिद्ध है कि—

डायन भी तीन गृह त्याग देती है न ज्ञात कि क्यों मनुष्य देव्यादि पर कलंक लगाते हैं अजी महाराज केवल अपनी अविद्या को सिद्ध करने के लिये अभी आप ज्वाला मुखी के मन्दिर में चले जावें वहां भी जीवों की हिंसा ही होती पावेंगी यही दशा कांगडे में दृष्टी गोचर होती है भला ऐसी उत्तम जगह में जहां पूर्व बडे २ विद्वान रहते थे और इस समय भी जो जाते हैं वह धर्म का संकल्प करके पुनः क्यों ऐसे खराब कार्य होते हैं केवल अविद्या के कारण से वरन कोई विद्वान मनुष्य ऐसी बातों को मान नहीं सकता है-

यद्यपि इन दुराचारों में स्वार्थ का भी पूर्ण भाग है परन्तु स्वार्थ तो पुजारी और तीर्थ के ब्राह्मणों का ही कहला सकता है बिचारे यात्री जो दूर दूर से बहुत सा रुपया व्यय करके व दुनर्मा आपत्ती उठाकर घरके कार्य और धन्धो को छोड कर यहां तक आते हैं वह तो अपने ज्ञान में धर्म करने जाते हैं यदि उनको ज्ञान होता कि जीवों की हिंसा जिसको हम अविद्या से धर्म समझ बैठे हैं महापाप है न तो उन्हों ने धर्म शास्त्र की शिक्षा पाई और नहीं सु विद्वानों का सत्संग किया है यदि वह गए तो उन साधुओं के पास जो यात्री वाममार्गी होते हैं अथवा अहम्ब्रह्म भी होते हैं इन दोनों प्रकार के साधुओं के पास तो धर्म की शिक्षा मिल ही नहीं सक्ती क्योंकि वाममार्गी तो अधर्मको भी धर्म मानता है और नवीन वेदान्ती के विचार में जीव ही ब्रह्म है जिसके लिये किसी धर्म की आवश्यका ही नहीं है।

—

इन के अतिरिक्त वैरागी आदिक तो बिलकुल अपठित होते हैं यही कारण है कि संपूर्ण वह जातियां कि जिनके हृदय में दया भी होती है वैदिक धर्म से पृथक होकर जैन धर्म में मिलित हुये यदि इस प्रकार के हिंसक धर्म न चल जाते जोकि वेदों के विरुद्ध शिक्षा दे रहे हैं तो कदापि आर्यवर्त्त में बौद्ध जैनादिक नास्तिक मत नहीं चलते और नहीं उन के आचार्यों की उन के चलाने की आवश्यकता ज्ञात होती अस्वच्छ पदार्थको

स्वच्छ जानते वाले वाममार्गियों ने आर्यावर्त्त को बहुत कुछ हानि पहुंचाई क्यों कि मनुष्यों को धर्म के पंथ से हटाकर अधर्म के मार्ग में लगा दिया और आत्मिकोन्नति के अतिरिक्त शारीरकोन्नति की पुकार मचा दी और कहने लगे-

यावज्जीवेत् सुखेञ्जीवेन्नास्ति मृत्यरगोचरः
भस्मिभूतस्य देहस्य पुनरागम नमकुतः

अर्थ—जबतक जीवे सुख से जीवे क्यों कि प्रत्येक मनुष्य को मृत्यु के पंजे में आना है और भविष्यत के लिए धर्माधर्म कोई वस्तु नहीं है क्यों कि जो शरीर भस्म होगया वह आगे को दूसरी बार कर्मों का फल भोगने के वास्ते किस प्रकार आ-सकता है इस प्रकार के अशुद्ध शरीर को शुद्ध मानने वालों ठीक बातों को न जानकर संसार में ऐसी अविद्या फैलादी है, और मनुष्यों में धर्म के नाश होजानेसे लिप्सा (हिरस) इतनी बढ़गई है कि जिसके कारण से मनुष्य अपनी इच्छा पूर्ण करने के वास्ते अधर्म पर तत्पर होगये—विजयसिंह ने विश्वासघात करके पृथ्वीराज को मरवाया राना सुखदेव राना सांलगा का संपूर्ण कार्य बिगाड़ा—जयपुर और जोधपुर के राजपूत महाराजाओं ने कि जिन सुकुल राजपूतों में प्रतिष्ठा का

गंडा समझा जाता है यवनमती राजाओं को लड़की देदी क्षत्री
पने को बट्टा लगा दिया ऐसा क्यों मनुष्यों ने सांसारिक प्रतिष्ठा
और शरीरों के भोगों को धर्म और कर्म से अधिक समझा था
उन के सामने धर्म एक तुच्छ वस्तु थी. निदान कि वाममार्ग ने
भारतवर्ष को इतने कलंक लगाये हैं कि जिनके लिखने के
लिये इस लघु पुस्तक में स्थान कहां मिल सक्ता है।

अजी वाममार्ग क्या है—वाम शब्द का अर्थ उलटा और
मार्ग का रास्ता है अर्थात् मुक्ती का उलटा रास्ता सर्वदा मिथ्या
मार्ग पर वही चलते हैं कि जिन को रास्ते का ज्ञान न हो और
ज्ञान का ठीक २ न होना यही अविद्या है अतः आर्यावर्त्त में
वाममार्ग का कारण यह अविद्या का दूसरा अवयव है अर्थात्
शुद्ध वस्तु को अशुद्ध जानना जब तक मनुष्य जाती इस भ्रष्ट
शरीर को स्वच्छ समझे रहेंगे तबतक यह अविद्या दूर नहीं
होसक्ती और नहीं उन के हृदय में आत्मा की उन्नति का वि-
चार आसकता है क्यों कि पश्चिम की तरफ चलने वाला पूर्व
के पदार्थों को देख नहीं सकता जब तक कि वह पश्चिम की
तरफ से पूर्व की तरफ न देखे—

इस ही प्रकार शारीरिक और आत्मिक उन्नति के दो विरुद्ध
मार्ग हैं जो मनुष्य शारीरिक उन्नति में लगे हुवे हैं वह आत्मिक
उन्नति से दूर भाग रहे हैं और जो आत्मिक उन्नति की चेष्टा
करते हैं वह शरीर की कुछ परवाह नहीं करते और जो मनुष्य

दोनों उन्नति चाहते हैं वह दोनों मार्ग से गिर जाते हैं जिस प्रकार एक मनुष्य देहली में है वह कलकत्ते भी जाना चाहता है जो कि पूर्व में है और पंजाब भी तो नित्य एक मील पूर्व को जाता है और एक पश्चिम को और कुछ कालान्तर के पश्चात् अपने को देहली में ही देखता है न तो वह कलकत्ते आसका और नहीं पंजाब में परन्तु हमारे पाठकगण कह उठेंगे कि यदि यही दशा है तो आर्यसमाज के छठे नीयम में यह क्यों लिखा है कि शारीरिक समाजिक और आत्मिक उन्नति करना क्योंकि तुम शारीरिक उन्नति के विरुद्ध कह रहे हो परन्तु स्मर्ण होकि इस प्रकार की तर्क करने वालों ने स्वामी जी के नीयम को समझा नहीं क्योंकि नीयम यह है कि संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश है अब उस की व्याख्या करते हैं कि संसार का क्या उपकार किया जावे सो उसके उत्तर में कहते हैं कि जो मनुष्य अनाथ और वृद्ध हो अपनी शारीरिक दशा में निर्वल होने से रक्षा में तन्त्र है उनको भोग्य पदार्थादिक की सहायता देकर शारीरिक उन्नति करना और जो मनुष्य अविद्या के कारण से अपनी आत्मा को निरवल जानते हैं और उनके अन्दर इस प्रकार की शक्ति (होसला) नहीं है कि वह अच्छे कार्य करसकें तो उनको धर्मोपदेश देकर अविद्या के जाल से निकाल कर उनकी शक्तियों का दर्शन कराने से दृढ बनाना यह आत्मिक उन्नति है और जो मनुष्य मतमतान्तरों के झगडों से-भाई होने पर भी आपस में झगडे रहे हैं उनको वैदिक

धर्म की पवित्र शिक्षा से इन वाद विवादों से हटा कर परमात्मा की सच्ची भक्ती में लगाना यह सामाजिक उन्नति है क्योंकि अब सब मनुष्य परमात्मा के सच्चे सेवक और वैदिक धर्म के अनुसार काम करने वाले हो जावें तो जगत में कोई भी खराबी नहीं रहती और मनुष्य जाती के जो अविद्या के कारण से टुकड़े होकर प्रत्येक मनुष्य अपने आपे को निर्बल समझ बैठा है यहां तक कि बहुत मनुष्य केवल रोटी का उत्पन्न कर लेना ही बहुत कुछ समझ रहे हैं वह नहीं जानते कि हम मनुष्य जाती से पशु बन रहे हैं क्योंकि भविष्यत का प्रबन्ध करना मनुष्य का धर्म है और वर्तमान में अपने पास हो उस पर ही सन्तोष करना पशुओं का धर्म है क्योंकि मनुष्य सर्वदा आगे बढ़ने की इच्छा रखता है हमारे विचार में तो जब तक अविद्या का द्वितीय अवयव संसार में स्थित रहेगा तब तक कोई मनुष्य वह उन्नति कि जिस की पूर्व के ऋषी और विद्वान् भी प्रशंसा करते थे नहीं हो सकता और जो मनुष्य इस अविद्या से पृथक होजाते हैं वह अपने कामों को बड़े प्रबल से कर सकते हैं और उन में से एक २ मनुष्य लाखों मनुष्यों को सुधार सकते हैं आओ आर्य गण ! हम सब मिल कर परमात्मा से प्रार्थना करें कि हमारे हृदय से अविद्या के इस अंग को ढूंढने में हमें सहायता दे आओ प्रयत्न करें कि यह हमारी आत्मा को दुर्बल बनाने वाली हम से दूर चली जावे और हम जिस आनन्द को प्राप्त करना चाहते हैं उस को प्राप्त कर लेवें ॥ ओ३म् शम्

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गौशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

ओ३म्

रामायणसार ॥

श्रीमहाराजा रामचन्द्रजी के जीवन चरितसे

ग्रहण करने योग्य शिक्षायें ।

श्री स्वामी दर्शनानन्द जी लिखित

बाबूराम शर्मा इटावा द्वारा प्रकाशित ।

इन शिक्षाओंसे अनुकूल चलनेसे लोक परलोक अवश्य सुधरते हैं ॥

Printed by B. D. S. at the Brahm Press Etawa.

चतुर्थवार ४००० } संवत१९६९ { मूल्य)। सैकड़ा१)

मिलनेका पताः—बाबूराम शर्मा—इटावा ।

* रामायण सार *

☞ श्रीरामचन्द्र जी के भक्तो! दिनरात रामायणके पढ़ने सुनने वालो महाराज रामचन्द्रजी को अपना बड़ा मानने वालो! देशके क्षत्री जनो! आप सर्वथा रामायणको (जो आर्य्यकुल भूषण, क्षत्रीकुल कमल दिवाकर वेदोक्त धर्मकर्मप्रचारक, देशरक्षक, शूर शिरोमणि रघुकुलभानु श्री मर्य्यादा पुरुषोत्तम, दशरथात्मज, महाराजाधिराज, महाराज रामचन्द्रजीका जीवन चरित है) सदा पढ़ते सुनते हैं परन्तु शोक है कि आप उस महानुभाव के दैवी जीवनसे कुछ भी लाभ नहीं उठाते। महाशयो! यह रामचरित ऐसा उत्तम है कि यदि मनुष्य इसके अनुसार अपना जीवन व्यतीत करे तो अवश्य मुक्तपदको प्राप्त होगा महाशयो! रामायणके आदिमें महाराज के जन्मका वृत्तान्त लिखा है जिससे बोध होता है कि हमारे देशके राजों को जब २ सन्तान की आवश्यकता होती थी तब २ वे लोग विद्वान ब्राह्मणों को बुलाकर यज्ञ कराते थे और इस समय के लोगोंकी भांति गाजीमियां और मसजिदों या इसी तरहके ढकोसले न-

करते थे वे कभी कोरी के गंडे सरडे मुसण्डों से सन्तान न चाहते थे वे गूंगापीर और चुडैल मसानीको न मानते थे वे टोने टुटके और गंडा तबीज न कराते थे यह सब बातें आपको महाराज रामचन्द्रजीके जन्मसे प्राप्त होती हैं

हे रामायणके पढ़ने सुनने वालो! अबशीघ्र ऐसी मूर्खता को त्याग यज्ञादि कर्म प्रारम्भ करो फिर महाराजका वशिष्टजी से विद्याभ्यास करना है जिससे बोध होता है कि पूर्व समयमें सब क्षत्री ब्राह्मण वैश्य द्विजाति मात्र पढ़ते थे आजकालकी भांति यह न था कि विद्या पढ़ना आजीविका के वास्ते समझें किन्तु विद्याभ्यास मनुष्यताका हेतु मानाजाता था मूर्खको मनुष्य संज्ञाही न मिलती थी अब रामायण के पढ़ने सुनने वालो शीघ्र विद्याभ्यास करो और उस वेद विद्याको जिसको महाराज रामचन्द्र जी ने पढ़ा था संसारमें फैलाओ उससे आगे महाराजा रामचन्द्रजीका विश्वामित्रके साथ यज्ञरक्षार्थ जाना हैजो इसबातका पूराप्रमाण है कि पूर्व समयमें विद्वानों और तपस्वियोंका कैसा मान था देखो राजा दशरथने अपने प्राणोंसे अधिक प्यारे दोनों पुत्र विश्वामित्रको दे दिये दूसरे उस कालमें क्षत्रियोंके बालक

ऐसे बली होते थे जो रामचन्द्रजी ने इस छोटी सी अवस्थामें ऋषिके साथ वनमें जानेसे भय नहीं खाया और छोटीसी अवस्थामें दोनों भाइयोंने सहस्त्रों दुष्ट राक्षसोंको हना यह सब ब्रह्मचर्य्य विद्या और धर्म का प्रताप देखकर भी हम लोग धर्म नहीं करते फिर रामचन्द्रजीका जनकपुरमें जाकर धनुष तोड़ना लिखा है इससे भी उनके बलकी प्रशंसा प्रतीत होती है इसके आगे महाराजा रामचन्द्र जी के विवाहका वृत्तान्त है जिससे यह विदित होता है कि उस कालमें स्वयंवरकी रीति थी और आजकलकी तरह गुड़ियां गुड्डेकी शादी अर्थात् बाल विवाह प्रचलित न था कन्या और वर दोनों ब्रह्मचर्य्य का पालन करते थे और जब पूर्ण विद्वान और बलवीर्य्य पुष्ट होजाता था तब विवाह करते थे जिससे सदा पति और पत्नीमें प्रीति रहती थी और उनके ऐक्यसे गृहस्थाश्रम सुख से व्यतीत होता था सन्तान पुष्ट और शुद्ध बुद्धि उत्पन्न होती थी क्यों रामायणके मानने वालो ! आप क्यों बालविवाह करके अपनी सन्तानको नष्ट भ्रष्ट करते हो ? इसके पश्चात् महाराज को युवराज मिलनेका लेख है और कैकेयीके

आदेशसे महाराजका बनको जाना और दशरथ म-हाराज का मृत्यु लिखा है इससे क्या ज्ञात होता है-प्रथम तो यह कि नीचके संगसे सदा हानि ही होती है देखो कैकेयीने मन्थराके कुसंगसे अपना सुहाग नष्ट किया संसारको दुःख दिया जगत्में अपयश लिया !!!

जिसपुत्रकेवास्ते यह अधर्म कियाथा उस पुत्रनेभी उसको बुरा कहा क्या इससे कुसंगसे बचनेकी शिक्षा नहीं मिलती?

जो लोग अधर्म करते हैं उनके घरके लोग भी उनको बुरा कहते हैं दूसरे महाराजा दशरथने राजको त्याग दिया अपने पुत्र प्यारों नहीं २ नयनोंके तारों राजदुलारोंको चौदहवर्षका बनबास दिया अपने प्राणोंका भी वियोग स्वीकार किया परन्तु अपना वचन न जानेदिया और संसारभरमें यशलिया और संसारको यह शिक्षा दी कि मनुष्यको जो कुछ किसीको देनाहो शीघ्र देदे परन्तु किसीसे प्रतिज्ञा न करे न जाने कौन कैसा समय आजावे क्योंकि यदि राजा दशरथ कैकेयीको उसी समय वर देदेते तो उनको यह कष्ट और पुत्रका वियोग न सहना पड़ता इस स्थलपर और भी बहुतसी शिक्षायें मिलती हैं जैसे अंधरी अंधरा अपने पुत्र सर्वनकी मृत्यसे मर गये

उसके फलसे राजा दशरथ भी अपने पुत्रके वियोगसे मरे म-
हाराजा रामचन्द्रजीके वनगमनमें लक्ष्मणजीका संग जाना
देखो उस समयके लोग कैसे पिताके भक्त होतेथे कि महा-
राजा रामचन्द्रजीने पिताके कहनेसे राजही नहीं त्यागा
किन्तु वनवास स्वीकार किया। क्या आज कल रामायणके
पढ़ने सुनने वाले अपने पित्रोंकी आज्ञा पालन क-
रते हैं दूसरे लक्ष्मणजीका संग जाना भाइयोंकी प्रीतिका
प्रमाण देता है लक्ष्मणजीने भाईके लिये देश, स्त्री, माता,
सुख सब त्याग करदिया सच्चे भाइयोंकी प्रीति ऐसी ही
होती है क्या आज कलके रामायण पढ़ने वाले कभी अ-
पने भाइयोंसे ऐसी प्रीति करते हैं महाराजके संग सी-
ताजीका वनगमन लिखा है जिससे स्वयम्बरकी रीतिका
गुण और सीताजीका पतिव्रतधर्म जलकता है क्या आज
कलके लोग बालविवाहसे इस पतिव्रतधर्मकी आशा रख
सकते हैं ? सीताजीने अपने पतिके लिये माता पिता सास
राज गृह सुख त्याग कर दिया पतिके संग वन वन घूमना
स्वीकार किया और पतिके विना सब सुखोंको दुःखरूप
समझा अहा ! हा ! हा ! क्या ही पतिव्रतधर्म उस समय
देशमें प्रचलित था आज कलकी बालविवाहकी पत्नी तो

सदा गङ्गादि मेला, ताजिया मियाँ मदारोंमें घूमना धर्म समझती हैं इस सच्चे पतिव्रतधर्मका तो लेशभी नहीं रहा पुनः महाराजा भरतका रामचन्द्रजीको लेने जाना वर्णन किया है वह क्या ही देशके सौभाग्यका समय था कि अधिकारीके अधिकारका इतना ध्यान रक्खा जाता था भरतजीने राजकी तृष्णा नहीं की सबसे अधिक भाई-की प्रीति दिखलाई फिर और बनमें सूर्पनखा रावणकी बहिनका रामचन्द्र जीके पास आकर विवाह करनेकी प्रार्थना करना है और महाराजका उसको मना करना उसका न मानना और ज़िद्द करना लक्ष्मण जीका उस की नाक काटना है इससे महाराजा रामचन्द्रजीका एक ही स्त्रीसे सन्तुष्ट परस्त्रियागमन वा दूसरे विवाहसे घृणा करना है क्या रामायणके पढ़ने सुननेवाले यहांसे परस्त्री गमनके दोषोंको न त्याग करेंगे? प्यारे देशवासियो! शीघ्र परस्त्रीगमन जैसे घोर पापको त्यागो यह भी युवाव-स्थाके विवाहका फल है कि पति और पत्नीमें ऐसी प्रीति है कि वह उसके वास्ते घर बार त्याग दे वह उसके लिये संसार भर की स्त्रियोंको काकविष्टाके तुल्य माने। इससे यह भी शिक्षा मिलती है कि जो अधर्म पर हठ-

करता है उसकी नाक काटी जाती है और वीर क्षत्री-
गण ऐसे हठी और दुराचारियोंको सदा दण्डही दिया
करते थे फिर इसके पश्चात् रावणका योगीस्वरूपमें आना
लिखा है जिससे ज्ञात होता है कि जब दुष्ट अपनेमें बल
नहीं देखता तब इसी प्रकारका छल करके सत्पुरुषोंको
कष्ट देता है और इससे यह भी ज्ञात होता है कि किसीके
वाह्य स्वरूपपर न भूलना चाहिये क्योंकि दुष्टजन भी
अच्छे पुरुषोंका आकार बना सकते हैं शोक है कि इस
बातको भी देखकर हमारे देशवासी अपनी स्त्रियोंको
मुसण्डे भेषधारियोंके पास जानेसे नहीं रोकते जब सीता
ऐसी पतिव्रतास्त्रीको यह कपटीपुरुष धोखा देकर निकाल
लेगया तो औरको क्या समझते हैं ? इसके पश्चात् जटायु-
का रावणके साथ युद्ध करके प्राण देना लिखा है जिससे
सच्चे मित्रोंका मित्रभाव ज्ञात होता है जटायुने प्राण दिये
परन्तु अपने जीते जी अपने मित्र दशरथकी पतोहूको
दुष्ट रावणसे बचाया आप क्या इस शिक्षित रामायणी
पक्षीसे भी न्यून अपने मित्रोंके साथ उपकार करेंगे? उसके
आगे रामचन्द्रजीका सीताजीसे वियोग और बिलाप है
जिससे ज्ञात होता है कि संसारके संयोगका वियोग अच्छे

अजब महात्माओंको घबड़ा देता है उसके पश्चात् रा-
म चन्द्र जी को सुग्रीवका मिलना है जिससे ज्ञात होता है
कि संसारमें दो प्राणियोंके मेल से दोनोंका कार्य्य
सिद्ध होता है और रामचन्द्र जीका बाली को मारना
है इससे यह ज्ञात होता है कि जो किसी से शत्रुता रख-
ता है उसका अवश्य एक दिन नाश हो जाता है फिर
महाराजका समुद्रका पुल बांधना है जो उस समयकी
विशाल शिल्प विद्या और उन महात्माओंके ऐसे प्रयत्नका
साक्षी है और इससे यह भी निश्चित होताहै कि यदि
मनुष्य दृढ़ व्रत रखता हो तो अवश्य कृतकार्य्य होगा
इसके पश्चात् विभीषणका रावणसे विरुद्ध होकर रा-
मचन्द्र जी को मिलना है इससे क्या ज्ञात होता है कि
जब बुरे दिन आते हैं तब भाई भी शत्रु बन जाते हैं
और जिस घरमें दो मत हैं वह एक दिन ज़रूर नष्ट
होगा क्योंकि रावण और विभीषणका एकमत न था
इसीसे विभीषण उससे अप्रसन्न होगया और यही म-
तवाद भारतका नाशक है और तीसरे यह भी ज्ञात
होता है कि जब घर फूटा * तब शीघ्र सत्यानाश हो

* घर का भेदी लङ्का ढाहे ॥

जाता है इससे हे! सज्जन पुरुषो तुम सदा फूटसे अलग र
हे! रामायण के पढ़ने सुनने वालो तुम कभी भी अपने
भाई से विरोध न करो और घरके मतवादको नष्ट करो
इसके पश्चात् रावणादिका महाराजा रामचन्द्रादि
के हाथसे मारा जाना है जिससे ज्ञात होता है कि
जो आदमी अपने बल से बढ़कर छलके आश्रय काम
करता है वह एक दिन अवश्य नष्ट हो जाता है देखो
रावणने रामचन्द्रके बलको जानकर यह ढीठपना
किया क्योंकि यदि वह रामचन्द्रके बलको न जानता
तो पहिले ही बलसे लाता छल न करता रावणका
छल करना ही उसकी निर्बलताको प्रगट करता है
रावणने जानबूझकर यहकार्य्य किया अन्तमें नष्ट होगया
इससे यह भी ज्ञात होता है कि जो लोग झूठे
अभिमानी मनुष्यके भरोसे संसारसे बिगाड़ते हैं और
उस गप्पीके व्यवहारोंको नहीं विचारते—देखो यदि
रावणके साथी इसबात को विचार करते कि जो रा-
वण चोरी करके सीताको लाया है वह कभी रामच-
न्द्र जी से विरोध न करते और न उनका नाश होता
और दूसरे रावणने इतने ज़ोरपर भी पाप किया !!!

उसका फल पाया जो पर स्त्रीपर कुदृष्टि करेगा उसकी यही दशा होगी इसके सिवाय और भी बहुत से शुभ फल प्रतीत होते हैं ॥

शोक है कि हमारे देशके लोग रामायण पढ़ते सुनतेहैं नित्य रामलीला देखतेहैं परन्तु उसपर विचार कुछ भी नहीं करते उनका लीला देखना या नित्य रामायण पढ़ना सुनना ऐसा है जैसे एक बकरी बागमें जाती है वह कोई घासका ग्रास लगाती है कहीं पत्तों पर मुंह मारती है उसको बाग और जंगल एकसा है हानिकारक स्थलों से हानि तो उठाती है बन में गढ़े में गिर पड़े तो टांग टूट जाय परन्तु बाग से कुछ भी उपयोगी सिद्धान्त नहीं निकालती है। इसी प्रकार हमारे देशी भाई यदि कुमार्ग की पुस्तकों को पढ़ते सुनते हैं तो शीघ्र उसमें पड़ जातेहैं परन्तु सुमार्ग की पुस्तकें सदा पढ़ें सुनें उनमें से कुछ भी फल नहीं निकालते यदि बहुत किया तो कहीं की दो चार चौपाईं कण्ठस्थ करलीं और जब कभी बात चीत हुई तो अपना पाण्डित्य जनाने को सभामें कहदीं मैं बहुतेरे लोगोंकोरामायण पढ़ता सुनता देखताहूं परन्तु उसकेअनुकूल आचार करनेवाले बहुतही न्यून हैं

अब इस रामायणसारका सूक्ष्मता से कुछ आशय कहते हैं रामायणमें महावीरजीके चरित्र से सच्चे सेवकों का व्यवहार जान पड़ता है कैसे २ कठिन दुख सहन कर सीता जी का पता लगाया और रावण के इ-तिहास से जाना जाता है कि जो कुल में एक भी दुष्ट पुरुष उत्पन्न होजाय तो सारे कुलको नष्ट कर देता है दू-सरे रावण पुलस्त्य मुनिका पौत्र था शिवजी का भक्त था वेदों का पण्डित था परन्तु इतने पर भी मांस खाने और मदिरा पीने और परस्त्री गमन करनेसे उसकी प-दवी राक्षसकी होगई। अबतो रामायण के पढ़नेसुननेवा-ले लाखों दुराचार करतेहैं परन्तु अपने आप को साधु और ब्राह्मणही जानतेमानतेहैं देखो महात्मा लोगो विचा-र करो जिस परस्त्रीगमनने रावण को राक्षस बना दिया क्या जो अब करेगा वह राक्षस नहीं? जब कि रावण शिवका भक्त भी था परन्तु मांसाहारने उसको राक्षस बना दियाहै। रामायणके पढ़ने वालो शीघ्र इस राक्षसी व्यवहारको त्याग दो और पर स्त्री गमन व मादक

---

* यदि भूलसे छलबलसे स्त्रियादि रत्नकोई हरलेवे खोजावे तो यथाशक्ति उसे अधिकारमें कर पुनः शुद्ध कर लेवें

द्रव्य का सेवन और मांस भक्षण करना शीघ्र त्याग करो अब रामायणसे जो शिक्षा मिलती है वह संसार में प्रचार करो, यज्ञादिक कर्म करो, वर्णाश्रमी धर्म को ग्रहण करो, सम्प्रदायको मिटाओ, वेदका प्रचार करो, विद्याको पढ़ो पढ़ाओ, विद्वान, तपस्वियों का मान करो, मूर्ख भेषधारियोंसे बचो, ब्राह्मण वेद का अभ्यास करें, क्षत्री और बनें बाल विवाहको दूर करो ब्रह्मचर्य्य को प्रचार करो बर कन्याका गुण कर्म की योग्यता अनुसार विवाह करो ऐसा न करो कि साठवर्षका बर और नौ वर्षकी कन्या दादे और पोतीकी शादी हज़ार दो हज़ार रुपया लेकर कर देते हैं और थोड़े दिनों में वह रांड़ होकर कुल कलंकिनी हो जाती है—हे रामायणके पढ़ने सुननेवालो! अयोग्य बरसे लालचबश विवाह कर धर्म को नष्टमत करो माता पिताकी आज्ञा पालन करो माता पिताको देवता मानो उनका श्रद्धा पूर्वक सेवन करो भाइयोंसे प्रीति रक्खो थोड़ी २ बातोंमें उनसे विरोध लड़ाई मत करो और जहां तक हो सके प्राणान्त भाईको कष्ट मतदो यदि तुम इसप्रकार जीवन व्यतीतकरोगे तो अत्यन्त सुख होगा अपनी स्त्रियोंको पतिव्रतधर्म सिखलाओ

तुम भी स्त्री व्रत धारणकरो स्त्रियोंको मुष्टण्डे साधुओं के पास मत जाने दो दुराचारी पुजारियोंसे अर्थात् पूजाके शत्रुओंसे बचाओ मेलामन्दिर अकेले जानेसे रोको उनको समझाओ स्त्रीके वास्ते पति ही देवता है पति का छोड़कर जो स्त्री दूसरे देवता का पूजन करती है उसका धर्म नष्ट होजाता है आप कभी पर मत करो सदा वेश्याओं से बचो कुसङ्ग न करो कुढंगों से बचो मित्रोंको लाभ पहुंचाओ आपसमें मेल करो घरमें फूटमतडालो दृढ़व्रत रहो जिसकाममें लगो पूरा करके छोड़ो धर्मविषयको विचार करो मूर्खता से हट मत फैलाओ आपसमें मत भेद मत करो एक वर्णाश्रमीवैदिक धर्म के अनुकूल चलो जहांतक बने सच्चे महात्माओंकी सेवाकरो हे पाठको ! यह सब कार्य्य करने से आपकी रामचन्द्र जी की भक्तिपूर्ण होगी और तुम सदा सुख पाओगे नहींतो तुमको कुछ फल न होगा बहुत लोग परमेश्वरका भजन करते हैं उनको फल नहीं होता कारण यह है कि मनुष्य दश दोषों से नहीं बचते दश दोष यह हैं ॥ सन्निदासति नाम वैभव कथा श्रीशेषयोर्भेदधी रश्रद्धाश्रुतिशास्त्रदेशाकग्राम नामान्यर्थे

श्रमः ॥ नामाश्रत्योनिषिद्धवृत्तिर्विहित त्यागोचधर्मान्तर-
साम्यंनामनीशंकरश्चहरिनाम अपराधादृशा ॥

जो सत्पुरुषोंको निन्दा करता है उसको परमेश्वर नामका फल नहीं देता है और जो ऐसे नास्तिकों को नामका महात्म्य सुनाता है जो नामको हंसते हैं। और जो महादेव और विष्णुको दो समझता है और जिसको वेदशास्त्र और गुरु की आज्ञा में श्रद्धा नहीं है उसके वास्ते ईश्वर का नाम व्यर्थ है, और जो नाम के सहारे से मद्यमांसादि बुरी वस्तुओं का प्रयोग करताहै या और नित्य नैमित्तिक धर्म को छोड़कर केवल नाम ही जपा करता है या ईश्वर के नाम को और कामों की बराबर ही समझता है उसको सब कामों से बढ़कर नहीं मानता ऐसे मनुष्यको नाम जपनेसे फल नहींहोता है।

ओ३म् शान्तिः ३॥

—○—

ओ३म्

मुक्ति और पुनरावृत्ति

जिसको

श्रीमान् स्वामी दर्शनानन्द जी

ने रचा

और

पंडित शंकरदत्त शर्म्मा ने उर्दू

से अनुवाद करा के

अपने

'धर्मदिवाकर प्रेस' मुरादाबाद

में छापकर प्रकाशित किया

सम्वत् १९६६

प्रथम बार १००० मूल्य -)।

Printed by Pandit Shankar Datt
Sharma Dharm Diwakar Press,
MORADABAD.

न्याय दर्शन का भाष्य

प्रिय पाठक ! आर्य्यवर्त्त के भूषण ऋषि मुनियों नें अपने दीर्घ कालीन तप और अनुभव के द्वारा पवित्र देव वाणि में जिन २ महारत्नों का संगठन किया था यद्यपि वे अभी देववाणि की गम्भीर गुहा में यथाक्रम यथास्थान रक्खे हुये हैं तथापि ऐसे मनुष्यों के अभाव से जो विचार दीपक और परिश्रम का कुदाल हाथ में लेकर उनको वहां से निकालें। सर्व साधारण लोग उन देदीप्यमान् ज्योति से वञ्चित हैं बस सर्वसाधारण तक उन रत्नोंका प्रकाश पहुंचाने के लियेही उपरोक्त दर्शनकाभाष्य श्रीस्वामी दर्शनानन्द जी ने उर्दू में कियाथा अब हमने देवनागरी भाषामें अनुवादकरप्रकाशितकियाहै अबतक जितने भाष्य न्यायदर्शनके तैय्यारहुयेहैं उनमेंयह सबसेउत्तमहैं मू०१)

हमारे छापेखाने में हर किस्म का काम संस्कृत हिन्दी अंग्रेजी उर्दू में उमदा होता है एक दफा काम छपाकर देखिये। और यहां हर किस्म के सामाजिक पुस्तक मिलसकते हैं बड़ा सूचीपत्र मंगा [illegible]

ओ३म्

मुक्ति और पुनरावृत्ति

संप्रति साम्प्रदायिक धार्मिक संसारमें इस विषय पर विचार होरहा है कि मुक्ति से जीवात्मा पुनर बंधन में आता है वा नहीं, संसार की सब धार्मिक सम्प्रदायें जो मुक्ति का अस्तित्व मानती हैं वे जीवात्माकी मुक्ति से पुनरावृत्ति नहीं मानतीं, आर्यसमाज जो कि प्रत्येक विषयको विद्या और बुद्धिकी कसौटी से जांचकरती है वह मुक्तिसे जीवात्माकी पुनरावृत्ति मानती है इस वास्ते विचारना यह है कि जीव मुक्ति से बंधन में आता है वा नहीं जब मुक्ति के विषय में विचार करते हैं तो प्रश्न उत्पन्न होता है कि मुक्ति जीवका स्वाभाविक गुणहै वा नैमित्तिक अर्थात् उत्पन्न होनेवाला है। यदि मुक्तिको जीवका स्वाभावि गुण माना जावे तो मुक्तिके साधन जो शास्त्रों

में कहे हैं सब व्यर्थ हो जायंगे । और प्रत्येक जीव सदा मुक्तही होगा किन्तु जीव सदा मुक्त देखने में नहीं आता बल्कि उसे मुक्ति की इच्छा है, इच्छा उस वस्तु की होती है जो लाभकारी हो और प्राप्त नहो, यदि मुक्ति जीव आत्मा का स्वाभाविक गुण हो तो उसकी इच्छा हो ही नहीं सकती क्योंकि स्वाभाविक गुण प्रत्येक द्रव्य का उसके साथ रहता है और जो वस्तु हर समय पासहो उसकी इच्छा कैसी? परन्तु जब मुक्ति शब्द के शब्दार्थ का विचार करते हैं तो यह आपत्ति दूर होजाती है। क्योंकि मुक्ति का अर्थ छूटना है जिससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि जीव आत्मा बन्धा हुआ है और बन्धन से छूटना ही मुक्ति है । अब यह प्रश्न उठता है कि बन्धन जीवका निज (स्वाभाविक) गुण है वा नैमित्तिक । यदि बन्धन जीव आत्माका निज गुण है तो उससे छूटना असंभव है क्योंकि किसी वस्तु का स्वाभाविक निजगुण गुणी से पृथक नहीं होसकता कपिल मुनि कहते हैं:-

नस्वभावतो बद्धस्य मोक्षसाधनो पदेशाविधि।

अर्थः—यदि बन्धन जीवात्मा का स्वाभाविक गुण होता तो उससे छूटने का उपदेश वेदों में कभी नहीं हो सकता क्योंकि वेदोंमें मुक्तिका उपदेश किया है इससे प्रकट है कि बन्धन जीवआत्मा का नैमित्तिक गुण है इस पर कपिल मुनि युक्ति भी देते हैं:—

स्वभावस्यऽ न पायित्वातऽननुष्ठान लक्षणमप्रामाण्यम्।

स्वभाविक नाशसे रहित होने से उसके दूर करने के वास्ते जो प्रयत्न होगा वह प्रमाण नहीं होगा, क्योंकि असंभव के लिये प्रयत्नका उपदेश करना ठीक नहीं हो सक्ता इससे ज्ञात होता है कि बन्धन भी नैमित्तिक गुण है निदान जब मुक्ति नैमित्तिक ठहरी और बन्धन भी नैमित्तिक तो नैमित्तिक कभी नित्य हो नहीं सकता जिससे मुक्ति का नित्य होना संभव

नहीं होसकता। मुक्ति से पूर्व बन्धन होना आवश्यक है तभी मुक्ति कहला सकती है । यदि बन्धा हुआ नहो तो छूटेगा किससे इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि जो बन्धाहुआ है वही छूटता है । क्योंकि बन्धन भी उत्पन्न होता है स्वाभाविक गुण नहीं इससे सिद्ध है कि जो छूटाहुआ हो वही बन्धता है निदान बन्धन से पूर्व मुक्ति का होना आवश्यक है और मुक्ति से पूर्व बन्धन का होना आवश्यक है अतः जीवात्मा स्वभावसे न बन्धा हुआ है न मुक्त है ।

बन्धन के सम्बन्ध में मुनि कहते हैं:-

यद्यात्मा मलिनोऽस्वच्छो विकारी स्यात् स्वभावतः । नहि तस्य भवेत मुक्ति जन्मान्तर शतैरपि ॥

अर्थः-यदि जीव स्वभाव से बन्धा हुआ और मैला होता तो उसकी मुक्ति सैकड़ों जन्मों में भी नहीं हो सकती क्योंकि स्वभाव नाश से रहित होता

है। अब विचार का स्थान है कि मुक्ति का स्वरूप क्या है तो बतलाया जाता है कि अत्यन्त दुखकी निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्तिही मुक्तिका स्वरूप है। निवृत्ति उसकी होतीहै जो स्वभाविक गुण नहीं बल्कि नैमित्तिकहो। स्वाभाविककी निवृत्ति हो नहीं सकती और प्राप्त भी उसे करतेहैं जो अप्राप्त हो क्यों कि जो स्वाभाविक गुण है उसके सदा साथ रहने से उसकी प्राप्ति कुछ अर्थ नहीं रखती निदान दुःख और आनन्द दोनों जीव आत्मा के गुण मालूम नहीं होते परन्तु बहुत से नवीन वेदान्ती लोग कहते हैं कि आनन्द जीव आत्माका स्वभाविक गुण है परन्तु अविद्याका आवरण आजाने से प्रतीत नहीं होता इस आवरण को दूर करने का नाम परमानन्द की प्राप्ति है। किन्तु यह विचार ठीक नहीं क्योंकि गुण गुणी का समवाय सम्बन्ध होता है। गुण का गुणी में आवरण नहीं आया करता। किन्तु आवरण दो द्रव्यों के मध्य में आता है सूर्य और उसकी प्रभा के मध्य आवरण नहीं आता किन्तु हमारी चक्षु और

सूर्य के मध्य में आवरण आता है क्योंकि आवरण के बीच में रहने के लिये आकाश चाहिये परन्तु गुण और गुणीके बीचमें कोई आकाश नहीं क्योंकि उनमें संयोग सम्बन्ध नहीं जहां आकाशकी गुन्जाइशहो किन्तु समवाय सम्बन्ध है इस लिये जीव आत्मा और आनन्द के मध्यमें अविद्या का आवरण बतलाना मूर्खता है निदान जो लोग जीव आत्मा का स्वरूप आनन्द मानते हैं यह सरासर भूल है। महर्षि व्यास वेदान्तदर्शन में कहते हैं :

नेतरोपपत्तेः आनन्द मयोऽभ्यासात्

अर्थः—ब्रह्म से इतर नाम दूसरा जो जीवआत्मा है वह आनन्द स्वरूप सिद्ध नहीं होता किन्तु उसको अभ्यास से आनन्द प्राप्त होता है। ब्रह्मके लक्षण से भी सिद्ध होता है कि जीव आनन्द स्वरूप नहीं। ब्रह्मका लक्षण बतलाते हैं सच्चिदानन्द। लक्षण दूसरों से पृथक करनेवाला होता है। पहिले कहा ब्रह्म सत् है यदि जीव प्रकृति असत् होते तो ब्रह्मका लक्षण सत्

पूरा होजाता परन्तु ब्रह्मको परमात्मा भी कहते हैं जिससे सिद्ध होताहै कि वहव्यापकहै। प्रत्येक व्यापकके लिये व्याप्य की आवश्यकता है बिना व्याप्यके व्यापक कहलाही नहीं सकता इस लिये परमात्मा के लिये व्याप्य अर्थात् अल्प्य की आवश्यकता है। यदि व्याप्य अनित्य हो तो व्यापक भी अनित्य कहलायगा इस वास्ते परमात्मा का व्याप्य प्रकृति भी सत् ही थी इस लिये लक्षण अतिव्याप्त होगया अर्थात् प्रकृतिमेंचलागया दूसरे ब्रह्म न्यायकारी वा कर्म फलदाता है परन्तु जबतक कर्मकरनेवाला नहोता न्यायकारी नहीं कहला सकता। ब्रह्मके सब गुण सत् हैं इस वास्ते उसकी प्रजा जिनका वह न्याय करता है वह सत्होगी इसलिये ब्रह्मका सत् लक्षण जीव और प्रकृति में अति व्याप्त होगया. तब कहना पड़ा ब्रह्म सत्चित् है इस लक्षण से प्रकृति जो अचेतन है वहतो अलग होगई परंतु जीवआत्मा में यह लक्षण अति व्याप्त रहा क्योंकि जीव भी सतचित् और ब्रह्म भी सतचित् तब कहना पड़ा ब्रह्म सच्चिदानन्द है इस लिये प्रकृति सत जीव सत् चित् ब्रह्म सच्चिदानंदहै

निदान जीवको दुःखकी प्राप्ती बन्ध और आनन्द की प्राप्ति और दुःखकी निवृत्ति मोक्षहै । अब बन्धन क्या है दुःख क्या वस्तु है और वह किसप्रकार प्राप्त होता है दुःखका लक्षण गौतमजी न्यायदर्शन में करते हैं:—

बाधना लक्षणं दुःखम् ।

अर्थः—परतंत्रता ही दुख है सिवाय परतन्त्रता के कोई अन्य वस्तु दुख नहीं है । जीवमें यह परतंत्रता (आज्ञादिका नहोना) स्वाभाविक गुण नहीं परंतु संसर्ग से आताहै जैसेवायुस्वयं न शीतलहै न ऊष्ण किन्तु जल के संसर्ग से वायुमें शीतलता और अग्निके संसर्ग से उष्णता आती है इसी प्रकार जीव आत्मा स्वभावसे न तो दुखी है न आनन्दमय । प्रकृति के संसर्ग से जो उस में परतन्त्रता अर्थात् दुख आता है और परमात्मा के संसर्ग से आनन्द और स्वतन्त्रता आतीहै । निदान जीव आत्मा का प्रकृति से सबंन्ध ही बन्धन है । क्योंकि इस बन्धन का कारण भी शास्त्रकारों ने बतलाया है जिस से स्पष्ट सिद्ध होता है कि बन्धन स्वाभाविक गुण नहीं । कपिल जी बतलाते हैं:—

बन्धो विपर्य्ययात् ।

अर्थः—विपरीत ज्ञान अर्थात् अविद्या से जीव आत्मा में बन्धन आता है। यह उलटा ज्ञान नतो सर्वज्ञ में हो सकता है नहीं अल्पज्ञ में इस हेतु से अविद्या न तो ब्रह्म को हो सकतीहै क्योंकि वह ज्ञान स्वरूप है और नहीं प्रकृति को हो सकती है क्योंकि वह ज्ञान प्राप्त करने की शक्ति ही नहीं रखती इस कारण अविद्या जीव आत्मा को ही होती है क्योंकि वह अल्पज्ञ है अविद्याके अर्थ और बस्तु को जानना है। रस्सीको सांप न तो सूर्य के प्रकाश में जान सकते हैं क्योंकि उस समय स्पष्ट रस्सी दिखाई देती है और नहीं नितान्त अन्धेरेमें क्योंकि उससमय कुछ दिखाई ही नहीं देता किन्तु कुछ प्रकाश और कुछ अन्धेरा हो तबही रस्सीमें सांप का भ्रम होताहै इस कारण अविद्या न तो ब्रह्मको होसकतीहै क्योंकी वह सर्वज्ञ और ज्ञानस्वरूपहै जो लोग सूर्य में अन्धकार बतलावें उनसे बढ़कर बुद्धि का शत्रु कौन होगा क्योंकि यदि सूर्य में ही अन्धेरा हो जावे तो अन्धेर

को दूर करने वाला कौन आवे इस लिये जो लोग ब्रह्म में अविद्या मिलाते हैं उनसे बढ़ कर बुद्धि का शत्रु कोई नहीं । अविद्या केवल अल्पज्ञ जीवात्माको ही होती है ब्रह्म मुक्त स्वरूपहै प्रकृति बन्धन स्वरूप है । जीव आत्मा न मुक्त है न बद्ध । जब प्रकृति का संग करता है तब बन्ध जाता है जब ब्रह्म की ओर लगता है तब मुक्त होजाता है यहांपर यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि जब कि प्रकृति सब जगह बतमान है इस लिये जीवका संग अवश्य होगा और ब्रह्म सर्व व्यापक है उससे भी जीव अलग नहीं जा सकता इस वास्ते बन्धन और मुक्ति व्यवस्था कैसे हो सकतीहै क्योंकि दोनों का हर समय संग बना हुआ है परन्तु इस प्रश्न का उत्तर यह है कि स्थूल पदार्थ में सूक्ष्म पदार्थ रहसकताहै परंतु सूक्ष्मके भीतर स्थूल पदार्थ नहीं रहसकता जैसे पानी के भीतर अग्नि प्रविष्ट होकर पानी को उष्ण कर सकती है परन्तु अग्नि के भीतर पानी प्रविष्ट होकर अग्नि को शीतल नहीं कर सकता । क्योंकि प्रकृति जीव आत्मा से स्थूल है इस हेतु जीव के भीतर प्रकृति नहीं रहसकती परंतु ब्रह्म

जीव आत्मासे सूक्ष्महै वह जीव के भीतर रहसकता है निदान प्रकृति जीव के बाहर और ब्रह्म भीतर

लोग प्रश्न करते कि क्या ब्रह्म जीवके बाहर
उत्तर यहहै कि यद्यपि ब्रह्म जीवके बाहर भी हैं

बाहर प्रकृति में व्यापक होने से उसका यथार्थ ज्ञा नहीं होता परन्तु भीतरी और अकेला होनेसे यथार्थ ज्ञान होसक्ता है इसी वास्ते उपनिषद् बत लाता है:—

हिरण्य मये परे कोषे विरजं निष्कलम् । तत् शुभ्रम् ज्योति यदात्म विदोविदु ॥

अर्थः—इस शरीर में पांच कोषहैं एक अन्नमय दूसरा प्राणमय कोष तीसरा मनोमय कोष चौथा ज्ञ्नमयकोष पांचवां आनन्दमय कोषहै । आनन्दमयके के भीतर रज अर्थात् प्रकृति से रहित ब्रह्म विद्यम है वह शुद्ध सम्पूर्ण प्रकाशों का भी प्रकाश है

वही जन जानते हैं जो जीव आत्मा को जानते हैं निदान जब जीव अपने भीतर देखता है तयतो ब्रह्म की तरफ़ लगताहै तब प्रकृति से सम्बन्ध करता है जिससे बन्धन होता है ।

अब यह बोध होगया कि मुक्ति जीव आत्मा का स्वाभाविक (निज) गुण नहीं तो मुक्ति किसप्रकार नित्य होसकतीहै क्योंकि जो वस्तु साधनों से उत्पन्न होतीहै उसका आरम्भतो होताही है और जिसका आरम्भ हुआ अथवा अन्तहो और आदि नहो उसका होना भी आवश्यकहै क्योंकि एक किनारे वाला दरिया और एक सीमा (हद-वाली चीज) दुनिया में है ही नहीं ऐसी मुक्ति जिसका आरम्भहो और अन्त नहो असंभव है क्योंकि नित्य अनित्यके अतिरिक्त सब असम्भव है नित्य वह है जिसका आदि और अन्त दोनों नहीं और अनित्य वह है जिसका आदि और अन्त दोनों हैं परन्तु जिसका आदि हो और अन्त न हो ऐसी सब चीजें असंभव हैं इसी वास्ते गोड़पादाचार्य कारि कामें कहते हैं:—

अनादेरन्तवत्वंच संसारस्य न सेत्स्याति । अनन्ता चादिमतो मोक्षस्य न भविष्यति ॥ ३९ ॥

अर्थः—जोलोग संसार अर्थात् बन्धनको अनादि मानते हैं उनके बन्धनका अन्त नहींहो सकता क्योंकि जिसका आदि नहो उसका अन्त नहीं इसलिये बन्धन को उत्पत्तिमान् अर्थात् अनित्यमान करही मुक्ति हो सकती है और जो मोक्ष आदि वाली है वह अनन्त नहीं होसकती । गोड़पादके समयमें बौद्ध और जैन लोग जो संसारको अनादि मानते थे परन्तु उस बन्धन से छूटनाभी स्वीकार करतेथे दूसरे मुक्तिका आदि मानकर उसको अनन्त बतलातेथे । क्योंकि ये दोनों बातें बुद्धि और विद्याके विरुद्ध थीं इसीलिये गौड़ पादाचार्यने ऐसे बन्धन और मुक्ति दोनों को वास्तविकता के विरुद्ध कहा है । परन्तु जो लोग बन्धन और मुक्तिको उत्पत्तिमान और नाशमान मानते हैं

उन्हीं का मतसत्य होसक्ता है इसलिय मुक्ति को अनित्य माननाही बुद्धिके अनुकूल है ऐसी अवस्थामें प्रतिवादी कहता है कि तुम मुक्ति को अनित्य किस प्रकार कह सकतेहो जबकि दुखका अत्यन्ताभाव मुक्तिमानी जाती है जिसका अत्यन्ताभाव होजावे. वह किसीप्रकार उत्पन्न नहीं होसकता जब प्रतिवादिसे पूछते हैं कि दुःखका अत्यन्ताभावमुक्ति में कहां से कहा है तो वह यह सांख्यसूत्र बोलउठता है:—

अथ त्रिविध दुखात्यन्त निवृत्तिरत्यन्तपुषार्थः',

अर्थः— तीनप्रकारके दुःखों से अत्यन्त निवृत्ति (छुटकारा) होजाना मुक्ति है। ऐसे अवसरों पर लोग भूलसे निवृत्ति का अर्थ अभाव ग्रहण करते हैं। अत्यन्ताभावका अर्थ है जो तीन कालमें नहो परन्तु अत्यन्त निवृत्ति का अर्थ है जो होकर न रहे निदान जीवका प्रकृति से नितान्त सम्बन्ध न रहने का नाम

अत्यन्त निवृत्ति है यद्यपि जीवका सुषुप्ति में भी प्रकृतिसे सम्बन्ध नहीं होता है परन्तु उस समय प्रारब्ध जो प्रकृतिके साथ सम्बन्ध करनेवाली विद्यमान होती है परन्तु मुक्ति उस दशाका नाम है जब कर्मरूपी बीजके साथ दुख दूर होजावे जैसे कहा है:-

भिद्यते हृदय ग्रन्थि छिद्यते सर्वसंशयः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन दृष्टे परावरे ॥

अर्थः—जब जीवात्मा परमात्माके दर्शन करता है तब उसके मनकी गांठ खुलजाती है अर्थात् जो उसका सांसारिक वस्तुवोंमें अहंकार था वह नाश होजाता है। जब मन और अहङ्कार न रहा तब सब संशय भी दूर होजाते हैं क्योंकि संशय का आधार मन और अहङ्कार ही है और जब मन न रहा तब सब कर्म नाश होजाते हैं क्योंकि कर्मों के संस्कार मनही में रहते हैं सिद्धान्त मन जो दुख का बीज है जब उसके

साथ दुख नाश होते हैं उसीको मुक्ति कहते हैं ऐसा ही न्यायका सूत्र कहता हैः—तदत्यन्तविमोक्षोऽपवर्ग अर्थात् दुखसे छूटजाना मुक्ति है।

इन सूत्रों से दुखका अत्यन्ताभाव मुक्ति सिद्ध नहीं होती किन्तु दुखकी बीज सहित पृथकता सिद्ध होती है।

बहुत लोग यहां पर यह प्रश्न करेंगे कि तुमने मुक्ति में मनका नाश माना है परन्तु वादरिआचार्य जो व्यासजी के पिता हैं वह मुक्तिमें मनका अभाव मानते हैंः-अभावं वादरिराह। किंतु जैमनि आचार्य मुक्तिमें मनका भाव मानते हैं और व्यासजी तो अभाव और भाव दोनोंही मानते हैं इसका क्या कारण है किंतु इस विरोधके होनेपरभी तुम केवल अभाव मानते हो जब कि ऋषियों में परस्पर विरोध है तो तो इसको यथार्थ किसप्रकार माना जासकता है विदित रहे कि मन दो तरहका मानागया है एक नित्य दूसरा अनित्य। जिस ऋषिने नित्य मन को लेकर विचार किया उसको मुक्तिमेंभी मनको मानना पड़ा

और जिसने अनित्यमनका विचार किया उसने मुक्ति में मनका अभाव माना । महर्षि कणाद ने वैशेषिक-दर्शनमें मनको नित्य कहा है:--

तस्य द्रव्यत्वं नित्यत्वं वायुना व्याख्याते ।

अर्थः—उसका अर्थात् मनका द्रव्य होना और नित्य होना वायु के समान व्याख्यान किया गया है जिसप्रकार वायु द्रव्य और नित्य है इसीप्रकार मनभी नित्यहै । दूसरी ओर महर्षि कपिलजी सांख्यदर्शनमें मनको प्रकृतिका बताकर अनित्य बतातेहैं देखो सांख्य-दर्शन अध्याय १ सूत्र ७१ ।

महदाख्यमाद्यं कार्यं तन्मनः

अर्थः-महत्नामी प्रकृति का पहिलाकार्य है उसके अनित्य होने में क्या संशय होसकता है । इसपर

विचार करते हुए एकओरसे ध्वनि उठती है क्योंकि वेदमन्त्र में मनको अमृत बताया है इससे मनको नित्य ही मानना यथार्थ है दूसरी ओरसे ध्वनि उठती है उसका यह अर्थ नहीं होसकता क्योंकि छान्दोग्य उपनिषद में मनकी उत्पत्ति अन्नसेमानी गई है

अन्नमशितं त्रेधा विधीयते तस्ययः स्थविष्ठो धातुस्तत्पुरीषं भवति यो मध्यमस्तन्मांसयोऽणिष्ठ तन्मन

अर्थः-जो अन्न खाया जाता है वह तीन प्रकार का होजाताहै उसका जो सबसे स्थूलभाग है वह पुरीष (मल) होकर निकल जाताहै जो मध्यम (सामान्य) भागहै वह मांस बनताहै जो सबसे सूक्ष्महोताहै वह मन बनजाताहै इससे स्पष्ट प्रकटहोता है कि मन अनित्यहै मूर्ख लोग जो मनकी वास्तविकता को नहीं जानते वे ऐसे अवसरों पर विचार करतेहैं कि शास्त्र

में विरोध है इसलिये कोई शास्त्र प्रमाण नहीं होस-
कता ऋषि भी परस्पर विरुद्ध सम्मति रखते हैं इस
लिये उनकी बात का सत्य होना भी आवश्यक नहीं
है परन्तु ये सब विचार अनभिज्ञता के कारण से हैं
शास्त्रों की एक विषयमें एक ही सम्मति है परन्तु जहां
विषयही दोहों वहां दोमत होना आवश्यकहै मन दो
हैं एक मननशक्ति जोकि जीव आत्माका स्वाभाविक
गुणहै दूसरा मन करणहै जोकि जीवके बाहरी इन्द्रियों
से कार्य लेनेका साधन है। क्योंकि जीव आत्मा नि-
त्यहै इसलिये मननशक्ति जो जीव आत्माका गुण है
वहभी नित्यहै । दूसरा मन करण अन्न से वा प्रकृति
से बनताहै इसलिये वह अनित्यहै व्यास जी के पिता
बादरि ने मन जो बाह्य ज्ञानका साधन है उसका वि
चार किया उसका मुक्ति में अभाव बतलाया क्योंकि
मुक्तिमें कोई अनित्य द्रव्य साथ नहीं रह सकता ।
जैमनि जीने मननशक्ति का विचार किया उन्होंने मु
क्तिमें इसका होना आवश्यक समझा क्योंकि मननशक्ति

जीवआत्मा को नित्यहै वह जीवसे पृथक होही नहीं सकती व्यासजीने दोनोंका निर्णय करदियाहै कि मन करण कातो मुक्तिमें अभाव होता और मननशक्तिका भाव होताहै। कणादजीने उपचार से मननशक्ति विशिष्ट आत्माको वैशेषिक में मनके नामसे द्रव्य माना और नित्य बतलाया। कपिल ने मनकरणको प्रकृति कार्य बतलाया और वेदमन्त्रों में नित्य मननशक्ति को अमृतकी उपाधि दी और छान्दोग्योपनिषद् में मन बाह्य ज्ञानके साधनको अन्न से उत्पन्न होने वाला बतलाया है। क्योंकि विषय दो थे। इन हेतुओं से ऋषियों में न तो विरोध है और न एक विषय में भिन्न भिन्न मत है। जो लोग दर्शनों में विरोध बतलाते हैं उनकी अज्ञता है उदाहरणतया एक पुरुष कहताहै शरीर अनित्यहै दूसरा पुरुष जिसने जीवआत्मा को परमात्मा का शरीर इस श्रुति से विचार किया है 'यस्यात्मा शरीरम्' वह कहता है शरीर नित्य है स्थूल शरीरको लक्ष्य बनाकर एक पुरुष कहता है शरीर

अनित्य है दूसरे कारण को लक्ष्य में रखता है तो शरीर नित्य है क्या इनमें विरोध है कदापि नहीं ।

जब यह मालूम होगया कि मुक्ति सब सहित दुःखके नाशका नाम है और वह अनित्य है तो उसको उत्पत्ति और नाश दोनों आवश्यक होते हैं। मुक्त जीव दुबारा बन्धन में आसकता है क्योंकि बन्धनके नैमित्तिक होने से यह तो स्पष्ट प्रकट है कि बन्धन अनित्य है उससे स्पष्ट विदित होता है कि बन्धन से पहिले मुक्त था परन्तु अब मुक्त होकर बन्धन में आयगा या नहीं यही विचार करना इसीका नाम मुक्ति से पुनरावृत्ति अर्थात् लौटना है । इसपर प्रतिवादी पुरुष कहते हैं कि मुक्ति से नहीं लौटता वे अपनी बातको सिद्ध करने के लिये यह प्रमाण देते हैं:-

न मुक्तस्य पुनर बन्धयोगोऽना-वृत्ति श्रुतेः सांख्य० ।

कि जितने आचार्यों ने मुक्ति से पुनरावृत्ति का निषेध किया है उन सब के मस्तिष्क में यही यही श्रुति ध्वनित हो रही है और वह यह है:—

न च पुनरावर्त्तते न च पुनरावर्त्तते छा०

अर्थः—वह ब्रह्म लोक को प्राप्त हुआ जीव नहीं लौटता नहीं लौटता । परन्तु जब छान्दोग्योपनिषद् को देखते हैं तो हमें इतनी ही श्रुति नहीं मिलती किन्तु सम्पूर्ण पाठ करने से इसका मतलब और निकलता है इस वास्ते सारा खण्ड लिखते हैं ।

तद्धैतद् ब्रह्मा प्रजापतय उवाच । प्रजापतिर्मनवे मनु प्रजाभ्यः आचार्य कुलाद्वेदमधीत्य यथा विधयनुगुरोः कर्मातिशेषणामि समावृत्य कुटुम्बे

अर्थ-मुक्त पुरुष का दुबारा बन्धन के साथ संबंध नहीं होता क्योंकि श्रुति अर्थात् उपनिषदों से सिद्ध होता है कि मुक्त जीव की पुनरावृत्ति नहीं होती अर्थात् पुनरागमन नहीं होता है परन्तु विदित होता है कि कपिल जी मुक्ति से पुनरागमन के विरुद्ध नहीं हैं किन्तु श्रुति के अनुसार जिस प्रकार का न लौटना श्रुति ने माना होगा वही कपिल जी को इष्ट है उन का इस विषय निजका कोई सिद्धान्त नहीं क्योंकि वह इसमें कोई युक्ति नहीं देते । केवल श्रुति का प्रमाण प्रकट करते हैं वेदान्त दर्शन में व्यास जी भी कहते हैं:-

अनावृत्तिश्शब्दातअनावृत्तिश्शब्दात्।

अर्थः-शब्द अर्थात् श्रुति से यह सिद्ध होता है कि मुक्त जीव बन्धनसे अलग रहता है उसको दुबारा लौटना नहीं होता। व्यासजी अपनी कोई सम्मति

प्रकट नहीं करते हैं न कोई युक्ति देतेहैं केवल श्रुति प्रमाण से कहते हैं इस हेतु कपिल और व्यास जी का मुक्ति से न लौटने के विषय में वही मत होगा जोकि श्रुति का है श्रुति से अतिरिक्त इनकी कोई सम्मति नहीं निदान जब श्रुति का अभिप्रायः स्पष्ट विदित होगा तो ये सूत्र आपही स्पष्ट हो जावेंगे गीता में भी महात्मा कृष्णजी कहते हैं:-

यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम

अर्थः—जहां पर पहुंच कर फिर नहीं लौटते वह मेरा धाम है परन्तु यह प्रसिद्ध बात है कि गीता उपनिषदों से ली गई है इस लिये गीता का भी वही तात्पर्य समझना चाहिये जो उपनिषदों का है क्यो• अब सारे प्रश्न का मर्म उपनिषद् के भीतर है जब हम सांख्य दर्शन के भाष्य और वेदान्त के सूत्र के भाष्य को देखते हैं तो हमें दोनों स्थानों पर उपनिषद् की एकही श्रुति मिलतीहै जिससे स्पष्ट विदित होजाताहै

शुचौदेशे स्वध्यायमधीयान धार्मिका चिदक्षरात्मानि सर्वेन्द्रियाणि स प्रतिष्ठाप्याहि सन्सवर्मतान्यत्र तीर्थे-भ्यःसरवत्वे व वर्तय न्यावदायुषं ब्रह्म-लोकमभिसं पद्यते न च पुनरावर्तते न च पुनरावर्त्तते ॥छा० अ० १ खं० १५॥

अर्थः—यह जो आत्म ज्ञानहै सो उपकरण अर्थात् साधने के साथ "ओ३म्" इस अक्षरसे लेकर उपासना के साथ उसके बतलाने वाला आठअध्याय वाला जो छान्दोग्य पुस्तक है वह ब्रह्मा अर्थात् परमेश्वर ने कश्यप को सिखलाया कश्यप ने मनु को जो कश्यप का पुत्र था और मनु ने सम्पूर्ण प्रजा को कि आचार्य कुल से सविधि वेद को पढ़ कर और नियमानुकूल गुरू सम्बन्धी कर्मको समाप्त करके समावर्त्तन संस्कार करे

फिर अच्छे गृहस्थ आश्रममें स्वाध्याय से पढ़ता हुआ धर्मात्मा सन्तान और शिष्यों को बनाने और सर्व इन्द्रियों को वशमें रखकर सर्व जीवों के साथ अहिंसा का वर्त्ताव करता हुआ जबतक ब्रह्मलोक की आयु है तबतक ब्रह्मलोकमें रहताहै। ब्रह्मलोक की आयुमें नहीं लौटता। इसश्रुतिसे स्पष्ट विदित होताहै कि ब्रह्म-लोक की आयुतक नहीं लौटता है उसके बाद लौटने से इनकार नहीं परन्तु इस अवसर पर हमारे नवीन भाई यह कहतेहैं कि यहां पर ब्रह्मलोक की आयु प्रयोजन नहीं किन्तु जब आयुभर इस प्रकार वर्त्ताव करेगा तब ब्रह्म लोक को प्राप्त होगा इस स्थान पर विचार करना यहहै कि क्या ब्रह्मलोक कोई भूगोल विशेष अर्थात कोई विशेष भाग सृष्टिका है अथवा ब्रह्म दर्शनका नामहै जहांतक अन्वेषणा करनेसे पता लगता है ब्रह्मलोक का अर्थ ब्रह्म दर्शन ही होसकता है क्योंकि यदि और लोकों के समान ब्रह्मलोक कोई विशेष लोक है जैसे कि सूर्य्य लोक चन्द्र लोक पृथिवी लोक इत्यादि हैं तो उसका भी

इनलोकों के समान दर्शन होना चाहिये अथवा उसके अस्तित्व कोई प्रमाण होनाचाहिये चाहे कैसाही हो दोनों दशाओंमें ब्रह्मलोक उत्पत्ति विशिष्टहै जब ब्रह्म लोक उत्पत्ति विशिष्टहै तो उसकी आयु अवश्य होगी और जिसकी आयु नियतहै उसका नाश अवश्यहोगा जब ब्रह्मलोक का नाश होजावेगा तब ब्रह्मलोकहो जो जीवप्राप्तहोंगे उनको ब्रह्मलोक छोड़ना पड़ेगा निदान इस अवस्थामें भी पुनरावृत्ति अर्थात् मुक्तिसे माननाही पड़ेगा इसश्रुति का भाष्य करते समय स्वामी शकंराचार्य ने ब्रह्मलोकको कार्य मानाहै जिससे स्पष्ट विदित होताहै कि ब्रह्मकी आयुही स्वामी शकंराचार्य लिखते हैं:—

अर्चिरादिना मार्गेण कार्यं ब्रह्म लोकमाभि संपद्ययावत ब्रह्मलोक स्थिति स्तावत्तत्रे वतिष्ठति प्राक्तो नावर्तते: इत्यर्थः ।

अर्थात्ः—उपासना आदि के द्वारा ब्रह्मलोक को प्राप्त होताहै जबतक ब्रह्मलोकमें रहताहै तबतक वहीं रहताहै और ब्रह्मलोक के नाशसे पूर्व नहीं लौटता है यहां पर स्वामी शकंराचार्य स्पष्ट शब्दों में मुक्तिका अनित्य होनाजो यथार्थ में ठीकहै स्वीकार करते हैं हमने जहांतक उपनिषदों और वेदान्त दर्शनका विचार किया है हमें कहींभी नवीन वेदान्तियों के सिद्धान्तका पता नही लगता यहांपरभी शकंराचार्य ऐसा नहीं कहते बलकि और जगहभी पता लगता है कि स्वामी शकंराचार्य और आनन्दगिरी आदि मुक्ति से लौटना मानतेहैं देखो छान्दोग्योपनिषद् अध्याय ४ खंड १५।

सएतान्ब्रह्म गमयत्येषदेव पथो ब्रह्मपथ एतेन प्रतिपद्यमाना श्मं मानवावर्तनांऽवर्तन्तेना वर्तन्ते॥५॥

अर्थः—वह इससे ब्रह्मको प्राप्तहोताहै यही देवतों

का मार्ग और यही ब्रह्मका मार्गहै इसमार्गसे ब्रह्मको प्राप्तहोकर इसकल्पमें नहीं लौटते इसका टीका करते हुए आनन्द गिरि कहतेहैं:—

इममिति विशेषणादनावृत्ति अस्मिन कल्पे कल्पान्त रेत्वावृति इतिसूच्यते।

अर्थः—इस श्रुतिमें जो (इमम्) यहविशेषताके लिये किया है इससे ज्ञातहोताहै कि इस कल्पमें तो लौटतानहीं परन्तु दूसरे कल्पमें लौटताहै बहुतसेलोग यह कहतेहैं कियहांपर मतलब यहहै कि एकतो कार्य ब्रह्मलोक दूसरा कारण ब्रह्मलोकहै जो कार्य ब्रह्मलोक को प्राप्तहोतेहैं वहतो लौटआतेहैं और जो कारण ब्रह्मलोक को प्राप्तहोतेहैं वह नही लौटते परन्तु इसके वास्ते जबतक कोई प्रमाण और युक्ति नहो तब तक इसका विचार करना ही व्यर्थहै क्योंकि कोईभी ऐसी श्रुति नहीं जिसमें ब्रह्मलोक दो प्रकार का बतायाहो परन्तु श्री शंकराचार्य ने दूसरे स्थानपरभी इस श्रुति पर विचार किया है जिससे स्पष्ट ज्ञातहोताहै कि यह

श्रुति ब्रह्मलोकसेलोटनेके सम्बन्धमेंहै ब्रह्मलोक कार्य है इससे उसके नाश होनेके बाद जीवको लौटना पड़ताहै ब्रह्मलोकका हेतु तत्वज्ञानसे ब्रह्मलोककी प्राप्ति होतीहै और जो वस्तु उत्पन्न होतीहै उसका विनाश अवश्य होताहै । अबदूसरी श्रुतिभी जहांपर शंकराचार्यनें मुकाबलाकियाहै लिखतेहैं । छान्दोग्योपनिषद् अध्याय ५ खंड १० का भाष्यः—

न च पुनरावर्तन्ते इतीमं मानवाऽवर्त्तन्त इत्यादि श्रुति विरोध इतिचेन्न

अर्थः—वह ब्रह्मलोक को प्राप्त हुआ जीव नहीं लौटता दूसरी श्रुति कहती है कि कल्प में नहीं लौटता क्या इन में विरोध नहीं उत्तर मिलता है नहीं क्योंकि कहा हैः =

इम मानवमिति पिशेषरागत्तेषामिह न पुनरावृत्तिरस्तितिच ॥

इस कल्प में ... होती इसलिये

(इमम्) यह विशेषण दिया गया इस विचार को शंकराचार्य इसपर समाप्त कहते हैं

अत : इमामिहेति विशेषणार्थव त्वायान्यत्रावृत्तिकल्पनीया ।

अर्थः— इमम् और इन हेतुवों के आवश्यक होने से दूसरे स्थान पर पुनरावृत्ति कल्पना करो इस पर आनन्दगिरि कहते हैं :—

यस्मिन् कल्पे ब्रह्मलोक प्राप्ति तस्मात्कल्पान्तर मन्यत्रेत्युक्तम्

अर्थः— शंकराचार्य का अभिप्राय दूसरे स्थान से यह है कि जिस कल्प में ब्रह्मलोक प्राप्त होता है उसी कल्प में पुनरागमन होता है । उपरोक्त प्रमाणोंसे विदित होता है कि मुक्ति से पुनरागमन का प्रश्न निर्मूलक नहीं किन्तु दृढ़ युक्तियों और प्रमाणों से सिद्ध होता है अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि मुक्ति वेद मंत्रों और उपनिषद की श्रुतियों में अमृत

कहा गया है यदि मुक्ति भी नाश होने वाली है तो उसका अमृत कहना अनुचित है पर यहां पर विचार करना चाहिये कि वेदों में जीव की दो अवस्थायें वर्णन की हैं एक मृत्य या मृत्यु दूसरी अमृत जैसा कि यजुर्वेद अध्याय ४०में कहा है:—

विद्यांचा विद्यांच यस्तद्वेदोभय९३ सह विद्य या मृत्युंतीर्त्वांविद्ययामृतमश्नुते

अर्थ:— विद्या और अविद्या को जो पुरुष ग्रहण करने और त्याग करने योग्य जानता है अर्थात् पूर्व कर्म और उपासना जो ग्रहण करने योग्य है परन्तु पश्चात छोड़नी पड़ती है ऐसे ही विद्या भी पहिले ग्रहण करनी पड़ती है फिर उसका भी त्याग करना पड़ता है जैसे किसी को नदी के पार जाना है, कर्म उपासना संसार में हैं उनको विद्या का पहिला किनारा जान कर हम उसपर खड़े हैं परन्तु जहां विद्यारूपी नौका आई तो अविद्या रूपी पहिला किनारा छोड़ना पड़ा विद्यारूपी नौकामें नदी के दूसरे तटपर पहुंचकर

जबतक विद्याको न छोड़ें तबतक पार नहीं हुए क्यों कि नाव नदी के बीच में रहती है पार जाने के लिये नौका को भी छोड़ना पड़ता है इस वास्ते विद्या को भी छोड़ने योग्य जानता है वही अविद्या से मृत्यु को तर कर विद्या से अमृत को प्राप्त करलेता है संसार में जितनी योनि हैं वह सब मृत्यु कहाती हैं उनसे मरकर छूटता है परन्तु मोक्ष को अमृत इसलिये कहा है कि उसका परिणाम मृत्यु नहीं बलकि यह जन्म लेकर छूटती है । बहुत लोगों ने मृत्यु का अर्थ नाश होना और अमृतका अर्थ नाशसे रहित होना समझ लियाहै यह ठीक नहीं । अब बहुत लोग यह प्रश्न करेगें कि तुमनान चुकेहो । की मुक्तिमें कर्मशेष नहीं रहते जब कर्मही नहीं तो जन्म किसके भोगनेको लेताहै ऐसे पुरुषोंको जानलेना चाहिये कि योनि तीनप्रकार की होतीहै एक कर्मयोनि दूसरी उभय योनि तीसरी भोग योनि । इनमेंसे कर्म योनि तो बिना पिछले कर्मोंके औरनये कर्मोकेकरनेके लिये होतीहै और उभययोनि में पिछले कर्मोंका फलतो

भोगतेहैं और आगेके लिये कर्म करतेहैं। तीसरी भोग योनि जिसमें आगेके लियेकर्म नहीं करसकते बल कि पिछले कर्मोंका फलही भोगते हैं ! कर्मयोनि नितान्तस्वतन्त्रहोतीहै क्योंकि जीवात्मा कर्मकरनेमें स्वतंत्र है उभय योनिमेंभी जीवकर्मकरनेमें स्वतंत्रं होताहै परन्तु भोगनेमें परतंत्र और भोगयोनिमें नितान्तपरतन्त्रं होताहै केवल भोगता हीहै आगेके लिये कुछ नहीं करसकता. इसीलिये कर्म योनि आदि सृष्टिमें ही उत्पन्न होतीहैं क्योंकि माता पिता भाई बहिन आदि सम्बन्ध कर्मसेही होताहै परन्तु मुक्त जीवोंके पिछले कर्म होतेनहीं इस हेतुसे वे अमैथुनि सृष्टि आर्थात् सृष्टि के आरम्भ समयमें ही जन्म लेसकतेहैं वहुत लोग इसभ्रान्तिमेंहैं कि सृष्टितो कर्मोंका फलभोगने के लिये ही होतीहै जिनके कर्मही शेषनहीं उनको जन्म क्यों दिया जावे परन्तु ऐसे लोगोंकेलिये महर्षि पतजंलि सृष्टिका प्रयोजन बतलातेहैं:—

भोगापवर्गार्थम् दृश्यम्।

इस संसार के तीन प्रयोजनहैं भोगयोनी के भोग केलिये यह संसार हैं और कर्मयोनि को मुक्तिके साधन करनेके लिये यह संसारहै अब प्रश्न यह होताहै कि मुक्तिमेंजो ब्रह्मानन्द प्राप्तहुआ है उसके दूरहोनेका क्या कारणहै उसका उत्तर यहहै कि जो गुण नैमित्तिक होताहै वह नित्य तो होही नहीं सकता क्योंकि वह उत्पत्तिमानहै जिसका संयोग हुआ उसका वियोग भी आवश्यकहै अब प्रश्न यह होताहै कि जबकि ब्रह्म आनन्दका हेतु जीवमें विद्यमान है तो उससे प्राप्त आनन्द क्यों दूरहोसकता है पर विदितहो कि ब्रह्म तो मुक्त और बन्धन युक्त दोनों केही भीतरहै इस ब्रह्म का भीतरहोनाही आनन्दका कारण नहीं और नही प्रकृति का बाहरहोना दुःखका कारणहै जहां यह कहा गया हैकि प्रकृतिकी उपासना से बन्धन और ब्रह्मकी उपासना से मुक्ति होतीहै वहां उपासना से देशकालकी दूरीके दूरकना प्रयोजन नहीं क्योंकि देश और कालके सम्बन्ध से तो प्रत्येक पुरुष प्रकृति और ब्रह्मकी उपासना करताहै मनुष्य क्याही बलकि सबही प्राणी

उपासना करतेहैं क्योंकि ब्रह्मऔर प्रकृति दोनों सर्व व्यापक नित्यहैं भेद केवल इतनाहै कि ब्रह्म जीवोंके भीतरका है प्रकृति केवल बाहरहीहै। अब मुक्तिका कारण क्या था वेदोंसे प्राप्त शुद्ध तत्वज्ञान जो जीवका स्वाभाविक गुण नहीं था किन्तु नैमित्तिक था जब मुक्तिमें जाकर वेदोंका पढ़ना बन्दहोगया तो वह ज्ञान जो नैमित्तिकथा निमित्तके नाशहोजाने से न्यून होने लगा जब वेदों से प्राप्त शुद्ध तत्वज्ञान पृथक होगया तो जीव अपनी असली दशा में आगया जिसको फिर नये सिरे से तत्व ज्ञान प्राप्त करने को आवश्यक्ता हो जीवोंकी इसी न्यूनता को दूर करानेके लिये परमात्माने दयासे उनको अयोनि सृष्टिमें उत्पन्नकिया उनमेंजो सबसे पीछे मुक्तहुएथे उनके हृदयमें वेदोंका प्रकाश किया जिससे वेदोंके पढ़ने पढ़ानेसजीव तत्वज्ञान को प्राप्त करके) जो लोग यह समझे हुएहैं कि बिना कर्म सृष्टि नहीं होती वह भूल मेंहैं बल्कियह नाना प्रकार की सृष्टि जिसमें कोई दुखीहैं कोई सुखी कोई बलवान है कोई निर्बल कोई राजा कोई प्रजा

कोई स्वस्थ है कोई रोगी कोई आलसी कोई पुरूषार्थी कोई परोपकारी है कोई स्वार्थी परन्तु मुक्ति से लौटते हुए जीवों की सृष्टि एकसी बिना माता पिता के युवा अवस्था में होती है उनमें कोई निर्बल लंगड़ा कुबड़ा अंधा इत्यादि यहां होते कर्म करने में सब स्वतंत्र होते हैं जैसा कर्म करते हैं वैसा फल पाते हैं, प्रश्न होता है कि यदि सब मुक्ति जीव आदि सृष्टि में उत्पन्न होते हैं तो क्या मुक्त की सीमा एक ही सृष्टि है इसका उत्तर है कि सृष्टि जो ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष की होती है यह ब्रह्मा का एक दिन कहलाता है और ३६० दिन का वर्ष होता है इस लिये ३६० वर्ष को १०० वर्ष जो आयु के गुणा किये ३६००० सृष्टि ब्रह्मलोक वा ब्रह्मदर्शन की आयु है सुतराम मुक्ति ३६ सहस्त्र सृष्टि और प्रलय तक मुक्ति में आनन्द को भोगता है अब लोग प्रश्न करते हैं कि यदि ३६ सहस्त्र सृष्टि और प्रलय मुक्ति की सीमा मानी जावें तो कोई जीव तो सृष्टि की आदि में मुक्त हुए हैं उनको सृष्टि की आदि में जन्म लेना चाहिये

परन्तु जो जीव सृष्टि के मध्य में या अन्त में मुक्त हुए हैं उनका जन्म सृष्टि की आदि में किस प्रकार होगा क्योंकि इस दशा में मुक्ति की सीमा में न्यूनता व अधिकता हो जावेगी इसका उत्तर यह है कि प्रथम तो संसार में हर समय नये नये लोक उत्पन्न होते रहते हैं जिस जीव का जिस लोक की उत्पत्ति के समय मुक्ति का समय समाप्त होने वाला होगा उसी लोक में उसका जन्म होजायेगा दूसरे जब कोई नौकर रक्खा जाता है तो हम उस दिन को गिनते हैं यह कभी नहीं गिनते कि कितने बजकर कितने मिनट पर नौकर रक्खा गया और तनख्वा भी दिनों के हिसाब से देते हैं घंटों और मिन्टों के हिसाब से नहीं देते तीसरे मुक्त जीवों के वास्ते आदि सृष्टि में जन्म लने का नियम है इस लिये परमात्मा आदि सृष्टि में वेदों का उपदेश करते हैं ताकि हर एक जीव मुक्ति प्राप्त करले परन्तु जो जीव अपनी अपनी अविद्या से मुक्ति प्राप्त न करें उसमें परमात्मा का क्या

अपराध जिस प्रकार गवर्मेंट ने ५५ वर्ष की अवस्था में पेन्शन देकर नौकरी से पृथक करने का नियम स्थिर किया है चाहे कोई २० की अवस्था ही में नौकरी करने वा २५ में दोनों निकाल दिये जायँगे। इसपर गवर्मेन्ट को अन्यायी नहीं कह सकते कोई ऐसा कहते हैं कि जिससे लौट आवें वह मुक्ति कैसी परन्तु उत्पत्ति शील वस्तु का नाश होना आवश्यक है किसी के मानने न मानने से यह अटल नियम टल नहीं सकता क्योंकि उत्पत्ति शील मुक्ति नित्य हो नहीं सकती इस लिये गौड़ पाद आचार्य ने मुक्ति को पारमार्थिक मानने से इनकार किया है जैसा कि वह कहते हैं

न निरोधो नचोत्पत्ति नचबधो नचसाधकः नमुमुक्षु नवैमुक्त :इत्येषा प्रमार्थत :

अर्थ :—यह जो संसार में लौकिक और वेदों से बताया हुआ व्यवहार है यह सब अविद्या से जाना

जाता है यथार्थ में न तो कभी प्रलय होती है और नहीं कभी सृष्टि की उत्पत्ति होती है और नहीं कोई जीव बन्धा हुआहै और नहीं कोई मोक्षकी इच्छा रखने वालाहै और नही कोई मुक्तहोताहै परन्तु गौड़ पादजी से यदि कोई प्रश्न करे कि जबकिसम्पूर्णसंसार को आप मिथ्या मानतेहैं वैदिकव्यवहार कोभी आप मिथ्या बतातेहैं तो आपकी यहकारिका संसारसे बाहरहै वा संसारमें होनेसेमिथ्याहै यदि कहो यह कारिका संसारसे बाहर और सत्यहैतो आपके सिद्धान्त की हानि होगई क्योंकि आप एकब्रह्मही को सत्यमानतेहैं उसके अतिरिक्त सबको अनित्य बतातेहैं जबयह कारिका भी सत्य होगई तो एकही सत्य न रहा किन्तु दो सत्यहोगये यदि कारिका को मिथ्या मानतेहैं तो जिनवस्तुओं को कारिकाने मिथ्या कहा वे सब सत्य होगईं क्योंकि मिथ्याका मिथ्या अर्थात् अभावका अभाव वा सत्य होताहै। जिस समयमें गौड़पादादि आचार्य हुएहैं वह समय बौद्धोंके बलका था बौद्धलोग जगतको अनादि कर्मको फल आदिको सत्य मानतेथे

परमात्मा के अस्तित्वसे इनकारी थे गौड़पादादि ब्रह्मवादि थे उन्होंने उनके खंडनमें जो प्रयत्न किया यद्यपि किसी अंशमें प्रशसंनीयहै परन्तु यथार्थमें अविद्याकी जड़ उन्हीं महात्माओं से बढ़ी न मुक्तिजीवका स्वभाविक गुणहै और नहीं बन्धन जीवका स्वभाविक गुणहै मुक्तिसे पूर्व बन्धनकाहोना आवश्यक है और बन्धनसे पूर्व मुक्तिकाहोना आवश्यकहै रातदिन के समान बन्धन और मुक्तिका चक्रहै जब जीव ब्रह्मसे सम्बन्ध करता है तबही उसके गुण आनन्दको प्राप्त करताहै और जब प्रकृतिसे सम्बन्ध करताहै तब बन्धन में पड़कर दुःखका अनुभव करताहै तीन अवस्थाओंमें जीवका ब्रह्मके साथ सम्बन्ध होताहै जैसा कि कपिलमुनि कहते हैं

समाधि सुषुप्ति मोक्षेषु ब्रह्मरूपता।

अर्थः—समाधि जब योगके यम नियम प्रत्यहारआसन प्राणायाम, धारणा, ध्यान, इन सात अंगोंको पूरा कर

के ब्रह्मके आनन्द का अनुभव करताहै । सुषुप्ति जिस में जीव ब्रह्मका सम्बन्ध होताहै परन्तु अथ आनन्द भोगता हुआ भी उसके कारण ब्रह्मको जानता नहीं मुक्ति अव;शरीरके अध्यासको छोड़कर ब्रह्मके साथ सम्बन्धकरता है इन तीन दशाओंमें जीवमें ब्रह्मका गुण आनन्द आताहै तात्पर्य यहहै कि ज्ञान सहित और शरीर सहित ब्रह्मके सम्बन्ध को सुषुप्ति कहते हैं और शरीर रहित और ज्ञान सहित सम्बन्ध को मुक्ती कहते हैं निदान यह मुक्ति जीवका नैमित्तिक गुण है सहस्रों बार जीव मुक्ति हुआ सहस्रों बार जीव बन्धा मुक्ति से पुनरावृत्ति न मानना बुद्धि और ज्ञानके विरुद्ध है

इति

ओ३म्

ट्रैक्ट नम्बर ५,

अविद्या का प्रथम अंग

जिसको

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती जी ने रचा और

प्रबन्धकर्त्ता दयानन्द ट्रैक्ट सोसाइटी ने

महाविद्यालय मैशीन प्रेस ज्वालापुर में छपवाया.

मिलने का पता—

दयानन्द ट्रैक्टसोसाइटी

(दफ्तर) पुलिस के सामने

बाजार हरिद्वार.

४००० प्रति] [मूल्य ३ पाई.

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गौशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

॥ ओ३म् ॥

अविद्या का प्रथम अंग ।

विद्याञ्चा विद्याञ्च यस्तद्वेदोभयꣳसह ।
अविद्याया मृत्युतीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते॥

प्यारे भ्रातृ वर्ग इस वेद मन्त्र में परमात्मा जीवों को इस बात का उपदेश देते हैं कि जो जीव अविद्या और विद्या अर्थात् दुःख और सुख के कारण को एक समय में जानता है वह अविद्या के ज्ञान से मृत्यु को तरकर विद्याके ज्ञान से अमृत अर्थात् मोक्ष (निजात) को प्राप्त करता है। अब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि अविद्या जो दुःख का कारण है वह क्या वस्तु है, इसका लक्षण महात्मा पतञ्जलि ऋषि ने यह किया है कि-

अनित्याऽशुचिदुःखाऽनात्मसुनित्या ।
शुचि सुखात्माख्यातिर विद्या॥ यो०पा०

अर्थ अनित्य पदार्थों को नित्य जानना अविद्या का प्रथम लक्षण है जैसे यह शरीर नाश वाला है अथवा यह जगत् जो विनाश वाला है, इसको सर्वदा स्थित रहने वाला मानना अविद्या है क्यों कि यदि जीव इस शरीर को नित्य (अस्थी) न जाने तो उस के पालने के वास्ते बड़े २ पाप कभी न करे अस्तु जिस मनुष्य को यह निश्चय होजाता है कि मैं ऐसी सराय में ठैरा हूं कि जिस में पता नहीं कि किस समय स्वामी मुझे निकल जाने की आज्ञा देदे तो उस में वह मनुष्य ज्यास्ती सामान इकट्ठा करने का श्रम नहीं करता और नहीं मनुष्यों से प्रीति बढ़ाता है क्यों कि संसार के सम्पूर्ण कार्य आशा के सहारे पर होते हैं. जब आशा की निवृत्ति हुई तब वहां कार्य कोई नहीं करसक्ता जब तक मनुष्यों को यह आशा रहती है कि यह लड़के और स्त्री मुझे सुख देंगे तब ही तक वह लाखों प्रकार के असत्य वाक्य (झूठ) बोलकर और विश्वास घात करके रुपया इकट्ठा करता है यदि उसका इस श्लोक पर विश्वास होता तो वह कार्य नहीं करसकता जैसे एक कवीर ने कहा है॥

अनित्यानिशरीराणीविभवोनैव शाश्वतः।
नित्यंसन्निहितोमृत्युःकर्तव्योधर्म संग्रहः॥

अर्थात् यह शरीर सर्वदा रहने वाला नहीं क्यों कि हमारे

प्राचीन ऋषि हमारे सामने इस जगत् से चले गए हैं हमारे माता पिता और भाई भी यहां से चल दिये हैं शेष भी चले जारहे हैं, पुनः किस प्रकार आशा होसकती है कि यह हमारा शरीर सर्वदा रहने वाला है. यदि नहीं तो इसके वास्ते आत्मा के बल को नाश करने से क्या लाभ है जब ऋषि मुनी और देवताओंके शरीर ही स्थित न रहे तो हमको अपने शरीर के नित्य रहने की आशा रखना सरासर अविद्या के वश में वास करना है, यह प्राकृत पदार्थ अनादि भी (हमेशा) सर्वदा रहने वाले नहीं हैं लाखों राजा महाराजा इस पृथ्वी परसे चलेगए और प्रत्येक की बुद्धि में यह निश्चय होगया था कि मैं इस संसार का राज्य भोगने के वास्ते हूं और मैं इस जगत् का स्वामी (मालिक) हूं और संसार के सारे पदार्थ मेरे भोग के वास्ते हैं परन्तु आज उनका नाम निशान भी दृष्टि गोचर नहीं होता इतनाही नहीं औरंगजेब जैसे बादशाहों की खबरों का भी पता नहीं मिलता. वह जगत् को तो विचारे क्या भोगते-किन्तु आपही भोगेगए.. संसार की वैसी की वैसी संपूर्ण वस्तु स्थित हैं. परन्तु वह जगत् को अपना मानने वाले नहीं रहे-

नही आज दुनिया में कोई उनकी प्रतिष्ठा है कारूं ने लक्षों कोश (खजाने) इकट्ठे किए परन्तु आज नतो कारूं का पता मिलता है और ना उनके वह कोश दीखते हैं जब कि कारूं जैसे मनुष्यों के साथ अनादिक संसारिक पदार्थों ने मित्रता

छोडदी तो आजकल छोटे २ राजे रईस बनिये-सेट साहूकार दो चार लाख के विश्वास से संपूर्ण ऐश्वर्यता को तुच्छ समझते हैं-इससे क्या आशा रखसक्ते हैं—जिन नव युवकों (नौ जवानों) की बुद्धि में धनादिक सांसारिक पदार्थ सबसे प्यारे हैं उनको चाहिये कि वह अपने दादा परदादा की अवस्था पर विचार करें-कि उनके साथ इस माया ने (दौलत ने) कैसा वर्ताव किया जिस माया को उसने हजारों पाप करके उत्पन्न किया था इस मरते समय उनको कुछ लाभ नहीं पहुंचासकती है दूर मत जाओ इस देहली की अवस्था पर विचार करो—कि एक समय यह देहली इन्द्र प्रस्थ के नाम से प्रसिद्ध (मशहूर) थी-युधिष्ठिर जैसा धर्मात्मा यहां राज्य करता था जिसके अर्जुन जैसे तीरअन्दाज भ्राता थे अभिमन्यु जैसे बलवान भतीजे थे-भीमसेन जैसे बलवान गदाधारी योद्धा जो कटिबद्ध होकर उसके पसीने के स्थान में अपना रक्त [खून] बहाने को तयार रहते थे कृष्ण जैसे योगीराज उनकी सहायता के लिये कटिबद्ध थे वह युधिष्ठिर जिसने राजसू यज्ञ किया संपूर्ण संसार के राजाओं पर राज्य किया फिरंग [यूरूप] पाताल [अमरीका] और एशिया के कुल मुल्कों के विराट होते हुवे अपना सिक्का चलाया जिसका वर्णन विस्तार पूर्वक महाभारत में किया है जिसने अश्वमेध यज्ञ किया जिसकी आज्ञा में लाखों मनुष्यों की सेना रही अर्थात् बहुतसी अक्षौहिणी सेना रहती थी

बड़े २ महारथी और शस्त्रधारी जिसके भ्राता हों। भला आज कोई बतासकता है कि देहली में उसका कोई चिन्ह मिलता है आज एक छोटासा मनुष्य भी उसकी आज्ञा को नहीं मानता किन्तु कोई भी नहीं जानता कि युधिष्ठिर का गृह देहली के किस महल्ले में था युधिष्ठिर के पीछे बहुत से राजे महाराजे हुवे जिन्हों ने इसको अपना समझा परन्तु यह देहली किसी की नहीं हुई युधिष्ठिर ने कौरवों से लड़ाई की संपूर्ण वंश का नाश किया हा ! आर्यावर्त्त के भीष्मपितामह जैसे उसकी सहायता के लिये मारे [कतल किये] गए, द्रोणाचार्य जैसे शस्त्र विद्या के गुरु मारेगए परन्तु क्या देहली युधिष्ठिर की हुई नहीं जिस युधिष्ठिर ने देहली के लिये इतना श्रम उठाकर ... रक्त [खून] बहाकर बड़े २ दुःख उठाए सारे वंश का नाश किया परन्तु इतने पर भी देहली उसकी न हुई भला जब इतनी आपत्तियों के उठाने से भी देहली युधिष्ठिर की नहीं हुई तो उसके आदेशों [जानशीनों] को उससे क्या आशा है ... थी सब राजे नम्बरवार देहली को अपना २ कहते हुवे चलेगए परन्तु यह किसी की न हुई किसी मूर्ख को यह स्मरण न हुवा कि संसार तो आज तक किसी का हुवा ही नहीं पुनः हम उसमें अपना अहंकार रखकर उसके वास्ते वंश का नाश करने का कलंक क्यों लें यदि वंश को जगत् के अन्दर होने से उसकी कुछ परवाह न करो तो धर्म का क्यों नाश करते हो ! अविद्या तेरी महिमा अपार है जब युधिष्ठिर जैसे सभ्य पुरुषों

(हो) तैने फसालिया तो आजकल के निर्बुद्धि मनुष्यों का तो कहना ही क्या है केवल युधिष्ठिर ही तेरे जाल में नहीं फँसा किन्तु उसके संपूर्ण अनुयाई तेरी भृत्यता [गुलामी] का भार शिरपर लेकर चलेगा कुछ कालान्तर के पश्चात् महाराजा पृथ्वीराज इस देहली के मालिक हुवे जिन्होंने क्षत्रियधर्म के अनुसार राज्य किया धर्मवीर पृथ्वीराज भी कुछ दिवस पर्यंत देहली को अपना कहता रहा परन्तु उसकी ना हुई अपने भ्राता जयचन्द्र से युद्ध में विजय पाकर हजारों शूर वीरों के शिर कटाकर भी देहली पृथ्वीराज की न रही।

सुमेरसिंह वाली चित्तौर ने जो भारत के शूरवीरों में शिरोमणि था, बहुत कुछ प्रयत्न किया यहां तक कि अपने प्राण भी इसकी रक्षा में समाप्त किये. परन्तु क्या देहली पृथ्वीराज की ही नहीं, कुँवर कल्याणसिंह जैसे सिंह ने बहुत कुछ श्रम किये परन्तु सब निष्फल हुवे. यहां तक कि शाहाबउद्दीन मुहम्मद गोरी को प्रथमबार पराजय किया जिस देहली के लिए विजयसिंह ने पृथ्वीराज का विश्वास घात किआ। कुँवर कल्याणसिंह को धोके से मारडाला संपूर्ण क्षत्रिय सेना को मिटाकर आर्यावर्त्त (हिंदुस्तान) को यवनों का सेवक बनाया, क्या वह दिल्ली विजयसिंह की हुई नहीं जी—जिस शहाब उद्दीन मुहम्मद गोरी ने लाखों मनुष्यों के रक्त बहाकर पृथ्वीराज को छल और कपटों से विजय करके अपनी संपूर्ण प्रतिज्ञा

को भंगकर धर्म की परवाह नहीं की, अपवित्रवत्- (लामज हबों की तरह) राक्षसता का झण्डा उठाया क्या देहली उस की हुवी नहीं जब कि यह देहली इतने २ कपटों से भी अपनी नहीं हुवी तो अब जो मनुष्य थोड़े वित्त होने पर अहंकारी बन बैठते हैं और पाप से रुपया कमाने पर कटिवद्ध होजाते हैं, परन्तु उनको स्मरण रहे कि संसार की संपूर्ण वस्तु चलती फिरती छाया है आज किसी की कल किसी की मौत दिवस प्रति दिवस समीप आती जाती है माता पिता समझते हैं कि हमारे पुत्रकी आयु बढ़ती है परन्तु यह उनका विचार मिथ्या है, क्योंकि रात दिन रूपी दो चुहे हैं जो मनुष्यों की आयुरूपी रस्सी को निरन्तर काटते जारहे हैं, निशा दिवस के चक्र में मनुष्यों की आयु घटती हुई ज्ञात नहीं होती-मृत्यु मनुष्य की आयु का नाश इस प्रकार करता हुवा चला जाता है जिस प्रकार रोशनी अन्धेरे को—परन्तु जो मनुष्य मृत्यु से भय करता है उसको संसार के विषय दुःख नहीं देसकते हैं परन्तु जिसको मृत्यु का भय नहीं है उसको पाप की भयंकर रूप आभा अपने वशीभूत रखती है पाप से वही मनुष्य बचसक्ता है, जो मृत्यु को प्रत्येक समय शिर पर खड़ी देखता है जो मौत को भूलजाते हैं वह अपनी हानि कर बैठते हैं अपनी मौत को प्रत्येक समय स्मरण रखना चाहिये इसही से सम्बन्ध रखने वाला एक दृष्टान्त भी है।

कथा.

एक समय किसी कामी राजा ने किसी विद्वान वैद्य को आज्ञादी कि हमारे वास्ते एक ऐसी औषधी तयार करदो कि जिसके सेवन से रात्रीभर काम से अवकाश न मिले वैद्य तो ऐसे ही राजा महाराजा नवाब और रईसों की मौज में फिरा करते हैं।

उन्हों ने ऐसी ही औषधी तयार करदी और जिस समय वह औषधी राजा की सेवा में भेजी तो राजा जी आनन्द को प्राप्त होते हुवे भृत्य को आज्ञा दी कि इसको थाल में रखकर गुरुजी की सेवा में रक्खो भृत्यने ऐसाही किया. गुरुजी इस औषधी को ठीक तो जानते ही नहीं थे कि इस के क्या गुण और अवगुण हैं, उन्हों ने समझा कि राजा जी ने कुछ उत्तम ही वस्तु भेजी होगी झट दो तीन तोला खागये और भृत्य को आज्ञा दी कि जाओ, नौकर वापिस डिब्बा लेकर आया और संपूर्ण वृत्तान्त वर्णन किया राजा ने उस समय तो श्रवण करके मौन धारण किया और रात्री को वैद्य की आज्ञानुसार एक रत्ती खाई और रात्री के अन्तिम समय पर्यंत कामकी पूर्ति नहीं हुई

जब प्रातः काल उठे तो स्मरण आया कि मैंने तो एक रत्ती ही खाई थी जब मेरी यह गती हुई और गुरुजी की

मालूम क्या गति हुई होगी यही मनमें सोचकर बाग में जाप-हुंचे देखा तो गुरुजी उसी प्रकार समाधी में बैठे हुवे हैं महा-राजा देखकर गहरे विचार में गिरा कि यह क्या बात है,

जिस काम वृद्धी ओषधी (माजून) ने मेरा यह हाल किया उस ने गुरुजी पर कुछ भी असर न किया—

इतने में गुरु जी की समाधी खुली। देखा कि महाराजा गहरे विचार में गिरे हुवे हैं पूछा कि क्या सोच रहे हो महाराजा ने कर बान्ध कर कहा कि महाराज अपराध क्षमा करें तो कुछ जिव्हा से शब्द निकालू महाराज गुरुजी बोले कि निर्भय जो तुम्हारे मनमें हो सो कहो महाराजा ने कहा कि महाराज मेरे मन में एक शंका उत्पन्न हुई है आप इस का उत्तर देकर मेरा दुःख दूर करें गुरुजी ने कहा पूछो—

राजानेकि महाराज मैंने जो कल आपकी सेवा में कामवर्धक औषधी भेजी थी आपने उस में से तोलेसे जास्ती खाई थी और मैंने एक रत्ती परन्तु जबभी मुझ की सम्पूर्ण रात्री में पूर्ती नहीं हुई और पर उस का कुछ भी प्रभाव नहीं हुआ इस का क्या कारण है सन्यासी ने कहा कि पुनः किसी रोज बतलायेंगे परन्तु तुम आज दो मजदूर बुला कर इस बाग में रक्खो और उन को अच्छे उत्तम वस्त्र पहना कर इस कोठीको सजा कर और सुन्दर स्त्री वास्ते भोग के और प्रत्येक उत्तम सामान

उन को दिया जावे और प्रत्येक दिवस उनको जिस वस्तु की आवश्यकता हो वही भेज दो—महाराजाने कहा जैसी आपकी आज्ञा है वैसाही कियाजावे— राजाजीने नौकरों को आज्ञा दी कि दो मजदूर नगर में से पकड कर बागमें लेजाओ और नजर बन्द रक्खो और कुलसामान उनकोदेदो नौकरोंने वैसाही किया जब वह दोनों मनुष्य खा पी कर अच्छे प्रकार पुष्ट होगये और श्रम से मोक्ष हुवे तो काम देवने आपना जाल फैलाया अब जब उनसे पूछा जाता कि क्या चाहिये तो उत्तर में कहा जाता कि स्त्री—जब दश पन्द्रह दिवस उनको स्त्री मांगते हुवे होगये तो राजा जी ने गुरु जीके समीप जाकर कहा कि महाराज अब तो वह मनुष्य केवल स्त्री ही स्त्री पुकारते हैं— अच्छा तो नगर में मनादि करादो कि वह दो मनुष्य जो पाले गयेथे कलको बलिदान किए जावेंगे परन्तु मनादी इस ढंगसे कराओ कि वह भी सुन लेवें—और रात्री को दो रत्ती औषधी देदो—और दो सुन्दर स्त्री भी भेजदो और जो कुछ वह कहें उसका मुझे समाचार दो श्री राजा जीने सम्पूर्ण कार्य्य वैसाही किया जब उन मजदूरों ने सुना कि कलहम बलिदान किएजावेंगेतोमनमेंविचारा किहमको राजाने निष्प्रयोजन उत्तम२ भोजन वस्त्र दिये हैं उस का केवल बलिदान देनेके और कोई अर्थ नहीं है उस का कारण भी तो और नहीं दीखता है अस्तु कल निश्चय मौत के भक्ष बनेंगे और उन स्त्रीयों ने बार बार इच्छा प्रगट की

कि किसी प्रकार हमारी तरफ ध्यान दें परन्तु उनको ध्यान में भी नहीं आया कि हमारे पास और भी कोई है या नहीं उन्होंने आ कर राजा जी से कहा महाराज वह तो नपुन्सक हैं महराज चकराया कि यदि यह नपुन्सक होते तो वारस्त्री की इच्छा क्यों प्रकट करते—महाराजा ने सम्पूर्ण वृतान्त गुरुजी न उत्तर दिया कि वह नपुन्सक नहीं किन्तु आपने जो उनको मौत का भय दिलाया था उस ने उनको नपुन्सक वनादिया है यद्यपी इतनी इच्छा होने पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया अब तू अपने प्रश्न का उत्तर सुन जिस मृत्यु के भयने ऊनको नपुन्सक बनादिया जो रात दिन काम की चेष्टा करते थे यद्यपि उनको सम्पूण रात्री को जीने की आशा थी परन्तु मुझे तो एक पल के जीने की आशा नहीं है भला हमें पूनः यह कामदेव किस प्रकार होसक्ता है हमारे पाठकगण समझ गए होंगें कि मृत्यु का भय कितनावळ-वान है कि मनुष्यों को पापों से तत्काल वचासक्ता है यह केवल शरीर को अनित्य जानने काही फल है अर्थात् अविद्या की के प्रथम अंग को जानने से मनुष्य पापों से वच सकता है उस मनुष्य की दशा का ढंग ही पलट जाता है यह एक ऐसी वात है कि जिसकी बुद्धि में बैठजाती है उसकी दशा ही पलटा खाजाती है, मृत्यु प्रत्येक मनुष्य के शिरपर सवार है, जो मनुष्य लाखों तोपें अपने शत्रुओं के वास्ते रखते हैं वह भी मृत्यु के पंजे से वच नहीं सकते, जिनके पास वहुतसी वंदूक तोप

और डायनामेट के गोले स्थित हैं वह मृत्यु की बराबरी नहीं करसकते जिन्हों ने बडी २ ढालें तलवारें किर्च तीर और कमान शत्रुओं से बचाने के वास्ते सहायक बना रखते हैं मौत के सामने सब निष्कार्य हैं मृत्युके भय से कोई मनुष्य जबतक नहीं बचसकता हैकि तब तक उसको अविद्या और विद्या के स्वरूप को ठीक २ नहीं समझले—अतः अविद्या का प्रथमावयव अनित्य को नित्य मानना है उसके नाश का कारण मृत्यु का भय है।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

—०※०—

दयानन्दट्रेक्ट सोसाइटी के सामान्य नियम

१—इस टरेक्ट सोसाइटी का आशय ऋषि-दयानन्द के सिद्धान्तों का प्रचार करना और वेद मन्त्रों के शब्दों को सरल भाषा में व्याख्या करके और दर्शनों के प्रत्येक सूत्र पर एक टरेक्ट लिख कर उन के आशय को अच्छी तरह समझा कर आर्य पुरुषों को इस लायक बनाना है कि वह वैदिकधर्म के विरोधी के मुकाबले में स्वयं काम चला सकें बाहर से सहायता की आवश्यकता न रहे ॥

२—यह टरेक्ट सोसाइटी एक वर्ष में १६ पृष्ठ के) वाले ३६० टरेक्ट प्रकाशित किया करेगी जिस में वेद मन्त्रों की व्याख्या एक

टरेक्ट में एक मन्त्र १२५ दर्शनों के सूत्रों की व्याख्या एक टरेक्ट में एक सूत्र १२५ आर्य सिद्धान्तों पर विचार २५ टरेक्ट (मुख़ालिफ़ान) वैदिकधर्म के जवाब में ७५ आर्यसमाज के सुधार पर १० टरेक्ट ॥

३—जो मनुष्य इस टरेक्ट सोसाइटी के ग्राहक बनकर सहायता देंगे उन को १० दिन के पीछे इकट्ठे १० टरेक्ट)॥ के टिकट में भेजदिये जावेंगे जिस जगह १० ग्राहक होंगे उन को नित्य प्रति रवाना किये जावेंगे जिस जिले में १० समाजें १० टरेक्ट रोज़ाना लेने वाले होंगे या जिस जिले में १०० ग्राहक रोज़ाना टरेक्टके होंगे उस जिले को एक उपदेशक टरेक्ट सोसाइटी की ओर से बिना वेतन के दिया जायगा ॥

ओ३म्

ट्रैक्ट नम्बर १

सृष्टिप्रवाह से अनादि है

जिस को

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती जी

ने

दयानन्द ट्रैक्ट सोसाइटी के हितार्थ रच कर

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

ज्वालापुर हरिद्वार में

प्रकाशित किया

=×:※:×=

प्रथम वार ४ हजार प्रति] [मूल्य)।

ओ३म्

सृष्टि प्रवाह से अनादि है.

—⊂o※o⊃—

आर्यसमाज का सिद्धान्त यह है कि जीव ब्रह्म और प्रकृति स्वरूप से अनादि है अर्थात् इनका कोई कारण नहीं है परन्तु सृष्टि प्रवाह से अनादि है जिसका उत्पन्न करने वाला ईश्वर है. २ अनादि का अर्थ जिसका आदि न हो अर्थात् जिसका कारण कुछ न हो. और सृष्टि का अर्थ है जो पैदा करीगई हो, इस स्थान पर वादि तर्क करता है कि आर्यसमाज का यह सिद्धान्त ठीक नहीं, क्योंकि इस में नीचे लिखे दोष ज्ञात होते हैं प्रथम प्रत्येक कार्य के पूर्व क्रिया का होना आवश्यकीय है और प्रत्येक क्रिया से पूर्व इच्छा का होना आवश्यकीय है और इच्छा से पूर्व कर्ता में उस गुणका होना (लाजमी) है कि जिससे स्पष्ट प्रघट है कि कार्य से क्रिया पूर्व होगी और कार्य पश्चात् होगा क्रिया और कार्य का एक साथ होना असम्भव है और क्रिया से इच्छा (इरादा) पहिले होगी और क्रिया पीछे क्रिया और

इच्छा का एकसमय होना भी असम्भव है इच्छा से उस पूर्वोक्त गुणका पूर्व होना भी आवश्यकीय है क्यों कि असम्भव पदार्थों की इच्छा नहीं होती अतः सृष्टि का अनादि होना और ईश्वर का अनादि होना किसी प्रकार सम्भव नहीं होसकता, और सृष्टि को प्रवाह से अनादि कहना भी कोई आशय नहीं रखता क्यों कि यह सम्बन्ध सगुण (तौसीफी) है क्यों कि प्रवाह सृष्टि का गुण है और गुण किसी दशा में द्रव्य के बिना नहीं रह सकता अतः प्रवाह से सृष्टी अनादि है इसका अभिप्राय यही लेना होगा कि सृष्टि अनादि है क्योंकि सृष्टि अनादि है जिसका आशय यह है कि उसका कोई कारण नहीं जब सृष्टि का कोई कारण नहीं तो ईश्वर की सत्ता के लिए जो सृष्टि का कारण होना हेतुः दिया गया है, अथवा आर्यसमाज के प्रथम नियम में जो ईश्वर को आदिमूल बतलाया है वह मिथ्या सिद्ध होता है जिससे आर्यधर्म (दयानन्दीयमत) नास्तिक सिद्ध होता है क्यों कि प्रथम तो उसका प्रथम नियम ही गिरजाता है द्वितीय ईश्वर की सत्ता में कोई हेतु नहीं रहता।

(उत्तर) वादि की यह तर्क अनभिज्ञता के कारण है क्यों कि संसार में तीन प्रकार के पदार्थ हैं (१) अज्ञ (गैर मुद्रिक) जिन को तीनों काल में ज्ञान होही नहीं सकता (२) अल्पज्ञ जिन को कुछ ज्ञान तो स्वभाविक होता है और विशेष ज्ञान पदार्थ और सामान के द्वारा उत्पन्न होता है, (३) सर्वज्ञ जिसका ज्ञान

नित्य और निर्भ्रान्त होने से उस में किसी प्रकार का बाह्य ज्ञान आता नहीं. अब अज्ञानी कर्म करने की शक्ती ही नहीं रखता और अल्पज्ञ स्वेच्छा से कर्म करता है और सर्वज्ञ स्वभाव से कर्म करता है न कि इच्छा से अवन्तादि ने अपनी अज्ञानता से अल्पज्ञ के वास्ते जिन साधनों की जरूरत है उनको सर्वज्ञ के गले में भी मढना चाहा है, परन्तु उसे सोचना चाहियेथा कि जहां हम क्रिया से पहले इच्छा को देखते हैं वहां हम उस के कारण को भी देखते हैं क्यों कि इच्छा अप्राप्त इष्ट की होती है यदि वह लाभ कारक भी हो तो न कि किसी प्राप्त हुवी वस्तु की इच्छा होती है, और नहीं अलाभ कारक वस्तु की इच्छा होती है, इस इच्छा का कारण उस अप्राप्त और इष्ट अर्थात् अप्राप्त लाभ कारक है जिसके प्राप्त करने की वह इच्छा करता है प्रथम तो आप कोई ऐसी वस्तु बताही नहीं सके जो ईश्वर की इच्छा का कारण हो क्यों कि उसका ईश्वर की इच्छा से पूर्व होना जरूरी है यदि अभ्युपगम सिद्धान्तानुसार ऐसा मान भी लेवें तो वह वस्तुः जो ईश्वर की इच्छा का कारण होती है, नित्य है अथवा अनित्य यदि नित्य मानोगे तो ईश्वर के साथ इच्छा का कारण भी नित्य मानना पडेगा, पुनः कारण कार्य भाव का झगडा पड जावेगा और अन्त में एक ही नित्य मानना पडेगा।

यदि अनित्य मानो तो उस के जन्यत्व में इच्छा का होना

आवश्यकीय होगा, जिसके लिए पुनः किसी कारण की आवश्यकता होगी और पुनः उस कारण की अपेक्षा भी यही प्रश्न होगा जिससे अनवस्था दोष (तूलतसलसिल) आजायगा, जिस से ईश्वर का इच्छा से कर्ता होना मिथ्या है द्वितीय आपने यह जो कहा कि सृष्टि प्रवाह से अनादि है और सम्बन्ध सगुण (तो साफी) है यह भी मिथ्या है, क्यों कि प्रवाह सृष्टि के अनादि होने का कारण है न कि सृष्टि का गुण बहुत से मनुष्य यह कहेंगे कि प्रवाह का अर्थ क्या है इसका उत्तर यह है कि ईश्वर के संपूर्ण गुण अनादि होने से और उसका इच्छा रहित कर्ता होनेसे और सृष्टि की वार वार रचना करने का नाम प्रवाह हैं क्योंकि ईश्वर सर्वदा सृष्टि की रचना करता रहता है, अतः उसका कार्य सृष्टि भी अनादि है वादि इस स्थान पर यह प्रश्न करसकता है कि जब ईश्वर इच्छा रहित करता है और उसका सृष्टि उत्पन्न करना स्वभाव है तो प्रलय के समय वह क्या करता है क्यों कि उस वक्त सृष्टि तो उत्पन्न करता नहीं इसका उत्तर यह है कि ईश्वर की दी हुई शक्ती (हरकत) से प्रकृति के प्रमाणुओं में हरकत बराबर जारी रहती है जिस प्रकार रात्रि के दो पहर पर्यंत अंधेरा बढता जाता है और दो पहर के पश्चात् घटना आरम्भ होजाता है इधर दिन के बारह बजे तक धूप बढती जाती है और दिन के बारह बजते ही घटनी आरम्भ होजाती है कोई पलभी ऐसी नहीं जो घटने

से रहित हो ऐसे ही २१ दिसम्बर से दिवस बढ़ना आरम्भ हो जाता है और २१ जून से घटना कोई दिन नहीं जिस में वृद्धि क्षय नहो यही दशा सृष्टि और परलय की है अर्थात् चार अर्ब बत्तीस करोड़ वर्ष सृष्टि और इतना ही समय परलय में व्यतीत होता है परन्तु जिस को ब्रह्म दिन अर्थात् सृष्टि कहते हैं उस का आदि वेद रूपी सूर्य के उदय होने से होता है अर्थात जब से मनुष्य जाती उत्पन्न होती है और जब तक मनुष्य जाती रहती जाती है इस के आभ्यन्तर का यह नियत समय (मर्याद) है पशु कीट पतंग स्थावर पर्वतादिक इस समय से पूर्व उत्पन्न होजाते हैं और इसके बाद भी रहते हैं और जिस तरह प्रत्येक रात्री के पूर्व दिवस होता है और प्रत्येक दिन के पूर्व रात्री होती है कोई दिन नहीं जिसके पूर्व रात्री नहो और कोई रात्री नहीं जिसके पूर्व दिन नहो इसही प्रकार प्रत्येक सृष्टि से पूर्व परलय और परलय से पहिले सृष्टि होती है यद्यपि प्रत्येक सृष्टि और प्रलय का आदि और अन्त होता है परन्तु इस चक्रका आदि और अन्त नहीं होसकता।

(प्रश्न) जिस अवयवी के अवयव अनित्य हो वह अवयवी भी अनित्य होता है. यदि सृष्टि का उत्पन्न होना मानते हो तो चक्र (प्रवाह) भी अनित्य मानना पड़ेगा जिस प्रकार रात्री से पहिले दिन और दिवस से पूर्व रात्री होती है तो उसका आदि भी पाया जाता है क्योंकि रात्री और दिन सूर्य के उत्पन्न

ने के पश्चात् होसकती है और सूर्य का अनित्य होना सर्व
न्त्र सिद्धान्त है जब से सूर्य उत्पन्न हुआ तबही से रात दिनका
क आरम्भ हुआ अतः स्पष्ट सिद्ध है कि जिस जंजीर या चक्र
। कडी का आदि हो वह चक्र भी अनित्य होता है ॥

स प्रकार एक दिन में घडी अथवा घंटे होते हैं उसी प्रकार एक
ष्टि में युगादिक होते हैं वर्तमान सूर्य के प्रकट होने से दिन
र लोप होजाने से रात्री कहलाती है परन्तु सृष्टि और लय
चक्र का कारण क्या है जिससे सृष्टि और लय होता है
मानना पडेगा कि उसका कारण ब्रह्म है परन्तु ईश्वर नित्य
सूर्य की तरह उसका उत्पन्न होना असम्भव है अतः मानना
ही है कि जिस चक्र का कारण नित्य है वह नित्य और जिस
। कारण अनित्य है वह अनित्य–अतः इस चक्र को जिसको
रे शब्दों में ईश्वर में उत्पन्न करने का स्वभाव कहलाते हैं
त्य कहना पडेगा ।

(प्रश्न) यदि इस ही तरह पर ईश्वर को स्वभाव से जगत
ानेवाला अथवा इच्छा रहित कर्ता कहेंगे तो वह कर्मों का
नकर फल देनेवाला नहीं होसक्ता जिससे आर्यों के सिद्धान्त
। तो समाप्ति होगई ।

(उत्तर) जो लोग यह मानते हैं कि परमात्मा जो चाहे
। करसक्ता है उनके सिद्धान्त की तो अवश्य समाप्ति होगई

परन्तु जिनको यह ज्ञान है कि सर्वज्ञ परमात्मा का कोई कार्य नियम के विरुद्ध नहीं होता उसका प्रत्येक कार्य ज्ञान के युक्त होने से नियम के अभ्यन्तर होता है--उनके सिद्धान्त को कोई हानि नहीं पहुंचासक्ता है जैसे सूर्य का प्रकाश प्रत्येक पदार्थ पर एकसा पड़ता है वह नतो किसी का शत्रु और नहीं किसी का मित्र है यदि उसका प्रकाश है तो सब के वास्ते यदि गर्मी है तो सबके वास्ते परन्तु उस सूर्य से भी प्रकृत्यनुसार पृथक २ असर पड़ता है जैसे एक मनुष्य की प्रकृति शरद है और द्वितीय मनुष्य की प्रकृति मध्यम दर्जे की और एक की बहुत उष्ण है यदि यह तीनों मनुष्य सूर्य के समीप जावें यद्यपि सूर्य स्वाभाविक कार्य करता है परन्तु उनको पृथक २ ही फल मिलेगा जिसमें सर्दी अधिक है उसको सूर्य के समीप जाते हुवे सुख मिलेगा और जिसमें गर्मी अधिक है उसको दुःख और जो मध्यम है उसको मध्यम दुःख सुख मिलता है इस ही प्रकार परमात्मा तो स्वभाव से न्याय और दया करते हैं परन्तु प्रत्येक जीव अपने कर्मानुसार उनसे फल पाता है।

(प्रश्न) यदि परमात्मा को स्वभाव से कर्ता मानोगे तो उसमें एक ही प्रकार का कर्म होगा, उससे बिना किसी कारण के दो प्रकार का असर अर्थात् उत्पन्न करना और नाश करना नहीं होसक्ता क्योंकि दोनों कर्म संसार में देखे जाते हैं इससे मानना पड़ता है कि वह स्वेच्छा से कर्ता है जब चाहता है

उत्पन्न करता है जब चाहता नाश करता है।

(उत्तर) यह तो बिलकुल मिथ्या है क्योंकि जहां स्वभाव से सृष्टि कर्त्ता मानने में उससे दो प्रकार की सृष्टि का बिना किसी कारण के सम्भव नहीं--वहां स्वेच्छा से कर्त्ता मानने में भी दो प्रकार की इच्छा के लिए किसी कारण का होना आवश्यकीय है परन्तु स्वभाव से सृष्टि कर्त्ता (फाइलनिल ग्राम्ता) मानने-वालों के पास तो जीवों के कर्म इस सृष्टि और प्रलय का कारण है उनके सिद्धान्त में कोई दोष नहीं आसकता परन्तु इच्छा से सृष्टिकर्ता के माननेवालों में दोष आता है क्योंकि उनके पास कोई कारण इच्छा के बदलने का नहीं है अतः उनका सिद्धान्त बिलकुल तुच्छ है।

(प्रश्न) तुम्हारी यह बात अपनी मन घड़त है अथवा इस में किसी प्रामाणिक पुस्तक का भी प्रमाण है।

(उत्तर) स्वेताश्वतरोपनिषद् में स्पष्ट लिखा है।

न तस्य कार्यं करणं च विद्यते न त-त्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते। परास्य शक्ति-र्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च

(अर्थ) उस परमात्मा का शरीर नहीं है और नहीं उसके इन्द्रि (हवास) है और नहीं उसके बराबर और न अधिक है उस ईश्वर की शक्ति अनेक प्रकार की वेदों में बतलाई है उस का ज्ञान, बल, क्रिया सब स्वभाविक है परमात्मा के संपूर्ण गुण स्वभाविक हैं उसमें कोई नैमित्तिक गुण नहीं है निदान जब कि परमात्मा का क्रिया करना स्वभाव है तो उससे जो काम होगा वह प्रत्येक समय होता रहेगा क्योंकि परमात्मा को अपने कार्य के वास्ते किसी साधन की आवश्यकता नहीं अतः उसके काम में कोई विघ्न नहीं होता, निदान परमात्मा के अनादि होने से उसका काम भी अनादि है क्योंकि उस काम से दो प्रकार का असर होता है जिसको सृष्टि और प्रलय कहते हैं क्योंकि दोनों में पहिले और पीछे किसी को नहीं कहसके अतः स्पष्ट प्रकट है कि सृष्टि प्रवाह से अनादि है।

॥ ओ३म् शम् ॥

ओ३म्

नियम दयानन्द ट्रेक्ट सोसाइटी ।

१--इस टरेक्ट सोसाइटी का आशय ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों का प्रचार करना और वेद मन्त्रों की (आम फ़हम) शब्दों में व्याख्या करके और दर्शनों के प्रत्येक सूत्र पर एक टरेक्ट लेखकर उनके आशय को अच्छी तरह समझाकर आर्य पुरुषों को इस लायक बनाना है कि वह वैदिकधर्म विरोधी के मुकाबले में खुद ही काम चलासकें बाहर से सहायता की आवश्यकता न रहै ।

(२) यह टरेक्ट सोसाइटी एक वर्ष में १६ पृष्ठ के)। वाले ६० टरेक्ट प्रकाशित किया करेगी जिसमें वेद मन्त्रों की व्याख्या एक टरेक्ट में एक मन्त्र १२५ दर्शनों के सूत्रों की व्याख्या एक टरेक्ट में एक सूत्र १२५ आर्य सिद्धान्तों पर विचार २५ टरेक्ट [मुखालिफान] वैदिकधर्म के जवाब में ७५ आर्यसमाज के प्रचार पर १० टरेक्ट ।

[३] जो मनुष्य इस टरेक्ट सोसाइटी के ग्राहक बनकर सहायता देंगे उनको १० दिन के पीछे इकट्ठे १० टरेक्ट ॥ के टिकट

भेज दिये जावेंगे जिस जगह १० ग्राहक होंगे उन को निस्य प्रति रवाना किये जावेंगे जिस जिले में १० समाजें १० टरेक्ट रोजाना लेनेवाले होंगे या जिस जिले में १०० ग्राहक रोजाना टरेक्ट के होंगे उस जिले को एक उपदेशक टरेक्ट सोसाइटी की ओर से विना वेतन के दिया जायगा।

जिस जिले में २२५ टरेक्टों के खरीदार होंगे उस जिले को एक उपदेशक और एक भजन मण्डली (विना वेतन) के दीजावेगी प्रत्येक ग्राहक को ३० टरेक्टों का मये महसूल डाक ॥-) मासिक या ६॥) वार्षिक देना होगा और उपदेशक और भजन मण्डली का प्रबन्ध किसी समाज के आधीन किया जायगा। टरेक्ट नागरी उर्दू दोनों जबान में होंगे ग्राहकों को जिस जबान के लेने हों दरख्वास्त के साथ लिख देना चाहिये।

(४) जो मनुष्य ५००) इस टरेक्ट सोसाइटी को दान देंगे, उनके नाम से १००००० एकलाख टरेक्ट छपायेजावेंगेजो गरीबों को विना मूल्य और दूसरों को)। टरेक्ट के हिसाब से दिये जावेंगे जो मूल्य प्राप्त होगा वह टरेक्ट सोसाइटी को कोष (फण्ड) होगा या गुरुकुल ज्वालापुर में खर्च होगा और जो लोग २५) टरेक्ट सोसाइटी को दान देंगे उनकेनामसे ५००० टरेक्ट भाषा में छपवाये जायगें और जो लोग ८ रुपये दानदेंगे उनके नाम से २... देवनागरी टरेक्ट और ७ रुपये दानदेंगे उन

के नाम से १००० उर्दू ट्रैक्ट प्रकाशित किया जायगा ।
से इज्जत बढानेका अवसर इस से उत्तम नहीं मिलेगा ॥

[५] जो समाजें १० ट्रैक्ट प्रति दिन लेंगी उनको वर्ष में एक मास के लिये बिना वेतन लिये उपदेशक दिया जावेगा सिर्फ किराया रेल देना होगा जिस जिले में ऐसी १० समाजें होंगी उन को वर्ष भर के लिये बिना वेतन उपदेशक दिया जावेगा जिस जिले में ५००) दान देने वाला एक महाशय, २५) दान देने वाले २० मनुष्य होंगे उस जिले को भी साल भर के लिये अवैतनिक उपदेशक दिया जावेगा ॥

[६] जो बांटने के लिये १०० ट्रैक्ट मंगवायेंगे उन को १] में १०० दिये जावेंगे और अगर १०० मगांवेंगे तो ८] में १०० दिये जावेंगे,
[७] जो महाशय इस ट्रैक्ट सोसाइटी के एजेन्ट होना चाहें उन्हें ३००] फीसदी कमीशन दिया जायगा हर एक दरख्वास्त मैनेजर महाविद्यालय ज्वालापुर हरिद्वार के पतेसे आनी चाहिये
नोट—अगर कोई प्रतिनिधि सभा इस काम को अपने आधिन लेना चाहें तो ले सकती है ॥ ओ३म् शम्

पुस्तक मिलने का पता—

महाविद्यालय

ज्वालापुर हरिद्वार

॥ ओ३म् ॥

मूर्त्तिपूजाविचार

बाबूराम शर्मा—इंदरावखी इटावा
निवासी द्वारा प्रकाशित ।

Printer B. D. S. Brahm Press Etawah.

दशमबार १०००० } संवत् १९६९ { मूल्य)। १) सैकड़ा

१००० लेने पर ३॥) रु०.

मिलने का पता—बाबूराम शर्मा इटावा.

॥ ओ३म् ॥

मूर्त्तिपूजाविचार ॥

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्य-
चक्षुः स शृणोत्यकर्णः स वेत्ति वेद्यं न च तस्या-
स्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम् ॥

बिनपद चले सुने बिन काना, कर बिन कर्म करे बिधनाना।
आननरहित सकल रसभोगी, बिन वाणी वक्ता बड़ योगी।
तन बिन परस नयन बिन देखा, ग्रहै घ्राण बिन बास अशेषा
असस्बभांतिअलौकिककरणी, महिमा जायजासुनहिंबरणी

प्रिय सज्जनों ! यदि आप सच्चिदानन्द निराकार प-
रमेश्वरकी स्तुति उपासनादि, त्याग पाषाणादिमूर्त्तिपूजा
करनेसे ही बड़े प्रेमी हैं तो सबसे पहिले निम्नस्थ प्रश्नों का
उत्तर विचार कर कृत्य कीजिये जिससे यथार्थ लाभ हो ॥

सर्वन्तु समवेक्ष्येदन्निखिलं ज्ञानचक्षुषा ।
श्रुतिप्रामाण्यतोविद्वान्स्वधर्मेनिविशेतवै ॥

विद्वान (को उचित है कि वह) सब बातोंको ज्ञान नेत्रसे
देखकर वेदके प्रमाणसे अपने धर्म को स्वीकार करे ॥

(१)–ईश्वरके लक्षण, गुण, कर्म और स्वभाव क्या हैं?

(२)–यदि परमात्मा साकार है तो किसके आधार ठहरा हुआ है? साकारको आधार अवश्य चाहिये क्योंकि साकार पदार्थ विना आधार के ठहर नहीं सकता ॥

(३)–उस साकार ईश्वरका रूपके (रंगढंग)के कैसा है क्योंकि साकारवस्तु विना किसी रूप (रंग ढंग) नहीं होता ॥

(४)–साकार वस्तु व्यापक हो सकता है या नहीं ?

(५)–साकार वस्तुकी नाप (पैमायश) होती है या नहीं यदि होती है तो परमात्माकी लम्बाई चौड़ाई गोलाई ऊंचाई आदि कितनी है ? कृपया ठीक २ बतलाइये।

(६) साकार (पदार्थ) सत् होता है या असत् ?

(७)-यदि ईश्वर मूर्तिमान् है तो उसकी मूर्ति जलचर, थलचर, नभचर, मकर, मच्छ, मनुष्य, पशु, वराह, परन्द (पक्षी) पहाड़ या वृक्षके समान है या और किसी प्रकारकी है उसकी मूर्ति एक ही दशामें रहती है या कुछ परिवर्तन (अदला बदला) भी करती है ॥

(८)-वेदोंमें कोई ऐसा मन्त्र बतलाइये कि जिसमें ईश्वरकी पाषाणादि मूर्ति बनानेकी आज्ञा हो ॥

(९)–जिस प्रकार वर्त्तमान समयमें पाषाण मूर्त्तिको भोगविलास कराते हैं वह कौनसे वेद मन्त्रोंकी आज्ञा है ?

(१०)-धर्मसभा जिन २ पुस्तकोंको प्रामाणिक मानती है उनमें पाषाणादि मूर्त्तिपूजाका खण्डन है या नहीं ?

(११)-क्या गुरुमंत्र गायत्रीमें परमात्माका कोई ऐसाभी नाम मिला है कि जिससे ईश्वरका साकार होना प्रकट हो ?

(१२) यदि-वह साकार है तो साकारकी भांति प्रत्यक्ष रूपमें क्यों नहीं दिखलाई देता है ?

(१३)-परमात्मा साकार और निराकार दोनों प्रकार का हो सकता है या नहीं या इन दोनों बातोंमें विरुद्धता है?

(१४)-यदि पाषाणादि मूर्त्तिपूजा सत्य है तो उसका विधान चार वर्ण और चार आश्रमोंमेंसे किसके लिये है?

(१५)-क्या परमात्माकी कल्पित मूर्त्ति हो सकती है ? यदि हो सकती है तो केवल उसकी पूजासे संसारकी उन्नति हो सकती है या नहीं और आज तक पाषाणादि मूर्त्तिपूजासे इस देशको क्या २ लाभ हुए ?

(१६)-वर्त्तमानमें जो २ मूर्त्तियां प्रचलित होरही हैं उन २ का ईश्वरके साथ क्या २ सम्बन्ध (नाता) है ?

(१७)-पूजा, पुजारि, प्रतिमा, शिवलिङ्ग, शालिग्राम जगन्नाथ, काशीनाथ, टीकेश्वर, नीलकण्ठ, वेङ्कटेश्वर, नक्लकेश्वर, नीलेश्वर, लोधेश्वर, वेश्या नाथ, बदरीनाथ, केदारनाथ, और वटेश्वर इत्यादि २ शब्दोंका क्या अर्थ है ?

(१८)-वर्त्तमान में जिन २ मूर्त्तियोंकी पूजा होती है उन २ में कुछ शक्ति भी है या कोरी ढपोल ही संख हैं ?

(१९)-पाषाणादि मूर्त्तियोंमें जो वेद मन्त्रोंसे पण्डित लोग प्राणप्रतिष्ठा कराते हैं तो क्या सचमुच उनमेंप्राण आजाते हैं ? यदि आजाते हैं तो उन मूर्त्तियोंकी नाड़ी परीक्षा डाक्टर वैद्योंसे अवश्य ही करानी चाहिये। यदि प्राण नहीं आते तो वह क्रिया सत् है या असत् या सरासर आंखोंमें धूल झोंकना या खेल खेलना है और क्या उन्हीं मन्त्रोंसे मृतक शरीरमें प्राण आ सकते हैं ?

(२०)-द्विजोंके लिये जो वेद शास्त्रोंमें नित्यकर्म (पञ्च यज्ञ) सन्ध्योपासनादि गायत्री जपादिका विधान किया है उनमें जड़ मूर्त्तियोंका भी पूजन लिखा है या नहीं ? देवता किसको कहते हैं और वेदमें देवपूजनका क्या विधान है कृपया स्पष्ट २ बतलाइये ?

(२१)-यदि कोई कहे कि मूर्त्ति तो यथार्थमें पाषाण ही है परन्तु वही पाषाण भावनासे परमेश्वर बन जाता है तो फिर क्या कोई उसी भावनासे बालू (रेत) को शक्कर और पत्थरको रोटी मान सुखी हो सकता है ॥

(२२)-यह कहना कि हमारी बनाई हुई मूर्त्तियां (मन्दिर) नहीं ईश्वरका स्मरण कराती हैं-तो यह भी ठीक नहीं क्योंकि वे तो अपने बनाने वाले सुनार, प-

त्थरकट (संगतराश) राज आदि कारीगरोंकी कारीगरी सूचक हैं और सूर्य, चन्द्रमा, वृक्ष और ईश्वरीय रचना ईश्वरको स्मरण कराती हैं। मन्दिर देख ईश्वर मानना एक देशी ईश्वर जानना है सर्व व्यापक सर्वान्तर्यामी ईश्वरको हृदय रूपी मन्दिरमें ही पूजिये-हृदयसे दूर ईश्वर मानना उसे सर्वान्तर्यामी नहीं मानना है॥

(२३)-जिस रीतिसे पाषाणादि मूर्त्तियोंके द्वारा ईश्वरका पूजन किया जाता है वह वास्तवमें ईश्वरकी उपासना कही जा सकती है या नहीं? जो फूल बिल्वपत्र धूपदीप जल चांवल इत्यादि चढ़ाये जाते हैं वे सब वस्तुयें ईश्वरको पहिले प्राप्त थीं या नहीं और भोग लगानेसे प्रथम क्या ईश्वर भूखा प्यासा था व नहीं?

(२४)-अजन्मा अनादि परमात्माको जो देहधारी माना है और उस पर जो चोरी जारी इत्यादिक अनेक कलङ्क लगाये हैं तो उन कर्मोंका फल क्या आपको प्राप्त होगा या नहीं?

(२५)-जो आपका ईश्वर देहधारी है तो उसका शरीर ईश्वर है या दोनों?

(२६)-क्या आप अज निराकारकी मूर्त्ति तस्वीर बना सकते हैं? क्या आकाश, शब्द, सुख दुःख, आत्मा, मन, वायु, भूख, प्यास, इत्यादिकी मूर्त्तियां बना दिखलाइये॥

(२७)-जब कि मूर्त्तियोंके उपासक देवी जीको मांस म-दिरा, श्री कृष्णमहाराजको माखन मिश्री मोहनभोग, म-हादेवको भांग धतूरा, जगन्नाथको दालभात और गणेश जी कोपान सुपारी भोग लगाते हैं तो क्या वाराह अवतार कीमूर्त्तिको किसी भी भोगकी आवश्यकता है या नहीं?

प्रश्न २८—परमेश्वर निराकार है वह ध्यान में नहीं आ सकता है इसलिये अवश्य मूर्त्ति होनी चाहिये-भला जो और कुछ भी नहीं करें तो मूर्त्तिके सम्मुख जा हाथ जोड़ परमेश्वरका स्मरण करते और नामतो लेलेते हैं?

(उत्तर)-यह सन्देह ध्यानके वास्तविक तत्त्वको न जानने वालोंको ही हो सकता है वे स्मरणको ही ध्यान समझ रहे हैं परन्तु वास्तवमें स्मरण और ध्यानमें बड़ा अन्तर है महर्षि पतञ्जलि स्वयं लिखते हैं कि—

अनुभूत विषयासं प्रमोवः स्मृतिः ।

अर्थात् जिस वस्तुका किसी नियतंसे ज्ञान प्राप्त किया जाता है उसका जो फिर ख्याल व चिन्तन किया जाता है उसे स्मृति व स्मरण कहते हैं इस प्रमाणानुसार मूर्त्तिपूजक जो किसी देवताकी प्रतिमाको आगे धरके ध्यान धरते हैं वह वास्तवमें स्मरण है ध्यान नहीं है। क्योंकि विना प्रत्याहार और धारणाके ध्यानका होना

सर्वथा असम्भव है ध्यान निराकारका ही हो सकता है साकारका नहीं साकार वस्तु तो सामने प्रत्यक्ष ही दिखलाई देता है ध्यानकी आवश्यकता नहीं क्योंकि—

"ध्यानं निर्विषयंमनः" सा०दर्शन०

अर्थात्‌रूपादि विषयोंको ग्रहण करने वाली इन्द्रियों-को रोककर जब मन निर्विषय होता है तभी वह ध्यानमें लय हो सकता है अन्यथा ध्यान कदापि नहीं होसकता जब परमेश्वर अज निराकार सर्वव्यापक है तब उसकी मूर्त्ति ही नहीं बन सकती और जो मूर्त्तिके दर्शनमात्र-से परमेश्वरका स्मरण होवे तो परमेश्वरके बनाये पृथि-वी, जल, अग्नि, वायु, और वनस्पति आदि अनेक प-दार्थ जिनमें ईश्वरने अद्भुत२ रचना की है, क्या ऐसी रचना युक्त पृथिवी पहाड़ आदि परमेश्वर रचित महा मूर्त्तियां (कि जिन पहाड़ आदिसे मनुष्यकृत मूर्त्तियां बन ती हैं) देखकर परमेश्वरका स्मरण नहीं हो सकता? जो अपनी बनाई मूर्त्ति देख ईश्वरका स्मरण होता है यह भी ठीक नहीं फिरतो जहां२ मूर्त्ति व मन्दिर न पाओगे वहां २ ईश्वरको अनुपस्थित (अलग) जान दु-ष्कर्म करने से न डरोगे। अतः सर्वान्तर्यामी, सर्वसाक्षी परमात्माको मानने ही में कल्याण और भलाई है।

२९—प्रश्न कि परमात्मा सर्वव्यापक है तो कैसे पूजें? हां वह सर्वव्यापक है इसीलिये हृदयमें ही भजिये जपिये।

३०—अन्धन्तमःप्रविशन्तियेऽसम्भूतिमुपासते, ततोभूयइवतेतमोयउसम्भूत्याᳯंरताः यजुः०

ये जो (असम्भूति) अर्थात् अनुत्पन्न अनादि प्रकृति कारणकी ब्रह्मके स्थानमें उपासना करते हैं। वे अन्धकार अर्थात् अज्ञान और दुःखसागरमें डूबते हैं और सम्भूति जो कारणसे उत्पन्न हुए कार्यरूप पृथिवी आदि भूत पाषाण और वृक्षादि अवयव और मनुष्यादि के शरीरकी उपासना ब्रह्मके स्थानमें करते हैं वे उस अन्धकारसे भी अधिक अन्धकार अर्थात् महामूर्ख चिरकाल घोर दुःखरूप नरकमें गिरके महाक्लेश भोगते हैं।

३१-मृच्छिलाधातुदार्वादिमूर्त्तावीश्वरबुद्धयः। क्लिश्यन्तितपसामूढाः परांशान्तिंनयान्तिते॥

मृत्तिका, शिला, धातु, काष्ठादिसे रचित मूर्त्तियोंमें जो पुरुष ईश्वर बुद्धि करते हैं वे मूर्ख व्यर्थ क्लेशको पाते हैं इस चेष्टा यानी इस कर्मसे शान्तिको प्राप्त कभी नहीं होवेंगे॥ महाभारत०॥

३२–यस्यात्मबुद्धिःकुणपेत्रिधातुकेस्व-
धीःकलत्रादिषुभौमइज्यधीः यत्तीर्थबुद्धिः
सलिलेषुकर्हिंचिज्जनेष्वभिज्ञेषुसएवगोखरः॥

भागवत स्कन्ध १० ॥ तथा (विश्रामसागर)

जे निज देहमांझ अभिमानी–आत्मबुद्धि माहिं अज्ञानी।
हरिकलत्र अपना कर मानें–प्रतिमामात्र देवकर जानें॥
सलिलमात्रतीरथजिनजाना–सन्तनमें कछु भाव न आना।
ते गोखर सम जानो प्राणी–परत नरकमें वाचक ज्ञानी॥

(३३)–ईश्वर निराकार और निर्विकार है वह जगदाकार स्वयं नहीं बनता जैसाकि–

न तस्यकार्यंकरणं च विद्यते। श्वेता०॥

न उस का कोई कार्य और न करण है। अर्थात् वह किसी पदार्थका उपादान कारण नहीं है॥

भजन

कैसे अमूरतको मूर्त्ति बनावें। सर्व देशीको एक देशी बतावें॥ आवाहन करें तो कहांसे बुलावें। विसर्जन करें तो कहांको पठावें॥ आसन सिंहासन पै तकिये लगावें निराधारको किसके आश्रय बिठावें॥ अप्राणको प्राण रचना करावें। जड़ वस्तुको कैसे चेतन बनावें। पादार्घ-

आचमन किसको करावें। सदा शुद्ध निर्मलको किसमें मिलावें ॥ धूप और पुष्प गन्ध किसको सुघावें। निर्लेपको लेप कैसे लगावें ॥ ज्योतीको दीपककी ज्योती दिखावें। सूरजको जुगनूका चांदन बतावें। नैवेद्यके पीछे जो जल चढ़ावें। सुधाको हटा कर तृषाको बुझावें ॥ पान और सुपारी इलायची मिलावें। यह क्या उनके ओठोंकी लाली चढ़ावें ॥ धन धान्य जिसका है सर्वस्व सारा। देकर टका दान बदला मंगावें ॥ परिदक्षिणामें जिसका नहीं अन्त पावें। फिरें गिर्द उसके केवल चक्र खावें ॥ जाग्रत स्वप्न और सुषुप्तीसे न्यारा। किसको सुलावें औ किसको जगावें ॥ अजन्माको जो अब जन्मा बतावें। अमीचन्द्र क्यों उनके धोखेमें आवें ?

पूर्णस्यावाहनंकुत्र सर्वाधारस्यचासनम्।
स्वच्छस्यपाद्यमर्घ्यञ्च शुद्धस्याचमनंकुतः ॥१॥
निरालम्बस्योपवीतं पुष्पंनिर्वासनस्यच।
निर्लेपस्यकुतोगन्धो रम्यस्याभरणंकुतः ॥ २ ॥
नित्यतृप्तस्यनैवेद्यं ताम्बूलञ्चकुतोविभोः।

निराकार विषय पर अधिक विचार ईश्वर विचार २ भागका स्वामी दर्शनानन्द कृतमें देखिये

प्रदक्षिणामनन्तस्य ह्यद्वैतस्यकुहोन्नतिः ॥ ३ ॥
वेदवाक्यैरवेद्यस्य कुतःस्तोत्रंविधीयते ।
स्वयम्प्रकाशमानस्य कुतोनीराजनम्भवेत् ॥४॥

उत्तमोत्तम उपदेश भरे भजन पुस्तक ।

संगीतरत्नप्रकाश पांचों भाग ๆ।) संगीतरत्नप्रकाश १ भाग ।) संगीतरत्नप्रकाश २ भाग =) संगीतरत्नप्रकाश ३ भाग -)॥ संगीतरत्नप्रकाश ४ भाग =)॥ संगीतरत्नप्रकाश ५ भाग ≡) सत्यसंगीत)॥ संगीतस्वरोदय -) गंगाकीगीत्)। सत्योपदेशभजनावली (पं० रामप्रकाश कृत) देखने योग्य -)॥ स्त्री भजनमाला)॥ अवला भजन -) आर्यमनरोचक -) ठाकुर बलदेवसिंह सवारकृत भजन-वनिता विनोद =) संगीत शिक्षावली (ठा० बलदेवसिंह कृत) =)॥ क्षत्रियधर्मप्रकाश उत्तमोत्तम कवित्त ठा० बलदेवसिंहकृत -) फागुनगीता परमपुनीता निर्मल छन्द कबीर)॥ भजन पचासा २ भाग =) भजनमाला)। भजनपचासा १ भाग -) भजन चालीसा -) ज्ञानभजनावली (घीसासिंहकृत) १ भाग =) दूसरा भाग =) तीसराभाग =) चौथा भाग =) भजन अस्सी तीनों भाग ≡) भजन प्रकाश ≡)॥ संगीतसागर =) शा-

न्तिसरोवर =) सांगीतोपदेश दोनों भाग)॥ वेश्यादो-षदर्पणभजनावली =)॥ भजनअन्त्तोमी (पं० वासुदेव कृत) २ भाग -)॥ प्रेमसरोवर भजन)॥ कुरीतिनि-वारण -)॥ मद्यदर्पण (ठलाकटकृत) -) और २।) सैकड़ा संगीतसुधार्णव =) भजननगरकीर्त्तन १ तथा २ भाग≡) दादरा बत्तीसी)॥ ग़ज़ल गुलिस्तां ।) भजन गुलदस्ता-चिमन)॥ संगीतसागर)॥ गोपुकारचालीसा)॥

बड़ी सजीवनबूटी—(वीर्यवर्णन)

इसकी प्रशंसा पाठकगण ! स्वयं पढ़कर ही जान सकेंगे—हम केवल इतनाही कहेंगे कि यदि आपको अपनी सन्तान व इष्टमित्रोंसे कुछभी स्नेह और हित है तो उनको यह बूटी अवश्य पान कराइये सुनाइये पढ़ाइये मूल्य केवल न्योछावर मात्र =) ही है इसे सर्वसाधारण ने इतना उपयोगी समझा कि २५००० कापी हाथों हाथ विकगई अधिक प्रचारार्थ ।) से घटाकर =) करदिया—सजीवनबूटी, बनी है अनूठी, सभीने लूटी, मनभाय—

धर्मबलिदान-(पथिकवियोग)

इसमें धर्मदुर्दशा देख पं० लेखराम शर्माका घरबार छोड़ना एक यवन द्वारा धोखेसे लेखरामका माराजाना आदि २ वीर छन्दमें वर्णन किया गया है मूल्य =)

आतिशबाजी आल्हा)। वेश्यालीला १ भाग—इसमें वेश्याओंकी प्रायः सबही लीलायें लिखी हैं इसकी भी १०००० कापी बिक गई मूल्य)॥ और १) सैकड़ा—

कुरीतिनिवारण ॥

(स्वामी—मङ्गलदेवजीने) इसमें मनोहर दोहा चौपाइयोंमें दुःखदायी कुरीतियोंका खण्डन किया है—यदि कुरीतियों और-पापोंसे अपना धन—बल धर्म कर्म बचाना है और देशका सुधार करना तथा ऋषि मुनियोंका नाम निशान स्थिर रखना और अपनी सन्तानका भला चाहना है तो १०० भी काम छोड़ इसे अवश्य पढ़िये पढ़ाइये सुनिये सुनाइये -)॥ और ४) सैकड़ा

ग़ाज़ीमियांकी पूजा (हिन्दुओंको क्या सूझा ?) मू०)॥

सत्यभास्कर-वेदशास्त्र पुराण स्मृति उपनिषदादिके प्रमाणों और प्रबल युक्तियों सहित दोहा चौपाई छन्दोंमें शत्रु पूंछ उखाड़ मूर्तिपूजा खण्डन ≈) ३

धर्मार्थ बांटने योग्य सस्ते पुस्तक ॥

☞ निम्नस्थ पुस्तक मेले प्रचारादि उत्सवों पर बांटने को बड़े ही सस्ते तैयार हैं जो सैकड़ेके भाव दिये जाते हैं । २५ पुस्तक भी सैकड़ेके ही भाव हैं, २५ से कम पुस्तकें पूर्णदाम पर मिलेंगे यथाशक्ति पुस्तकें बांटिये ॥

☞ हज़ार पुस्तक इकट्ठे लेनेपर और भी सस्ते मिलेंगे।

अष्टौ समोधन बूटी ≈) सैकड़ा १०) पञ्चयज्ञविधि सन्ध्या)। सैकड़ा १) धर्मप्रचार शुद्धि विषय पं० लेखराम कृत)॥। सैकड़ा १।) मांसभक्षण निषेध)। सैकड़ा ॥।) पुराणशिक्षा)। सैकड़ा ॥।) मृतकश्राद्ध विषयकप्रश्न)। सैकड़ा॥।) आरती—ईश्वरस्तुति नित्योत्सवोंपर गानेयोग्य)॥ सैकड़ा ॥) पहाड़ा गणितारम्भ)। सैकड़ा ॥।) तथा उर्दू ॥।) सैकड़ा नागरीवर्णमाला)। सैकड़ा ॥।) ससुराललीला)। और ॥) सैकड़ा आर्यसमाजके नियम संस्कृत ॥।) सैकड़ा ओंगणेशमाला २) रु० सैकड़ा अग्निहोत्रविधिः (हवनमन्त्राः)। और १) सैकड़ा आर्यसमाज के नियम ॥ =) हज़ार।

स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश।

(श्री १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वतीजीके मुख्य सिद्धान्त) यदि संसारको स्वर्गधाम बनाना है तो इन सर्व शान्ति प्रद सिद्धान्तोंकोशीघ्र फैलाओ मूल्य)॥ सै० १)

पांचपैरकी गौ महादेवका नांदिया।

नांदिया वाले गाय बैलके दूसरी टांग काटकर जोड़ देते हैं इस पशुहत्याके भागी भिक्षादाता ही होते हैं पूर्णवृत्तान्त)। में पढ़ो १) रु० सैकड़ा और ८) रु० हज़ार।

मिलनेका पता—बाबूराम शर्मा इटावा॥

सजीवनबूटी ।

यह बूटी मूर्छितोंको मूर्छा दूरकर श्री-लक्ष्मणयती, शूरवीर, रणधीर, बनाती है, एकमात्र इसीके सेवनसे ऋषि, मुनि, योगी, संन्यासी, महावीर, योधा, बलधारी, जगत्गुरु, परिव्राट, सम्राट, दिग्विजयी जगत् प्रसिद्ध अमर नाम कर गये हैं ।

केवल इसीके बल बालब्रह्मचारी भीष्मपितामह महामृत्युञ्जय करशरशय्यापर सुखासीन हो धर्मोपदेश करते रहे ।

यह बूटी सत्यार्थप्रकाशके प्रकाशमें तृतीय खण्डपर जगमगा रही है-क्या चाहिये ?

यही अमरबूटी =) निछावरमात्र करनेसे मिलेगी ॥

विशेष पुस्तक बड़ा सूचीपत्र मंगाकर पढ़िये ।

सूचीपत्रादि मिलने का पताः—

बाबूराम शर्म्मा—इटावा ।

॥ ओ३म् ॥

ट्रेक्ट नम्बर ८

भोगवाद

जिस को

स्वामी दर्शनानंद सरस्वती जी ने

दयानन्द ट्रेक्ट सोसाइटी के हितार्थ रच कर

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

ज्वालापुर हरिद्वार में

प्रकाशित किया

—=+:※:+=—

२००० प्रति] [मूल्य)।

ओ३म्

भोगवाद

संसार में कार्य करने के लिये जब तक मनुष्य चिन्ता रहित नहीं तब तक वह अपना कार्य नहीं कर सकता। चिन्ता उस के कार्य (अप्राप्त इष्ट) तक चलने में पग २ पर रुकावट डालती है कभी उसे प्यास का ध्यान कभी क्षुधा का भय कभी मृत्यु का भय पग २ [कदम २] पर संकल्प बदलता है, और संसार के सम्बन्ध अनन्त हैं उनको समाप्त करके अप्राप्त इष्ट की तरफ चलना असम्भव है, निदान नतो कोई मनुष्य इन वर्तमान कार्यों को समाप्त करसकता है, और न ही उस मुक्ति के लिये साधन करने का अवकाश मिल सकता है, निदान मनुष्य आगे के लिये निराश हो रहा है, परन्तु ईश्वर हमारे सामने एक और दृश्य सम्मुख करता है, जिस को देख कर मनुष्य की आशायें पुनः हरी भरी होजाती हैं अर्थात् एक मनुष्य कृषि करता है जब उस बोने वाले मनुष्य को कोई दृष्टिगोचर करता है तो उसे खयाल आता है कि यह बड़ा ही मूर्ख है जो अपने आहार को पृथिवी के ऊपर बखेर रहा है परन्तु थोड़े

ही काल में कृषि पक जाती है तब वह मनुष्य कि जिस ने अपने अन्न को प्रत्यक्षवादि होने के कारण पृथिवी पर नहीं डाला था क्या देखता है कि बोने वाले ने जितना बीज बोया था उस से शतगुणा अन्न अपने घर में ला रहा है और जो अपने अन्न का केवल खाने में ही व्यय कर रहा था उस का अन्न कम हो गया निदान खाने का नाम भोगना और बोने का नाम कर्म समझना चाहिये यद्यपि प्रत्यक्ष में खाने वाला अपने अनाज को ठीक ही काम में लाता है और बोने वाला ठीक नहीं काम में लाता क्योंकि अन्न क्षुधा के लिये ही बनाया गया है परन्तु वास्तव में बोने वाला अपना आयु के आगे का प्रबन्ध करता है क्योंकि केवल प्रत्यक्ष वादि ही नहीं, परन्तु खाने वाला यद्यपि अन्न को ठीक प्रकार से सेवन करता हुआ सम्मुख है तथापि वास्तव में अपनी आगे की दशा को खराब कर रहा है क्योंकि वर्तमान सामान तो किसी न किसी दिवस समाप्त होने वाला है क्योंकि इस में खाने से अल्पता होती है और उन्नति का मार्ग जो बोना है उसे प्रत्यक्ष अर्थात् वर्तमान दशा में निष्फल जान कर उसने छोड़ दिया है वास्तव में संसार में मनुष्यों की बुद्धि दो प्रकार की है. एक प्रत्यक्षवादि जो वर्तमान का प्रबन्ध करता है और भविष्यत् पर कुछ विश्वास नहीं रखता है और परोक्षवादी वर्तमान पर ध्यान नहीं देता है क्योंकि वह जानता है कि जो कुछ पूर्वले वर्ष में बोया था वही घर में

पस्थित है अथवा वह पका हुआ खेत खड़ा है अतः बोने के ो ध्यान में लगा हुआ है वह जानता है कि जो मैंने बो लिया वह पक चुका है और अब वह मेरे श्रम से बदल हीं सकता उस को तो भविष्यत् में जो बोना है उस ो ही चिन्ता है अतः प्रत्यक्षवादि को सदैव से शास्त्रकार ास्तिक कहते हैं और मूर्ख सर्वदा प्रत्यक्षवादि होते हैं ोर विद्वान परोक्ष वादि जैसे कि लिखा है—

परोक्षप्रिया हि देवाः प्रत्यक्षद्विषः

अर्थ जितने देवता अर्थात् विद्वान् हैं वह परोक्ष से मित्रता ोर प्रत्यक्ष के शत्रु होते हैं, और मूर्ख लोग इस के विरुद्ध होते सम्पूर्ण कर्म फिलास्फी की जड़ परोक्ष के आश्रय है प्रत्यक्ष ादी कर्म कर ही नहीं सकता-क्यों कि फल आने वाला अप रोक्ष है जिस पर उसे विश्वास ही नहीं अतः प्रत्यक्ष ादि होते हैं कर्म करने की नास्तिक में शक्ति ही नहीं होती रन्तु भोगवादि आस्तिक होने से कर्मों के फल का नान ा खयाल करता है-जैसा कि लिखा है—

सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः ।

योगदर्शन ॥

अर्थ-पूर्व जन्म के कर्मरूपि मूल से तीन फल मिलते हैं
जाति अर्थात् जन्म पशु या मनुष्य का दूसरा आयु
कितने स्वांस तक इस शरीर रूपी जेल में रहना होगा–
अर्थात् दुःख सुख–निदान् कर्म का पका हुआ फल यह
वस्तु हैं–नतो कोई मनुष्य अपना शरीर बदल सक्ता है
आयु नहीं बदल सकती है और न भोग बदला जासकता
क्यों कि यह तीनो पदार्थ अपनी इच्छा के अनुसार प्राप्त
होसकते किन्तु यह फल कर्मानुसार ईश्वर की व्यवस्था से ही
मिलता है–यदि जीवों की इच्छा अनुसार शरीर मिलता
कोई जीव भी नीच योनी में नहीं जाता–कोई आदमी बदशकल
लूला लंगडा और कोढी दृष्टि गोचर नहीं होता–यदि जीव के
आधीन में भोग होता तो कोई भी संसार में दुःखी न होता
जीवों को अल्प आयु में मरने वाला दुःखी और कुरूप देख
कर अनुमान होता है कि जीवने इन वस्तुओं को अपनी इच्छा
से स्वीकार नहीं किया–किन्तु संपूर्ण शास्त्रकारों का सर्वतन्त्र
सिद्धान्त है कि यह पदार्थ हम को पराधीनता से मिले है
अर्थात् हमारा यह शरीर जेलखाना है क्यों कि जहां हम
अपनी इच्छा से जाते हैं उसे घरादिक से प्रसिद्ध करते हैं
परन्तु जहां हम जाना नहीं चाहें और जाना पडे तो उसे बि-
रुद्धइच्छा वाले मकान जेलही कहसकते हैं शास्त्र कारों ने तो
सारा संसार ही जेल बताय है–जिस में जीव ममता अर्थात् मोह

रूपी जंजीर में बंधा हुआ कर है महर्षि पतञ्जलि जो सारे संसार बनाने का फल ही भोग और अपवर्ग अर्थात् मुक्ति बतलाते हैं जैसा कि पतञ्जली जी लिखते हैं—

भोगापवर्गार्थं दृश्यम् .

अर्थ—इस संसार के अभ्यन्तर तीन प्रकार की योनियां हैं एक भोग योनी जैसे गाय महिषि अश्वादि जीव जो यहां की शिक्षा से ईश्वर नियमानुसार अनभिज्ञ रहते हैं—यह सम्पूर्ण पूर्वले कर्मों का फल भोगते आगेके वास्ते कुछ नहीं करसकते दूसरे कर्म योनी—जो मुक्ती से लौट कर संसार में विना माता पिता के जन्म लेते हैं वह केवल भविष्यत के वास्ते ही कर्म करते हैं उन का पूर्वला भोग कुछ नहीं होता—तीसरे उभय योनि—जो पिछले कर्मों का फल भोगते हैं और भविष्यत केवास्ते करते हैं—वह मनुष्य हैं परन्तु मनुष्य करने में स्वतन्त्र और भोगने में परतन्त्र कर्म योनी वाले नितान्त स्वतन्त्र और भोगयोनी वाले नितान्त परतन्त्र हैं—निदान—यह संसार पशुओं को अपने पूर्वले कर्मों का फल भोगाने केवास्ते और कर्म योनियों को पुनः मुक्ती प्राप्त कराने के योग्य कर्म कराने के वास्ते और मनुष्यों को पूर्वले कर्म भोगने के वास्ते और आगे के वास्ते कर्म कराने के लिये परमात्मा ने संसार बनाया है जब यह अच्छे प्रकार ज्ञात हो जावे कि मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र और भोगने में परतन्त्र है तो भोगकी अपेक्षा मनुष्यका शरीर भी एक जेलहै कैदियों कोक्या

रोटी की चिन्ता करनी योग्य है कदापि नहीं क्यों कि जो गव-
र्नमेन्ट किसी कैदीको जेल खाने में भेजती है वह भोजन जरूर
देती है क्यों कि उस की आज्ञा विना खुराक दिए पूरी नहीं हो
सक्ती जैसे एक मनुष्य को दो वर्ष की कैद है यदि गवर्नमेन्ट
उसे खुराक नहीं दे तो वह बहुत शीघ्र मर जावेगा
जिससे सरकार की वह आज्ञा कि वह दो वर्ष तक जेल में
रहे पूरी नहीं हो सकती निदान अपनी आज्ञा को पूरा करने के
वास्ते गवर्नमेन्ट आपही खाने को देगी आजतक आर्य्यावर्त में
इतने कहत पड़े परन्तु किसी कहत में कैदियों को क्षुधा पीडित
नहीं देखा क्या कैदियों का कर्तव्य अपनी बीमारी के वास्ते
औषधि करना है—कदापि नहीं क्यों कि यह जिम्मेदारी भी
गवर्नमेन्ट ने ले रक्खी है—कैदि का कर्तव्य छूटने का उपाय
करना है निदान जो कैदी रोटी औषधी के ध्यान में लगारहता है
वह अपना समय व्यर्थ खोता है प्रायः मनुष्य प्रश्न करतेहैं कि
कैदी को छूटने का फिकर क्यों करना चाहिये क्यों कि ...
(मयाद) नियत पर तो स्वयं ही गवर्नमेन्ट छोड़ देगी ...
यह विचार ठीक नहीं क्यों कि गवर्नमेन्ट इस समय तो नि...
श्यता पर छोड़ देगी परन्तु उसका स्वभाव ऐसा हो चुका
कि जिस से पुनर कारागार में आवे छूटने से अभिप्राय ज...
में दो बारा न आने का है अतः महर्षि पतञ्जलि ने योग द...
में बतलाया है—

हेयम् दुखमनागतम्

अर्थ—भविष्यत दुख त्यागने योग्य है जब तक मनुष्यों के हृदय में यह ठीक निश्चय न हो जावे कि मैं कर्म करने में स्वतन्त्र और भोगने में परतन्त्र हूँ तब तक मनुष्य मुक्ति पद को प्राप्त करने योग्य नहीं होता क्यों कि भोग उलटा करने की इच्छा में जितना समय व्यय किया जाता है वह सब व्यर्थ जाता है जैसे एक गृह जो बहुत कठिन धातु का बना हुआ है यदि कोई उस मकान में द्वार के मार्ग से जाना चाहे तो सुगम है परन्तु यदि दीवारमें से निकलना चाहे तो समयको व्यर्थ खोता है इसकर्म और भोगके लिये परमात्माने कृषीका दृष्टान्त दियाहै बोना कर्म है और काटना भोग है बोने में मनुष्य स्वतन्त्र है चाहे जो बोवे गेहूँ अथवा चना चाहे पचास बीघे बोवे या १० बीघे परन्तु काटने के खेत को गेहूं बनाने के वास्ते यत्न करे तो सौ वर्ष पर्यन्त के श्रम से भी वह चनों का खेत गेहूं नहीं बन सकता परन्तु गेहूं का द्वितीय खेत बो कर हम दूसरे वर्ष में गेहूं उत्पन्न कर सकते हैं निदान जो कर्म का पका हुआ फल है उसके बदलने की शक्ति किसी में नहीं उसके बदलने के वास्ते परिश्रम करना आयु को व्यर्थ खोना है संसार में चाहे कैसाही विद्वान् राजा अथवा बली हो परन्तु भोग के बदलने में सब परतन्त्र हैं क्या आपने नहीं देखा कि हमारा चक्रवर्ती एडवर्ड सप्

से वडा राजा है जिसके राज्य में १२४०००००वर्ग मील पृथ्वी है जिसकी प्रजा चालीस करोड मनुष्यों से अधिक है जो लंदन जैसे वडे नगर में रहता है जहां वडे २ डाकटर और पदार्थ विद्याके विद्वान् रहते हैं परन्तु उस नगर में रहते हुवे भी इतने अधिक वलवान राजा का लडका युवावस्था में मृत्यु को प्राप्त हो गया परन्तु क्या कोई पदार्थ विद्या का ज्ञाता (साइंटिस्ट) या कोई सेना उस की रक्षा कर सकी जब इतना महान् राजा जिस के इतना सामान होते हुये अपने पुत्र की रक्षा न कर सका तो क्या वह मनुष्य मूर्ख नहीं जो थोड़ी सी पूंजी के विश्वास पर अथवा मुस्तकिल फण्ड के भरोसे पर यह आशा रखते हैं कि वह भोग वदल देंगे यह वात भी किसी से छिपी हुई नहीं कि एडवर्ड सप्तम के गद्दी पर बैठने का दिवस २६ जून नियत हुआथा लंदन की पार्लीमेंट के उत्तम प्रवन्ध से रुपये पैसे की कोई कमी न थी परन्तु भोग ऐसा वलवान दृष्टिगोचर हुआ कि महाराज ऐडवर्ड को २६ जून के स्थान में १९ अगस्त को तख्त पर बैठना पड़ा और उत्सव भी २६ जून की जगह १९ अगस्त को हुआ परन्तु क्या महाराजा की गद्दी का दिवस रुपये की कमी के कारण विकल्प को प्राप्त हुआ कदापि नहीं क्या पार्लीमेंट का प्रवन्ध ठीक नहीं था कदापि नहीं क्या किसी शत्रु ने कोई झगडा डाला जो उत्सव को पीछे हटाया गया तो स्पष्ट उत्तर देना पडता है कि भोगने रोकदिया महात्मा रामचन्द्र की दशा तो सब को ज्ञात है कि प्रातः काल गद्दी पर सुशोभित होंगे

यह आज्ञा हो चुकी थी सारे नगर में उत्सव मनाये जा रहे हैं परन्तु यह कौनसी शक्ति है कि जिस ने राजा, मन्त्री, सभासद, और प्रजा की इच्छा के विरुद्ध रामचन्द्र जी को गद्दी पर बैठने के स्थान में वनवास दिलाया जिधर विचारो स्पष्ट शब्दों में भोग की प्रबल शक्ति सिद्ध होती है संसार में कोई शक्ति नहीं जो भोग को बदल सके क्योंकि भोग उस प्रबल शक्ति की आज्ञा का नाम है कि जिस की आज्ञा को महाराज जार बस जैसे जिस की चालीस लाख सेना हो डाइनामेट के गोले तोपखाना और बन्दूक तयार करने के प्रबन्ध जिस के यहां हों वह एक क्षण भर भी नहीं रोक सकते यद्यपि भोग हमारे ही पुरुषार्थ से बनता है अतः भोग से पुरुषार्थ बड़ा है परन्तु जब भोग उत्पन्न हो चुका तो पुनः पुरुषार्थ से बदला नहीं जा सकता जिस प्रकार जो हमारे ही पुरुषार्थ से बोये गये थे परन्तु जब पक चुके तो अब उन को हमारा परिश्रम किस भांति बदल सकता है नहीं बदल सकता एक दो चार दृष्टान्त ही नहीं किन्तु पग २ पर इतिहास भोग की प्रबल शक्ति को सिद्ध कर रहा है ?

प्रश्न—स्वामी दयानन्द और तमाम ऋषियों ने तो पुरुषार्थ को बड़ा बतलाया है तुम भोग को प्रबल बतलाते हो ॥

उ०—स्वामी जी ने लिखा है कि जीव करने में स्वतन्त्र है और भोगने में परतन्त्र है निदान जहां स्वतन्त्र हो उसी में कर्म

करना आवश्यक है क्योंकि स्वतन्त्रः कर्ता स्वतन्त्र ही करता होता है और जहां परतन्त्र है उस में काम करने से कोई लाभ नहीं हो सकता क्योंकि यदि काम करने से कृत कार्यता हो जावे तो परतन्त्रता न रही और जिस में कृतकार्य की आशा नहीं उस में प्रयत्न करना मूर्खता है क्योंकि भोग पुरुषार्थ से बनता है अतः भोग की अपेक्षा पुरुषार्थ को गुरुत्व दिया है परन्तु पुरुषार्थ जीव के आधीन में है चाहे करे चाहे उलटा करे ॥

और भोग जीव के आधीन नहीं क्योंकि संसार में कोई भी ऐसा नहीं जो दुःख भोगना चाहता हो परन्तु न चाहते हुवे भी बड़े बादशाह राजा महाराजा सेठ साहूकार बड़े २ योधा बहादुर सब ही दुःख भोगते हैं कोई भी अपने पुरुषार्थ से भोग को बदल नहीं सकता द्वितीय कोई मनुष्य नहीं जो सुख प्राप्त करने का श्रम नहीं करता हो परन्तु सबयत्न करते हुवे भी सुख नहीं प्राप्त होता प्रायः दुःख ही प्राप्त होता है ॥

प्रश्न—क्या मनुष्यों को भोग पर विश्वास करके पुरुषार्थ को नितान्त छोड़ देना चाहिये ॥

उत्तर—मनुष्यों को एक क्षण के लिये भी पुरुषार्थ से रहित नहीं रहना चाहिये ॥

किन्तु पुरुषार्थ अनागत उन्नति के लिये करना चाहिये वर्तमान भोग को बदलने के लिये पुरुषार्थ करना मूर्खता है

कारण यह कि भोग में परतन्त्र होने से कृतकार्यता नहीं होती केवल दुःख और आपत्ति ही प्राप्त होती है और जो अनागत के लिये पुरुषार्थ करता है वह यदि ज्ञान के विरुद्ध न हो तो अकृत कार्यता नहीं हो सकता और उसे किसी दशा में निराश भी नहीं होना पडता ॥

प्रश्न—यदि सब ही भोगवादी हो जावें कोई दुकानदारी भी न करें जिस का फल यह होगा कि संसार के सम्पूर्ण प्रबन्धों में गड बड होजावे और लोग आलसी होकर भूखे मरने लगें ॥

उत्तर—यहविचार ठीक नहीं कि भोगवादी आलसी होता है कारण यह कि इस बात को प्रत्येक मनुष्य जानता है कि खाने वालों से बोने वाला अधिक पुरुषार्थी होता है द्वितीय यह बात है कि यदि सब भोगवदी हो जांय तो संसार के सम्पूर्ण प्रबन्धों में गडबड होजावे यह और भी मिथ्या है कारण यह कि भोगवाद किसी कार्य को नहीं रोकता किन्तु नियत बदलता है । अब जो कार्य स्वार्थी अपने भोग बदलने के लिये करते हैं वह दूसरों को लाभ पहुंचाने की इच्छा से किये जायेंगे ॥

प्रश्न—वर्तमान के लिये तो कार्य को प्रत्येक ही कर सकता है अतः पुरुषार्थ प्रत्येक ही कर सकता है परन्तु अनागत के लिये सब को निश्चय नहीं हो सकता अतः प्रत्येक पुरुषार्थ नहीं कर सकता ॥

उत्तर–विद्वान और सुशिक्षित मनुष्य तो अनागत के लिये ही पुरुषार्थ करते हैं परन्तु मूर्ख मनुष्य वर्तमान के लिये जैसे यह सब का माना हुआ सिद्धान्त है कि देवता बोते हैं खाते नहीं मनुष्य खाते और बोते हैं और पशु केवल खाते हैं बोते नहीं देवता का अर्थ विद्वान जो पूर्णतया से वेदों का ज्ञाता हो और जो भविष्यत के लिये ही प्रबन्ध करता हो जैसा कि महर्षि शंकराचार्य से प्रश्न किया गया कि जब तुम संसार में वैदिकधर्म का प्रचार करना चाहते हो कि जिससे सब ही विरुद्ध हैं रोटी का भी प्रबन्ध किया जिस का उत्तर स्वामी शंकराचार्य जी यह देते हैं॥

प्रारब्धाय समर्पितं निजवपु

अर्थात् मैंने यह शरीर तो भोग के ऊपर छोड़ दिया है अब मैं केवल अपना कार्य करूंगा॥

जब कि स्वामी शङ्कराचार्य के मानसिक सङ्कल्प ऐसे उत्तम थे कि वह केवल वैदिकधर्म को फैलाते और अपने लिये कुछ भी नहीं करना चाहते थे वास्तव में भोगवाद कृतकार्यता की ताली है जो इस को समझ लेता है तो दुःखों से मुक्त हो जाता है और यह वह जानता है कि भोग ही ऐसा है तो वह मित्रता शत्रुता से भी मुक्त होजाता है वह समझलेता है कि भोग के अतिरिक्त जो मेरे कर्मों का फल है दूसरा मनुष्य मुझ को सुख दुःख

देही नहीं सकता जब कि कोई दुःख का देने वाला ही नहीं तो शत्रु किस को समझे और किस को मित्र और मुपुरुष जितने भोगवादि होंगे इतना ही उस धर्म को कृतकार्यता प्राप्त होती है और उन धर्मियों के मन में ईश्वर का विश्वास और और शान्ति होगी और जिन मनुष्यों का भोग पर विश्वास नहीं है वह मुक्ति को किसी दशा में भी प्राप्त नहीं कर सकते कारण यह कि सांसारिक आवश्यकताओं से उन को अवकाश ही नहीं मिल सकता है जब कि वह मुक्ति के लिये पुरुषार्थकार भोग ऐसा अटल है कि उस के विरुद्ध किसी को कृतकार्यता प्राप्त हो नहीं सकती अतः जो पुरुषार्थ भोग के बदलने के लिये किया जाता है वह व्यर्थ जाता है उस में अकृतकार्यता होने के कारण दूसरी ओर काम कर ही नहीं सकता युरोप में जितनी अशान्ति है उस का कारण भी नास्तिकता अर्थात् भोगवाद का अभाव है यूरोप निवासियों का अनुकरण (नक़ल) करने वाले एंगलोवैदिक मनुष्यों में जो अशान्ति है उस का कारण भी भोगवाद से अरुचि है परन्तु भोगवाद को प्रत्येक मूर्ख पुरुष नहीं समझ सकता इस को समझ ने के लिये ब्रह्मविद्या आत्मविद्या कर्म फल विद्या [कर्म फिलासफी] पर दत्तचित्त होकर विचारने की आवश्यकता है जो मनुष्य इन विद्याओं से रहित है उन के लिये यह सिद्धान्त केवल हंसी करने के अधिक लाभदायक नहीं हो सकता परन्तु विद्वान् के विचार में यही

भोगवान् शान्ति का कारण और कृतकार्यता की कुंजी और ईश्वर विश्वास का लक्षण है ॥

आगे दूसरा अङ्क देखो—

ओ३म् शांतिः शांतिः शांतिः

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गौशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

ट्रेक्ट नम्बर १४

महाअन्धेर रात्रि

जिस को

स्वामी दर्शनानंद सरस्वती जी ने

दयानन्द ट्रेक्ट सोसाइटी के हितार्थ

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

ज्वालापुर हरिद्वार में

छपवाया

—=+:※:+=—

४००० [प्रति   [मूल्य)।

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गौशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

* ओ३म् *

महाअन्धेर रात्रि ।

प्यारे पाठक गण ! एक बार वर्षा ऋतु में जब कि चारों ओर घनघोर घटा छारही थी और अन्धेरा इस कदर होगया था कि अपना हाथभी दिखाई न देता था उस समय एक स्त्री और पुरुष अपने घर में बेखबर सोरहे थे चोरों ने उनके घर में फ़ानूस लगाकर बहुत रोशनी करली थी और बेतहाशा उसका माल लेजा रहे हैं उन्हें अपनी और अपने माल की कुछ सुध न थी और न यह मालूम था कि हमारे घर में चोर घुस आये हैं सोने के समय वे अपने घर को मजबूत समझ कर निडर सोये थे उस समय उन्हें कभीभी यकीन नहीं था कि ऐसे मजबूत घर में किस तरह पर चोर आ सकते हैं लेकिन वर्षा ऋतु के जोर जमाने के भाव ने उस मकान को ऐसा मजबूत नहीं रहने दिया था जैसा कि वह समझ कर सोये थे चोरों ने मुख्तलिफ रास्ते उस घर से माल निकालने के लिये पैदा कर लिये थे जिनका हाल घरवालों से बिलकुल छिपा हुआ था इस तरह पर जब एक चौथाई के करीब माल निकल गया

और यकीन था कि शेषभी निकल जाता कि उस वर्षा में एक बिजली का गोला छूटा जिसने सोते हुओं को गहरी नींद से जगा दिया और बिजली कड़की पहले पुरुष जागा और उसने देखा कि घर में चारों ओर छेद होरहे हैं उसने उनको अच्छी तरह देखने के वास्ते कि किस कदर माल गया है सामान रोशनी की तलाश शुरू की कुछ तो अन्धेरे के सबब से और दूसरे इस सबब से कि चोर सामान रोशनी को पहले ही लेगये क्यों कि वह उन स्त्री पुरुष के बल और पराक्रम का इतिहास सुन चुके थे उन्हें ख्याल था कि जब तक ये सोये हुए हैं तब तक हम इनका कुछ लेजा सकते हैं लेकिन इनके जागने पर माल लेजाना बल्कि जान बचानाभी मुश्किल होगा और रोशनी के न होने से अगर ये जागभी जावें तो हमारा कुछभी न कर सकेंगे क्यों कि अव्वल तो अन्धेरी रात में इस को हमारा स्वरूप ही नजर न आवेगा और दूसरे इस को अपने खोये हुए माल का बिलकुल हाल न मालूम होगा जिस के लिये ये हमारा पीछा करने के लिये तैयार होजावे उनका यह इरादा था कि वह उस का माल लेजाने के बाद उनको जान से भी मार डालें लेकिन अभीतक उसका इन्तजाम नहीं होने पाया कि अचानक बिजली की कड़क ने उसे जगाही दिया पुरुष ने उठते ही सामान रोशनी की तलाश शुरू की लेकिन रोशनी के न होने से सामान रोशनी का तलाश करना भी उसके लिये मुश्किल होरहा था लेकिन बिजली की रोशनी

उसको जरा २ सी मदद देरही थी जिस के ज़रिये से उस ने यह मालूम कर लिया था किमेरे घर में चोरों ने बहुत से छेद कर लिये हैं और बहुत सा मालभी लेगए हैं उसने चाहा कि उन सूराखों को बन्द कर के चोरों के पीछे अपना माल छीनने के लिये जावे और जिस कदर होसके अपना माल वापिस, ले, उसका ख्याल था कि जबतक यह सूराख बन्द नहीं होंगे तबतक चोरों के हाथ से माल बचाना बहुत ही मुश्किल होगा इतने में उसकी स्त्री भी उठ खड़ी हुई और उसने पुरुष से पूछा कि तुम क्या करना चाहते हो उसने कहा कि इन सूराखों को बन्द करके इन चोरों को पकड़ने और माल वापिस लानेकी कोशिश करूंगा स्त्री ने कहा कि मैं हरगिज ऐसा न करने दूंगी यह सूराख तो घर का साज व सामान दूसरों को सिखलाते हैं।

क्योंकि हमारे दर्वाज़े सेतो बहुतसे लोग हमारे घर के पदार्थों को देख नहीं सकते और तुम किसी चोर को मत पकड़ो अगर तमारा कुछ माल लेगयेतो लेजाने दोवह हमारी किस्मत का नहीं वह उन्हीं का होगा हमारे घर में कुछ कमी नहीं पुरुष ने उसको समझाया कि अगर थोड़ा २ इसी तरह लेजाते रहेंगे तो तुम एक दिन कंगाल होजाओगी और इन सूराखों को बन्द करना तो भला काम हैक्योंकि उनकी राह से शत्रु आकर हमें बहुत हानि पहुंचा सकते हैं स्त्री ने कहा सना

तन से ये सूराख़ चले आते हैं अब इनके बन्द करने की कोई आवश्यकता नहीं और तुम जोकहते हो कि थोड़ा २ मालचोरों के पास बराबर निकल जानेसे तुम कंगाल होजाओगी मेरे पास इतना माल हैकि हज़ारों वर्षों में खतम नहोगा और आगे का हाल कौन जानता है ग़रज़े कि इसी तरह की चहल और प्रश्नोत्तर होते हुए स्त्री पुरुष के पीछे ऐसी पड़ी कि जिस को बाहर जाना और सूराख़ों का बन्द करना और अपना माल वापिस लाना बहुत ही मुश्किल होगया। जब चोरों ने देखा कि उसके पीछे भूतनी होकर चिपट गई है किसी तरह भी अपना माल हमसे वापिस नहीं लेसकता और न ऐसी दशा में हमसे सामना कर सकता है उन्होंने दिलेर होकर पुरुषपर हमले करने शुरु किये और सूराखों के रास्ते और भी माल लेजाने लगे बेचारा पुरुष जिसको अपने बुज़ुर्गों कामाल जाता हुआ देखकर बहुत ही शोक होरहा थाकि क्या करें इधर दुश्मनों का सामना इधर स्त्री की ज़बरदस्ती और कटुवाक्य उस पर रोशनी की कमी ग़र्ज़ोंकि एक मुसीबत हो तो उसका बन्दोबस्त भी होसकता उसका हरएक पत्ताभी दुश्मन हो रहा था लेकिन पुरुष जिसको अपने बुज़ुर्गों से मज़बूती और बुद्धिमानी से काम करने का सबक मिल चुका था वह बराबर अपना काम करता चला गया थोड़े अरसे मे स्त्री जब उसको रोकते २ थक गई और उसने छोड़कर कहा जा निपूते जा मेरे घर से बाहर

निकल तेरा यहां क्या काम जा चोरों के पीछे जा अपना काम कर लेकिन ये सूराख जो हैं कभी वन्द नकरने दूंगी और नउस असवाब को जो चोरों के हाथ में गया है जिसके छूने से मुझे पाप मालूम होता है इस घर में न लाने दूंगी मर्द ने कहा यह तुम्हारी बात अच्छी नहीं क्या तुम्हारा माल जो चोरों के हाथ में चला गया है अब वह किसी तरह भी शुद्ध नहीं होसकता हमें उसकी शुद्धि केलिये कोशिश करनी चाहिये जब कि तुम्हारे धर्म में जो अपवित्र होगई हो उसके शुद्धकरने का तरीका मौजूद है तो फिर तुम क्यों नहीं उस धर्म को मानते ।

प्यारे पाठकगण ! आप इस दृष्टान्त को सुन चुके शायद आप में से कै सज्जन इस दृष्टान्त के मतलबको भी समझगये होंगे क्योंकि न बहुतसे भाइयोंको इसके असल हाल जाननेकी इच्छा होगी इस लिये मज़मूनकी असलियत की व्याख्याकी जातीहै

प्यारे मित्रो ! जब महाभारत के बाद भारतवर्ष में वेद का सूर्य्य छिप गया तो अज्ञान की घटाओं से महा अंधकार हो गया और वाममार्ग की आचार व्यवहार की खराबी ने ऐसा जोर डाला कि भारत वासियों को धर्म कर्म का ज़राभी ज्ञान न रहा हर आदमी वे सुध आलस्य की नींद में मस्त होगया भारतवर्षकी ऐसीदशा होगईकि वैदिकधर्मकी जगहबहुत सीबनावटी संप्रदायें होगईं और लोगअपने संप्रदायों के बुरे से बुरे कर्मों को भी अच्छा बतलाने लगे बाजों ने शराब कवाब और भांग को धर्म बतला दिया बाजों ने इस से भी बहुत खराब बातों को

जायज़ कर दिया ऐसा होते ही चारों ओर से गैर मजब वालों के हमळे भारतवर्ष पर होने लगे और उन्हों ने वैदिकधर्म के मानने वाळों को अपने मत में ळाना शुरूकिया वैदिकधर्म में वाममार्ग के साथ मुद्दत तक पडौस रहने से उनकी बहुतसी बातें आगई थी जिससे वैदिकधर्म ऐसा मजबूत नहीं रहाथा जैसा कि सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर महाभारत के जमाने तक। इसकी कमजोरी और वाममार्गकी बूवासने यहांपर बौद्ध जैनी मुसलमान व ईसाई चारों मजहबों को वैदिकधर्म के अनुयायी यानी वेद के मानने वालों को अपने धर्म में लाने का मौका दिया यहांतक कि भारतवर्ष में बौद्ध और जैनमत के फैलने के बाद करीबन छः करोड आदमी मुसलमान होगया और अरसा १५० साल में करीबन २५ लाख हिन्दु ईसाईधर्म में चळे गये ऐसी हाळत में दुनिया के तमाम मजहबों का यह ख्याल था कि इसीतरह एक दिन वैदिकधर्म का खातमा होजायगा और कुल वेद के मानने वाळे ००० होजावेग लेकिन परमत्मा को यह बात मंजूर नहीं थी कि उसका दिया हुआ ज्ञान संसार में से अलग होजावे और लोग हमेशा के लिये ऐसी महाअंधेरी रात्री में पड़े रहें इस वस्ते उसने अपनी कृपासे इस घनघोर रात्री में एक बिजलीका गोळा छोडा जिसने एकदफा सारे संसार की नींद को दूर करदिया अगरचे बहुत से आदमी थोडी देर बाद फिर ख्वाबमें चले गये लेकिन एक बार तो सबकोळिये हल चल पडगई वह गोळा स्वामी

दयानन्द के उपदेश का जोरदार शब्द था जिसने भारतवासियों को नहीं बल्कि कुल संसार को धर्म की तहकीकात की तर्फ रुजू करदिया अमरीका और इंगलैंड के माद्दह परस्त मुल्कों में जहांपर नास्तिकता का जोर हद्द से बढगया था हजारों आदमियों को धर्म की तहकीकात का शौक हुआ और लोग ईश्वरीयज्ञान की तहकीकात में लगगये उस महात्मा के उपदेश से अर्य्यसमाज ने जागकर इस बात की तलाश की कि किस तरह पर हमारे मुल्क की यह हालत होगई है लेकिन मुसल्मान ने हिन्दुओंके मजहब की कुल किताबें जो उनके हाथ लगीं जला दी थीं और बहुतसी किताबें हिन्दुस्तान की जरमन वगैरह योरुप के देशों में चली गईं इसलिये आर्यसमाज को बडों की किताबों की तलाश की बहुत जरूरत मालूम हुई जिस से वह अपने भाईयोंको जो वाममार्ग से पैदाहुई बुरी रीतियों को देख वैदिकधर्म को छोड ईसाई और मुसलमानी मजहब में जारहे हैं किसी तरह उन रीतियों को दूरकर उनको वैदिकधर्म सेपतित होने से बचावें और जो लोग वैदिक धर्म से पतित हो हो चुके हैं उनको वापिस लाने की कोशिश करें ताकि वैदिक धर्म फिर वैसी ही हालत में आजावे जैसी कि वह महाभारत के पहले था लेकिन आर्य्यसमाज के बाद ही एक श्री धर्मसभा के नाम से उठी जिसने आर्यसमाज का दामन पकड़ लिया और कहा खबरदार तुमइन बुराइयों को दूर मत करो इन से हमारे

धर्म की खूबी और बुजुर्गी जाहिर होती है और तुम को क्या पडी है कोई धर्मपर रहे या नरहे और आर्यसमाजका जो ख्यालथा कि वैदिकधर्म के मानने वाले जो ईसाई मुसलमान इत्यादि मजहबों में अपनी गलती या किसी विषय के लालच से गये हैं और जो हमारी तरह ऋषियों की औलाद हैं लेकिन अपने बुजुर्गों के सच्चे धर्म को बसबब नादानी के हानि पहुंचा रहे हैं उनको समझा कर और प्रायश्चित्त कराकर फिर उनको ऋषिसन्तान बनादिया जावे कि श्रीमान् स्वर्गवासी महाराज जम्बू कश्मीरने काशी इत्यादि के पण्डितों से साबित करादिया है कि धर्म के न जानने से जो ईसाई या मुसलमान हो जावे उनको प्रायश्चित्त करके शुद्ध कर लेना बिलकुल धर्मशास्त्र और वेदों की आज्ञा के अनुसार है जिस के लिये महाराज ने (रणवीररत्नाकर) नामी पुस्तक पर बहुत से पण्डितों के हस्ताक्षर भी करादिये हैं लेकिन भारतवर्षके कुदिनने अबभी धर्म सभा के मूर्ख और अपस्वार्थी मनुष्योंको प्रायश्चित्त का शत्रु बना रक्खा है जिस से वैदिकधर्म की वह कमी जो मुसलमान बादशाहों की जबरदस्ती से पैदा होगई थी पूरी होनी कठिन ज्ञात होती है बावजूद कि धर्मसभा में ऐसे लोग भी मौजूद हैं जो मुसलमान डाक्टरों की दवाई इस्तेमाल करते हैं जिस में उन का पानी मिला होता है. मुसलमानों के हाथ का सोडावाटर पीलेते हैं. मुसलमान वेश्याओं के साथ खालेते हैं इस किस्म के मुसलमानों के साथ खाने

चालेतो शुद्ध हैं और जो लोग धर्म रक्षा के लिये मुसलमान और ईसाइयों को जो पहले हिन्दू थे शुद्ध करके मिलालेते हैं वह अशुद्ध हैं सच है घोर कलियुग का यही धर्म्म है के रक्षक अपवित्र और वेश्यागामी और शराबी और कबाबी पवित्र अगर इतना अज्ञान न छाजाता तो भारत का दुर्भाग्य किस तरह कामियाब होता।

प्यारे पाठक गण! आर्य्य समाज जो भारत वर्ष के धर्म और विद्या का बचाने वाला है जिसका उद्देश्य ही सम्पूर्ण संसार को सुख पहुंचाना है और अपने तन मन से आपकी सेवा में लगरहा है उसको अपस्वार्थियों ने झूठी गप्पों और धोखे की चालों से ऐसा बदनाम कर दिया है जिस से भारत वासी अपने परमहितकारक को नफरत की निगाह से देखते हैं जहां पर इस किस्म की महाअन्धेर रात्री हो वहां उन्नति की आशा करना बहुत ही कठिन है। अफसोस की बात तो यह है कि आज ऋषियों की सन्तान का धर्म रोटियों पर विकरहा है सब लोग ऐसे मूर्ख हैं कि वह धर्म के शब्द की असलियत सेभी जानकार नहीं और लोग जानते हैं कि उनका रोजगार अभी खराबियों और बुरी रीतों पर क़ायम है अर्थात् इस ख्याल में हैं कि आज हम सचाई की ओर ध्यान देंगे तो लोगों में हमारी विद्याकी पोल खुल जायगी वह कहेंगे कि आजतक पण्डित होकर गलत कायदों के कायल रहे गर्ज़ कि पढे लिखे और पण्डित तो इस आफत में फँसे हैं और

अनपढ़ और मूर्खता के कारण मझधार में डूब रहे हैं इन लोगों के अपस्वार्थ और खुदगर्जी और बेवकूफी से वैदिक धर्म प्रति दिन तबाह होता चला जाता है ये लोग यह नहीं सोचते कि उनकी बेवकूफी से छः करोड हिन्दू मुसलमान होगए और २५ लाख आदमी ईसाई होगए आज जिस कदर हानि हिन्दू मुसलमानों के झगडों से हो रही है अगर ये भाई जो मुसल-मान हुए हैं न होते तो कभी मुमकिन न था कि भारत वर्ष की यह दशा होती लेकिन आज आधी ताकत जिस से कुछ मुल्क का फायदा होता आपस के झगडों में खर्च होरहा है जो आर्य्य समाज ने इस बात की कोशिश की कि हिन्दुओं को मुसलमान और ईसाई होने से बचाए और जो लोग गलती से होचुके हैं उनको प्रायश्चित्त कराकर वापिस ले तो यह अपस्वार्थी लोग बेवकूफ लोलों को बहका कर आर्य्य समाज को धर्म रक्षा से बाज रखने की कोशिश करते हैं।

प्यारे पाठकगण ! सनातन धर्म सभा अगर किसी अच्छे काम का प्रचार करती तो आर्य्य समाजको बहुत मदद मिलती लेकिन यह तो बजाय उपाकार के झगडे में डालने का बन्दोवस्त करती है अगरचे आर्यसमाज प्रति दिन बहुत उन्नति करता चला जाता है लेकिन धर्मसमाज के झगड़ों ने आर्यसमाज की स्प्रिट को विलकुल बदल दिया है आर्यसमाज का उद्देश्य यह नहीं था कि वह वैदिकधर्म के मानने वालों में और झगडे उपस्थित कर

इस का उद्देश्य तो केवल वैदिक धर्म की रक्षा करना था और जो छिद्र जैन, बौद्ध, ईसाई और मुसलमान लोगों की तालीम से वैदिकधर्म में पैदा होगये हैं उनको बिल्कुल अलग करके शुद्ध वैदिकधर्म को जिस के सामने संसार की किसी मत का बल नहीं कि अपने मत को उपस्थित रखके संसार भर में फैलादें लेकिन शोक तो यह है कि भारतवर्ष में उत्तम वर्ण और सब से श्रेष्ठ कक्षा के मनुष्य यानी ब्राह्मण और साधु अब उन्हीं अशुद्धियों के बचाने वाले हो गये हैं जो और मतों के सम्बन्ध से पैदा होगई हैं॥

प्यारे पाठकगण ! क्या कोई सनातनधर्म का पण्डित बतला सकता है कि वेद और वेदानुकूल पुस्तकों में कहीं मुसलमान मुर्दों की कबर की पूजा लिखी है ? आप में से कोई इस का सबूत दे सकता है ? कदापि नहीं ? क्या कोई बतला सकता है कि सनातन ऋषि मुनि इसी भांति पर धर्म से अलग रह कर केवल संसार का धन कमाने को ही धर्म कर्म मानते थे ? जैसा कि आज कल हमारे बहुत से भाई कर रहे हैं, क्या यह रासलीला का खेल कोई सनातन धर्म सिद्ध कर सकता है क्या अपने बुजुर्गों को चोर और जार बतला सकता है ? जिस तरह हमारे सनातन धर्मी लोग महात्मा कृष्ण जैसे योगिराज को बतला रहे हैं, क्या कहें एक बात हो तो बतलावें देखो जिधर देखो तिधर चौपट काम हो रहा है केवल

इस लिये कि हमारे देश के खत्री वनिये अपने धर्म पुस्तक के पढने के लिये विद्या की आंखें नहीं रखते इस कारण उन को अन्धे की भांति दूसरे की अन्धाधुन्ध तालीम खोती चली जाती है जिस प्रकार एक अन्धा दूसरे अन्धे के अन्धा होने को नहीं जान सकता ऐसे ही यह मूर्ख लोग अनपढ़ ब्राह्मणों और साधुओं की मूर्खता और अशुद्ध तालीम को नहीं समझ सकते इस लिये हर एक आदमी को हौसला पैदा होगया है कि वह जो चाहे शास्त्रों का नाम लेकर उन को समझावें ॥

प्यारे पाठकगण ! अगर्चे शास्त्रों और बुजुर्गों में इन की श्रद्धा काबिल फखर है लेकिन ज्ञान की कमी से हानिकारक होरही है अगर ये मनुष्य वेदविद्या की कुछ तालीम पाकर कुछ विचारते और उस पर इसी श्रद्धा से अमल करते जैसा कि आज कल करते हैं तो जरूर मोक्ष पद के भागी होते लेकिन अफसोस तो यह है कि ये धर्म सभा के लोग ऐसे खुद गलत होरहे हैं कि अपने कायदों की आप जड़ काटते हैं कहते तो यह हैं कि वर्ण उत्पत्ति से है और आर्य समाज से दिन रात इस वात पर झगडा करते हैं कि गुण कर्म से वर्ण नहीं वल्कि वीर्यसे है लेकिन अमली तरीका इस के विलकुल खिलाफ है इन की सभा के वड़े २ उपदेशक वढ़ई रोड़े इत्यादि जातियों के हैं जो कोई तो सागर संन्यासी वन गया है और कोई उदासी कोई निर्मला गरजे कि लोगों ने साधुओं का भेष वदल

लिया है अब जरासे भेष से तो उनका वर्ण बदल गया कि अब उन के धर्म सभा के ब्राह्मण तक स्वामी जी महाराज कहते और उनकी इज्जत मिस्ल अपने गुरु संन्यासियों के करते हैं और यह खयाल नहीं करते कि वह चीथे से बढई हैं या शूद्र हैं। उन को वर्ण से कोई गरज नहीं सिर्फ भेष से गरज़ है।

प्यारे पाठकगण ! अपनी गलत समझ से मेम्बरान् सनातन धर्म सभा अमल वही करते हैं कि जो आर्य समाज के अनुसार है लेकिन जबानी तौर पर दिन रात स्वामी दयानन्द सरस्वती जैसे धर्मात्मा परोपकारी को कि जिसने वैदिक धर्मियों की काया पलट दी अर्थात् जो वैदिक धर्मी मुसलमान और ईसाई उन के मुकाबिले में बहस करने से घबराते थे आज मुसलमान और ईसाई उन से बहस करने में घबरा रहे हैं और पहले हिन्दू लोग दिन रात मुसलमान ईसाई होरहे थे अब बहुत ही कम लोग हैं जो धर्म समझ कर मुसलमान और ईसाई हों बलकि उन को कमजोर धर्म समझ कर वापिस आरहे हैं कई हजार आदमी वापिस आचुका है यह सनातन धर्म के पंडित जानते हैं कि स्वामी दयानन्द के सिद्धान्त बिलकुल वेद के अनुकूल हैं और उस से ऋषियों की राय के विरुद्ध कुछ नहीं लिखा और उन की मिहनत और गालियों

से आर्य्य समाज का कुछ नुकसान नहीं हो सकता केवल अपने रोजगार की हानि समझ कर ऐसे अधर्म और कृतघ्नता को कर रहे हैं परमेश्वर इस महारात्रि को मिटा कर हमारे भाइयों को बुद्धि दे जिस से ये सनातन वैदिक धर्म को ग्रहण कर के उस का प्रचार करें ॥

॥ इति भूयात् ॥

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

॥ ओ३म् ॥

धर्म प्रचार

ट्रेक्ट नम्बर १.

मुसन्नफा बा० हनूमान प्रसाद वर्म्मा

आनरेरी उपदेशक पीपलमंडी आगरा

जिसको

वास्ते बतलाने तरीका धर्मप्रचार प्रतेक वैदिक धर्म्मावलम्बिओं के लिये छपवा कर प्रकाशित किया.

प्रथमबार ३००० सन् १९१०

कीमत)॥ आना.

बअहतमाम लाला बंशीधर बम्बई मैशीन प्रेस आगरा.

॥ ओ३म् ॥

धर्म प्रचार

धर्म्मा मरद वही है जो बढ़करके सबमें कहवे ।
ऐ धर्म तेरे कुरबां यह दिल व जां हमारा ॥

वै सज्जन महाशयों हम आपको यह बतलाना चाहते हैं कि
नियांमें धर्म्म का किसतौर से प्रचार होताहै और किस
ोर से हमेशा कायम रहता है और क्योंकर नष्ट हो जाता
है ये बात आपसे पोशीदा नहीं कि अब से पांच हजार वर्ष
श्तर इस भारत वर्षमें वेदोंका खूब प्रचार था हर खास
आम देव वानी अर्थात संस्कृत जानता था और वेदोंको
च्चे भावसे पढता और पढाता था और उसके प्रचार में
ापना तन मन धन तीनों लगा देता था ये कर्म्म ब्राह्मण
ादि के आदि सृष्ट से लेकर महाभारत पर्य्यंत रहे महा
ारत में जब सब ब्राह्मण क्षत्री आदि मर कर नष्ट होगये
ास वक्त लोगों से वेदोंका पढना छूटगया खुद गर्जोंने अप
ा कबजा लोगोंके दिलोंपर कर लिया और हर किस्म का
अत्याचार बढतागया गर्जे लोग कि बहुत बुरे भा-

चरण के होगये और अपने धर्मसे ना वाकिफ होकर इधर
उधर भटकने लगे इस अंधकार के जमाने में अनेक मत म
न्तरों का चलना शुरू हुआ बाम मार्गी बहुत
इसी अरसे में जैन बौद्ध निसारा यहूदी ईसाई मु
नानक पन्थी दादू पन्थी राधा स्वामी इत्यादिक बनते
आये और इस पवित्र भूमि में कैसे २ दुराचार्य हुए
कोई हिंसा करनेका नाम तकभी नहीं जानता था उस
कबूतर भेड बकरी इत्यादिक तो दूर किनार रहे गौवों
खून बहाया गया और बहाया जा रहाहै जिस जगह
जैसे गौरक्षक पैदा हुएथे उस भूमि में ऐसे मनुष्य हुए जिन्हों
अपनी भुजा से लाख २ दो२ लाख गौवों का खून बहा
और घी दूध इत्यादिक का बिल्कुल अभाव कर दिया औ
ऐसे जुल्म करने में जराभी तरस न खाया गर्जकि इस
भारत भूमि में वह २ दुराचार्य हुए हैं जिनके लिखने से क
कांपती है दिल थरथराता है और तहरीर की ताकत
बाहरहै इसके लिखने से यह नतीजा निकला कि जगत
ब्राह्मण आर्य ने इस भारत बर्ष में पढने पढाने और धर्म
प्रचार करने में खूब कोशिस की और दिनबदिन तरक्की कर
चले आये जबतक खूब धर्मका प्रचार बढता गया औ

स बात से आप खूब वाकिफ हैं कि इस भारत वर्ष ने
र बातमें हद दरजेकी तरक्की हासिल की क्या ज्योतिष
बेद्या क्या पदार्थ विद्या क्या अर्थ विद्या क्या ब्रह्म विद्या अस्त्र
शस्त्र विद्या बैद्यक विद्या गर्जेकि जिस बातको शुरू किया
हद दरजे तक पहुंचा दिया हर बातको लासानी कर दिखाया
जिसका जवाब आज तक दुनियां में मौजूद नहीं (जो खास
कर बडा रोशन यानी उरूज का जमाना कहलाता है) क्या
से आला दिमाग ब्राह्मणों आदिपर यह मिसाल नहीं घटती
कि (जो बातकी खुदाकी कसम लाजबाब की फिर) जिस वक्त
तरक्की रुकगइ तो वोह उतनेही इल्म को कोशिस से पढते
पढाते रहे और वेदों के अनुकूल अपने आचरण बनाते रहे
तब तक इस भारत वर्ष में कायम रहे और कोई भी इनका
कुछ न कर सका जिस वक्त इनमें दुराचार घुसा तब वरण
आश्रम बिगड गये सबने अपना २ फर्ज अदा करना छोड
दिया उसी वक्त से इनकी तनज्जुली शुरू हुई यहां तक कि
उन आला दिमाग ब्राह्मणोंने अपने कर्तव्य विद्या आदि को
छोड भीख मांगने का पेशा अख्त्यार कर लिया क्षत्रियों
ने अपना खास फर्ज परजा की रक्षा करना बिलकुल
दिया दुरबल होगये सिंहों के मुखपर तेज तक न रहा ओ अबी

किसी वक्त में अर्जुन भीम भीष्म आदि जैसे बलधारी हो
थे वही क्षत्री आज ऐसे हैं कि जिन्होंने अपने ब्रह्मचर्य व
दोनों हाथों से रेड करदी।

अत्यन्त दुर्बल होगये मांस भक्षक बनगये गर्ज
क्षत्रियों की वो बुरी हालतहै किजिसको मैं इस वक्त ...
भी उचित नहीं समझता आप खुद समझ लें वैश्योंने
मुख्य धर्म गौ इत्यादिक पशुओं की रक्षा करना ...
छोड दिया धनहीन होगये जो कुछ भीरसे बचा हुआ ...
धनथा उसको जुआ रंडी बाजी इत्यादिक में उड़ाने ल
और अपना खास कर्तव्य वंज्य व्योपार करना अपने हा
निकाल दिया यही बातें इनके नष्ट होजाने का सबब हुई ।
ऐसे आला दरजेकी क़ौमको खाक में मिला दिया इस ...
नतीजा यह निकला कि जब तक तरक्की करने के ...
उनके अन्दर काम करते रहे दिन दूनी रात चौगुनी ...
तरक्की होती रही तरक्की बन्द होने पर भी उनके ...
रहने के असूल उनके दरम्यान काम करते रहे जब तक
कायम रहे जिस वक्त यह असूल भी इनके अन्दर से निकल
गये उस वक्त नष्ट होने के असूलों ने काम करके ...
नेस्त व नाबूद करदिया और ज़मानेको जहालत में गिरा

या चारों तरफ अंधकार फैल गया ग़रज सारी अविद्याओं
इस भारत वर्षके निवासियों को आंघरा जिस के हालसे
ाप सब अच्छी तरह वाकिफ़हैं इस सबका आशय यहहै
ि जब मनुष्य जिस असूलको लेकर काम करने खड़ा होता
उस वक्त तक जबतक कि वो असूल जिनको लेकर खड़ा
आहै न बदल जांय मुतवातिर तरक्की होती रहतीहै जि
क्त वो अपने आला असूलोंसे गिरजाता है उसी वक्त उसको
तज़ुली होती है इसकी मिसाल यों है कि जिस तरह
ोई शख्स दूधकी दूकान खोलै और इस गरज से कि सब
ाहक मेरी दूकान पर आवें खालिस दूध बेचना शुरू करैतो
समें शक नहीं कि दूर २ तक के आदमी उसकी दूकान
आने लगते हैं और जब आदमी आने लगते हैं तो दूध
े अर्थात दूकान दारको लालच दौडता है कि मैंने जिस
ज से खालिस दूध बेचना शिरू किया था वह गरज मेरी
ी होगई यानी ग्राहक आने लगे तो अब मैं आहिस्ता २
ी मिलाना शुरू करदूं ताकि नफा ज्यादा हो यह सोच
वह थोडा २ पानी मिलाना शुरू करदेता है जब तक
ी थोड़ा रहता है ग्राहक लोग उसको महसूस नहीं करते
स वक्त पानी ज्यादा हुआ ग्राहक सोचने लगते हैं कि

यह भी पानी मिलाने लगा पस अब ऐसाही इसकी दुका
से लेना और ऐसाही अपनी पडौस वाली दुकान से पि
क्यों इतनी तकलीफ उठा कर यहां आवें इसी तौर
आहिस्ता२ वहांसे सब ग्राहक सटक जातेहैं और दूध वाले
दुकान पर मक्खियां भिनकने लगती है जिस वक्त ग्राह
कम होना शुरू होता है उस वक्त तो दूकान दार को म
सूस नहीं होता।
लेकिन जब बिल्कुल मक्खियांहीं भिनकने लगती हैं ज
ख्याल करते हैं कि ग्राहक न आने की वजह यह है ि
हम दूध में पानी मिलाते हैं लेकिन फिर पछताने से क्य
होता है और अगर वह फिर भी चाहे कि मैं फिर खालि
दूध बेचना शुरू कर दूं ताकि मेरी दुकान पर फिर ग्राहक
का आना शुरू हो जाय तो ना मुमकिन है कि उसकी
दुकान चल जावे वस फिर तो वही मसल उन पर घटती
कि अब पछताये क्या होत है जब चिड़िया चुग गई खे
ओर मेरी इसी दलील का जो मैंने बताई कि जब आदम
जिस आला असूल को लेकर काम करने खड़ा होता
और उससे गिर कर कायम रखने वाले असूलों का
छोड़ देता है तब तीसरी हालत यह होती है कि वह

जाय मजीद सबूत यह है कि जिन लोगों ने तवारीख
ो हैं वे जानते हैं कि रूम, और यूनान का पेस्तर क्या
ल था और जब उन्होंने तरक्की करना शुरू की तो किस
र्जे पर पहुंचे और फिर तरक्की के असूल हाथ से निकल
ने पर किस तौर से तनज़्ज़ुली हुई बस हर तरह से यही
बित है कि जब तक मनुष्य के तरक्की करने के असूल हाथ
रहते हैं वह तरक्की करते रहते हैं जब तरक्की करने के
सूल गिर जाते हैं तो कायम रहने के असूल उनके अन्दर
म करते हैं और जब तक वह काम करते रहते हैं वह
यम रहते हैं और जब मनुष्य कायम रखने वाले असूलों
भी गिर जाते हैं तो सिवाय नष्ट होने के और कोई
का हस्र नहीं होता इसी तौर से जैसा कि ऊपर लिख
ये हैं कि शुरू में आर्य्यों ने खूब तरक्की की और तरक्की
क जाने पर अरसे तक कायम रहे और कायम रखने
ले असूलों से भी गिर कर पांच हज़ार वर्ष से उनका
वाल होने लगा था यहां तक कि बिलकुल जाहिल और
सी और बिलकुल अविद्वान् होगये थे लेकिन फिर
रत वासियों की तकदीर ने ज़ोर मारा और उन्नीसवीं
दी के शुरू में स्वामी दयानन्द सरस्वती पैदा हुए और

उन्होंने इस आला दर्जे की देश की बिगड़ी हुई हालत को देखकर आंसू बहाए और सुधार का बीड़ा उठाया और अपने पूरण ब्रह्मचर्य और विद्या व योग बल के जोर से कामयाब हुए और जा बजा समाजें कायम करदीं और हजारों मनुष्यों को जहालत के गढ़े से निकाल कर परबतके सिखर पर बिठला दिया और उन के बाद भी इसी तरह मुतवातिर तरक्की होती चली आई है और ताहाल । आर्य्या समाज के हाथ से वह अमूल्य स्वामी के अ... जिन पर यह काम कर रहे हैं न निकल जायंगे दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की होती चली जायगी और कोई ताकत ऐसी नहीं कि जो इनको पीछे हटा सके इसलिये हम सबको ही यह लाजिम है कि वह अमूल्य स्वामी जी के ... हम अपने अन्दर धारण किये रहे बरना कोई शक नहीं के बहुत जल्द नेस्त नाबूद होजायें।

(प्रश्न) वह नियम क्या हैं जिन पर स्वामी ने का... किया और मौजूदा आर्य्य समाजें काम कर रही हैं जिसके निकल जानेसे उनके नष्ट हो जाने का अन्देशा है।

(उत्तर) इस सवाल को हल करने के लिये बड़े वाले दिमागों की जरूरत है मुझ जैसे छोटे मनुष्य के

हुरंत नहीं जो इस सवाल को भली भांति (प्रकार) हल कर सकूं लेकिन अपनी बुद्धी के अनुसार इसको हल करने की कोशिश करूंगा मेरे ख्याल में सब में पहिला असूल स्वामीजी का यह है कि ब्रह्मचर्य को धारणकर बुरी किताबों का पढ़ना छोड़ वेदों को अवश्य पढ़ें दूसरे यह कि हमेशा मुखालफों अर्थात् अपने विरोधियों के प्रश्नों का उत्तर देता रहे और जहां जिसकी बुरी बात पावे उस पर दलील रूपी कुल्हाड़े से खूब प्रहार करे यानी खंडन करने से कभी बाज न आवे क्यों कि इस से बड़े फायदे हैं बगैर इस के प्रचार का होना असम्भव है और यही आखिरी वसीहत श्रीमान पं० लेखराम जी की है कि समाज से तहरीर का काम बन्द न होने पावे यानी खंडन करने से कभी बाज न आना चाहिये हमेशा बिरोधियों पर प्रहार करता रहे और वेदोंका सत्त उपदेश देता रहे यही एक ऐसा रास्ता है जिससे बहुत कुछ तरक्की हो सकती है और हुई है और होगी अगर समाजें इस रास्ते को छोड़ देंगी तो इस में शक नहीं कि समाजों की तरक्की में रुकावट पैदा होजाय और तीसरे यह कि अपने पंच यज्ञ को अवश्य करता रहे क्यों कि और इसके बिना काम नहीं चल सकता यही तीन बातें धर्म

प्रचार के लिये मुफीद हैं।
और जैल की तीन बातें धर्म के कायम रखने के लिये हैं
जो अलावा स्वामी जी के एक उपनिषदकार भी बतलाते हैं
(त्रियो धर्मस्य स्कंधाः यज्ञा अध्ययनं दानं इती) अर्थात् धरम के
तीन स्कंध यानी बड़े पाल पाये हैं जिस तरह से छत बगैर
पाल पावों के नहीं ठहर सकती उसी तरह धर्म इन तीन
बगैर नहीं ठहर सकता हर वैदकधर्माबिलम्भीको १ बेद पढ़ना
२ यज्ञ करना ३ दान देना बड़ा लाजमी हैं मेरे ख्याल में सि
वाय इसके और कोई ऐसा रास्ता नहीं जिससे हम तरक्की कर
सकें जहां तक मैंने बिचाराहै ऊपरकी तीन बातें धर्मके प्रचार
करने के लिये बडी जरूरी हैं और नीचे की तीन बातें उपनि
दकषार की बतलाई हुइ धर्म कायम रखने के लिये बड़ी
जरूरी हैं अब अगर जो आर्य्य समाजें प्रचार करने और
कायम रखनेके असूलोंसे गिरेंगी उनका हश्र वही होगा जिस
तरह से दूधवाले का या ऊपर ब्यानकी हुई कौमों का हुआ
इस लिये हर आर्य्य का फर्ज है कि वह इन बातों पर इस
तरह दृढ़ हो जाय गोया यह बातें उसको घुटी मे डाल कर
माता ने पिलाई हैं और हर माता का भी यही फर्ज हैं कि
वह अपने बच्चे को बचपनही से इन बातों पर दृढ़ रहने के

लिये उपदेस करें ताकि उस वक्त का उपदेस किया हुआ सारी उम्र बच्चे के दिलमेंसे न निकले मृत्यु परयंत वा इन असूलों पर कायम रहकर धर्म का प्रचार करें और धर्मको कायम रखें जिस तरह से कि आपने अकसर महाभारत आदि में पढ़ा होगा कि माताएं बच्चों को पेटसे ही वीरता का उपदेश देतीथीं और वह उपदेस मरते समय तक उनके अंदर से न निकलता था और उसी उपदेशकी बदौलत, वह अपनी उम्रमें कुछ कर दिखलातेथे—मगर इन असूलों में से किसी असूलों के लिये मसलन खंडन वगैरा की बाबत, अकसर आर्य्यों का यह ख्याल है कि आजकल खंडन करना वगैरा ठीक नहीं क्यों कि ज़माना नाज़ुक है ईसाई मुसलमान सब हमारे खिलाफ हैं—मेरे ख्यालमें इसतरह से उनका कहदेना महज़ बुज़दिली है और वह बिलकुल बेबुनियाद हम दरयाफ्त करते हैं क्या स्वामीजीके वक्त में ईसाई मुसलमान खिलाफ नथे बल्कि उस वक्तती लोग स्वामी जी के मारने के लिये आते थे और सख्त मुखालफत करते थे एक मुसलमान ने उनके मुंहपर कह दियाथा कि अगर मुसलमानी राज्य होता तो तुमको जानसे मरवाडाला जाता इस तरहके सैकड़ों वाकिआत उनके आगे पेश आए

और आखिर को उनकी जानही लेलीगई लेकिन उन्होंने बिलकुल खौफ न खाया और निरभय होकर संसार में वेदोंका प्रचार किया इसी तरह पं: लेखरामजी ने निडर होकर प्रचार किया लोगोंने बहुत धमकी दी कि तुम मरवाडाला जायगा लेकिन उस वीरने इनबातों की कुछ परवा न की और हमेशायही कहता रहा कि यहांऐसी शांति बिरटिश गवर्नमेण्ट के राज्य में प्रचार करना मुशकिल है मैं अरब में जाकर प्रचार करूंगा और मारा जाऊं तो मैं समझूंगा कि मेरा जीवन सफल है और मैं ही नहीं बलकि हर आर्य्य–धर्मके लिये अपनी जान तबही तो ऋषी ऋण उतर सकता है और धर्मका प्रचार सकताहै(एक एक नियम पर जब कि हजारों शहीद हो जाना कि आपके जीवन कुर्बान हों)जिनमेंसे वीरका २ होजानेके बारेमें सोचना तो पूरा होगिया लेकिन व जिन्दा न रहनेके कारण वेशक न आसके लेकिन यह विचारने की है कि इन वीरों ने जो आनदी यहतो का जिक्र है क्या आपको वोह वक्त मालूम नहीं भारत वर्षमें इसलामी तलवार जोर शोरसे काम कर रही उस वक्त लाखों क्या बलकि करोडों हिन्दुओं को इ

बुनयादपर कि वुह मुसलमान नहीं है निरमूल करदिया है किन आप उन बीरों की बीरताको गौरसे देखें तो मालूम होगा कि वह किस बे रहमी के साथ मरवाये जातेथे कि कि तुम मुसलमान होजाओ लेकिन वह मरना मंजूर करते थे परन्तु धर्मसे पतित होना मंजूर नहीं था जिस तरह को हकीकत रायसे हरचन्द कहागया कि तुम मुसलमान हो जाओ और हर किस्मका लालच और धमकियां दी गईं लेकिन उस बीरने अपना धर्म तियागना मंजूर नहीं किया और यही कहता रहा कि मैं इस लालचमें आने वाला नहीं और न इन धमकियों से डरने वाला हूं चाहे मेरी जान तक जाए लेकिन मुसलमान न होऊंगा।

तीर तलवार तवर नेजओ खंजर बरसें।
जहर खूं आग मुसीबत के समुंदर बरसें॥
बिजलियां चर्खसे और कोह से पत्थर बरसें।
सारी दुनियां की बलाये मेरे सिरपर बरसें॥
खतम होजाय हरएक रंजो मुसीबत मुझपर।
मगर ईमानको जुंबिश हो तो लानत मुझपर॥
काटिये सिर तेगसे और सूली मुझको दीजिये।
पर मुसलमां होनेकी नस गुफ्तगूमत कीजिये॥

अब आप इस लड़के की वीरता का ख्याल करें कि एक जालिम बादशाह के आगे उसकी यह गुफ्तगू है आखिर को जब बादशाह ने मारने का हुक्म देकर कहा कि अगर तू अब भी मुसलमान हो जाना स्वीकार करे तो मैं तुझ को न मरवाऊं लेकिन उस वक्त भी वीर का यही जवाब था कि मैं मरने को तैयार हूं आप अभी मेरे सिरको अलग करवादें मगर अपने प्रिय धर्म को किस तरह खो सकता हूं।

जब वक्त तंग सरपै हकीकत के आगया।
चारों तरफ से उसके अंधेरा सा छागया।
कहकर यह उसनेसरको तहे खंजर झुका दिया।
जिस धर्म की तलाश थी वह आज पागया॥
इस बा वफ़ा से मुंह अपना मैं कैसे मोड़दूं।
मर कर रहे जो साथ उसे कैसे छोड़ दूं॥

और हकीकतराय ही नहीं बलकि लाखों करोड़ों इसी तौ से मारेगये जिनमें से आपको तेगबहादुर फतहबहादुर वगैर खास २ शख्सों का हाल मालूम होगा जो उस वक्त जमाने के प्रतिष्ठित आदमी थे वरना उस वक्त जियादा त ऐसेही मनुष्य थे जिन्होंने मरना कबूल किया लेकिन धर्म

पतित होना मंज़ूर नहीं किया अगर वह आज दिन कैसे पोच मनुष्य होते तो इसमें किया शक था कि इस दुनियां शिखा और सूत्र की हसती तक न रहती इसका नतीजा यह निकला कि जिस वक्त ऐसे मजबूत और दृढ़ मौजूद थे फिर भी छै कहार मुसल्मान होगये और अपने धर्मको कायम न रख सके फिर आप कैसे उम्मेद रख सकते हैं कि बगैर दृढ़ हुए ऐसी बुजदिली से हमारा प्रचार होगा और हम दुनियां में कामयाब होंगे अगर आप वाके धर्म का प्रचार करना चाहते हैं तो हकीकतराय आदि से भी ज्यादा दृढ़ होकर और अपने असूलों को हाथ में लेकर काम करना शुरू करदो वरना याद रक्खो कि नष्ट होजाने में कुछ कसर नहीं है और अधिक बातें मैं इस छोटेसे ट्रैक्टमें क्या बतलासक्ता हूं आप खुद विचारलें और काम करना शुरू करदें क्यों कि धर्म की तरक्की और तनज्जुली आपही के हाथ में है और इस वक्त से ज्यादा अच्छा मौका और क्या होसक्ता है कि ऐसी नियाय शीला बृटिश गवर्नमेण्ट हमारी हुक्मरान है जो हर वक्त धर्मात्माओं की रक्षा करती है।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

वैदिक-निबन्ध, संख्या १.

वैदिक आदर्श.

संख्या १.

आरोग्य बल और आयु

पं० राजाराम

प्रोफैसर डी. ए. वी. कालेज लाहौर.

सङ्कलित

सँम्वत् १९७२—सन् १९१५

बाम्बे यन्त्रालय लाहौर।

प्रथमवार } { मूल्य)।
२००० } { एक पैसा

मुफ्त बांटने के लिए १) रुपये के सस्सी

* श्रीवाल्मीकि रामायण *

हिन्दी टीका सहित।

जिस पर ७००) रु० इनाम मिला है।

(१) पं० राजाराम जी प्रोफेसर डी० ए० वी० कालेज लाहौर ने जो वाल्मीकि रामायण का हिन्दी में उल्था किया है, वह ऐसा सरस, सरल और प्रामाणिक उल्था हुआ है, कि उस पर प्रसन्न होकर पञ्जाब यूनीवर्सिटी ने ५००) रु० और पञ्जाब गवर्नमेन्ट ने २००] रु० पण्डित जी को इनाम दिया है (१) इस में मूल संस्कृत भी साथ है (२) हिन्दी टीका बड़ी ही सरल है, जिसको बच्चे भी चाव से पढ़ते हैं (३) कण्ठ करने योग्य उत्तम २ श्लोकों पर निशान दिये हैं॥

यह जीवन को सुधार कर नया जीवन बना देने वाली पुस्तक हरएक घर में अवश्य होने योग्य है। ऐसी उत्तम और इतनी बड़ी पुस्तक का मूल्य ५।) सुनहरी अक्षरों की जिल्द वाली ५॥।)

(२) संक्षिप्त महाभारत—अनावश्यक भाग छोड़कर महाभारत मूल और इसका हिन्दी उल्था दोनों इकट्ठे छप रहे हैं। अनुवाद बड़ा सरल सरस और स्पष्ट हुआ है।

आदि पर्व मूल्य १॥=) सभापर्व मूल्य ॥=) वनपर्व और विराटपर्व मूल्य १॥) उद्योगपर्व ॥।) भीष्मपर्व)

(३) द्रौपदी का पति केवल अर्जुन था—

वैदिक-आदर्श

मानुष जीवन जिस सांचे में ढलने से सर्वांगपरिपूर्ण जीवन बनता है। जिस चालपर चलने से मनुष्य के लोक परलोक दोनों सुधरते हैं, इस के लिए वेदमन्त्रों में जो कुछ बतलाया है, उसी का संग्रह इन निबन्धों में किया गया है। इसी से इनका नाम वैदिक-आदर्श रक्खा है। यही हमारे बड़ों के सामने जीवन का आदर्श हुआ करता था। इसी आदर्श ने उनमें वह ब्रह्मर्षि और राजर्षि उत्पन्न किये थे, जिन के पावन जीवन अब भी हमारे जीवनों को पवित्र बनाते हैं, अतएव इस आदर्श को हमें सदा अपने सामने रखना चाहिये, ताकि हमारे जीवन के सामने भी कोई उच्च आदर्श हो, जिस पर पहुंचने की हम चेष्टा करें, केवल जीवन के दिन ही पूरे करके न चलें, किन्तु जीवन देकर और जीवन लेकर यहां से चलें।

पहला आदर्श

आरोग्य, बल और आयु

आदर्श अच्छे से अच्छे नमूने का नाम है । अच्छे से अच्छा शरीर, शरीर के लिये आदर्श है, अच्छे से अच्छे इन्द्रिय, इन्द्रियों के लिये आदर्श हैं, अच्छे से अच्छा आत्मा आत्मा के लिये आदर्श है। हमारे पास शरीर इन्द्रिय और आत्मा तीनों हैं, हमारा धर्म है, तीनों को बलवान् बनाएं। तभी हमारा जीवन सर्वांगपूर्ण होगा, अन्यथा नहीं। जिस के शरीर में बड़ा बल है, इन्द्रियों में भी बड़ी शक्ति है, पर आत्मा में आत्मबल नहीं, झूठ बोलता है चोरी करता है, तो उसका शारीरिक बल और इन्द्रियों की शक्ति किसी काम की नहीं, क्योंकि उन के होते हुए भी वह अपने पापों के कारण अपनी निन्दा सुनेगा, विपत्तियों में पड़ेगा और दुःख उठाएगा, वह ऐसे अनिष्टों में पड़कर मनुष्य की पूर्ण आयु को नहीं भोगेगा। एक और पुरुष है, जिसकी बुद्धि बड़ी तीव्र है, पढ़ने लिखने में दिन रात लगा रहता है, बड़े २ सूक्ष्म विषयों को सोचता है, हृदय भी विशाल है, धर्म में दृढ़ है, पर शारीरिक पारि-

श्रम कुछ नहीं करता, न व्यायाम करता है, न भ्रमण करता है, न ही कोई और शारीरिक परिश्रम करता है। उस पुरुष की पाचनशक्ति घटजाएगी, रोग अनायास दबालेंगे। अतएव वह विद्या और धर्मभाव होते हुए भी अन्न और फलों के भोगों का पूरा रस भोगेगा. रोगों में ग्रस्त रहेगा, यौवन में बूढ़ा होगा, बूढ़ा होने में पहले मरेगा। भुजाओं में बल नहीं, तो आपड़ने पर अपनी वा अपनी पत्नी और ब... की रक्षा नहीं कर सकेगा। अतएव शरीर इन्द्रिय आत्मा इन तीनों में से किसी की उपेक्षा नहीं चाहिये, तीनों को एक समान बलवान् बनाना तभी लोक परलोक दोनों एकट्ठे सुधरते हैं, यही वेद हमारे सामने रखता है:—

वाङ् म आसन् नसोः प्राणश्चक्षुरक्ष्णोः कर्णयोः। अपलिताःकेशा अशोणा दन्ता बाह्वोर्बलम् ॥ १ ॥ ऊर्वोरोजो पादयोः। प्रतिष्ठा अरिष्टानि मे सर्वा त्मा भृष्टः ॥ २ ॥ (अथर्व १९। ६०)

मेरे मुख में वाणी (हो*) नथनों में सांस, आंखों में
ष्टि, कानों में श्रुति (सुनने की शक्ति) बाल श्वेत न हों,
न्त काले न हों, भुजाओं में बड़ा बल हो, ॥ १ ॥ रानों
शक्ति, जंघों में वेग, पाओं में खड़ा होने की शक्ति (हो)
रे सारे अङ्ग नीरोग (हों) और आत्मा परिपक्व (बल-
ान् और तेजस्वी) (हो) ॥ २ ॥

संवर्चसा पयसा संतनूभिरगन्महि मनसा
शिवेन । त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायोऽ-
माष्टुं तन्वो यद्विलिष्टम् ॥ (यजु० २ । २४)

हम तेज से, शक्ति से, (काम करने के समथ) अंगों
। और कल्याणकारी मन से संगत हों, परमात्मा जो

---

* यहां 'मुख में वाणी' इतना ही पाठ मन्त्र में है, वाक्य
रा करने के लिए ऊपर से 'हो' भी लग सकता है, 'है' भी
ग सकता है। ईश्वर से प्रार्थना करने में या मन की ऐसी
ारणा करने में 'हो' का अध्याहार युक्त है, और आत्म-
श्वास दिखलाने में 'है' का अध्याहार उचित है। ऐसी
ार्थना और धारणा भी उचित है, और अपने ऊपर ऐसा
रोसा होना भी उचित ही है॥

(शरीरों का) घड़ने वाला और बड़ा दानी है, वह मेरे शरीर की न्यूनता को पूरा करे और ऐश्वर्य की पुष्टि करे ॥

इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे। पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमन्हाम् ॥

हे इन्द्र हमको सब प्रकार के श्रेष्ठ धन, दक्ष (होशयार) पुरुष की समझ, सौभाग्य, ऐश्वर्य की पुष्टि, अंगों की अरोगता, वाणी की मिठास और दिनों की अनुकूलता दे ॥

इत्यादि मन्त्र हमारे सामने यह आदर्श रखते हैं कि हमारे शरीर का अङ्ग २ अरोग और बलवान् हो, कर्मेन्द्रिय कर्म करने में और ज्ञानेन्द्रिय ज्ञान देने में समर्थ हों, और आत्मा बलवान् हो। यदि हमारा शरीर और इन्द्रिय अरोग और बलवान् हैं, तो हमें यह यत्न करना चाहिये, कि आत्मबल से भी बलवान् हों, और विद्यावान् और बुद्धिमान् भी हों। यदि हमने अपने मस्तिष्क में पढ़ २ कर बहुत सा ज्ञान भर लिया है, तो हमें आत्मा

में धर्म और शरीर में बल भी बढ़ाना चाहिये, यदि हम धर्माचार्य भी हों, तो भी हमें अपने शरीर और इन्द्रियों को बलवान् अवश्य बनाना चाहिये। जो किसी एक भी बल की उपेक्षा करता है, वह पापी है, उसका आचरण वेद-विरुद्ध ही माना जाएगा, जो जितने अंश में दुर्बल है, वह उतने अंश में परमात्मा का अपराधी है, क्योंकि उसने परमात्मा की दी हुई दात में से एक की पूरी रक्षा नहीं की प्रत्युत अनादर किया है, दुर्दशा की है। हां जिसका शरीर मस्तिष्क और हृदय तीनों उन्नत हैं, वह पूरा पुरुष है।

श्रीरामचन्द्र जी जैसे हृदय के विशाल थे, वैसे ही विद्या में भी प्रवीण थे। प्रसिद्ध शूरवीर रावण के साथ युद्ध करने में जहां उन्होंने अयोध्या से सेना इसलिये नहीं मंगाई, कि उस राज्य को १४ वर्ष के लिए वह छोड़ चुके हैं, वहां उन्हों ने उसी समय एक और ही प्रबलशक्ति को अपने साथ मिला रावण से बदला भी पूरा ले लिया, यह उनके अद्भुत बुद्धिकौशल का उदाहरण है। उनकी भुजाओं में बड़ा बल था, यह तो ताटका और सुबाहु के मारने, धनुष तोड़ने, दण्डक के कई राक्षसों को मारने, महाशूर कुम्भ-

कर्ण और रावण को द्वन्द्वयुद्ध में मारने से प्रसिद्ध ही है। उनके शरीर के विषय में वाल्मीकि मुनि लिखते हैं, कि, उनका शरीर ऊंचा, सिर समगोल, मस्तक तेजवाला, नेत्र विशाल, कन्धे मोटे, भुजाएं गोडों तक लंबी, छाती विशाल सारा शरीर शेर के शरीर की तरह गठा हुआ था। ऐसे ही श्रीकृष्ण, अर्जुन युधिष्ठिर भीष्म आदि थे। यही आदर्श इन मन्त्रों में बतलाया है ॥

सारांश यह है, कि शरीर के हरएक अंग, हरएक इन्द्रिय, मन और आत्मा को एक समान हृष्टपुष्ट बलवान् फुर्तीला बनाना, और सदा स्वस्थ बनाए रखना हमारा धर्म है, इस लिए जैसे आहार आचार व्यवहार से हमें यह फल प्राप्त हो, वही आहार आचार व्यवहार धर्मानुकूल हैं, और जिन से इससे उलटा फल हो, वह पाप हैं। यदि हमारी जीविका शारीरिकश्रम पर है, तो हमें प्रतिदिन समय देना चाहिये विद्या और धर्म की वृद्धि के लिए, और यदि बुद्धिसाध्य है, तो हमें प्रति दिन खेल व्यायाम और भ्रमण करना चाहिये, घर के श्रमसाध्य काम अपने हाथ से करने में कभी लज्जा नहीं करनी चाहिये। जो बुद्धिजीवी नर नारी घर

के काम काज अपने हाथों से करते रहते हैं, उनका शरीर अरोग रहता है, दूसरे घाटे में रहते हैं। सर्वथा बुद्धिजीवियों को, शरीर को भी फुर्तीला, दृढ, बलवान् बनाने और सदा अरोग रखने का पूरा प्रयत्न करते रहना चाहिये। और ईश्वर भक्ति, धर्मचर्या सदाचार और सद् व्यवहार से आत्मा को बलवान् बनाए रखना चाहिये।

इस प्रकार सदा नीरोग और बलवान् रह कर हमें उतनी आयु भोगनी चाहिये, जितनी कि मनुष्य अधिक से अधिक भोग सकता है। मनुष्य की स्वाभाविक आयु सौ वर्ष की है, इससे पहले मरना अन आई मौत मरना है, किन्तु सावधानी के साथ हम सौ वर्ष से भी अधिक जी सकते हैं, यह वेद और इतिहास बतलाते हैं:—

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।

(यजु २५।२१)

हे पूजनीय देवो ! कानों से हम भद्र (भला) सुनें, नेत्रों से हम भद्र देखें, और स्तुति करते हुए हम दृढ़ अंगों से और पुत्र पौत्रादि से युक्त होकर उस आयु को भोगें, जो परमात्मा ने नियत की है (अर्थात् मनुष्य की जो परम आयु है, उस को भोगें)

मनुष्य की परम आयु कितनी है ? इसका उत्तर यह है।

शत मिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रानश्चक्रा जरसं तनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मानो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः (यजु २५। २२)

हे देवो ! निःसंदेह लगभग सौ वर्ष हैं, जिन में हमारे शरीरों को बूढ़ा करते हो, जिन में (हमारे) पुत्र (अपने पुत्रों के) पिता बनजाते हैं, सो इस हमारी चलती आयु को बीच में मत नाश करो ॥

लग भग सौ वर्ष के तो बूढ़ा होने का समय है, मरने का और आगे है ॥

वैदिक धर्मी सन्ध्या में नित्य प्रति दोनों समय यह प्रार्थना करते हैं :—

पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्

(यजु ३६ । २४)

हम सौ बरस देखें, सौ बरस सुनें, सौ बरस प्रवचन करें (शिक्षा दें)*,सौ बरस अदीन रहें, सौ बरस से आगे भी (देखें, सुनें, बोलें और अदीन रहें)

सौ बरस तक हमारी देखने सुनने और बोलने की शक्तियां बनी रहें, हम किसी बात में किसीके दीन (मुहताज) न हों, सौ बरस से आगे भी हम जितनी आयु भोगें, उस में भी हमारी शक्तियां बनी रहें, हम दीन होकर न जियें;किन्तु सदा अदीन रहकर जियें। वास्तव में जीना वही है, जो अदीन रहकर जीना है।

इत्यादि उपदेशों से यह स्पष्ट है, कि सौ बरस से पहले मरना पाप है, क्योंकि वह अकालमृत्यु है. सौ वर्ष तक

---

* देखना, सुनना, बोलना, उपलक्षण हैं, अर्थात् हमारी सारी शक्तियां बनी रहें ॥

तो अवश्य जीना चाहिये। इससे अधिक जितना जियें, वह अपनी योग्यता है।

दीर्घ जीवन के उपाय यह हैं।

(१) इसलोक को दुःखमय न समझो, किन्तु सुखमय जानकर दीर्घजीवन की इच्छा करो।

(२) हृदय में यह भाव दृढ रक्खो, कि मैं अपने आपको सदा नीरोग रखूंगा और दीर्घ आयु भोगूंगा।

(३) स्वास्थ्यकर और पुष्टि कर भोजन खाओ, शुद्ध और पाचन जल व्यवहार में लाओ, पर आवश्यकता से अधिक न खाओ न पियो।

(४) खुले वायु में रहो।

(५) पूरी और गहरी नींद सोवो।

(६) नेक कमाई से कमाओ, और सादा जीवन बिताओ।

(७) काम का सारा समय कमाई के ही अर्पण न करदो, किन्तु कमाई और समय दोनों का कुछ भाग सार्वजनिक कार्यों में अवश्य लगाओ।

(८) काम करने में कभी न झिजको, न घबराओ।

(९) दुःख निराशा और आलस्य को अपने पास न फटकने दो।

(१०) जो कुछ बीत चुका, उसकी चिन्ता मत करो।

(११) जवानी में खूब काम करो, परन्तु बुढ़ापे में आराम करो।

(१२) बालकों और युवकों से मिले जुले रहो, और कभी २ उनके खेलों में भी सम्मिलित हो।

(१३) मृत मनुष्यों का स्मरण न करो।

(१४) अपने को सदा हट्टा कट्टा और वीर युवा समझो।

(१५) सदा शान्त प्रसन्न रहो।

(१६) परमेश्वर को सदा अपने अंग संग समझो, और निर्भय रहो॥

※ ओ३म् तत्सत् ※

(४) स्वामी शंकराचार्य का जीवन चरित्र—कुमारिल-भट्ट और मण्डन मिश्र का जीवन चरित्र भी साथ है मूल्य ॥)

(५) निरुक्त—हिन्दी भाष्य सहित, वेद का अर्थ जानने के लिये निरुक्त एक कुंजी है। उसका हिन्दी भाष्य बड़ा खोल कर लिखा गया है। इस पर प्रसन्न होकर गवर्नमेंट ने पं०—राजाराम जी को २००) इनाम दिया है, ऐसे गम्भीर और बृहत् पुस्तक का मूल्य भी सस्ता है केवल ४)

(६) मनुस्मृति—इस पर भी गवर्नमिन्ट से १००)रु० इनाम मिला है। मूल संस्कृत, सरल हिंदी भाष्य, पुरानी सात संस्कृत टीकाओं के भेद, और उस २ विषय पर याज्ञवल्क्य आदि स्मृतियों के हवाले, यह सब इस में दिया है इस के पहले की मनुस्मृति एक भी नहीं छपी—मूल्य ३)

(७) बालव्याकरण—इस पर भी २००) इनाम मिला है और टैकस्ट बुक कमेटी ने मिडल स्कूलों में कोर्स रखा है ।=)॥

(८) श्रीमद्भगवद्गीता—इस पर भी पण्डित जी को गवर्नमिन्ट से ३००) इनाम मिला है, मूल श्लोक के नीचे पद पद का अलग २ अर्थ, फिर अन्वयार्थ और सविस्तर भाष्य दिया है, मूल्य २)

(९) गीता हमें क्या सिखलाती है ।)

(१) ११ उपनिषदें—परमात्मा के साक्षात् दर्शन

पाये हुए ऋषियों का अनुभव इन उपनिषदों में पढ़ो, भाषा बहुत सरस सरल और सुस्पष्ट है।

१ ईश उपनिषद्	=)	७–तैत्तिरीय उपनिषद्	।≡)
२ केन उपनिषद्	=)	८–ऐतरेय उपनिषद्	≡)
३ कठ उपनिषद्	।/)	९–छान्दोग्य उपनिषद्	२)
४ प्रश्न उपनिषद्	।)	१०-बृहदारण्यकउपनिषद् १॥=)	
५,६--मुण्डक और माण्डूक्य	।–)	११–श्वेताश्वतर उपनिषद्	।)॥
		१२–इकट्ठी लेने में	४॥)

(वेदो के उपदेश) –वेदोपदेश पहला भाग भगवान् की महिमा मन्त्रों से ।॥) स्वाध्याय—नित्य पाठ के लिये वेद के उपदेश॥।) आर्य पञ्चमहा यज्ञपद्धति पांच महायज्ञों के सारे मन्त्रों के पूरे २ अर्थ और उन पर विचार ।)॥

(दर्शन शास्त्र)-वेदान्त दर्शन–दो भागों में–पहला भाग १॥=) दूसरा भाग १॥=) योग दर्शन बड़ा खोल कर समझाया हुआ ।॥) नव दर्शन संग्रह–चार्वाक, बौद्ध, जैन न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा, और वेदान्त इन नौ दर्शनों के सिद्धान्तों का पूरा वर्णन १]

सांख्य शास्त्र–के तीन प्राचीन ग्रन्थ ॥=)

पारस्कर गृह्यसूत्र–संस्कारों की पद्धतियां, मन्त्रों के अर्थ और हवाले सबकुछ इसमें है। हरएक गृहस्थ के पास रहने योग्य १॥)

पताः—मैनेजर आर्ष ग्रन्थावलि--लाहौर

विचित्र ब्रह्मचारी

"भारतोदय" से उद्धृत

एक विचित्र निबन्ध ।

धर्मामशीन प्रिंटिंग प्रेस मुरादाबादमें
पं० शंकरदत्त शर्मा ने
छापकर प्रकाशित किया ।

प्रथम बार
२०००

सन् १९१३

मूल्य
)|||

आवश्यकीय सूचना

हमारे यहां छपाई का काम संस्कृत हिन्दी अंग्रेजी हर किस्म का काम बहुत ही उत्तम शुद्ध और साफ होता है छपाई मे भी बहुत रियायत की जाती है लेटर पेपर, कार्ड भी होता है एकबार परीक्षा अवश्य कीजिये.

निवेदक

मेनेजर

शर्मा मेशीन प्रिंटिंग प्रेस

मुरादाबाद

—:*)-:*:*:-*(*:—

दरभङ्गा प्रान्त में प्राचीन काल में एक शिवाचार्य
मिक आचार्य रहा करता था। जिसका आश्रम केलों
ी हरियाली से हरा भरा और फलों की सुगन्धित और
के सुगन्धित धुओं से ऐसा सुगन्धित होरहा था कि
कोसों तक रोग और शोक का नाम भी सुनाई न देता
था। आचार्य के आश्रम में सैकड़ों सुन्दर दूधदेनेवाली
ायें आश्रम की शोभा ही को नहीं बढ़ाती थीं किन्तु
के लिये उन्हीं से घी प्राप्त होता था।

ब्रह्मचारी दूध पीते थे, मट्ठा पीते थे, चारों तरफ़
ों जंगल गौओं के चरने का स्थान था जिस में
ानन्द पूर्वक गायें अपना पेटभरती थीं। ब्रह्मचारियों
परस्पर ऐसा प्रेम था कि भाइयों में सिवाय राम ल-
ण के कोई उदाहरण नहीं मिलता। किसी ब्रह्मचारी
दूसरे की शिकायत ही न थी, आश्रम में सिवाय
चार्य्य के न कोई अधिष्ठाता था, न अध्यापक, तिस
र भी पाँच सौ के लग भग ब्रह्मचारी विद्या प्राप्त करते
थे। प्रातः काल तथा सायंकाल की वेदध्वनि ऐसी म-
नोहर प्रतीत होती थी कि स्वर्ग सुख उसके सामने तुच्छ
था। दूर २ से आये हुये ब्रह्मचारी आचार्य की शिक्षा से

अपने राजपुत्र होने का अभिमान न था। ज़िमींदार के लड़के को अपनी ज़िमींदारी का ज्ञान न था। करोड़पति के पत्र को धनी कहलाने का कोई अधिकार न था। आश्रम में आते ही सारा भेद दूर हो चुका था। ईर्षा द्वेष और घमण्ड की आदत चकना चूर होचुकी थी। शास्त्रीय विचारों ने आश्रम वासियों से अविद्या को देश निकाला देदिया था, सत्य के दृढ़ निश्चयने झूंठका मुंह काला करके भगा दिया था। ज्ञान और वैराग्यने प्रत्येक बुराई को ठिकाने लगा दिया था। किसी प्रकार का भय न था। यद्यपि जंगल में वास था। चारों तरफ़ शेर भे-ड़िये और जंगली जन्तुओं का निवास था, परन्तु आचार्य अहिंसा व्रत में प्रतिष्ठित होचुके थे इसलिये आश्रम के अन्दर अहिंसा की प्रणाली जारी थी। हरिण और चीते आश्रम में एक साथ घूमते थे। न चीते को उसे मारने का ध्यान था, न हरिन को अपने मारे जाने का भय।। यद्यपि आश्रम में बिच्छू और साँप बहुत थे परन्तु कोई किसी को काटता हुआ न दीखताथा। सब अपने २ काम में लगे हुए थे। भिड़ तक काटने में लाचार थे। पाँचसौ ब्रह्मचारी और एक आचार्य। पढ़ाई देखो तो सब से अच्छी। कोई व्याकरण पढ़ता था कोई न्याय। कोई

अद्की पढ़ाईमें लगे थ। सारांशयह कि सब प्रकारसे ब्रह्म-चारी योग्य थे। परन्तु वाह्य आडम्बर का कोई सामान नहीं था। अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त यज्ञों के ज्ञानी इन में थे। कुण्ड आदि बनाने और हस्त क्रिया में सारे संसार में अपूर्व थे। कोई ऐसा दरजा न था कि जिसको किसी न किसी समय शिवाचार्य से काम न पड़े। नैपाल के महाराजा तो इन को परमपूज्य और देवगुरु मानते थे। और हर एक यज्ञ में इन आश्रमवा-सियों का होना परम आवश्यक जानते थे। महाराजा का नाम शूरसेन था। आप को धर्म के काम में ऐसी रुचि थी कि प्रायः यज्ञ होते रहते थे। इस राजा के कोई पुत्र न था। इस लिये राजा ने विचार किया कि पुत्रेष्टि यज्ञ किया जावे और अपने बड़े मन्त्री को शि-वाचार्य के पास भेजा। मन्त्री शिवाचार्य के आश्रम में प्रविष्ट हुआ और जो बात चीत हुई उसका अभिप्राय यह है।

मन्त्री—महाराज ने आप को करजोड़ कर प्रणाम करने के पश्चात प्रार्थना की है कि आप पुत्रेष्टि यज्ञ करवावें, जिस से महाराज दुःख से छूटजावें।

शिवाचार्य—आप महाराज से कहदेवें सामग्री

जावेंगे और पुत्रेष्टि यज्ञ होजावेगा यदि ईश्वर की तरफ से कर्म फल के कारण विघ्न न होवे तो अवश्य पुत्र उत्पन्न होजावेगा ।

मन्त्री—महाराज की इच्छा है कि आप इस यज्ञ में अवश्य पधारें, क्योंकि प्रजा के लोग आप के दर्शनों की इच्छा रखते हैं और आपके उपदेशों से धर्म में लोगों की रुचि बढ़ती है ।

शिवाचार्य—मैं अपने आने के विषय में निश्चय से नहीं कह सकता क्योंकि आश्रम के काम को भी चलाना आवश्यक है । यद्यपि ब्रह्मचारी अपने २ काम में लगे रहेंगे परन्तु जिस समय उनके मन में कोई शङ्का पैदा होती है उसका दूर करना आवश्यक है क्योंकि यदि शंका पैदा होजाय और उसका समाधान न हो तो सम्पूर्ण धर्म कर्म के कामों में अश्रद्धा पैदा कर देती है ॥

मन्त्री—आप अकेले पांच सौ ब्रह्मचारियों की रक्षा कैसे करसके हैं, क्योंकि जंगल है जिस में यदि ब्रह्मचारी स्वतन्त्र हैं तो उनके अन्दर विकार आना भी सम्भव है

शिवाचार्य—मैंने प्रत्येक ब्रह्मचारी के अन्दरही रक्षक रक्खे हुये हैं जो उन की रक्षा करते हैं । मुझे उनकी रक्षा की कोई आवश्यकता नहीं । आप परीक्षा

करके देखें म तो केवल दश ब्रह्मचारियों को शिक्षा देता हूं और सायं, प्रातः अग्निहोत्र के बाद उपदेश करता हूं और जो कुछ शंका पैदाहो उसका समाधान करताहूं॥

मन्त्री—महाराज मेरी समझ में नहीं आया कि आपने उनके अन्दर कौन से रक्षक रख दिये हैं क्योंकि मन में जो पाप पैदा होते हैं उनको जानने की सामर्थ्य किसी को नहीं॥

शिवाचार्य्य—जिस मन के अन्दर पाप पदा होने की सम्भावना है उस मन के अन्दर मेरे उपदेश के संस्कार बैठे हुये हैं जो पापको क्षणमात्र भी वहां नहीं ठहरने देते। प्रथम तो ब्रह्मचारियों के अन्दर व्रत के समय की शिक्षाही ऐसा प्रभाव रखती है कि उसे कोई निकाल नहीं सकता, मैं आप को अवसर देताहूं कि आप परीक्षा करें

मन्त्री—महाराज धनादि ऐसी वस्तु हैं जिनमें जीव स्वभाविक फँस जाता है। आपके सामने क्या परीक्षा कर सकता हूं परन्तु मेरा विश्वास है कि अभी ब्रह्मचारी बालक हैं इन के विचार को बदल देना कोई बड़ी बात नहीं।

शिवाचार्य्य—धनादि पदार्थ मूर्खों की दृष्टि में भले ही बड़े हों परन्तु जो लोग इनके तत्व से परिचित हैं

उनको इसकी कुछ चिन्ता नहीं होती आप अलग जाकर परीक्षा करसकते हैं।

यह बात चीत हो रही थी कि वीरभद्र नामक एक ब्रह्मचारी शौचादि के लिये जाताहुआ दीखपड़ा और मन्त्री महोदय उसके पीछे चलदिये और जब ब्रह्मचारी शौचसे निवृत होकर नदी के किनारे हाथ पैर धोकर चलने लगा तो मन्त्री महोदय सम्मुख उपस्थित हुये।

मन्त्री—आप नंगे पैर और नंगे सिर धूप के समय घूमतें हैं क्या आप को दुःखनहीं होता?

ब्रह्मचारी—दुःख और सुख तो माने हुये पदार्थ हैं। हमारे धर्म्म में लिखाहै कि जूता और छाता नहो॥

मन्त्री—आपके उज्ज्वल मुख से ज्ञातहोता है कि आप किसी उच्चकुल के दीपक हैं। फिर आप इस दशा में क्यों रहतेहैं। क्या आप के माता पिता आपको इस दशा में देखनेसे प्रसन्न हैं॥

ब्रह्मचारी—हमारी माता विद्या और पिता शिवाचार्य्य हैं। उन्होंने ही बतला दियाहै कि तप और विद्या के बिना जीवात्मा शुद्ध नहीं होता इसलिये ब्रह्मचारी के वास्ते तपकरना बहुत लाभदायकहै। हमारी दशा अत्युत्तम है फिर माता पिता इसे बुरा क्यों समझेंगे यदि हमारी दशा बुरी होती तो वे बुरा मानते।

मन्त्री—महाराज शिवाचार्य तो आपके गुरुहैं जिस से आपके शरीरको जन्म दियाहै वह पिता और होंगे। जो मुझे निश्चय है कि वह किसी बड़े देशके राजा होंगे। क्या राजपुत्र होकरभी आप इस अवस्था को अपने योग्य समझते हैं। मेरी समझ में तो यह दशा अच्छी नहीं ॥

ब्रह्मचारी—मैं इस समय द्विजहूं और मेरे पिता शिवाचार्य हीहैं। जब मैं शूद्रथा तब मेरे दूसरे पिता होंगे चाहे वे कोई हों यदि मैं राजपुत्र ही हूं तौ भी मेरे वास्ते तप बहुतही आवश्यकहै क्योंकि तपके विना राजा प्रजा का पालन नहीं करसकता। और जो राजा होकर प्रजा का पालन न करे वह धर्म भ्रष्टहै। क्या आप उस क्षत्रिय को जो आरामतलब हो राजा बनने के योग्य समझते हैं मेरे ध्यान में तो वह अयोग्य है।

मन्त्री—महाराज क्या आप यज्ञमें दर्शन देंगे क्योंकि महाराज ने यज्ञ करना है जिसमें दूर दूरसे राजा महाराज आवेंगे और बहुत बड़े आनन्द से उत्सव होगा।

ब्रह्मचारी—मैं ब्रह्मचारी हूं मेरी प्रतिज्ञा है कि जब तक चारों वेद न पढ़लें। मैं आचार्य के चरणों से अलग न हूंगा। जो लोग यज्ञ कराने की विद्या जानते हैं वेही यज्ञमें सम्मिलित होंगे। मैं अभी दर्शन शास्त्र पढ़ताहूं। मेरा काम किसी उत्सव पर जाना नहीं।

मन्त्री—क्या आपको सुखकी इच्छा नहीं क्योंकि प्राणीमात्र सुखकी इच्छा रखते हैं हरएक दुःखकी चीज़ से घृणाकरते हैं जिसको मैं देखकर हैरान हूं।

ब्रह्मचारी—जिसको सुखकी इच्छाहो उसको विद्या नहीं आसकती और जो विद्यार्थी ह उसको सुख नहीं होसकता। यदि सुखकी इच्छा होतो विद्याको छोड़दे। और यदि विद्याकी चाहनाहो तो सुखको छोड़दे। मेरी समझमें जो सुखको छोड़कर विद्याको पढ़ताहै वह सुख को बोरहा है और जो विद्या को छोड़कर सुखको चाहता ह वह दुखको बोरहा है।

मन्त्री—महाराज! यह तो प्रसिद्ध कहावतह कि जो मनुष्य उपस्थित को छोड़कर अनुपस्थितकी चाहना कर-ताहै वह न्याय के विरुद्ध है।

ब्रह्मचारी—अभिप्राय यह है कि जितना उपस्थित हो यदि उतने को छोड़कर दूसरे उतने की ही इच्छाकी जा-वे तो निःशंक न्याय विरुद्ध है। परन्तु थोड़ा बीज बोकर अधिक नाजकी चाहना करना तो साधारण जनों में भी देखाजाताहै। और खेती की शिक्षा देकर वेद ने भी इस नियम की पुष्टिकी है। और यह तो स्पष्ट अक्षरों में मान लियाहै कि विद्वान् लोग परोक्षसे प्रेम रखतेहैं और प्रत्य-क्ष से घृणाकरते हैं क्योंकि ब्रह्म आदि कारण चीजें अ-प्रत्यक्षही हैं

मन्त्री—आगे आनेवाली अवस्था का किसे विश्वास होसकता है और जो प्रत्यक्ष नहीं उनको कैसे मान लिया जावे।

ब्रह्मचारी—प्रत्यक्ष पर विश्वास करना बुद्धिमत्ता नहीं। क्योंकि जिन आंखोंसे देखकर हमने चीजों को मानना है पहिले तो वे आखें इन्द्रियों से नहीं जानी जातीं फिर जिसमन से हमने विचार करना है वहभी प्रत्यक्ष नहीं होता। पस जब इन्द्रियां और मनही प्रत्यक्ष नहीं तो उनको न मानना चाहिये। उनके न मानने से प्रत्यक्ष कैसे होगा यदि इन्द्रियों को विना प्रत्यक्ष उनके कामोंसे मानोगे तो यह सिद्धान्त जातारहेगा कि जोवस्तु प्रत्यक्ष है वह वस्तुहै अन्य नहीं।

मन्त्री—अगर इसी तरह प्रत्यक्ष के बिना भी चीजों को मानाजावेगा तोबहुतसी ऐसी चीजेंहैं जो वस्तुतःनहीं हैं और किसी मत वालोंने मानलीहैं माननी पड़ेंगी क्यों कि उन के न मानने में कोई कारण नहीं॥

ब्रह्मचारी—जो बात प्रत्यक्ष अनुमान और शब्द उपमान आदि प्रमाणोंसे जानी जावे उसको सत्ता से निषेध करना ठीकहै केवल प्रत्यक्ष के आश्रयपर निषेध करना ठीक नहीं।

मन्त्री—महाराज! आप इस उमर में अधिक बुद्धि रखते हैं अच्छे २ विद्वान् भी जिन प्रश्नों का उत्तर नहीं

देसकते आप विना विचारे ही उत्तर देदेते हैं। आप बहुत ही सत्कार के योग्य हैं।

ब्रह्मचारी—इसमें मेरी बुद्धि की वड़ाई नहीं किन्तु ऋषियोंने प्रत्येक प्रश्न का उत्तर पहिले से देरक्खा है।

मन्त्री—यद्यपि प्रत्येक प्रश्नका उत्तर ऋषियों ने दे-रक्खा है तथापि उन की पुस्तकों का जाननाभी तो वड़ी बुद्धिमत्ताका काम है। हर एक मनुष्य तो उन ग्रन्थों को समझ नहीं सकता।

ब्रह्मचारी—जब शिवाचार्य जैसा उत्तम गुरू हों तो जो विद्यार्थी न समझे उसे जड़ही समझना चाहिये आ-चार्य के पढ़ाने की रीति ही ऐसी है कि जिससे थोडे प-रिश्रमसे ब्रह्मचारी जानसक्ते हैं।

मन्त्री—कितने ब्रह्मचारी आश्रम में हैं।

ब्रह्मचारी—पांचसोसे अधिकही होंगे।

मन्त्री—इन सब को आचार्य्य किस तरह पढ़ाते हैं क्योंकि यदि १ ब्रह्मचारी को पढ़ाने में १० मिनट व्यय हों तो पांचसो ब्रह्मचारियों को पढ़ाने में अधिक समय चाहिये॥

ब्रह्मचारी—शिवाचार्य तो केवल दस ब्रह्मचारियों को पढ़ाते हैं। इसी प्रकार दूसरो श्रेणीवाले शेषों को पढ़ाते हैं।

मन्त्री—क्या सब श्रेणीवालोंकी पढाई सब की एक है या अलग अलग।

ब्रह्मचारी—उनके सब के विभाग हैं जिनकी कक्षाके अनुसार पृथक् पृथक् पढ़ाने वाले हैं॥

मन्त्री क्या इसी प्रकार दूसरों के पढ़ाने से ब्रह्मचारियों की हानि नहीं होती क्योंकि जितना समय दूसरों के पढ़ाने में व्यय कियाजाता है अगर उतना समय अपने पढ़ने में व्यय किया जावे तो अधिक पढ़ाई हो सकती है॥

ब्रह्मचारी—क्योंकि पिछला पढ़ाहुआ याद रखने के लिये पाठ करना पड़ता है इस लिये जो समय पाठ करने में लगता है वही समय पढ़ाने के लिये दियाजाता है जिससे पिछला पढ़ाहुआ भी अच्छी तरह याद रहता है पाठ करनेकी अपेक्षा पढ़ानेसे अधिक योग्यता बढ़ती है इस वास्ते यह ढंग बहुत ही अच्छाहै इससे समय की बहुतही कम हानि होती है॥

मन्त्री—महाराज मैं आपकी कोई सेवा करसकता हूं मैं चाहताहूं कि कुछ रुपया आपकी भेंट करूं (यह कहकर पांचसा मुद्रा आगे रखदेता है)॥

ब्रह्मचारी—हम स्नातक हैं हमारा काम भेंट लेना नहीं जो कुछ देनाहो आचार्य्य को जाकर दो उनकी इच्छा होगी तो लेलेंगे नहीं तो न लेंगे॥

मन्त्री—शिवाचार्य्यजी की भेंट तो यज्ञ में महाराज करेंगे ही। उनके वास्ते इतना थोड़ा धन उचित नहीं यह तो आपके सामान के वास्तेहै क्योंकि आप जैसे उच्च कुलके दीपकको मैं इस अवस्थामें देखना उचित नहीं समझता ॥

ब्रह्मचारी—मुझे नतो किसी सामानकी आवश्यकता है न मैं धनको स्वीकृत करसकताहूं। मुझे जिन वस्तुओं की आवश्यकता होतीहै वह सब आचार्य्य देदेतेहैं। मेरे जैसे पांचसौ बालक आचार्य्यके हैं सबके वास्ते एकसा सामान है हम में से कोई भी न्यूनाधिक लेना स्वीकृत नहीं करेगा अगर कोई कम लेना चाहे तो हम उन को समझायेंगे अधिक तो कोई लेना ही नहीं चाहता।

मन्त्री—क्या आप को सामान की आवश्यकता नहीं है इस जंगल में बहुत से दुःख और भय के सामान हैं क्या आप अपनी रक्षा करनेके वास्ते सामान नहीं रखते।

ब्रह्मचारी—हमारा रक्षक सर्वशक्तिमान् परमात्मा है फिर हम को किस का भय जिस से रक्षा के वास्ते सामान की आवश्यकताहो। और दूसरे आचार्य्य का योगबल ऐसा बढ़ा हुआ है कि यहां उन के प्रताप से हम को कोई दुःख नहीं देने पाता, यहां आश्रम के छोटे से छोटे जीव को भी कोई नहीं सताता।

मन्त्री—क्या आप लोगों को कभी भय नहीं हुआ।

का भय न हुआ तो न सही परन्तु मृत्यु का भय तो अचानक सब को होता है।

ब्रह्मचारी—मृत्यु का भय तो उन लोगों को होता है जो अपने उद्देश्य में सफल नहीं होते या जिनको मनुष्य जीवन को खोकर पुनः मनुष्य बनने की आशा नहीं रहती। ब्रह्मचारियों को मृत्यु का भय किस तरह हो सकता है क्योंकि ब्रह्मचारी अपने उद्देश्य में लगे हुए प्रतिदिन विद्या का दान देते और लेते हैं। यदि इस जन्म में मुक्ति न भी हो तो विद्या दान करने वाले को मनुष्य का जन्म तो अवश्य ही मिलेगा जिस से यदि इस जन्म में लाभ न भी हुआ तो हानि तो होही नहीं सकती और भय तो हानि से होता है।

मन्त्री—क्या महाराज! विद्यादान करने वालों को मृत्यु का भय नहीं होता। मृत्यु का भय तो बड़े २ राजा महाराजाओं को भी होता है।

ब्रह्मचारी—अवश्य राजा महाराजाओं को मृत्यु का भय होता है। परन्तु विद्यादान करने वाले ब्रह्मचारियों को नहीं होता क्योंकि यह तो परमात्मा का अटल नियम है जो वस्तु बोई जाती है वही काटी जाती है जो कुछ दान करते हैं वही पाते हैं बस विद्यादान करने वाले को विद्या का मिलना आवश्यक है और विद्या विना मनुष्य-

विद्यादान का फल भोगने के लिये मनुष्य शरीर में आना आवश्यक है । और जिस को मनुष्य शरीर में आने का विश्वास हो उसे मृत्यु से क्या भय ॥

मन्त्री—यदि हमें यह विश्वास होजावे कि इस जन्म के बाद फिर भी मनुष्य जन्म ही मिलेगा तो क्या हमें मृत्यु का भय नहीं रहेगा ।

ब्रह्मचारी—मृत्यु क्या वस्तु है केवल शरीर में से आत्मा का निकलना अर्थात् आत्माका शरीर से पृथक् हो जाना । शरीर और आत्मा का सम्बन्ध क्या है जो गाड़ी और सवारी का होता है गाड़ी से उतरने में सवारी को कब तकलीफ होती है जब कि मार्ग शेप रहे । यदि मार्ग समाप्त होगया हो या दूसरी गाड़ी तैयार हो तो दुःख किस बात का होता है ।

मन्त्री—यह तो आपने नई बात कही कि शरीर गाड़ी है गाड़ी के लिये तो घोड़ो की आवश्यकता होती है इस गाड़ी के कौन से घोड़े हैं ।

ब्रह्मचारी—यह नई बात नहीं किन्तु कठोपनिषद् में बतलाया गया है । आत्मा सवार है और शरीर गाड़ी इन्द्रियां घोड़े हैं मन लगाम है बुद्धि अर्थात ज्ञान कोचवान है ।

मन्त्री—यदि शरीर को गाड़ी ही मान लिया जावे तो

हैं यदि किसी की गाड़ी छीन लीजावे तो उसे दुःख होता है।

ब्रह्मचारी—ये ठीक है जिस की खास गाड़ी छीन ली जावे तो उसे अवश्य दुःख होता है। यदि किराये की गाड़ी को छोड़कर दूसरी गाड़ी पर चढ़ना पड़े तो दुःख किस बात का मनुष्य प्रतिदिन एक गाड़ीको छोड़ते और दूसरी को किराये करते हैं।

मन्त्री—क्या यह शरीर अपनी गाड़ी नहीं किराये की गाड़ी है यह तो सब को मानना पड़ेगा कि यह शरीर किसी दूसरे का नहीं प्रत्येक शरीर का स्वामी पृथक् २ है। जब शरीर किराये की गाड़ी नहीं तो इसको छोड़ने में अवश्य दुःख होना चाहिये॥

ब्रह्मचारी—शरीर को अपना मानना अविद्या है, क्योंकि यह तो ऐसे किरायेदारकी गाड़ी है कि जो मिनटों और घण्टों का विश्वास नहीं करता, यदि एक मिनटतक किराया न मिले तो कहताहै निकलो बाहर, यदि एक दिन तक पानी न दोतो कहता है निकलो बाहर, यदिचार पांच दिनतक भोजन न दो तो कहता है निकलो बाहर, ऐसे किरायेदार की गाड़ी में बैठना जो किसी अवस्था में विश्वास ही न करताहो, और उस गाड़ी को अपना मानना बड़ी मूर्खता है जो मनुष्य इस गाड़ी में बैठकर अपने उद्देश्य को पूरा न कर खाली अभिमान करते हैं वे बुद्धिमान् नहीं हैं।

मन्त्री—इस शरीर का अभिमान तो बड़े २ पण्डित और आचार्य्यों को है, वे इसी शरीर के अभिमान पर हजारों मत पैदा करके अपने २ विचार फैलाने और भिन्न विचार वालों को मथने का प्रयत्न करते हैं।

ब्रह्मचारी—यह बात झूठ है कोई भी आचार्य्य अपना मत नहीं फैलाता और न शरीर का अभिमान ही करता है, आचार्य्य वह कहलाता है जो वेदशास्त्र तथा उपनिषदों के द्वारा सदाचार फैलाता है, शरीर का अभिमान करना अविद्या का अङ्ग है, भला जो नष्ट होनेवाले शरीर पर अभिमान करता है वह आचार्य्य कैसे कहला सकता है, और जो लोग भिन्न विचार वालों को युक्तियों से कायल न करके मथने का विचार रखते हैं उनको तो पश्वाचार्य्य कहना चाहिये।

मन्त्री—यदि शरीर को अपना न माना जावे तो इसकी रक्षा किस प्रकार हो सकती है और बिना रक्षा के इसका निर्वाह होना कठिन है॥

ब्रह्मचारी—मैं पहिले बता चुका हूं कि शरीर गाड़ी है गाड़ी के साथ दो प्रकार का अभिमान होता है एक तो गाड़ी का साईस है, जो गाड़ी को अपना बताता है एक रईस भी गाड़ी को अपना कहता है इन दोनों के अभिमान में बहुत भेद है॥

मन्त्री—साईस का गाढ़ी के साथ कैसा सम्बन्ध होता है और रईस का गाड़ी के साथ क्या सम्बन्ध होता है॥

ब्रह्मचारी—गाड़ी के घोड़ों को खूब चराना और गाड़ी को खूब धोना ही अपना कर्त्तव्य समझता है, ऐसे ही जो मनुष्य इस शरीर के साईस हैं वे इन्द्रियों को जो इसगाड़ीके घोड़े हैं विषय भुगवाना और शरीर कीगाड़ी को धोनाही अपना कर्त्तव्य समझते हैं, अर्थात् जो इन्द्रियों को विषय भुगवाने और शरीर की शोभा में लगे हुये हैं वे इस शरीर की गाड़ी के साईस हैं; वे अपने को शरीर और इन्द्रियों के लिये समझते हैं, और जो लोग इस गाड़ी के स्वामी हैं वे समझते हैं कि हमारी गाड़ी उद्देश्य को पूरा करने के लिये है।

मन्त्री—हम कैसे जान सकते हैं कि यह गाड़ी का साईस है अथवा स्वामी, क्योंकि प्रत्येक पुरुष अपने को श्रेष्ठ मानता है और दूसरों को भूल पर समझता है॥

ब्रह्मचारी—वृक्ष अपने फलों और पत्तों से पहिचाने जाते हैं और मनुष्य गुण कर्म्म स्वभाव से, यद्यपि प्रत्येक पुरुष अपने को अच्छा बतलाता है तथापि उनके गुण कर्म स्वभाव उनके असली तत्त्व को प्रगट कर देते हैं।

मन्त्री—बहुतसे मनुष्य जो नित्यप्रति सन्ध्या अग्निहोत्र आदि कर्म्म करते हैं और उनके गुण कर्म्म स्वभाव भी अच्छे प्रतीत होते हैं क्या वे धर्मात्मा नहीं! परन्तु हम संसार में उनके विरुद्धभी पाते हैं।

ब्रह्मचारी—धर्म्म के आठ काम नीतिकारोंने बतलाये हैं प्रथम अग्निहोत्र, दूसरा पढ़ाना, तीसरा दान चौथा

तप, पांचवां सत्य, छठा धृति अर्थात् धैर्य्य, सातवां क्षमा, आठवां लोभ का न होना, जो मनुष्य इस पर आचरण करते हैं वे धर्मात्मा हैं परन्तु इन में से पहिले चार काम संसार को धोका देने के वास्ते भी कियेजाते हैं बहुत से लोग दुनियां को ठगने के वास्ते अग्निहोत्र यज्ञ दान और तप करते हैं परन्तु पिछले चार केवल महात्माओं में होते हैं अर्थात् जो सच्चा है वह दम्भ से नहीं जो सर्वप्रिय और क्षमाशील है वह दम्भ से नहीं होसकता और न कोई निर्लोभी दम्भ से बनसकता है।

मन्त्री—क्या सदाचारी महात्मा झूठ नहीं बोलते।

ब्रह्मचारी—सदाचार तो वहीहै जिसमें झूठ बोलने की आवश्यकता न पड़े क्योंकि झूठ पाप के वास्ते बोलना पड़ता है पाप दुराचार है, विद्वान् मनुष्योंने झूठ को सबसे बड़ा पाप बताया है। वेद ने झूठ से आत्माकी मृत्यु बताई है, दुराचारी झूठ बोलते हैं और सारे पाप करके झूठ के कारण छिपाये जातेहैं इस लिये झूठा आदमी सब पाप कर सकता है और झूठा मनुष्य कभी सर्वप्रिय होताही नहीं वह तो मिनट में अप्रसन्न होता है मिनट में प्रसन्न, ऐसे मनुष्य जिनका कोई उद्देश नहीं उनका प्रसन्न होना भी भय का कारण है॥

मन्त्री—झूठ किसको कहते हैं (उदाहरण) एक ब्रह्मचारी प्रतिज्ञा करताहै कि चारों वेद पढ़ूंगा और वह बीचही में मरजाता है तो क्या वह झूठा नहीं !

ब्रह्मचारी—झूठ कहते है आत्मा के ज्ञान के कहने को अर्थात् एक मनुष्य जानता है कि देवदत्त सच्चा है परन्तु किसी कारण से उस को झूठा बताता है तो वह झूठा है परन्तु आगे के विषय में हम नहीं जानते इस लिये आगे के विषय में कहना झूँठ नहीं हो सकता, क्योंकि हमारी करने की इच्छा है परन्तु हमें इस बात का ज्ञान नहीं कि उससमय हममें यह शक्ति होगी अथवा नहीं क्योंकि हम सर्वज्ञ नहीं हैं, यदि हम स्वयं घर रहने की प्रतिज्ञा करें और स्वयं ही छोड़ दें तो हम अवश्य व्रत के तोड़ने के पापी हैं, यदि कोई ऐसा विघ्न आजावे कि दूरकरना हमारे सामर्थ्य से बाहर हो तो हम पापी नहीं होसकते ॥

मन्त्री—यदि हम सर्वज्ञ नहीं तो हमें कोई व्रत अर्थात् प्रतिज्ञा नहीं करनी चाहिये,क्योंकि हमें उसके पूरा करने में सामर्थ्य नहीं ॥

ब्रह्मचारी—यदि हम अपनी अल्पज्ञता के कारण व्रत करना छोड़दें तो हमारा कोई कायहो पूरा नहो, जितना हम कर सकते हैं, हमको करना चाहिये । एक विद्वान् कहताहै कि मैं ग्रन्थ बनाता हूं परन्तु मुझे विश्वास है कि व्यर्थ दोष लगानेवाले लोगहैं वे इस पर अवश्य दोष लगायेंगे यदि कोई मुझसे प्रश्न करे कि दोष लगानेवालों के भयसे पुस्तक लिखनेके कामको छोड़ क्यों नहीं देता तो मेरा उत्तरयहहै कि रातदिन देशमें चोरियाँ होती हैं

जिस प्रकार चारोंके भयको रखतेहुये लोग व्यापार आदि को नहीं छोड़ते तो मैं क्यों अपना काम छोड़दूं पस, विघ्नोंके भयसे कामको छोड़देना अधर्म है, इसी वास्ते हम व्रत करते हैं पूरा करनेवाले व्रतपति परमात्मा है ॥

मन्त्री—क्या आप इस बातको स्वीकार करते हैं कि जिस काम में विघ्न पड़े उसको किया जावे! क्यों न ऐसा काम प्रारम्भ कियाजाय जिसमें विघ्न न पड़े।

ब्रह्मचारी—संसारमें तीन प्रकार के मनुष्य हैं प्रथम वे जो किसीकामको अच्छा जानकर भी विघ्नों के भयसे प्रारम्भनहीं करते वे नीच कहाते हैं। दूसरे जो काम तो आरम्भ करदेते हैं और जब विघ्न उपस्थित होते हैं तब छोड़ भागते हैं वे मध्यम मनुष्य कहलाते हैं। परन्तु जो मनुष्य पद २ पर विघ्नों के उपस्थितहोने पर भी आरम्भ किये हुये कामको नहीं छोड़ते वे उत्तम पुरुष कहलाते हैं रहा विघ्नोंके भयसे ऐसे कामको प्रारम्भ न करना, तो संसार में ऐसा कोई काम नहीं जिसमें विघ्न उपस्थित नहो परन्तु जो लोग उनपर चढ़ना चाहतेहैं मानलो आरम्भ में दुःख होता है और जो नीचे गिरते हैं उनको अन्तमें दुःख होता है।

मन्त्री—(क्रोधावेश दिखाकर) आप के सिद्धान्त संसार से निरालेहैं, क्या आप सारे संसारको मूर्ख समझते हैं॥

ब्रह्मचारी—(शान्तभाव से) यद्यपि दुनियाँ में डेढ़ बुद्धि मानने वाले मनुष्य बहुत हैं जो पूरी अपनी मानते

है. आधा सारे संसारका समझते परन्तु मेरे किस वाक्य से यह मालूम किया कि मैंअपने को बुद्धिमान् और दूसरों को मूर्ख समझता हूं मैंने तो बुद्धिमानोंकी सम्मति बतलाई है ॥

मन्त्री—(और भी अधिक क्रोध में आकर) आप को लज्जा नहीं आती जो मेरे जैसे वृद्ध पुरुषकी बात नहीं मानते मेरी अवस्था तो आपके पितासे भी अधिक होगी। और धन लेने में आपकी हानि ही क्या है।

ब्रह्मचारी—(बहुत नम्रभाव से) महाराज हम व्रती हैं हमारे तन मन के स्वामी शिवाचार्य्य हैं हम उनकी आज्ञा के विरुद्ध कोई काम नहीं कर सकते धर्म को छोड़कर जीना महापापियों का काम है। (मन्त्रीने तरह २ से यत्न कियाकि ब्रह्मचारी लोभ में फंसजाव, क्रोध में आजावे, परन्तु ब्रह्मचारीकी शान्ति में भेद न हुआ, मन्त्री चकित था कि इस अवस्था में इतनी विरक्तता का होना विचित्र पढ़ाई का प्रमाणहै कि किसी प्रकार का इसपर असर ही नहीं होने देती] ॥ (फिर कहता है)

मन्त्री—क्या किसी उपकार के वास्ते झूंठ बोलना धर्म्म है क्योंकि किन्हीं मनुष्यों का विचार है कि जिस झूंठ से भला हो बोलना बुरा नहीं।

ब्रह्मचारी—जो पाप है वह प्रत्येक अवस्था में पापहै पापसे किसीकी भलाई होही नहीं सकती पापसे भलाई मानना अविद्या का चिन्ह है ठीक बात तो यह है कि जब किसी बड़े मनुष्य का झूंठ प्रकट हो जाता है तब वह

...झूठ वचन के लिये उसका ऐसा कारण बता देते हैं कि जिससे मूर्ख मनुष्य उस झूंठको सत्य से भी अच्छा समझते हैं ॥

मन्त्री—क्या ऐसी कोई अवस्था नहीं जिसमें झूंठ बोलना चाहिये।

ब्रह्मचारी-किसी अवस्था में भी झूंठ ठीक नहीं यदि किसी अवस्था में झूंठ अच्छा होता तो आपद्धमें होनेसे महापापोंमें न गिनाजाता।

मन्त्री—यदि राजाकी आज्ञा से किसीको फांसी मिलती हो और झूठ बोलने से उसकी जान बचती हो तो क्या यह झूंठ भी पाप हो सकता है।

ब्रह्मचारी—यह पाप है क्योंकि राजा जब किसी को फाँसी देगा तो या अपराधसे देगा, अथवा उलटा समझने से, निरपराधको अपराधी जानकर देगा। यदि राजा अपराध से फांसी देताहै तो उस को झूंठ बोलकर बचानेसे न्याय में दोष आजावेगा। राजा के न्यायको हानि पहुंचाना अर्थात् पापको बढ़ानाहै जो बड़ा पाप यदि उलटा समझकर देताहो तो उसके वास्ते झूंठकी आवश्यकता नहीं वह सत्य से बचसक्ता है।

मन्त्री—यदि एक गाय जातीहो और उसके पीछे वध करनेवाला जाता हो तो सच बतलाने से तो गाय मारी जाती है और झूंठ से गाय बचती है तो क्या यह झूंट भी सत्य होसकता है।

ब्रह्मचारी—ऐसे समय के वास्ते मनुजीने पहिले ही

उपदेश कर दिया है कि न तो विना पूछे बताये नहीं, अन्याय से पूछी हुई बातका उत्तर दे, उत्तर देना ही आवश्यक नहीं। झूठ बोलना सरासर पाप है।

मन्त्री—महाराज यदि पूछने वाला बलवान् हो और न बतलानेसे अपनी जान जानेका भय हो तो क्या करे उस समय तो झूठ बोलना पाप नहीं होसकताहै क्योंकि, उस समय अपनी और दूसरे की रक्षा होती है।

ब्रह्मचारी—पहिले तो कोई मृत्यु से पूर्व मारही नहीं सकता, दूसरे ऋषियोंने पहिले ही यह नियम स्थिर कर दिया है कि जब दो में से एककी जान बचती देखे तो जो उपकारी हो उसको बचालेवे यदि दूसरा अधिक उपकारी होवे तो अपने को मरने दे यदि आप उपकारी अधिक हैं तो दूसरेको मरने दे। यदि दोनों समान हों तो चाहे उसे मरने दे चाहे आप मरजाय, परन्तु झूठ कभी न बोले।

मन्त्री क्या दूसरे के वास्ते कोई अपने मरने को स्वीकृत कर सका है ऐसा तो कोई देखने में नहीं आता।

ब्रह्मचारी—राजा शिवी आदि अनेक पुरुष सुनेजाते हैं जिन्होंने कि दूसरे जीवों की रक्षा के लिये अपने को संकट में डाला।

ब्रह्मचारी की इन बातों को सुनकर मन्त्री महोदयको पक्का विश्वास होगया कि शिवाचार्य्य के ब्रह्मचारी ऐसे नहीं कि उनको किसी संरक्षक की आवश्यक्ताहो जहां

आचार्य्य शिक्षा देने योग्य नहीं वहाँ रक्षाकी आवश्यक ता होती है। पस, वह शिवाचार्य्य के पास . .
और बोला कि महाराज ! मैं परीक्षा कर चुका जहां
प्रकारकी शिक्षा हो वहां ब्रह्मचारियों पर बराइयों का भाव क्योंकर होसक्ताहै। यदि आचार्य्य सच्चाहै तो चारी झूठे नहीं हो सकते यदि आचार्य्य झूठाहो तो ब्रह्म चारियोंको सच्चा कोन बना सकताहै, यदि आचार्य परोप कारी है तो ब्रह्मचारी अवश्य परोपकारी होंगे यदि आ चार्य स्वार्थी होतो ब्रह्मचारियों को परोपकारी कौन बना सकता है। यदि आचार्य सर्वप्रिय है तो ब्रह्मचारी सर्व-प्रिय होंगे यदि आचार्य छिछोराहै तो ब्रह्मचारियोंको सर्व प्रिय वह कैसे बना सकताहै। यदि आचार्य सुशील है तो ब्रह्मचारी भी सुशील होंगे। यदि आचार्य अभिमानी है तो ब्रह्मचारियोंको सुशील कौन बना सकता है। जिस प्र-कारका आचार्य होगा वैसे ही ब्रह्मचारी होंगे। आचार्य सांचाहै जिसमें ब्रह्मचारियों का जीवन ढाला जाताहै। यदि आचार्य ईश्वर विश्वासी नहीं बन सकता तो ब्रह्म-चारी ईश्वर विश्वासी नहीं बनसकते, यदि आचार्य तपस्वी भी नहीं तो ब्रह्मचारी तपस्वी नहीं बन सकते यदि आचार्य दिखावट और आत्मश्लाघा को अच्छा समझता है तो ब्रह्मचारी अवश्य ही इस प्रकार के होंगे। क्या शिवाचार्य के शिष्य कभी गिरने वाले हो सकते हैं।

बृहस्पति

सिखोंके दशगुरु

सिखोंके नानक आदि दश गुरुओं का नाम नहीं सुना ! कौन हिन्दू इन महात्माओं का कृतज्ञ कौन वीर शिरोमणि गुरु गोविन्द जी और उनके सिक्खोंकी शूरता नहीं जानता ! जिस समय यह देश म्लेच्छाक्रान्त था उस समय हिन्दुओं पर जो २ विपत्ति पड़ी उन के आज स्मरण मात्र से रोमांच हो आते हैं ! एवं विकट समय में, विपरीत काल में, कठोर शासकों के शासन में सिक्ख गुरु मोदयों ने किसप्रकार अपने जीवनकी आहुति देकर महान् यज्ञद्वारा हिन्दूजातिका इष्टसाधन किया यह हर हिन्दुको ज्ञातव्य है। इसलिये हमने उन्हीं धर्म्म गुरु उन्हीं प्रतापी उन्हीं वीरचक्र चूडामणि नानकादि दशगुरुओं का जीवन चरित्र सबके सुभीते के लिये मुद्रित कराया मूल्य ॥) मात्र रक्खा है।

नोट। और भी हमारे यहां उत्तम उत्तम जनोंके चरित्र और आर्य्य धर्म सम्बन्धी पुस्तकें मिलसकती हैं बड़ा सूची पत्र मगाँकर देखो।

ओ३म्

नव युवको उठो !

अर्थात्

हिन्दु आर्य नव युवकों को धर्मपर चलने के लिये प्रेरणा की गई है

ट्रैक्ट नं. ६

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वतीजी कृत

जिसको

पं० शंकरदत्त शर्मा ने

अपने शर्मामशीन प्रिंटिंग प्रेस मुरादाबाद में

छापकर प्रकाशित किया ।

प्रथम वार
१०००

मूल्य)॥

"नवयुवको उठो,, ??

जाति के प्रति सहानुभूति रखने वालो! देश हितैषियों !! धुरन्धर विद्वानो तथा बुद्धिमानो !!! आर्यावर्त के नवयुवको उठो। आज सम्पूर्ण देश तुम्हारी ओर टकटकी लगाये हुए है जिस प्रकार कि ग्रीष्म ऋतु में प्रत्येक मनुष्य तथा पशु बादल को देख कर पूर्ण आशा करते हैं कि अब यह बरस कर हमारी तपन को हरेंगे देश, को जलसे सींचेंगे तथा कृषि को लाभ दायक होंगे—सारांश यह है कि हमारी सम्पूर्ण आशायें पूर्ण करेंगे इसी प्रकार सारे देश की आखें आप की ओर लग रही हैं आप नवयुवक हैं, शिक्षित हैं, तथा देश की आवश्यकताओं से विज्ञ हैं, और पूंजी भी आप के पास बहुत है ऐसी दशा में भी यदि आप देश की सहायता न करेंगे तो मेघों के न बरसने से जो निराशा देश पर छाजाती है वही दशा हमारी होगी। क्या आप स्वीकार करेंगे कि जिस देश के रुधिर से आप उत्पन्न हुए, जिस देश के अन्न जल से आप पोषित हुए जिस देश ने आप को हर प्रकार की सहायता दी जिसकी अपकीर्ति से आप की अपकीर्ति और जिस की कीर्ति से आपकी कीर्ति

होती है आप इतने शीघ्र ही इसकी कृतघ्नता करेंगे इसको नष्ट होता देखेंगे और इसके रोग की चिकित्सा न करेंगे एवं अपनी योग्यता रूपी पूंजी को देश की आवश्यकताओं के लिये न खर्च करेंगे? नहीं! नहीं! आप से यह आशा हमें कदापि नहीं होसकती आप प्रत्येक के अवयव में भारतीय रक्त भरा है जिस भारतीय रक्त के कारण इस देश की स्त्रियों ने राजा जयपाल को युद्ध के समय अपने आभूषण गलागला कर भेजे थे क्या आप शिक्षित पुरुष हो कर उन स्त्रियों से भी पीछे रहेंगे? कभी नहीं? हमारी बुद्धि देश की निराशा को देख कर चकित है कि इतने भारतीय नवयुवकों के होते हुए भी यह देश इस अवस्था को प्राप्त होजावे। बाहर से ईसाई लोग आकर यहां अस्पताल और स्कूल (पाठशाला) खोलें आर्य्य हिन्दू और मुसलमानों को गुलामों की भांति मोललें, हमारे देश के २५लक्ष मनुष्य ईसाई होजावें। नहीं नहीं! इस धन के पलटे जो विदेशी उठाते हैं आप के इतने भाई बिकजावें। और हमें शोक नहो! भारत के बड़े २ धनवान दूसरों के दान से काम चलावें, और हमें लज्जा न आवे। भारतीय लोगों के विचार भारतीय से बदल कर विदेशी होजावें, और हमें क्लेश नहो?

जाओ, परन्तु उन का कोई सहायक नहीं ! नाटकों और रण्डी भड़वों के नृत्य एवं मदिरा आदि में लाखों रुपये व्यय होजाँय परन्तु जाति के प्रति सहानुभूति और देशी भावों के प्रचारार्थ एक पैसा भी न उठाया जाय।

प्रिय नवयुवको ! भारत के प्राचीन मनुष्य समय के हेर फेर से पुरुषार्थ हीन होगये, वे बहुत बातों में असमर्थ थे उनकी शिक्षा भी परिमित रही समय भी प्रतिकूल था इस कारण वे लाचार थे। उनपर दोषारोपण नहीं कर सकते। दोष आप पर लगेगा क्यों कि आप नवयुवक हैं, समय अनुकूल है, विद्या जैसी उत्तम सम्पत्ति आप के पास है, और अंगरेजी राज्यसा आजाद राज्य (स्वतंत्र राजा) आप के सिर पर छाया किये हुए है। अब उठो ! देश को संभालो !! समय का हाथ से नजाने दो !!! हे गाढ़ निद्रा में सोने वालों ! हे आलस्य में समय खोने वालों ! हे पीछे पछिता के रोने वालों। यह समय जाता है अब संभालो ! हे विद्या धन के कदर दानो ! हे जातीय गौरव के निगहवानो ! हे भारत के नौ जवानो ! यह समय जारहा है, अब संभालो ! हे पशुओं पर फौक वालो ! हे गुलाभी के तौक वालो ! हे आजादी के शौक वालो ! यह समय जाता है अब संभालो ! हे हिन्दू काला

अनाथ भारत डुबाने वालो ? यह समय जाता है अब संभालो ! हे ब्राह्मण क्षत्रिय कहाने वालो ! हे धर्म न कुछ कमाने वालो ! हे नीच जाति कहाने वालो ! यह समय जाता है अब संभालो ! हे मदिरा मांस के खाने वालो ! हे रण्डी भडुवा नचाने वालों ! हे कौमी इज्जत मिटाने वालों ! यह समय जाता है अब संभालो ! हे घर में लड़ २ के मरने वालों ! हे आर्य्य नामसे डरने वालों ! हे कर्म वैदिक न करने वालों ? यह समय जाता है अब संभालो ?

प्रिय नव युवको ! उठो कटिबद्ध होजावो ! यद्यपि तुम्हारी शक्ति निर्बल और प्रतिपक्षी प्रबल हैं और इस कारण नाश होरहा है परन्तु मेरे प्यारो ! साहस में वह शक्ति है कि एक मसीहने करोड़ों मनुष्यों से सिरोंको झुकवाया है १८सौ वर्ष में ४२ करोड़ मनुष्य उसके अनुयायी हुए । साहस करने वालों के लिये उदाहरण हुआ और जाति सेवकों के साहस बढ़ानेको रामबाण हुआ। बौद्ध ने अकेले ही साहस किया और ५२ करोड़ मनुष्यों के हृदय में प्रभुत्व प्राप्त किया । संसारके सब मतों को नीचा दिखाया और सच्चे वीरों का साहस बढ़ाया । स्वामी शंकराचार्य ने अकेले ही

नाश किया। राजों को वश कर लाये और शंकर का अवतार कहलाये। और जाति सेवकों का साहस बढाया। मुहम्मद साहब ने परिश्रम किया खुदा की पैगम्बरी (परमात्मा का दूत) को प्राप्त किया। संसार के महाराजों को नीचा दिखाया और जाति सेवकों को साहसी बनाया। गुरु ना-नानक साहेब घर छोड़ फकीर हुए और हिन्दुओं के गुरू तथा मुसलमानोंके पीरहुए। जिनके मतमें गुरू गोविंद सिंह साहब बड़े वीर हुए। सभ्यता को दिखाया और पंजाबको मुसलमानों के अत्या-चारसे छुड़ाया। धर्मपर अपने प्राणदिये पर जातिके प्राण बचा लिये। संसार में वह गौरव प्राप्त किया जो किसी मनुष्य को न मिला, और न किसी स-म्राट को प्राप्त हो सकता है, 'सच्चे बादशाह का नाम पाया और जाति सेवकोंका साहस बढ़ाया।

दूर क्यों जाते हो थोड़े ही वर्ष हुए स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने भारत को अविद्या से से भरपूर देखकर अपने जीवन को इसकी उन्नति में लगाया, हिन्दुस्तानसे इसे आर्य्यवर्त बना दिया और वैदिक धर्म्म को देश में फैला दिया तथा -मान और ईसाई जैसे प्रति पक्षियों को द्व

लाखों आर्य्य हुए, कालिज और स्कूल खुले और अनाथालय बनगये, सारांश यह कि श्रम का पूरा फल पाया हमें परिश्रम करना सिखाया और प्रत्येक का साहस बढ़ाया।

अय नवयुवको! यह कतिपय उदाहरण आपके सन्मुख रक्खे गये हैं, वह सब हमारी तुम्हारी भांति एक दिन जन्मे। जातीय भाव ने इन्हें उभारा सत्य साहस इनका सहायक बना और फिर आज पीर पैगम्बर और महर्षि बन गये। इसीप्रकार यदि हम सत्य भावों से प्रेरित होकर प्रयत्न करेंगे तो अवश्य सफलता को प्राप्त होंगे और एक दिन ऐसा होगा कि जाति इन पर उचित अभिमान कर सकेगी और यदिहम एक दिन इसी प्रकार इन्द्रियों के विषयों में पड़ कर पेट पालेंगे तो मरने के पीछे देश में कोई नाम न होगा और जीते जी देश में गौरव प्राप्त नहीं होगा जिस प्रकार एक गधा संसार में जीवन व्यतीत करता है और मर जाता है परन्तु कोई नहीं जानता, यही दशा एक सम्राट की होती है, जिस प्रकार कि पशु जो कुछ खाता है परन्तु थोड़े समय पीछे उसे कोई ज्ञान उसके स्वाद का नहीं रहता इसी प्रकार हमारी दशा है इस भांति हम अपने

को जाति प्रेम और धर्म के अतिरिक्त पशु के समान ही पाते हैं हम सर्वदा सुख चाहते हैं परन्तु वह हमें मिलता नहीं और हमारे सम्पूर्ण प्रयत्न व्यर्थ हो जाते हैं। इसका कारण केवल यह है कि हम अविद्या में फंसे हुए हैं, अग्नि में शीतलता और जल में उष्णता ढूंढते हैं इन्द्रियों की तृप्ति से सुख चाहते हैं राष्ट्रीय भावों को जाति उत्थान का कारण समझते हैं हमारी भूल प्रत्येक कार्य में हमें असफलता दिखाती है हमारी यह दशा है कि—दिल चाहे दिलदार को तन चाहे आराम, दुविधा में दोनों गये माया मिली न राम कहावत प्रसिद्ध है कि धोबी का कुत्ता घर का न घाट का यदि अब भी आप इन्द्रियों के विषयों में पड़ोगे तो दुख के समुद्र में गिरोगे। और कभी सुख न होगा। थोड़ी देर मृगतृष्णा के जल की भांति आप की दशा होगी हरिण की भांति प्यास बुझाने दोड़ोगे परन्तु अन्त में परिणाम दुख के अतिरिक्त कुछ न होगा, दुख उठाओगे, पछताओगे, रोओगे, चिल्लाओगे, परन्तु कोई पूछेगा भी नहीं। संसार हंसेगा मनुष्य क्या पशु तुच्छ जानेंगे उठो नवयुवको! अपने देश को जगाओ धनी हो कर देश को दूसरों का दाना खाने से बचाओ। जाति पाठशाला और विद्यालय खोलो भारतीय

पूर्वजों की बात को ताजा करो, देश के व्योपार को बढ़ाकर विदेशी वस्तुओं से हाथ उठाओ। वरन् साहस कर के यहांपर उनसे बढ़कर बनाओ। संसार भर की जातिओं के सन्मुख मुख उज्ज्वल करो। देश को नष्ट न होने दो। वैमनस्य को निकालो और ईर्षाद्वेष अपने देश से बाहर करो। धनी और निर्धन को एक दृष्टि से देखो। जाति-ऋण को पहचानो। जाति के सेवकों की कृतज्ञता मानो। देश की उन्नति के काम करो। नाम चाहने से अपना नाम न करो ऐसे परिश्रम से काम करो कि तुम्हारा कोई भाई बिजातिओं के दान से न पले-नहीं दूसरी जातियों के हाथ बिकने जाय यद्यपि इस मंजिल को दूर और अपनी शक्ति को थोड़ी जानकर आपका साहस नीचा पड़ेगा परन्तु सर्वदा इस शेर को ध्यान में रखो।

'सर शमां सां कटाइये पर दम न मारिये, मंजिल हजार सक्त हिम्मत न हारिये'! जाति के सेवको! देश के नवयुवको!! अपनी फ़जूल खर्चियों से धन बचाओ और जाति सेवा में व्यय करो, तनिकतोध्यान दीजिये! इस नगरमें कोई २ लक्ष मनुष्य रहते होंगे, इनमें से कोई २ आना के पान खाता होगा और कोई २ पैसे के और कोई

का ज्ञान [illegible] और [illegible]
दैनिक औसत मान लिया जाय तो एक दिन में ३१२५) का पान दैनिक उठता है, और यदि एक मास में एक दिन हिन्दू एकादशी व्रत और मुसलमान रोजा समझ कर एक दिन पान न खाया करें और एक पैसा प्रत्येक मनुष्य के हिसाब से जाति फंड में देदें तो एक वर्ष में ३७ सहस्र पांच सो रुपये आते हैं, इससे एक अच्छा कालिज चल सकता है, अथवा इस नगर में जो तीस सहस्र घर हैं उनमें से प्रत्येक में रसोई बनाते समय १ छुटांक चून जाति फंड में डाल दिया जावे तो यदि प्रति दिन४७मन २० सेर इकट्टा हो, अब यदि इसको ढाई रुपये मन भी बेचा जाय तो प्रतिदिन ११८॥) की आय हो, और वार्षिक आय ब्यालीस सहस्र सात सो सत्तर रुपये सात आना हुई जिसमें कालिज भली प्रकार चल सकता है यह ऐसी बात है जिनमें किसी को भार न लगे और जाति को बहुत बड़ा लाभ हो, केवल साहस की आवश्यकता है, जिस जाति में इतनी शक्ति हो और वह दूसरों का मुख जोये क्या तुम उसे निर्लज्ज नहीं कहोगे ? उठो प्यारो ! घर के झगड़ों को निबटाओ । तुम स्वतंत्र कहाते हो अतः मनको दुर्वासनाओं की कड़ी

समय है ! बुरे खेलों को दूर करो, और नाच स्वांग को बस्ते (गठरी में बाध कर टांड पै रख दो, जब समय मिलै तो जाति उन्नति के उपाय सोचो देश को संभालो, यदि अब भी आलस्य में रहोगे तो देश नाश को प्राप्त होजायगा ४३ वर्ष में देशका अन्त होगा जो इसीप्रकार लोग ईसाई तथा मुसलमान होतेगये तो उस समय आप से कुछ न बन पड़ेगा देखो प्रियवर! वह जाति जो निरी जंगली थी अपनी जाति उन्नति में लग कर पूर्ण प्रतापी होगई. और जो जातियां अबतक असभ्य हैं वह इसमें लीन हो रही हैं, उन्हें अपनी तथा देश का इतना ध्यान है कि अपने प्राण गँवाते हैं परन्तु अपनी जाति को गुलामी (परतंत्रता) एवं अत्याचार से छुड़ाते हैं, क्या आप को अपने देश के उन छोटे बालकों की कथा स्मरण नहीं है जिन्हों ने अपने धर्म के हेतु अपने प्राण दिए देश को (जिन्हों ने) जगाया, और धर्म्म को बचाया । जाति में ऐक्य का संचार किया अत्याचारियों को पराजित किया और देश हितैषियों का साहस बढ़ाया क्या आपने सच्चे भाई हक़ीक़त रायकी कथा नहीं सुनी ? क्या वह आपका भाई न था जिसने कि तेरह वर्ष की उम्र

दैनिक औसत मान लिया जाय तो एक दिन में ३१२५) का पान दैनिक उठता है, और यदि एक मास में एक दिन हिन्दू एकादशी व्रत और मुसलमान रोजा समझ कर एक दिन पान न खाया करें और एक पैसा प्रत्येक मनुष्य के हिसाब से जाति फंड में देदें तो एक वर्ष में ३७ सहस्र पांच सो रुपये आते हैं, इससे एक अच्छा कालिज चल सकता है, अथवा इस नगर में जो तीस सहस्र घर हैं उनमें से प्रत्येक में रसोई बनाते समय १ छटांक चून जाति फंड में डाल दिया जावे तो यदि प्रति दिन४७मन २० सेर इकट्ठा हो, अब यदि इसको ढाई रुपये मन भी बेचा जाय तो प्रतिदिन ११८॥) की आय हो, और वार्षिक आय ब्यालीस सहस्र सात सो सत्तर रुपये सात आना हुई' जिसमें कालिज भली प्रकार चल सकता है यह ऐसी बात है जिनमें किसी को भार न लगे और जाति को बहुत बड़ा लाभ हो, केवल साहस की आवश्यकता है, जिस जाति में इतनी शक्ति हो और वह दूसरों का मुख जोये क्या तुम उसे निर्लज्ज नहीं कहोगे? उठो प्यारो! घर के झगड़ों को निबटाओ। तुम स्वतंत्र कहाते हो अतः मनको दुर्वासनाओं की

समय है ! बुरे खेलों को दूर करो, और नाच स्वांग को बस्ते (गठरी में बाध कर टांड पै रख दो, जब समय मिलै तो जाति उन्नति के उपाय सोचो देश को संभालो, यदि अब भी आलस्य में रहोगे तो देश नाश को प्राप्त होजायगा ४३ वर्ष में देशका अन्त होगा जो इसी प्रकार लोग ईसाई तथा मुसलमान होते गये तो उस समय आप से कुछ न बन पड़ेगा देखो प्रियवर! वह जाति जो निरी जंगली थी अपनी जाति उन्नति में लग कर पूर्ण प्रतापी होगई. और जो जातियां अबतक असभ्य हैं वह इसमें लीन हो रही हैं, उन्हें अपनी तथा देश का इतना ध्यान है कि अपने प्राण गँवाते हैं परन्तु अपनी जाति को गुलामी (परतंत्रता) एवं अत्याचार से छुड़ाते हैं, क्या आप को अपने देश के उन छोटे बालकों की कथा स्मरण नहीं है जिन्हों ने अपने धर्म के हेतु अपने प्राण दिए देश को (जिन्हों ने) जगाया, और धर्म्म को बचाया । जाति में ऐक्य का संचार किया अत्याचारियों को पराजित किया और देश हितैषियों का साहस बढ़ाया क्या आपने सच्चे भाई हक़ीक़त रायकी कथा नहीं सुनी ? क्या वह आपका भाई न था जिसने कि तेरह वर्ष की उम्र

परायणता को प्रकट किया और संसार को सत्य धर्म्म का परिचय दिया जिसने उद्योगियों को साहस प्रदान किया, क्या आपने गुरू गोविन्द सिंह के पुत्रों का वृत्तान्त नहीं सुना ? यह भी आपके भाई थे, जिन्होंने कि भीतों में चिने जाकर मरना स्वीकार किया परन्तु सत्य धर्म्म को न छोड़ा, अपने प्राणों को गँवाया और वीरों में नाम पाया। कौन है जो आज उनका नाम, अभिमान पूर्वक नहीं लेता ? कौन है आज जो उनका आदर नहींकरता? जबतकसूर्य्य तथा चन्द्र विद्यमानहैं उस समय तक उनके नाम आदर एवं अभिमान पूर्वक लिये जावेंगे। यह सब आशिक्षितथे क्या अब आप शिक्षित होकर इन से पीछे रहेंगे ? यह सब बालक थे क्या आप प्रौढ़ एवं ज्ञानी होकर इनसे थोड़ी कीर्ति पर अभिमान करेंगे ? क्या आपको लज्जा न प्राप्त होगी कि आप के वह भाई जिन्होंने कि अशिक्षित और बालक होते हुए भी वह वीरता दिखाई कि समस्त देश आज उनका नाम अभिमान पूर्वक लेता है और आप शिक्षित और प्रौढ़ होते हुए भी उनसे कम विख्यात हुए ? और जाति ने आप का कोई सम्मान नहीं किया ? वे सब परतंत्र थे समय भी उनके प्रतिकूल था परन्तु फ़िर भी

उन्होंने प्राण देकर प्रेम का निबाहा। आप स्वतन्त्र हैं, धन और परिश्रम से काम ले सकते हैं, जो काम कि वे प्राण देकर ही कर सकते थे आप उसे थोड़े से परिश्रम से कर सकते हैं फिर भी आप प्रयत्न नहीं करते।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप प्रयत्न करेंगे, हाथ पांव मारेंगे और जाति की नौका को निर्धनता की नदी के पार करेंगे, अन्य जातियों के हाथ से अपने भाइयों की रक्षा करेंगे और जाति को लाभ पहुंचायेंगे, जाति सुधार से जातिमें मान्य प्राप्त करेंगे, जाति प्रेम का पालन करेंगे तथा जातीय कालिज़ (विद्यालय) बनाकर जाति को अपने समान बनावेंगे। मैं अब उस परमात्मा से प्रार्थना करता हूं कि आप के परिश्रम में आप को सहायता देवे, आप को देश की भलाई हृदय से मंजुर हो और आप समय की गति को देख-कर अपनी शक्ति के बढ़ाने का प्रबन्ध करें। नव युवको! चेत करो! वृद्ध जन तो उस कुसमय तक जो कि इस बुराई के कारण आने वाला है न रहेंगे परन्तु आपको वह अवश्य देखना होगा अतः प्यारो अपनी योग्यता का परिचय दो और ... चाल ढाल अंगीकार करो प्रियवर! यद्यपि

बहुत से भाई हमारे देश की उन्नति में दम भरते हैं परन्तु अपनी रीति भांति नवीन शैली की बनाते हैं। वे कदापि सफलता को प्राप्त नहीं हो सकते हैं; वे देश की उन्नति के पलटे में अवनति करते हैं, क्योंकि देश की उन्नति क अर्थ यह है कि व्यौपार बढ़े, देश की रीति भांति अपने ढंग पर रहैं, देश के वासियों में पूरा २ ऐक्य हो और प्रत्येक उनमेंसे देश तथा जातिऔर राजाके नामपर प्राणदेने के लिये तय्यार हो, देशके कला कौशलमें उन्नति हो और देशकी भाषा में प्रत्येक विषय की आवश्यक पुस्तकों की रचना हो, यावत् देश वासी अपने देशकि ही प्रत्येक वस्तुको न अच्छा समझें और अपने भावोंको विदेशी चालढाल एवं रीति भांति से सुरक्षित न रक्खेंगे तावत् देशकी उन्नति तथा; अपने परिश्रम की सफलता के स्वप्न में भी दर्शन न करेंगे। उठो नव युवको! एक दमसे विदेशी वस्त्र पहनना त्यागदो और विदेश की समस्त वस्तुओं को घृणा की दृष्टि से देखो। जिस समय देश की आवश्यकतायें बढ़ेंगी उस समय प्रेमी भी उत्पन्न होंगे, देश स्वयं उन वस्तुओं को बना लेगा, देश की वस्तुओं में जो त्रुटि है उसे हटाने का प्रयत्न करो इसत्रुटि के कारण उसे त्यागो मत जब इस प्रकार प्रयत्न करेंगे तो अवश्य है थो

२ ५ का फा ल खुशहाल
देखेंगे आपको अपने निर्धन पंजाबी भाइयों से पाठ ग्रहण करना उचित है उन्होंने निर्धन और निर्बलता के होते हुए भी कई विद्यालय बना लिये, यद्यपि इस समय पूर्णता को नहीं प्राप्त हुए परन्तु उन की प्रणाली दिन प्रति दिन उन्नति तथा देश में कीर्ति अवश्य ही उन्हें उन-उद्देश्यों तक पहुंचावेगी आर्य्य समाज ने कालिज (विद्यालय) बनाया और बहुत सी पाठशाला (स्कूल) जैसे कि लुधियाना जमना प्रसाद स्कूल तथा बागबानपुर स्कूल आदिक बनवा लिए सिक्खों ने भी विद्यालय बना लिया और धर्म्म सभाओं ने भी लाहौर में एक हाई स्कूल खोल दिया सारांश यह कि भांति २ से भिन्न २ समाजों के मनुष्य उन्नति की प्रतीक्षा कर रहे हैं, परन्तु आप आज तक इस कुम्भकर्ण की नींद से नहीं उठे, आपको व्यर्थ के अपव्ययों से अभी तक छुटकारा नहीं मिला, आपने धर्म्म की खोज में प्रयत्न नहीं किया, कहने का तात्पर्य यह कि सर्व प्रकार से पंजाब और बंगाल से पीछे रहगये। आप धर्म की आवश्यकता तो जानते हैं यद्यपि उसके सिद्धान्तों का पूर्ण ज्ञान नहीं, आप ज्ञान वान् हो-

कर देश के सुधारने का प्रयत्न नहीं करते, उठो गुरु जनों।

मित्रो! और कुमारो! जातीय विद्यालय और पाठशाला बनवाओ, जाति के अनाथों के लिये अनाथालय बनवाओ। सारांश यह है कि अब आप का यह कर्तव्य है और आप के परिश्रम से पूर्ण हो सकता है। प्यारो उस समय तक आप प्रयत्न कर के देश के रोग की चिकित्सा कर सकते हैं जिस समय तक कि वह असाध्य न होजावे। और जब समय हाथ से निकल जायगा पछताओगे? देखिये—:

सदा दौर दौरा दिखाता नहीं।
गया वक्त फिर हाथ आता नहीं।

अभी तक आप के देश के २५ लक्ष मनुष्य ईसाई हैं मानो आप के २५ लक्ष भाई लोगों के (विदेशियों) धर्म के गुलाम होगये हैं। जो कुछ हुआ सो हुआ अब आगे आप इन्हें प्रयत्न करके बचाइये।

॥ ओ३म् शम् ॥

॥ ओ३म् ॥

शिवजी की पूजा ।

मित्रो ! समझ बूझकर पूजा किया करो ॥

जिसको

भगवान आ० धर्मप्रचारक मुफ्त बाँटनेको

प्रकाशित किया ।

सृष्टि सं० १९७२९४९०१२

प्रथमवार ५००० प्रति

सं० १९६८ वि० । दयानन्दी संवत् २८

Printed by P. Shankar Dutt Sharma
at the Dharm Diwakar Press
Moradabad.

ओ३म्

॥ शिवजी पूजा ॥
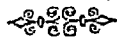
काल चक्रने ऐसा पलटा खाया है और अविद्या ने वह दिन दिखाया है कि लोगों को शत्रु और मित्र का भी ज्ञान न रहा उस से धर्म की आड़ में जो कुछ स्वार्थी जनों ने कहा वह उसी को ईश्वर वाक्य मान बैठे, चाहे वह उस को संसार में मुख दिखाने योग्य न रक्खे ॥

पवित्र वेद जैसे संसार में सच्चे व सब से प्राचीन धर्म को भूलकर शत्रुओं के बनाये हुए कल्पित और गपड़गंड से भरे हुए गप्प १८ पुराणों को अपना धर्म मानलिया इतना ही नहीं किन्तु उनकी प्रतिष्ठा व मान उससे भी अधिक करदिया। इस से बढ़कर और अधिक खेद की क्या बात होगी ॥

"शिव" जो ईश्वर का पवित्र नाम है, उस के लिये व्यभिचारियों ने वे २ झूठे किस्से कहानी जोड़ दिये हैं, कि जिनका वर्णन करते लज्जा आती है, लिखते हुए लेखनी थर्राती है परन्तु आज कल थोड़े से मुफ्त खोर अपनी रोटी जाती देख इस प्रकाश के समय में भी इस अखण्ड बण्ड को स्थिर रखना चाहते हैं केवल यही नहीं किन्तु वेदानुयायियों को कलङ्की व अधर्मी बताते हैं ॥

अतः सर्व साधारण को जानकार क ... ६..
शिव पुराण का अनुवाद पाठकों की भेंट करते हैं इस लिये कि सत्य और असत्य को परख और ऐसे गपोड़ों को छोड़ें ॥

शिवपुराण ज्ञान संहिता अध्याय ॥ ४२ ॥

प्राचीन काल में दारू वन में द्विजोंका जो वृत्तान्त हुआ उसे हमने जैसा सुना है वर्णन करते हैं ॥ ५ ॥ एक दारू नाम सुन्दर वन था जहां ऋषियों का वास था वे शिवके बड़े भक्त थे सदा उसी के ध्यानमें रहते ॥६॥ नाना भांति के स्तोत्रों व मन्त्रों से त्रिकाल शिवजी का पूजन किया करते और ध्यानमें लगेरहते थे॥७॥ एक दिन ऋषि जन वन में लकड़ियोंके लेनेको गये ॥८॥ तब शिवजी परीक्षा के अर्थ नील वर्ण निलित रक्तके सदृश शरीर किये बुरारूप बनाये ॥९॥ नङ्गे तेज धारण किये हुए × लिङ्ग हाथ में लिये ॥ १० ॥ स्त्रियों के हृदय को लुभाते हुए उस बनमें आये जहां ऋषि रहते थे, उनको देख ऋषिपत्नियां भयभीत हुईं ॥ ११ ॥

नोट—प्रिय पाठकगण ? देखा कि जिस वर्णनका नाम इन्होंने ज्ञान संहिता रक्खा है, वह महा अज्ञान संहिता है, क्या इस सेभी अधिक कोई बुराईकी बात होसक्ती है कि परमात्मा जो महान् पवित्र है, और

× क्या इस से बढ़कर निर्लज्जता का कोई काम हो सकता है, ऐसा काम तो अघोरी किया करते हैं।

काम क्रोध आदि गुणों से रहित है, वह ऐसा असभ्य स्वांग भर अपने उन भक्तों की स्त्रियों के संग (जो उन्हें मानते थे मानते ही नहीं किन्तु उसे पूजते भी थे) ऐसी अनुचित कार्यवाही करे जो एक अन्य पुरुष भी नहीं कर सक्ता अतः हमारी सम्मति में यह सारा कलङ्क बाममार्गियों का है जिन्हों ने जिन पातकों का उत्तरदाता बनाने के अर्थ शिव जी के माथे यह दोष लगाया। और वैसा ही उनका स्वरूप वर्णन किया। हम कदापि विश्वास नहीं कर सक्ते कि व्यास, जिनकी बुद्धि वेदान्तादि पुस्तकों से झलकती है ऐसी निर्लज्ज पुस्तक बनायें। जैसे इस समय होली के भड़वे कबीर का नाम धर बहुतसी व्यर्थ बातें बना लेते वैसे ही वेदधर्म के शत्रुओं ने महर्षि व्यास का नाम रख शिव पुराणादि रच लिये हैं। ऐसा कौन सनातनी होगा जिसे अपने परम पिता शिव पर यह कलंक देख लज्जा न आवेगी।

वे स्त्रियां घबड़ाईं व आश्चर्य्यित हुईं परन्तु फिर आये पुरुष को देख हर्ष से वह ऋषियों की स्त्रियां हाथ में हाथ मिला आपुस में + आलिङ्गन करने लगीं।१२। इतने में ऋषि लोग आगये ॥ १३ ॥ और महादेवजी के अनुचित व्यवहार को देख दुःखी हुए क्रोध से विक्षेप हो कहने लगे "यह कौन हैं" ॥ १४ ॥ जब शि-

---

+ विचारे ऋषियों की स्त्रियों पर भी कलङ्क लगादिया क्या ऋषि पत्नियां ऐसी ही होती हैं ॥

है" ॥१४॥ जब शिवजी कुछ न बोले, तब ऋषियों ने शाप दिया कि तुमने बुरा कर्म किया ॥१५॥ तुम्हारा लिङ्ग कट के गिर पड़े इतना कहते ही लिङ्ग तुरन्त पृथ्वी पर गिरपड़ा ॥ १६ ॥

❀ नोट—हमें इस पर नोट लगाते लज्जा आती है न्याय प्रिय पाठक स्वयं समझ लें पौराणिक भाइयों ! क्या आप ऐसे गपोड़ों को वेदों का ज्ञान बताते हैं। आप की व आपके चेलों की बुद्धि प्रशंसनीय है।

उस लिङ्गने उन सब पदार्थों को जो उसके सन्मुख थे (१) अग्नि की नाईं भस्म करदिया। जहां जहां वह लिङ्ग गया वहां २ वैसे ही जलाता चला गया ॥१७॥ पाताल, स्वर्ग, पृथिवी आदि सब स्थान जलाता (२) उछलता, कूदता किसी स्थानपर स्थित न हुआ ॥१८॥ तब सबजन विकल होगये और वे ऋषि भी दुःखी हुए, कहीं पर ऋषियों व देवताओं को सुख न मिला ॥१९॥ तब वे देवता व ऋषि जो दुःखी हो रहे थे, और जिन्हों ने शिवजीको नहीं (३) पह-चाना था सब ब्रह्माके पास गये ॥२०॥ और सब हाल

---

(१) शिवलिङ्ग क्या कोई बला या दियासलाई का डब्बा था ॥

(२) इसने तो ....को भी मात किया।

(३) पौराणिक भाइयो ! तुम तो देवताओं को अन्तरयामी बताते हो और तुम्हारा पुराण ना समझ।

ब्रह्मा से कहा। ब्रह्मा ने उनके बचन सुन के कहा कि ॥२१॥ तुमने जान बूझ के + दुष्कर्म किया, अब जो अज्ञान से कुकार्य करै उसको क्या कहाजावे ॥२२॥ हे देवताओ! शिवजी को क्रोधित करके कौन सुखी रह सक्ता है ॥२३॥ जो दूर से आये हुए को अतिथि सत्कार नहीं करता, उसके जितने सुकर्म हैं, उनको तौ वह लेजाता है और अपने दुष्कर्मों को छोड़-जाता है तिस पर शिवजी से अतिथि का अपमान करना थोड़ी बात नहीं॥२४॥ देखो जबलों यह लिङ्ग स्थिर न होगा तबलों जगत् में कहीं पर सुख न होगा। यह मैं सत्य कहता हूं ॥ २५ ॥ अब तुम को ऐसा करना चाहिये। जिस से यह लिङ्ग स्थिर हो यह ब्रह्माने उन से कहा तब वे ऋषि ब्रह्मा को नमः कर बोले कि अब हमें क्या करना चाहिये, आप बताइये ॥२६॥ तब ब्रह्मा बोले कि तुम पार्वती का भजन करके उसकी स्तुति करो ॥२७॥ जब पार्वती योनि के सदृश हो जाय तब तुम इस लिङ्ग को उसमें डाल देना ॥ २८ ॥

नोट—उक्त श्लोकों में जैसी कुछ अश्लील व सभ्यता विरुद्ध बातें लिखी हुई हैं, वे सब पर प्रकाशित हैं, हम अधिक नोट चढ़ाना नहीं चाहते, और

+ वाह वाह अपनी स्त्रियों का धर्म बचाना दुष्कर्म हुआ क्या वे उनको भ्रष्ट होने देते?

धर्मभक्षा के सहायकों का ध्यान आकर्षित करते हैं कि लज्जित होवें ।

प्रथम उसे प्रसन्न करो ऐसा करने से अवश्य यह लिङ्ग स्थिर होजायगा, और जगत् में स्वस्थता हो जायगी, जब ब्रह्माने ऐसा कहा, तौ वे ऋषिजन उन को प्रणाम करके ॥३७॥ शिवजी के पास गये । बड़ी भक्तिसे प्रार्थनाकी और पूजनकिया जब शिवजी प्रसन्न हुए ॥३८॥ तौ बोले, कि पार्वतीके अतिरिक्त इसलिङ्ग के धारणकरनेकी शक्ति अन्य किसीमें नहींहै, जब वह इसे धारण करे तौ यह शान्त हो जायगा, इस में सन्देह नहीं ॥३९॥ तब उन ऋषियोंने ब्रह्माको संग ले पार्वती के निकट जाके प्रार्थना की और शिव को भी प्रसन्न करके ॥४०॥ विधि पूर्वक देवता व ऋषियों ने मन्त्र पढ़के उस उत्तम लिङ्गको पार्वती में स्थापित किया ॥ ४१ ॥ तब से ही लिङ्ग पूजा चली ।

नोट—यह श्लोक ऐसे अश्लील हैं कि इनमें नोट लगाते लज्जा आती है, पर इतना अवश्य लिखे देते हैं कि संसार में ऐसा कोई मत नहीं है कि जिसने ऐसी व्यर्थ बातों को उचित रक्खा हो हबशी जो सब से मूर्ख गिने जाते हैं, वह भी कदापि निज माता पिता के लिये ऐसी कहावत नहीं मानते जैसी कि शिवपुराण वालोंने अपनी माता पार्वती पिता शिवके अर्थ गढ़ी हैं । प्यारे हिन्दुओ ! तनक दृष्टि देखो

बातों को मान के क्या आप अन्य मतावलम्बियों को अपना मुख दिखा सकते हैं ? कदापि नहीं प्यारो अब तो जागो और इन निरर्थक बातों को त्यागो। इसी कारण सहस्त्रों हिन्दु ईसाई व मुसलमान होगये व हो जायेंगे जो आप कामी व भोजन भट्टों की बातें मानेंगे ! प्रियवरो ! आप केवल वैदिक धर्मको मानों और इन को त्यगो ! लोग तुम्हें बहुत बहकायेंगे फुसलायेंगे, तुम्हारी हंसी उड़ायेंगे पर याद रक्खो कि सत्य सत्य ही है और झूंठ झूंठ ही है। इनका करना केवल रोटी के अर्थ है न कि धर्म के निमित्त, इन ऐसे २ धूर्तपन की ओर भी धूलि उड़ावेंगे शिव के ठीक २ अर्थ लीजिये शिवुकल्याणे इस धातु से शिव शब्द सिद्ध होता है "वहुल में तन्निदर्शनम्" इससे शिवधातु मानाजाताहै। जो कल्याण स्वरूप और कल्याण करनेवाला है उसी को शिव कहते हैं और यह गुण एक परमात्मा ही के हैं, अतः

शिव नाम उस निर्विकार ज्योतिःस्वरूप का है फल परमानन्द व मुक्ति चाहने वाले ऐसे कामी और ऐसे कुरुप की उपासना व ध्यान करना तो एक ओर उसे देखना भी नहीं चाहते। यह तो होली के होलियारों के योग्यहै। धन्य हैं वे जो सच्चिदानन्दस्वरूप परमात्मा के ध्यान में निमग्न रह सदा कल्याण के भागी होते हैं।

ओ३म् शम्।

* ओ३म् *

मुकद्दमे बाजी

लेखक-

श्री डा० दयानिधान जी

श्री चौ० दलीपसिंह जी रईस रहरा
ने आर्य्यसमाज गंज मुरादाबाद
को अपने व्यय से छपाकर
प्रदान किया।

पं० शंकरदत्त शर्मा ने
अपने शर्म्मा मैशीन प्रिंटिंग प्रेस
मुरादाबाद में छापा।

प्रथम १०००] १९१६ [सैकड़ा२।)मू०)।।

इस ट्रेक्ट की आमदनी धर्म प्रचार
में व्यय की जायगी।

मुकद्दमे बाज़ी

एक शहर में एक बहुत बड़े सेठ रहते थे। धन धान्य से सब तरह परमेश्वर की कृपाथी। इस भरे घरका दीपक केवल एक कन्या धनवन्ती नामकी थी, जो कुछ लाड़ प्यार धनवन्तीका न होता सो थोड़ा था। जब वह बड़ी हुई तो खूब धूम धाम से उस का विवाह किया, सेठ जी का जामात्रभाग्य वश ऐसा मिला था। कि वह फूले न समाते थे आज्ञाकारी ऐसा कि धनवन्ती भी न होगी सदाचारी ऐसा कि सब व्यसनों से रहित। कार्य में ऐसा निपुण, कि शायद सेठ जी के पुत्र होता तो भी ऐसा न होता बल्कि एक दो बात में तो वह सेठ जीसे भी बढ़ गया था। सेठ जी यदि अपनी किसी बात को सराहा करते थे तो वह उनका मृदुभाषण था, कोई उनको लाख गाली देजाय पर क्या बात कि सेठ जी के माथे पर बल पड़ जाय, चुप सुना करे और हंस कर टाल दे।

सेठ जी यदि मर्द थे तो कचहरी के थे। जो उनके पंजे में एक दफे आगया फिर क्या बात जो उन्होंने घरही कुर्क न करा लिया हो। जिसने उनसे कुछ कहा, चुप सुन लिया। परन्तु प्रातःकाल सेठ जी अपना बही खाता लिये वकील साहब के द्वार पर जा धमके। कचहरी खुली नालिश उन्हों ने दागी। अब क्या था, जब तक वह उसे इस योग्य न कर दें कि उसके

तक गालों का बदला क्या हुवा ।

सेठ जी के जामात्र इन दोनों बातों में उनसे कहीं बढ़े चढ़े थे, सेठ गालियों तक ही सब्र करते थे, जामात्र को यदि मार भी लिया जावे तो भी चूं न करें। सेठ जी घर बार ही बिकवा कर सब्र करते थे जामात्र जी मुर्दे का कफन तक न छोड़ते थे, फिर भला सेठ जी ऐसा जामात्र पाकर अपने भाग्य की क्यों न सराहना करें, यह तो जामात्र पर स्वयं न्योछावर होने को तैयार रहते थे।

दुर्भाग्य वश सेठ जी को यह सुख देखना बहुत दिवस न मिला। उनके ऋणी और काश्तकार एसे कृतघ्न निकले कि सेठ जी के इस सुखको देख न सके। सेठ जी की नम्रता का तो यह लाभ उठाया ही करते थे कि गालियां देना एक साधारण सी बात होरही थी। जामात्र जी के सीधेपने का इनाम यह दिया, कि एक दिन जब सेठ जी, जामात्र जी और एक दो नौकर गांवमें गये और रात को वहीं शयन किया तो रात्रि में विरोधी चढ़ दौड़े और दोनों को जान से मार डाला। यह ही नहीं दोनों नौकरों ने जो बचाना चाहा तो उनको भी सीधा ही न किया, बल्कि प्राणदंड देडाला चोकीदार को प्रातः काल खबर मिली वह दौड़ा हुआ थाने पहुँचा। एक दिन में चार कतल सुनकर दारोगा जी सुन्न पड़ गये।

जब यह समाचार सेठ जी के घर पहुँचा दोनों मां बेटियों ने अपना शिर पीट लिया। मां बेटी एक दिन में दोनों विधवा होगईं। सारी उमर का रोना था, कहां तक रोतीं दस पांच दिन रो पीट कर बैठ रहीं। और बात भी ठीक थी यदि रोती ही रहतीं तो इस सारे काम को कौन सम्हालता वह तो मुनीम जी बिचारे बहुत भले आदमी थे उन्हों ने इनकी बड़ी

[illegible] ही करना था । यह सब कुछ तो होना था और हुवा परन्तु हत्यारों का पता न मिला । गांव में पहले ही लोटे में नमक पड़ चुकाथा इस लिये न कोई पकड़ा गया न कुछ हुवा ।

सेठ जी के इस मृदुभाषण और शील के साथ यदि मुक़दमे बाज़ी की जवांमर्दी और तरंग न होती तो वह लम्पट कपटी न कहलाते और न जान ही से मारे जाते और सब उनकी जय २ मनाते । परन्तु इस मुक़द्दमे बाजी ने सर्वनाश करा दिया । योंतो मुनीम जी ने सब काम सम्हाल ही लिया और यह मां बेटी भी रो पीट कर बैठ रहीं ताजा घाव था दर्द किया, रोया पीटा । फिर कुछ दिन पश्चात् भूल सी पड़गई और दोनों को सब्र भी आगया घरके धन्धे सम्हालने लगीं । पर वह बात न रही दोचार वर्ष तो इस तरह बीती, इस समय में मुनीमजी भी वह पहलेसे मुनीमजी नरहे और इधर दूसरों की नज़र में मुनीम जी खटकने लगे सरगोशियां होने लगीं । किसी ने कहा अमुक तुम्हारा नातेदार है उसको रखलो, किसी ने कहा, नहीं जी वह जो हकदार है जिसको तुम्हारे बाद यह गद्दी मिलनी है उसे रखो और किसी ने कहा जब तुम्हारे कोई है ही नहीं तो तुम इन झगड़ों में क्यों पड़ो हो सारी जायदाद एक मन्दिरके नाम लिखदो और इस रुपये से एक बड़ा मंदिर और धर्मशाला बनवादो । वहां साधु सन्त महात्मा आकर ठहरेंगे तुम्हारा यश होगा । प्रति दिन यह ही विचार होने लगे इसी समय में माता जी के जी में आया कि लाओ तीर्थ यात्रा कर आवें और वह बद्रीनारायण लछमन झूले की यात्रा करनेको तैयार होगईं धनवन्तीभी साथ गई । परन्तु वहां लौटने में माता जी को ऐसे दस्त लगे कि घर

पकड़ना दुस्तर होगया। अस्तु, जैसे तैसे पहुंच तो गईं पर जीवित न रहीं और सबके देखते २ परलोक सिधारी।

जब अकेली धनवन्ती ही रह गईं तो यह विचार अब उन्हें और भी सताने लगा। मेरे तो कोई है ही नहीं। मैं अब इस जमीन रुपये पैसे का क्या करूंगी। लावो मन्दिर बनवादूं, जायदाद भी उसी में लगवा दूं तो अच्छा हो। जिसने सुना उसी ने सराहा। मंदिर, धर्मशाला बनजाय तो बड़ा पुण्य हो। सारांश यह कि धनवन्ती का यह विचार दृढ़ होही गया और उन्हों ने मुनीम जी को आज्ञा देदी। मन्दिर का बनना था कि जो लोग यह समझे बैठे थे कि धनवन्ती की आंख बन्द हुई और माल दोस्तों का, उन्हें बड़ा कष्ट हुवा; और जब किसी तरह पार न बसाई तो कचहरी में जा धमके और एक अर्जी इस बात की देदी कि यह जायदाद मौरूसी है। प्रथम तो मौरूसी जायदाद को इस प्रकार व्यय करने का किसी को अधिकार नहीं है। फिर लड़की को तो जायदाद में कोई हक़ नहीं है। जब तक यह जिये बर्ते और खिलसे।

इस अर्जी का गुजरना था कि सत्या सत्य का तो प्रश्न ही उठ गया, हमारी बात जाती रहैगी यह प्रश्न उसकी जगह आ मौजूद हुवा, बस फिर क्या था, वकील और मुख्तार पुजने लगे। दोनों पक्षवाले जब देखो वकीलों के पीछे फिर रहे हैं। कानून के हर्फ़ २ की बाल की खाल निकल रही है। और नज़ीरें देखीजारही हैं इधर करने वाले केवल एक मुनीम जी हैं क्या २ करें। दुकान देखे, बही खाता देखे, ग्राम का काम करें या मुकदमेकी पैरवी करें। बड़ी मुश्किल पड़ी पर बात के सामने सब बातें कुछ भी नहीं। दुकान का मलया मेट होजाय

मुनीम जी सब काम छोड़दें और मुकदमे की पैरवी करें। जो मन्दिर न बना तो बड़ी बदनामी होगी।

दूसरी ओर कार्यकर्ता तो बहुत थे क्यों कि किसी को अन्य काम ही न था। परन्तु रुपया न था मुकद्दमा बगैर रुपये चलता नहीं लाचार मकान गिरवी रख कर रुपया लिया और अब मुकद्मा चला। सब जज ने तो अर्जी मंजूर करली परन्तु जजसाहब ने उसे मंसूख कर दिया, मुकद्मा हाईकोर्ट पहुंचा वहां से सब जज का हुक्म बहालहो गया।

जब मुनीम जी धनवन्ती जी के पास पहुँचे और मुकद्मे का संदेशा सुनाया तो आज्ञा मिली अपील करो। कहां! लन्दन। मैं मुनीम जी ने कहा मुकद्मा लड़ते २ पांच वर्ष तो होगये। इस समयमें २० हजार तो मुकद्मे के २० हज़ार मन्दिर में और २० हज़ार का घाटा ६० हजार तो मुकद्में की भेंट हुवे। अब लन्दन जायंगे तो ६० हजार और भी लगेंगे। तो जवाब मिला कि इस रुपये का होगा क्या? इस तरह सुकार्य में तो लग रहा है. यह तो नहीं हुवा कि इन बेईमानों को तो न मिला।

लन्दन में अपील करने से धनवन्ती समझी थी विपक्षी रुपये के अभाव से हताश हो बैठेंगे परन्तु उन्हें यह खबर न थी कि यह भी एक जुआ है और यह विशेषतया भारत वर्ष में ही है जहां ऐसे मुकद्दमे बाज भी हैं जो केवल इसी लिये रुपये लिये फिरते हैं एक धनाढ्य जिसे मुकद्दमे बाजी का चस्का था विपक्षियों को मिल गया विलायत में वकील भी होगये। और दो वर्ष तक मुकद्मा भी चलता रहा। सात वर्ष के बाद धनवन्ती जी को यह पता अवश्य लग गया सब कामों में उन्हीं की मर्जी नहीं होती. जब

बनाना उनके वस में था सो बनगया पर जायदाद उसमें लगाना उनकी शक्ति से बाहर थी सो न होसका।

हताश हो कर वह इस बात पर उतारू हुई कि चाहे जो हो पर यह जायदाद अब इन लोगों को न मिले। हकदार हैं तो हुवा करें। इस लिये मुतबन्ना करने की निश्चय हुई और दूर दार का एक नातेदार लौंडा भी मिल गया।

विपक्षियों ने जब यह सुना तो जल भुन कर खाक होगये। क्रोध मनुष्य को अंधाकर देताहै उन्हेंभी भले बुरे का विचार न रहा और उन्होंने यह जी में ठान ली कि अब इलाज केवल यह ही है कि इसका खातमा कर दिया जाय। "न होगा बांस न बजेगी बांसरी"। और किसी तरह यह चुड़ैल नहीं मानेगी। बस फिर क्याथा, मुतबन्ना करनेसे पहलेहीधनवन्ती चल बसी। विषदिया गयाथा, इस कारण विपक्षी जी को प्राण दण्ड सरकार से मिला। लीजिये इस मुकद्दमे बाज़ी की बदौलत चार जान तो पहले गईं और अब यह जाने गईं सो अलग।

परन्तु क्या मुकद्दमे से निबटारा होगया? कदापि नहीं, क्यों! उधर तो अब मुतबन्ना हकदार बन बैठे और इधर इन विपक्षी जी के हकदार तैयार होगये। फिर वही जजी हाईकोर्ट और प्रीविकौंसिल की नोबत पहुंची। होना जो कुछ था हुआ तो वही। पर जायदाद जिसके पीछे इतनी मर पच हुई। अबकी दफे उसका सफाया होगया। विपक्षियों को इतनी आपत्ति के पश्चात् केवल खाने भर को जायदाद मिली धनवन्ती जी की हार्दिक इच्छा पूरी हुई परन्तु कब जब उन्होंने अपनी बात पर प्राण न्योछावर कर दिये।

धन्य मुकद्दमें बाज़ी, तुम ने कितने घर नहीं घाले॥

भारत सन्तान ! आप शायद इस दृष्टान्त को कल्पित कह कर फेंक देंगे । और जो आप में से इसे पढ़ेंगे भी वह मन घड़ंत समझेंगे । परन्तु आप यदि थोड़ी देर भी सोचें तो आप को पता लग जायगा कि आज कल मुकद्मे बाज़ी इतनी बढ़ गई है कि कचहरियों को मुकद्मे करने का समय नहीं मिलता । कचहरी के बाद कचहरी बनती चली जाती हैं परन्तु काम सिमटनेमें नहीं आता । आखिर यह जो इतने मुकद्मे बढ़ गये हैं यह क्यों । क्या तुम्हारे पूर्वज इसी भारत में नहीं रहते थे फिर उन्हें इतने मुकद्मे लड़ाने की क्यों न सूझती थी क्या वह ज़मींदारी काश्तकारी नहीं करते थे वनज व्यौहार नहीं करते थे । कौन काम था जो वह नहीं करते थे और तुम विशेष करते हो जो यदि कोई विशेष बातहै तो उसमें भी सोचने विचारने की आवश्यकता है कि वह कौन सी बात है और क्या वह ऐसी बात है जिसका करना आवश्यकीय ही है। जिसके बिए बगैर आपका काम ही नहीं चलता यदि है तो उसके लिये यह सोचना होगा कि क्या उससे कुछ लाभ भी है या नहीं,इन सब बातों को आप ही सोच सकते हैं, क्योंकि संसार में जितने भी आदमी हैं उनकी सब की हालतें जरूरतें और कार्य प्रणाली पृथक् हैं जो बात एक की है वह दूसरे की नहीं। परन्तु इसके होते भी यह बात कि जो काम हम करते हैं उससे लाभ है या नहीं सब के लिये समान है । इस कारण आप खुद विचारें कि जो बात ऐसी हो कि जिसने मुकद्मेबाज़ी को इतना बढ़ादिया उससे कहाँतक लाभ आपको हुआ । आप भारत सन्तान हैं सनातन धर्म पर जान देते हैं परन्तु अपने पूर्वजों के ऐसे अनुयाई हुए कि जहाँ न्हें एक ज़िले में भी एक कचहरी की आवश्यकता नहीं थीं, किसी को कचहरी जाना पड़ता तो सात पीढ़ी को न। . .

कट आती थी। गर्दन कटाना उन्हें मंजूर होताथा परन्तु कचहरी जाना अस्वीकृतथा। उन पूर्वजोंके नाम लेवा सनातनधर्म की मर्यादा रखने वाले तुम ही तो हो। और तुम्हारा यह हाल कि कचहरी पर कचहरी खुलती जांय और तुम्हारा काम न हो सके। इससे अधिक दुःख उन्हें क्या हो सक्ता है।

आप शायद कहें कि इस में हर्ज भी क्या है। सो लाभ तो मैंने आपसे पूछाथा, हानि मैं आपको बतलाताहूं। देखिये इन कचहरियों में जो इतना अमला है इनका खर्च कहां से चल रहा है यह सब आप की मुकद्दमें बाजी के आश्रित हैं। बैरिस्टर वकील मुख्तार यह सब आपकी मुकद्दमे बाजी की राह जूहते हैं। यह करोड़ों रुपया जो प्रतिदिन व्यय होता है। वह आपकी ही गाढ़ी कमाई का रुपया है। जिस रुपये को आप पसीने की जगह लोहू बहा कर कमाते हैं वह ही यह रुपया है जो इस तरह बेदर्दी से उठाया जाता है। अब आप विचारें यह कितनी बड़ी हानि है जो रुपया यदि आप के पास रहता तो आपके बालकों के पालन पोशणमें आपको सहायता देता और इस दरिद्रता के समय में आपके दूसरे गाढ़े समय में काम आता। जिसके लिये आपको खाने पीने पहरने में तंगी तुरसी करनी पड़ती है यह वह ही रुपया है।

दूसरी हानि जो होतीहै वह समयकी है। आप लोग जानते हैं कि आपको कितना काम रहताहै अवकाश ज़रा नहीं मिलता आप धरती माता पर अपना सर्वस्व न्योछावर कर देते हैं तब जाकर कहीं खेती तैयार होती है। शरद ऋतु की शीतल रात्रि में जब सारी दुनियां सानन्द सोती है आप लोग कुओं से अपने खेत सींचते हैं। ज्येष्ठ की कठिन गर्मी जिसमें मातायें अपने बालकों और स्त्री अपने पतियों को लू के भय से बाहर नहीं निकलने देतीं। उस समय आप बैठे हुए सर्य्य भगवान

के कोप को शान्ति से सहन करते हैं। यह सब आपत्ति सहन करते हैं जब कहीं आपकी खेती फली फूली दीख पड़ती है।

यह तो हुआ काश्तकारों के अवकाश का हाल। वणिक लोगों का इससे दुस्तर काम है। यदि एक दिन दुकान पर न बैठें तो दुकान के ग्राहक आन २ कर फिर जांय। एक दिन फिर जांय चार दिन वह न आये। दुकान का पटड़ा होजाय। उन लोगों को अवकाश कहां, फिर जो ग्रामों में रहते हैं उनको शहर के आने में एक २ दो २ दिन लग जाते हैं। और यदि कहीं गवाही शहादत में आप होते हैं तो पड़े २ आठ २ दिन व्यतीत हो जाते हैं फिर भला वह घर छोड़ना कैसे पसन्द कर सके हैं। उनका तो पटड़ा हो जाय, वह लोग तो यहां तक समय का विचार करते हैं यथा शक्ति कहीं जाना आना भी प्रसन्न चित्त से नहीं करते॥

शायद आप लोग इसे सत्य न समझेंगे। इसका मैं आपको एक उपाय बताता हूं। किसी डाक्टर से पूछिये तो वह आपको बतायगा कि प्रति दिन उसके पास ऐसे बालक आते हैं जिन्हें रोग ने घर लिया होता है या ऐसे बालक आते हैं जिनके प्रति दिन दवाई के लिये और दिखलाने के लिये अस्पताल आने की आवश्यकता है। या आंख के रोगी आते हैं जिनका यदि ठीक २ इलाज न हो तो आंख के जाते रहने का सन्देह होता है परन्तु जब उन से कहा जाता है कि रोज २ इसको अस्पताल लाओ तो उनका मुंह सूख जाता है न जाने कहां का कष्ट आन पड़ा, जब बहुत कहा जाता है तो जवाब मिलता है कि रोज २ तो आया नहीं जाता। अवकाश है। हम यहां आएं तो घर का धन्धा कौन करे। खेती जायगी। इत्यादि २॥

इससे आपको पता लगेगा कितना समय है अर्थात् अवकाश के अभाव के कारण आपके काश्तकार मजदूर दुकानदार नौकर इत्यादि अपनी प्राण से प्यारी सन्तान और स्वास्थ्य रक्षा को न्योछावर कर देते हैं उस अनमोल समय का गला खुटले चाकू से कचहरी में काटा जाता है। आठ २ दिन तक मुकद्दमा पेश नहीं हुआ इस कारण पड़े हैं, और फिर आठ २ दिवस मुकद्दमे की पेशी हो रही है। इस तरह उस अनमोल समय के जिसको आपने अपने और अपनी सन्तान के लहू से बचाया अर्थात् अवकाश निकाला था आप कचहरी और मुकद्दमे बाजी की भेंट कर देते हैं। क्या इससे अधिक और कोई शोचनीय दशा हो सकती है। प्यारे बन्धू वर्ग जागो, और अपने और अपनी भावी सन्तान को इस मुकद्दमे बाजी के भूत से बचाओ-आप स्वभाविक ही भूत के नाम से डरते हैं और आप की स्त्रियाँ भूतका डर दिखा२ कर बहुतसी कुचालोंसे बालकों को बचातीहै। उनको बताइये कि आपकी माता और मातामह की तरह वह भी उनको मुकद्दमे बाजी के भूत से डरना सिखायें। अन्य कल्पित भूत को तो स्याना भी उतार देता है, परन्तु यह ऐसा बुरा भूत है कि जिसका उतार हाईकोर्ट और प्रीवीकौंसिल के स्यानों (वकील) के चातुर्य्य से भी बाहर है। यह जब चढ़ता है तो प्राण ही लेकर उतरता है। अब जाना होगा कि दृष्टान्त मिथ्या नहीं था। मुकद्दमे बाजी के परिणाम का एक वास्तविक दृश्य था।

अभी बहुत समय नहीं गुजरा जब तक इस देश के नर नारी कचहरी जाना अपने लिये बड़ी शर्म की बात जानते । आपके वृद्ध माता पिता आपको यह बता सकेंगे। आप भी ध्यान रखिये और अपनी सन्तान को यह शिक्षा दीजिये

वह कचहरी के भूत से ऐसा ही डरे जैसे लाहौल के नाम से शैतान। और कचहरी जाना अपने लिये ऐसा ही उपहास और अपमान जनक समझें जैसे कोई अन्य दुराचार इसी में भारत का कल्याण है, आपके गरीब भाइयों की दरिद्रता का और कारणों में से एक बड़ा कारण यह भी है। यदि आप उनको इससे बचायेंगे। और जब आप बचेंगे तो वह अवश्य बच जायेंगे। इस कारण अपने को बचाना उनको बचाना है। यदि आप उन्हें बचायेंगे तो उन पर बड़ी दया करेंगे। क्योंकि प्रथम तो उनका अनमोल समय कचहरी से बचेगा जिससे उनका खेती का कार्य्य समय पर हो सकेगा दूसरे उनका और उनकी सन्तानका स्वास्थ्य ठीक रह सकेगा और इन दोनों बातोंका परिणाम यह होगा कि वह धनोपार्जन भली भांति कर सकेंगे॥ और जब यह रुपया वृथा वकील मुख़्तारों वगैराकी भेंटहोगा नहीं तोउनकेअच्छे दिन फिर आने की सम्भावना होजायगी, इस कारण चेतो और अपने भाइयों को मुकद्दमे बाजी के भूत से बचाओ।

आप कहेंगे कि हम क्या करें। हमै अदालत में जाने का चाव थोड़ा ही है जब काम न चले तो कैसे करें। मजबूरी को कचहरी की शरण लेनी पड़ती है। यह सत्य है परन्तु आप विचारें कि जो २ जरूरतें आप की हैं वह ही आपके पूर्वजों की भी थीं। जिस तरह वह मेल मुलाहजे से काम करते थे आप भी कर सकते हैं। दूसरे जितने भी मुकद्दमे हैं वह सब तीन श्रेणी में विभक्त किए जा सक्ते हैं।

१—साहूकार और कर्जदार के।

२—जमीदार काश्तकार के।

३—विरासत के।

न चाहिये। क्योंकि कर्ज लेना ही बुरी बात है, फिर कर्ज जो लिया जाता है विशेष कर दो कारणों से ; प्रथम तो विवाह शादी के लिये, दूसरे मुकद्दमे बाजी के लिये, तीसरे यदि लिया जाता है तो दुराचरण के लिये, शायद ही कोई ऐसा मनुष्य हो जो कर्ज लेता हो खाने के लिये, क्योंकि यदि वह कर्ज कर खाय तो दे कहां से, कर्ज़ तो असाधारण व्यय के लिये लिया जाता है और साधारण व्यय में कमी करके उसके निबटारे का प्रबन्ध किया जाता। इस कारण पहली श्रेणी वालों की मुकद्दमे बाज़ी में तो कोई रद कद की बात नहीं। क्योंकि असाधारण व्यय का यदि प्रबन्ध पहले से नहीं तो उसका करना ही अनुचित है। यदि शादी ब्याह को यह कहा जाय कि यह रुक नहीं सकते। तो मुकद्दमे बाजी को भी रुपया चाहिये। इसको भी तो पहले ही विचार लेना उचित है। बहुधा होता क्या है। बस यह ही कि विवाह इत्यादि किसी असाधारण व्यय के लिये ऋण लिया गया। यह रुपया जब न पटा तो साहूकार ने नालिश की। अब नालिश की जवाब देही को रुपया चाहिये। वह फिर कर्ज लिया, परिणाम यह हुवा कि कर्ज और मुकद्दमे बाजी का ऐसा भंवर चक्र बंध जाता है कि आदमी उसमें से निकल ही नहीं पाता घर नीलाम होता है खेती कुड़क होती हैं जेलखाने जाना पड़ता है। और घर बरबाद होजाता सो अलग। जहाँ महाजनकी सख्ती बहुत बढ़जाती है वहां नतीजा यह भी होजाता है कि कर्जदार महाजन के दुशमन बन जाते हैं ऊपर के दृष्टान्त में जो महाजन के मारे जाने का वृत्तान्त है वह झूठा नहीं है सच्चा है। अभी कुछ वर्ष हुए जब यह घटना हुई थी। इस कारण यह ही उचित है कि ऋणलेनेसे बचा जाय, न होगा बांस न बजगी बांसरी।

यह भी वास्तव में बिलकुल ही अनावश्यक हैं और यदि का-श्तकार और ज़मीदार इस बात को चाहें तो कचहरी की सूरत भी न देखनी पड़े। क्योंकि हानि दोनों की है। भेद इतना है कि यदि जमीदार भारी है तो काश्तकार पिस मरता है नहीं तो दोनों अपनी कमाई पूज देते हैं रूखी सूखी रोटियां बच रहती हैं और बस कानून की आज्ञा पालन में सब का भला होता है,जो उसका उलङ्घन करताहै उसे दुःख उठाना पड़ताहै तहसील और कचहरी पहुंचना पड़ता है। परन्तु यहां दोनों इसके विरुद्ध करते हैं जिसके कारण जमीदार को तो कारिंदे रखने पड़ते हैं पटवारियों की खुशामद करनी पड़ती है। उनकी तनख्वाह मुकर्रर करनी पड़ती है वकीलों के दरबार में हाजिरी देनी पड़ती है और काश्तकार के रंज होनेसे रुपया नहीं मिलता, जब रुपया नहीं मिलता तो नालिश करनी पड़ती है। परन्तु रुपया जब भी नहीं मिलता क्योंकि रुपया तो जब मिले जब काश्तकारके पास हो। काश्तकारने तो रुपया उजरदारी में लगा दिया। इस लिये उसका घरबार नीलाम कराया जाता है। फसल कुर्क कराई जाती है। परन्तु हासिल कुछ नहीं होता क्योंकि यदि इस तरह १००) रुपया मिले तो ५०) मुकद्दमे की भेंट होगए। तब कहा जाताहै आज कल किसी चीज़ में बर्कत नहीं होती॥ रुपया खाजाय मुकद्दमा और नाम बद हो बर्कत का।

रहे काश्तकार सो उन बेचारों की तो मिट्टी खराब है। एक =)॥ आने के मजदूर को रात्रि में नींद भर सोना मिल जाता है परन्तु उन्हें नहीं मिलता। रात को उठकर सींचें और दिन भर नलायं परन्तु रोटी पेट भर न मिले। कैसे दुःख की बात है। परन्तु वह क्या करें।बेदखलीका भूत सामने

कुछ धरता । मलता वह तहसील और उसके . . .
की भेंट हो जाता है। जमीदार की उजरदारी होती है कर्ज लेकर। और महाजनी घर बेच कर परन्तु बेबाकी कभी नहीं होती। पेट भरता ही नहीं, यह दुर्दशा क्यों है केवल इस लिए कि काश्तकार यदि समय पर आप धरती छोड़ दिया करे तो उन्हें काश्तकार कौन कहै। जितना पियादों की घूस और तहसील के मुख्तार अमले आ जाते हैं उतने में तो जमींदार बेबाक होजाय पर फिर काश्तकारी क्या रही। उधर जो व्यय जमींदार कचहरीमें करतेहैं यदि उतना रुपया जमींदार काश्तकार को छोड़ दे तो काश्तकार का भला होजाय। परन्तु न काश्तकार से यह होता है न जमींदार से वह होताहै। कचहरी के वकील अमले को दोनों हाथ से भरते हैं। और बस ?

तीसरे मुकद्मे जो विरासत के हैं उनका तो कहना ही क्या है वह तो ऐसे पेच के होते हैं कि यदि जायदाद में इतनी गुंजायश है तो वह हाईकोर्ट छोड़ लन्दन पहुंचते हैं। और जो गुंजायश नहीं तो खैर! यद्यपि ऊपर का दृष्टान्त के उदाहरण ढूंढने कहीं जाना नहीं पड़ता हर जिलेमें एक आधा अवश्य मिल जायगा यहां पर यह बताना अवश्य कठिन है कि ऐसे समय में करना क्या चाहिये। क्यों कि लोभ दोनों तरफ घेरे होता है परन्तु यह अवश्य कहा जा सकता है कि यह असम्भव नहीं है कि इनमें से कुछ मामले पंचायत द्वारा निबट जाया करें।

अन्त में भारत सन्तान तुम से यह ही निवेदन है कि देखो दयालु सरकार ने तुम्हें महाजन के सूद से बचाने के लिए कृषीबेंक खोल दिए हैं। तहसील से बचाने के लिए मनीआर्डर

स्कूल खोल दिए हैं। ऐसी दयालु सरकार के इतने आग्रह पर भी यदि आप लोग इस बात के लिए संकोचित नहीं होते कि हिन्दुस्तान संसार भर में मुकद्दमें बाज़ी के लिए उपहास भाजन बन रहा है और अन्य जातियां कहती हैं कि तुम को तो मुकद्में बाज़ी का चस्का पड़ गया है। हे सज्जनो ! इस भूत से डरो कि यह तुम्हारे तन मन धन का सर्व नाश कर रहा है आज जो तुम्हें न खाने को मिलता है न पहरने को मुकद्दमे बाज़ी भी एक बड़ा कारण है।

इस लिए भी इसे छोड़ो कि तुम उस भारत की सन्तान हो जिसको यह उपाधि मिली हुई थी कि उसकी सन्तान में कोई भी झूठ नहीं बोलता आज इस मुकदमें बाज़ी के कारण आप ऐसे झूटे होगए कि अन्य जाति आपको कहती हैं कि इन्हें सत्य का अनुभव भी नही रहा। यहां झूटी साक्षी एक समय के भोजन पर बिकती है मिथ्या वाद इतना बढ़ गया है कि लोग निस्प्रयोजन भी झूट बोलनेमें संकोच नही करते मुकदमे बाज़ी को छोड़कर भारत के उज्वल मुख से यह कालिमा मिटाओ ॥

* ओ३म् शम् *

हमारे यहां निम्नस्थ ट्रैक्ट तैयार हैं।

ईसाई मत में मुक्ति असम्भव है))।
ईसाई विद्वानों से प्रश्न))।
नशा निवारक))।
ईश्वर विचार))।

ट्रैक्टों के मिलने का पता :—

पुस्तकाध्यक्ष आर्य्य-समाज गंज मुरादाबाद.

क़ुरान की

छान-बीन ।

लेखक

श्री १०८ स्वामी दर्शनानन्दजी
सरस्वती,

उर्दू से अनुवादक

पं० शिवशर्मा जी आर्य्य
सम्भल (मुरादाबाद)

प्रकाशक तथा प्रिन्टर.
पं० शंकरदत्त शर्मा
"शर्मा मेशीन प्रिंटिंग प्रेस मुरादाबाद"

द्वितियवार १००० } सन् १९१७ ई. { मूल्य प्रति पुस्तक ।)

प्यारे भ्रातृगण !

मुसल्मानी सिद्धान्तों पर जहां तक विचार किया जाता है तो यही बतलाया जाता है कि क़ुरानशरीफ़ कलामइलाही-"ईश्वरीय वाक्य" है। परन्तु क़ुरआन की बनावट पर ध्यान देने से नितान्त ही उसके विरुद्ध पाया जाता है। क्योंकि प्रथम तो क़ुरआन उतरने पर ही शंका उत्पन्न होती है। कि क़ुरआन एक ही बारमें सम्पूर्ण उतरा वा थोड़ा २ करके? यदि यह माना जावे कि क़ुरआन एक

बारमें सब का सब उतारा गया तो उसका खण्डन
क़ुरआनसे ही होता है; क्योंकि हर एक *सूरत
के ऊपर लिखा है कि यह सूरत मक्के में उतरी,
यह मदीनेमें उतरी और यह अन्य अमुक२ स्थान
पर उतरी। ऐसी अवस्था में उनका एक ही स्थान
पर और एक ही बार उतरना कैसे मानसकते हैं?
यदि यह मानलें कि क़ुरआन पृथक् २ आयतों में
जैसा कि हमारे मुसलमान भाई मानते हैं
तो उसका खण्डन भी क़ुरआनकी आयतों से ह
होता है।

देखो क़ुरआन सिपारः २५

वल् किताबिल् मबीने इन्ना अञ्ज़ल् नाहो

फ़ी लैलतिम् मुबारकेतिन् इन्ना कुन्ना मुञ्ज़ेरीन् ॥

अर्थ—शपथ (क़सम) है किताब बयान करने वाले
की निश्चय उतारा हमने उसको (क़ुरान को)
बीच रात बरकत वाली के निश्चय हम हैं
डराने वाले।

पाठकगण! जब कि खुदा क़सम खाकर इस

* यह शब्द संस्कृत के "सूत्र" शब्द से बनाया है।

बात को प्रकाशित करता है कि जब उसने .क़ुरान को "बरकत वाली" रात में उतारा, तो इसके विरुद्ध समझना खुल्लम खुल्ला .खुदा को भी असत्यवादी कहना है। खुदाकी बातको क़सम खाने पर भी विश्वास के योग्य न समझना है। हम द्विविधा में हैं कि इन दो परस्पर विरुद्ध बातों में से, कि .खुदा ने .क़ुरान को एक साथ ही उतारा वा पृथक् २ उतारा, किस को सत्य मानें ! जब कि इस बातपर ध्यान आता है कि .क़ुरान की प्रत्येक सूरत पर जो कुछ लिखा है वह सत्य है तो तत्काल ही विचार उत्पन्न होता है कि जिस बातको .खुदा क़सम खाकर बताता है वह कैसे झूठ हो सकता है ? दूसरे, यह भी सन्देह उत्पन्न होता है कि .क़ुरान की सूरतों के ऊपर जो कुछ लिखा है; वह .खुदा का वाक्य है वा .क़ुरान के संग्रह करने वाले का है ? यदि यह मानें कि मक्के और मदीने में उतर ना भी .खुदा की ओर से है, उस समय किसी बात को भी ठीक मानना कठिन प्रतीत होता है। यदि यह माना जावे कि, यह आयत मक्केमें उतरी और यह मदीने में उतरी; यह .क़ुरान के इकट्ठा

(करने वालेने लिखाहै तो क़ुरान में मिलावट हो(ने का)
(स)न्देह होता है। प्रत्येक दशा में क़ुरानका इल(हामी)
होना ऐसा ही असम्भव है जैसे कि अन्धेरी रात (को)
दिन सिद्ध करना। इसके अतिरिक्त, क़ुरान के एक
रात में उतरने के और बहुत से प्रमाण हैं।

देखो क़ुरान सिपारः ३० सूरतुल क़दर

इन्ना अन्ज़ल्ना हो फ़ी लैलतिल क़दर।

अर्थ—निश्चय उतारा मैंने क़ुरान को बीच रात
क़दर के।

आयत २ लैलतुलकदर खैरुमिन अलफे शहर। अर्थात्
रात की कदर बेहतर है हजार मास से।

आयत ३—तनज़्ज़लुल् मलायकतो वर्
हो फ़ीहा बे इज़्ने रब्बाहिम् मिन् कुल्ले अम-
रिन् सलामुन् हैय हत्ता मतलइल् फ़जर।

अर्थात्—उतरते हैं फ़रिश्ते और अरवाह
(पवित्रात्माऐं) है उसके साथ हुक्म परवर दिगार
अपने के वास्ते हर काम के। इसी प्रकार के और
बहुत से प्रमाण मिलते हैं, जिनसे विदित

के क़ुरान का ईश्वरीय वाक्य होना तो दूर रहा, किन्तु यह किसी विद्वान का भी वाक्य नहीं हो सकता, क़ुरान की आयतों में विरोध के कारण और कतिपय बुद्धि विरुद्ध बातों के कारण, और ईश्वर की निन्दा करने से, जिसकी स्तुति और प्रार्थना के लिये, मुसलमानों के कथनानुसार, उतरा है स्पष्ट ज्ञात होता है कि क़ुरान बनाने वाला कोई अरब के रहने वाला है और अपनी भाषा सुन्दरता से बोलने वाला है। क़ुरान में भाषा सौन्दर्य के अतिरिक्त और कोई विद्या की बात नहीं है कि जो उसके उतरने से पहिले विद्यमान न हो क़ुरान के कर्त्ता ने दावा भी इसी बात का किया है कि यदि तुम सच्चे हो तो ऐसी एक सूरत बना लाओ। इस दावे से तो यह सिद्ध होता है कि उस समय में मुहम्मद साहब बड़ी सुन्दर भाषा में बोलने वाले थे। हमारे मुसलमान दोस्तों ने हज़रत मुहम्मद साहबको, जो हमारे विचार में क़ुरानके कर्त्ता हैं, उम्मी (बेपढ़ा) सिद्ध किया है। परन्तु उन के इस कथन से क़ुरान को ईश्वरीय वाक्य नहीं कहा जा सकता। क्योंकि हज़रत अरबी भाषा से भले प्रकार परिचित थे। जिस प्रकार आज कल के दो

देहली और लखनऊ के मूर्ख निवासी भी सुन्दर भाषा बोल सकते हैं। इस बात में और शहरों के साधारण पढ़े लिखे भी उन की बराबरी नहीं कर सकते। फिर मुहम्मद साहब जो अरब के सब से बड़े शहर मक्के में पैदा हुए थे जिनके मा बाप बड़े मक्के के मन्दिर के पुजारी थे; और जिन को हर समय ऐसे मनुष्यों से बोलने का काम पड़ता था जो वहां प्रतिष्ठित से प्रतिष्ठित गिने जाते थे। ऐसी अवस्था में सुन्दर भाषा का बोलना कोई मौजज: (चमत्कार) नहीं हो सकता। जिन मनुष्यों ने पन्जाब की एक कहानी-हीरा और रांझा का किस्सा, जिसको वारिस शाह ने बनाया है, पढ़ा है, वे बतलाते हैं कि पन्जाबी भाषा की उत्कृष्टता की यह पराकाष्ठा है। परन्तु इससे उसका इलहामी (ईश्वरीयवाक्य) होना सिद्ध नहीं होता, जब तक कि उस का विषय ऐसा न हो कि जिनके विद्या सम्बन्धी विचार ईश्वर वाक्य कहाने के अधिकारी हों। हमारे बहुत से मित्र कह देंगे कि वारिस शाह ने केवल एक ही अंश वर्णन किया है किन्तु क़ुरान में बहुत सी बातें ईश्वर का वाक्य कहाने योग्य हैं, जैसे मूर्ति पूजा निषेध

और "एक मेवा द्वितीयं ब्रह्म" का उपदेश। परन्तु ऐसे दोस्तों का कथन किसी प्रकार ठीक नहीं हो सकता। प्रथम तो क़ुरान में बहुत सा भाग पुराने किस्सों से भरा है जिस को मुहम्मद साहब ने अपनी यात्रा में, जब कि वह नौकरी की अवस्था में शाम आदि ईसाई देशों में जाया करते थे। सुनाया। इस भाग को तो इलहाम से कोई सम्बन्ध ही नहीं होना चाहिये। दूसरे हिस्से में ऐसी आज्ञायें हैं जिन का सम्बन्ध केवल मुहम्मद से है अर्थात् उनके ही लाभ की बातें हैं। जैसे जब मुहम्मद साहब की सब से अधिक प्रिया स्त्री आयशा पर व्यभिचार का दोष लगाया गया और उस से मुहम्मद साहब को अत्यन्त दुख पहुंचा। तब आयशा को कलंक से बचाने के लिये यह आयत मुसलमानों के कथनानुसार, उतरी।

जिसकी चर्चा क़ुरान की मन्ज़िल ४ सिपारह १८ सूरतुल नजूर में आई है। इस वृत्तान्त को शाह अब्दुल क़ादरने हाशिये पर लिखा है। देखो छापा

नोट—कद्र की रात में फ़रिश्तों का उतरना बतलाने से यह पता है कि और रात में फ़रिश्ते नहीं उतरते।

खाना नवल किशोर लखनऊ सटीक कुरान पृष्ठ ३५२ का हाशिया नं०२। इस के उपरान्त तूफान (जल विप्लव) का वर्णन है जो हज़रत के समय में उठा था। हज़रत आयशा पर यह कलंक लगाया गया था। पैगम्बर एक दिन जहाद से लौटे आरहे थे। रात को कूच हुआ, नफीरी और नगाड़ा साथ न था। मुसलमानों की माता (आयशा) शौच को गई थीं। संयोग वश पीछे रह गई। एक मुसलमान लश्कर से पीछे चलता था जिसने उन को ऊंटपर सवार करा लिया। स्वयं ऊंट की नकेल पकड़ कर चलता था और लश्कर में आयशा को पहुंचादिया काफिरों में एक मास तक इस का चर्चा रहा। पैगम्बर भी सुनते रहे। बिना अनुसन्धान किये कुछ नहीं कहते थे, परन्तु दिल में कुढ़ रहते थे। एक मास के उपरान्त जब मुसलमानों की माँ (आयशा) ने सुना, उन्होंने बहुत ही दुःख माना। रोते२ दम न लिया। अल्ला ताला ने फिर ये अगली आयतें भेजीं।

इसी प्रकार, मुहम्मद साहब ने अपने लेपालक बेटे ज़ैद की स्त्री जैनब को, ज़ैद के तलाक़ देने पर के

लिया। जब लोगोंने उनको बुरा कहना आरम्भ किया, तब बहुत सी आयतें उतारलीं जिससे प्रत्येक के चित्त में यह विचार उत्पन्न होता है कि कुरान शरीफभी मुहम्मद साहबकी ही आज्ञायें हैं जो उन्होंने आवश्यकतानुसार मनुष्यों पर प्रगटकीं भला ऐसी बातोंको, मूर्खोंके अतिरिक्त, कौन सत्य मानसकताहै ? इसके अतिरिक्त, इस बातकी भी यहां आवयश्कताहै कि यह बातभी जानी जावेकि ईश्वर वाक्य के लिये कौनसे गुणोंकी आवश्यकता है ? जिससे प्रत्येक मनुष्य उसकी परीक्षा करसके क्योंकि बिना लक्षण के किसी प्रकार भी यह बात नहीं ज्ञात होसकती कि यह किताब ईश्वरीहै वा किसी मनुष्यकी घड़न्तहै। इसलिये सबसे पूर्व इलहाममें ये गुण होने आवश्यकीयहैं कि उसके आशय वा अर्थों से ईश्वर की निन्दा न होतीहो॥ दूसरी यह कि वह किताब अपने उतरनेकी आवश्यकताको बतासके। तीसरे यहकि सृष्टिके आरम्भमेंहो। चौथे वह किसी देशकी भाषा में नहो॥ पांचवे उसमे क़िस्से कहानी और घरेलू झगड़े, जोकिसी मनुष्य से सम्बन्ध रखतेहों, न हों।

छूटे उसमें कोई बात सृष्टि नियम और बुद्धि के विरुद्ध नहो। सातवें उसके विषयोंमें, जो उसमें वर्णन कियेहों, परस्पर विरुद्ध बातें, अकारण पुनरुक्ति दोष और सत्यतासे विरोध न पाया जावे कमसे कम इनसात बातों का इलहाम में होना जरूरी है।

क्योंकि इलहामी किताबोंमें ईश्वरकी मुहरतो लगी होती ही नहीं जिससे विदित होजावेकि सचमुच यह इलहामीहै।हमारे बहुतसे मुसलमान मित्र कहेंगे कि ये लक्षण आपने इलहाम के कहांसे लिये? तो उसका उत्तर यहहैकि इश्वरीय नियमसे इलहामके लिये ऐसेही लक्षणोंकी आवश्यकताहै, क्यों कि ईश्वर के ज्ञानसे, मनुष्य उसके गुणोंको जानकर उसकी उपासना करसकताहै। यदि ईश्वर की किताबमें ही ईश्वरकी निन्दाहोतो मनुष्य किस प्रकार ईश्वरके गुणोंको जानकर उसकी उपासना करेगा? दूसरे जब कि बिना आवश्यकता के कोई बुद्धिमानभी कोई काम नहीं करता, फिर ईश्वर जो सर्वज्ञ है, बिना आवश्यकताके कोई काम क्यों करने लगा है तीसरे यदि इलहामका होना सृष्टि के

आदिम नमानाजावे तो इलहामकी आवश्यकता से इनकार करना पड़ेगा।

या ईश्वर पर अन्याय और अज्ञानताका दोष लगेगा, जैसेकि प्राय: मनुष्य कहतेहैं कि क्या कारण है कि ईश्वरने आदमसे लेकर मूसातक मनुष्य के कल्याणार्थ कोई पुस्तक नहीं भेजी? यदि कहो कि कोई किताबथी तो उसको प्रस्तुत करना चाहिये अगर नथी तो दोष वैसा का वैसाही है। उस किताबमें क्या कमी थी जिसको पूरा करनेको तौरैत उतरी. और तौरैत से पूर्व संसारमें कौनसा वैज्ञानिक सिद्धान्त नहीं था, जिसको तौरैतने बतलाया? और तौरैतके समय से पूर्व संसारमें कौन सी सत्य शिक्षा नथी जिसको जबूर ने पूरा किया! और ज़बूरमें कौनसी कमी रहगईथी जिसको इञ्जीलने पूरा किया! और तौरैत जबूर और इञ्जीलमें क्या दोषथा जो उनको मन्सूख कियागया। प्रायः लोग कहदेतेहैं कि इञ्जील आदि पुस्तकों में लोगों ने घटा बढ़ा दिया है, परन्तु उनका यह कथन नितान्त अयुक्तहै। मुसलमानोंको उचितहै कि इञ्जील की वह पुस्तक जिसमें यह घटना बढ़ना विद्यमान

है, उपस्थितकरें और उन बढ़ाई हुई आयतोंको प्रगट करदें। जबतक ऐसी पुस्तकका पता नलगजावे तबतक यह दावा निर्मूल है। अगर कोई कहेकि कुरानमें भी यह दोषहै तो मुसलमान लोग इसका प्रमाण मांगेंगे परन्तु इन्जीलमें न्यूनाधिकता का प्रमाण देने के लिये आप तैयार नहीं हैं। यह किस प्रकार सम्भवहै कि ईश्वरकी किताबमें कोई मनुष्य कुछ मिलासके और उसका पता नमिलसके। आज तक ईश्वरीय वस्तुओंके साथ मानुषी वस्तुएँ मिल नहीं सकतीं। इसलिये इलहाम वही है जो सृष्टिके आरम्भ में होकर मनुष्योंको सन्मार्ग दिखातारहे। चौथी युक्ति, कि वह किसी देशकी भाषा में नहो, इसलिये है कि ईश्वरपर अन्यायका दोष नलगे क्योंकि जिस देशकी भाषा में होगा, वहांके मनुष्य उस को सरलता से पढ़ सकेंगे। दूसरे देशवासियों को अधिक परिश्रम करना पड़ेगा। प्रायः मौलवी यह भी कहते हैं कि यदि किसी देशकीभाषा न हो तो लोग उसको कैसे पढ़ सकेंगे? उसका यह है कि प्रथम तो सृष्टि के आरम्भ में सो देश भाषाओं का विभाग हो ही नहीं

सकता, दूसरे ईश्वर जिन पर ज्ञान प्रगट करता है वही उनको इलहाम और उसका ठीक२ अभिप्राय भी बताता है जिस से वह ऋषि उस का नियमानुसार प्रचार कर सकें। किसी देश की भाषा में न होने से उस में कोई कुछ बढ़ा भी नहीं सकता। पांचवें किस्से कहानी उस में न हों। जो किताब सृष्टि के आदि से होगी उस में किस्से कहानी होना सम्भव नहीं और जिस में किस्से कहानी होंगे वह सृष्टि की आदि से न होगी, इस लिये ऐसी किताब ईश्वरीय ज्ञान कहाने के योग्य नहीं। इसका स्पष्ट आशय यह है कि मनुष्य बिना शिक्षा के अपने विचारों का प्रचार नहीं कर सकता, और बिना शिक्षा का बीज बोये विद्या की परम्परा नहीं पड़ सकती, क्योंकि संसार में बिना कारण के कोई वस्तु उत्पन्न नहीं हो सकती, इस लिये शिक्षा के बीज इलहाम का होना शिक्षा से प्रथम ही आवश्यकीय है जिससे शिक्षा की प्रणाली बनजावे। जब एक बार शिक्षा प्रणाली बन गई फिर किसी इलहामकी आवश्यकता नहीं रहती, क्योंकि आजतक कोई भी मनुष्य बीज नहीं बना सका, हां बीज के

द्वारा बीज उत्पन्न कर सकता है। इसी प्रकार
ई भी मनुष्य ईश्वर के ज्ञान में मिलावट नहीं
सकता, और जिस में मिलावट हो जावे वह
श्वर का ज्ञान नहीं। जिस प्रकार ईश्वर ने सूर्य
मनुष्य की आंख की सहायता के लिये बनाया है।
अब यदि कोई मनुष्य चाहे कि सूर्य में कुछ मिला
दूं तो असम्भव है। परन्तु सूर्य को मनुष्यों की
आंखों की ओट में कर सकते हैं जो केवल आंख
पर हाथ रखने से हो सकता है यद्यपि, प्राय
सूर्य मनुष्यों की आंखों से ओट हो जाता है,
परन्तु उस समय परमात्मा नया सूर्य नहीं बना,
और न पिछले सूर्य को रद्दी करते हैं। निः-
सन्देह मनुष्य के बनाए दीपक आदि की यह अ-
वस्था अवश्य होनी है कि वे सर्वदा बदलते रहते
हैं। जब नए प्रकार का सुन्दर दीपक तैयार होजा-
ता है तो पुराने और बुरे को रद्दी करदेते हैं।

जिस पुस्तक में मनुष्यों के घरेलू झगड़े और
कहानी पाये जावें वह एक प्रकार का
इतिहास होसकता है। उसको किसी प्रकार भी इल-
हाम नहीं कहसकते। छठे उसमें कोई बात सृष्टि-

नियम और प्रत्यक्षके विरुद्ध नहीं। इसलिये कि सृष्टि नियम ईश्वरका बनाया हुआ है अर्थात् वह ईश्वरीय कर्म है; और जो किताब इलहामी होगी वह उसका ज्ञानहोगी। नेक आदमियोंके कर्म और कथनमें अन्तर नहीं होता। जो मनुष्य कहे कुछ और जब करनेका समय आवेतो करे कुछ तो उस को अच्छा आदमी नहीं कहते। ईश्वरजो सारी सभ्यताओं का भण्डार है, उसके लियेतो ऐसा कहना सम्भव ही नहीं कि उसके कर्म और कथनमें भेदहै। एक अज्ञानी मनुष्य प्रायः अपनी स्मृति की न्यूनताके कारण, अपनी बात को आप काटताहै या एकबात को दुबारा कहताहै जिसका कारण उसके ज्ञान और स्मृति की न्यूनता समझी जातीहै। परन्तु सर्वज्ञ ईश्वर ऐसा नहीं करसकता उसके वाक्यमें अकारण पुनरुक्ति और परस्पर विरोध नहीं होसकता इसलिये जिस किताबमें परस्पर विरोध पाये जावें वह किसी प्रकार भी ईश्वर का ज्ञान नहीं होसकती। अबहम कुरानकी भीतरीबातों से सिद्ध करतेहैं कि कुरानमें प्रत्येक प्रकार के दोष पाये जातेहैं जिससे वह खुदाका

कलाम तो क्या किसी बुद्धिमान मनुष्य का भी होसकता।

पहिला गुण यह कि वह किताब ... निन्दा न करती हो। हम जहां तक देखते हैं कुरानशरीफ़ के विषयों में ऐसे स्पष्ट शब्द विद्यमान हैं जिससे खुदाकी निन्दा होती है देखो कुरान-मञ्ज़िल १ सिपारा २ सूरते बक़—

मञ्जल्लज़ी युक्रे ज़ुल्लाह क़र्ज़न् हसनन् फयुज़्वायफ़हू लहूअज्ब आफ़न् कसीरतन् वल्ला हो यक़बिज़ो व यब्र्सुतो वइलोहेतुर्जऊन।

अर्थात्:—कौन शख़्स है वह जो क़र्ज़ दे अल्लाहको क़र्ज़ अच्छा पस दुगना करे उसको वास्ते उसके दुगना बहुत और अल्लाह बन्द करताहै और कुशादः करता है और तर्फ़ उस के फेरे जाओगे

अब देखिये कुरान खुदाको भी ऋण की आवश्यकता वाला बताताहै और ऐसी आवश्यकता प्रतीत होती है कि दुगुना देनेकी प्रतिज्ञा करताहै आजकल का नियम यह है कि गवर्नमेन्ट तो चार पांच आनेकाहीसूद देती है औरकोठीवाले हैं-

कर ॥) का सूद देते हैं और ग्रामणी पुरुष १॥) से ३=) तक का सूद देते हैं। ज्वारी लोग, जिनका विश्वास बहुत कम होता है ~) फी रुपया सूद देते हैं न मालूम ऐसी आवश्यकता क़ुरानी खुदाको क्या पड़ी है, कि लोगों में उसका इतना अविश्वास बढ़ा है कि वह दुगना सूद देने की प्रतिज्ञा करता है और क़र्ज़ मांगता है, परन्तु फिर भी लोग उधार नहीं देते। इसका कारण कदाचित् वह आयत हो जिसमें खुदाको मक्र करने का दोष लगाया है, नहीं तो खुदा का इतना अविश्वास क्यों? देखो सूरत आज उमरान—

"वमकरू व मकरू अल्लाहो खैरुल् माकरीन"

अर्थात् मक्र किया उन्होंने (काफिरों ने) और मक्र किया अल्लाह ने; अल्लाह बेहतर मक्र करने वाला है, पाठक गण! काफिरों ने जिस खुदा को त्याग रक्खा है, वह दफा ४१७ ताज़ीरात हिंद के अपराध का कर्ता होवै तो क्या आश्चर्य है? परन्तु जिस समय क़ुरानी

खुदा भी भजन करे तो उसका विश्वास करे ? इसी लिये तो वह बारम्बार ऋण है, परन्तु अविश्वास के कारण मनुष्य उ देने के लिये तैय्यार नहीं होते देखो और स्थान पर भी खुदा को ऋण लेने की आवश्यकता पड़ी है। देखो क़ुरान मञ्ज़िल ७ सिपारः १८ सूरतुल तगाबुन्—

"इन्तुक़रे जुल्लाहे क़र्ज़न् हसनैय ज़्वाइफ़हो लकुम् व यग़्फ़िर लकुम् वल्लाहो शकूरुन् हलीम"

अर्थात् यदि ऋण दो अल्लाह को ऋण अच्छा, दुगना करेगा उसको वास्ते तुम्हारे, और बख़्शेगा वास्ते तुम्हारे, और अल्लाह क़दरदान है अमल वाला।

पाठक गण ! देखिये, क़ुरानी खुदा बारम्बार ऋण मांग रहा है और अविश्वास के कारण दुगना देने की प्रतिज्ञा करता है, परन्तु फिर भी ऋण देने को लोग तैयार नहीं है। ज्ञात होता

है कि लोग खुदा के भक्त से डर कर उसको ऋण देने को तैयार नहीं हैं वर्न इतने बड़े सूद पर ऋण क्यों नहीं मिलता ! देखिये खुदा और स्थल पर भी ऋण मांगता है—देखो क़ुरान सिपारः २७ सरतुल हदीद मन्—

'ज़ल्लज़ी युक़्रे ज़ुल्लाह क़र्ज़न् हसनगन्
फ़युज़ाइफ़ो हूलहू अज्र् आक़त् कसीरतन्"

अर्थात् कौन पुरुष है जो ऋण दें अल्लाह को ऋण अच्छा, पस दुगना करें उसके वास्ते उसके और वास्ते उनके सवाब वा करामात। यद्यपि खुदा ने दुगना देने और सवाब आदि बहुत सी चीजों के लालच दिये हैं परन्तु मनुष्यों को इस पर विश्वासही नहीं होता-- विश्वास हो कैसे ? जब कि खुदा अपनी बातों को तत्काल ही काट देता है ! यदि उसकी कोई भी बात अटल होती तो उस पर विश्वास भी किया जाता। देखो खुदा मुसल्मानों को लड़ा कर अपना राज्य स्थापित करना चाहता है इस के स्थान में अपने रसूल की सहायता स्वयं

खुदा करता, क्योंकि वह सर्व शक्तिमान्
परन्तु बारम्बार कर्ज़ मांगने और मुस-
लड़ाकर लाभ उठाने और बातकी सत्यता के
लिये अनेक कसमें खाने से ज्ञात होता है कि न
वह कादिर मुतूलक़ (सर्व शक्तिमान्) है न वह
सर्वज्ञ है; किन्तु उसका ज्ञान बहुतही अल्प है।
देखो खुदा अपनी बात को आपही काटता है
देखो कुरान सिपरः सूर ऐ अनफाल—

"या अइयो हन्नबीयों हर्रे ज्विल् मोमि-
नीय अलल् किताले ई यकुम् मिन् कुम्
वेइश्रून स्वाविरून् यग़ालिबू में अतैने वई
यकुम् मिन् कुम् में आत्विं यगालिबू अल्फ़म्
मिनल्लज़ीने कफरूबे अन्नहुम् कौमुल्
लायफ़् कहूना"।

अर्थात् ऐ नबी रग़बत दिला मुसलमानों को
ऊपर लड़ाई के अगर हों तुम में से बीस आ-
दमी सब्र करने वाले गालिब आवें दो सौ पर,
और अगर होवे तुममें से गालिब आवें एक

हजार पर उन लोगों से कि काफिर हुए निस्बत इस से कि नहीं समझते । अब विचारिये कि क़ुरानी खुदा यहां मुसलमानों को मारकाट की शिक्षा देता है और साथही यह वरदान भी देता है यदि तुममें से १०० मनुष्य होंगे । और १००० पर विजयी होंगे । अब देखिये खुदाका वरदान और प्रतिज्ञा कितनी शीघ्र असत्य होते हैं । देखो, क़ुरान—

"अल आनखक्कफ़ल्लाहो अं न् कुम् व अलेमं अन्नं फी कुम ज्वअम्मन् फ़ ई यकुम मिन् कुम् मं अतुन् स्वाबरे त्विं यग़्लेन् मं औतने नईयकुम् मिन् कुम् अल् फुई यग़्लब् अल्फ़ैन् वेइज़् निल्लाहे वल्लाहो मे असचा बिरानि" ।

अर्थात्–अब तखफ़ीफ की अल्लाह ने तुम से, और जाना यह कि बीच तुम्हारे नातवानी है, पस अगर होवें तुम ... सौ सब्र करनेवाले आवेंगे, दो ... र होवें तुम में से

दो हज़ार गालिब आवेंगे तुम में से दो हज़ार पर साथ हुक्म खुदा के, और अल्लाह साथ सब्र करने वालों के हैं।

लीजिये खुदा साहब की भी अज्ञानता प्रगट होगई। कि पहिले तो दस के सामने एक को तैयार किया। जब देखा कि निर्बलता है, तो दो के मुकाबिले में एक को तैयार किया। प्रश्न तो यह उत्पन्न होता है कि जिस समय कुरानी खुदाने पहिले दुआ दी थी कि "सौ होंगे तो हज़ार का मुकाबला करसकोगे"। उस समय उस को इस बात का ज्ञान था या नहीं। कि मुझे यह आज्ञा मनसूख़ करनी पड़ेगी? यदि कहो कि थी, तो फिर अपने ज्ञानके विरुद्ध ऐसी झूंठी दुआ क्यों दी? क्या उस समय उसको मुसल-मानों की निर्बलता का ज्ञान नहीं था? जहां तक ज्ञात होता है खुदाको पहिले प्रतिज्ञा करते स-मय इस बात का ज्ञान नहीं था। यदि ज्ञान होता तो क्यों उस में यह शक्ति न थी कि मुसलमानों की निर्बलता को दूर करके अपनी पहिली प्र तिज्ञा को पूरा करता? यदि कहो कि यह शक्ति

थी, तो पहिले वायदे को क्यों मनसूख कर दिया ? अगर कहो कि न थी, तो वह सर्वशक्तिमान् कैसे हो सकता है ? हमने जितने कुरान के विषयों को पढ़ा हमने खुदाकी निन्दा के अतिरिक्त, खुदाका पूरा लक्षण कहीं भी नहीं पाया। बहुत से लोग कहदेंगे किकुरानने खुदाकी निंदा कहां पर की है ? तो उनको ध्यान पूर्वक विचार करना चाहिये कि सर्व स्वामी ईश्वर को ऋणका अभिलाषी बतलाना, शुद्ध परब्रह्म को मक्कार (धूर्त्त) कहना और खुदा को अपनी प्रतिज्ञा को दस मिनट के उपरान्त मनसूख करने वाला बताना, निन्दा नहीं और क्या है ! और भी कुरान में बहुत आयतें और विषय ऐसे हैं कि जिन में खुदाकी निंदा विद्यमान है परन्तु दिग्दर्शनमात्र कराकर दूसरे प्रकरण को आरम्भ करते हैं, क्योंकि लोग इतनेही से समझ जावेंगे कि कुरान ईश्वर की निंदा करनेवाला है। दूसरी बात यह है कि जब कुरान का उतरना बताया जाता है; उस समय कुरान की आवश्यकता थी या नहीं ! जहांतक विदित होता है

क़ुरान में ऐसी कोई नई बात नहीं जो क़ुर से पूर्व विद्यमान हो हमने बहुत से मौलवियों से प्रश्न किया कि बतलाइये क़ुरान से पहिले कौनसा विद्यासम्बन्धी विषय तथा, जिस के बतलाने के लिये क़ुरान आया ? बहुत से लोगों ने तो इसका उत्तर ही नहीं दिया। परन्तु एक दो मनुष्यों ने यह कहा कि वहदतफ़ुल ज़ात वहदत फ़िल सिफ़ात और वहदत फ़िल इबादत अर्थात् एकमेवा द्वितीयंब्रह्म, नतत्समश्चाभ्य. धिकश्च दृश्यते। और तमेव विदित्वाऽति मृत्यु-मेति, ये क़ुरान से पहिले संसार में न थीं। यह इसलाम का कथन नितान्त असत्य है क्योंकि क़ुरान से पूर्व वहदतफ़ुल ज़ात की शिक्षा उप-निषदों में विद्यमान थी। दूसरे श्री स्वामी शंक-राचार्यजी महाराज, जो एक ही ब्रह्मके मानने वाले थे, मुहम्मदसाहब से पूर्व हुए हैं। उपनि-षद की यह श्रुति कि " एकमेवाद्वितीयंब्रह्म " वहदतफ़ुलज़ात को सिद्ध करती है और उसका अनुवाद कलमें का पूर्वाङ्ग लाइला लिल्लिल्लाह है अर्थात एकही परब्रह्म है दूसरा नहीं। इस

लिये जब कि ब्रह्म होने की शिक्षा प्रचलित थी तो कुरान के उतरने की कोई आवश्यकता नहीं। यदि यह कहा जावे कि वहदतफ़िल् सिफात के लिये कुरान की आवश्यकता थी तो यह भी असत्य है क्योंकि कुरान से बढ़कर यह शिक्षा उपनिषदों में विद्यमान थी जैसे "नतत्समश्चाभ्य-धिकश्च दृश्यते"। यदि कहो कि वहदतफ़िल इबादत के वास्ते कुरान आया तो भी असत्य है क्योंकि उपनिषद वेद और गीता आदि सब ही ग्रन्थ एकही ईश्वर को बतलाते हैं जो सब के सब कुरान से बहुत पहिले के हैं। यथा "तमेव विदि-त्वातिमृत्युमेति" आदि। इसकेविरुद्ध कुरान, खुदाको वाहिद (एक) सिद्ध नहीं कर सकता किन्तु उस के साथ काम करने में फरि-श्तों की एक सेना विद्यमान है, इसीलिये उस का नाम "रब्बिलअफवाज" अर्थात् फौजों का स्वामी भी है।

कोई काम नहीं, जो कुरानी खुदा अपनी शक्ति से कर सकता हो, किन्तु प्रत्येक काम के के लिये पृथक् २ फरिश्ते नियत हैं यहांतक कि

क़ुरान के उतरने तक के लिये भी हज़रत
राईल से काम लेना पड़ा। अब प्रश्न यह
होता है कि हज़रत जिबरइल तो, मु-
के कथनानुसार, खुदा के पास जाही नहीं स-
थे जैसा कि लिखा है "अगर यकसरे मूए
बरतरपरम्। फरोग़े तज़ल्ली बसोज़द परम्"
अर्थात् यदि कुछ भी इस से आगे बढ़ूं तो
खुदा का प्रकाश मेरे पर जलादे। जब जिबर-
ईल खुदातक पहुंच नहीं सकते थे तो जिबरईल
तक खुदा का पैग़ाम कौन लाया? यदि कहो
वहां तक खुदाकी कुदरत से आया तो, क्यों
कर खुदाके कामों में फरिश्तो और पैग़म्बरोंको
शरीक करते हो सीधे आर्यसमाज की तरह
मानो कि ईश्वर सर्वत्र व्यापक है। वह अपनी
शक्ति से सारे काम करता है। यद्यपि मुसलमान
सारे कामोंमें फरिश्ते आदि को सम्मिलित करते
हैं और रसूलों के खुदा के नाम तो उनके वि-
श्वास की नींव (कल्मा) में सम्मिलित होगये
हैं जो मनुष्य रसूलको न माने वह मुसलमान नहीं
हो सकता, और महत्व प्रकाश करने के लिये

खुदा ने फरिश्तों को, आदम के सिजदः करने की आज्ञा दी। जिन फरिश्तों ने आदम को सिजदः किया वे सब नेक होगये और जिन फरिश्तों के गुरु आज़ाज़ील ने आदम को सिजदः करना पाप समझा, वह जानतो (धिक्कारित) हुआ। अब सोचना चाहिये कि कुरान से वहदत क़िल इबादत की शिक्षा कैसे मिल सकती है। जो ईश्वर के अतिरिक्त दूसरे को दण्डवत् करने की आज्ञा दे वह १ सन्मार्ग से हटाने वाला होता है।

देखो कुरान सिपारह १४ सूरतुलहर—

"व लक़द ख़लक़नल् इन्सान मिन् स्वल स्वालिम् मिन् हम इम्मस् नून"

१ गुमारह

अर्थात् और, अलबत्ता, तहक़ीक़ पैदाकिया हमने आदमी को बजने वाली मट्टी से, जो बनी हुई थी कीचड़ सड़ी हुई से (यहां खुदा ने यह नहीं बताया कि सड़ी हुई कीचड़ को किस चीज़ से बनाया? क्योंकि मट्टी और पानी से मिलकर कीचड़ बनती है) कि कीचड़ से मट्टी बनती है।

"वल् जान्न खलक़्नाहो मिन् क़ब्लो मिन्ना-
रिस्सुम्"

अर्थात् और जिन्नों को पैदा किया हमने उसके पहिले हमसे आग लोनकी से, इस आयत से पता चलता है कि फरिश्ते और एकही हैं, क्यों कि जिन्नों को आग से पैदा किया है और फरिस्तों की उत्पत्ति को कहीं भी चर्चा नहीं की है कि वे किस चीज से बनाये गये?

वइज क़ाल रब्बक लिल् मलायकते इन्नी खालेकुम् वशरम् मिन् स्वल् स्वलिम् मिनहम इम्मसनून।

अर्थात् और जब और कहा परवरदिगार तेरेने वास्ते फरिश्तों के तहकीक मैं पैदा करने वालाहूं आदमी को बजने वाली मट्टी से जो बनीथी कीचड़ सड़ी हुई से।

फ़इज़ा सब्वेतहू व नफ़ख्तो फ़ी हे मिन् रुही फ़क़ऊलहू साजिदीन"।

अर्थात्—पस जब दुरस्त करूं मैं उसको और

फूँकूँ बीच उसके रूह अपनी से पस गिर पड़ो वास्ते उसके सिजदः करते हुए।

"फ़सजदल्मलायकतो कुल्लहुम् अजमऊन इल्ला इबलीस ऐं यकूनमअस्साजिदीन"।

अर्थात् पस सिजदः किया फरिश्तोंने सबने इकट्ठे, कहा ऐ इबलीस क्या है वास्ते तेरे यह कि न हुआ तू साथ सिजदः करने वालों के।

"कालंलम् अकुल्ले असजुदलेबशारिन् खलक़्हू मिन स्वल स्वालिम मिन हमइम मसनून"।

अर्थात् कहा कि मैं नहीं लायक इस बात के कि सिजदः करूं वास्ते बशर के कि पैदा किया बजने वाली मिट्टी से कि बनी थी कीचड़ सड़ी हुइ से।

कालं फ़खरुज मिनहा फ़इन्नक रजीमुव व इन्न अलैकल् लाअनत इला यौमद्दीन"।

अर्थात् कहा पस निकल उसमें पस तहक़ीक़ मूरादः हुआ है, और तहक़ीक़ ऊपर तेरे लानत

है दिन कयामत तक।

"काल रब्बेक अनन ज्विनीं इल युब आमून"

अर्थात् कहा ऐ परवरदिगार मेरे ... मुझको उस दिन तक कि जिन्दा किये जावें।

"काल फइन्नक मिलन मुन ज्वरीन"

अर्थात् कहा बस तहकिक तू ढील दिये गयों से है।

'इलायौमिल वकातिल मअलूम'।

अर्थात् तर्फ दिन वक्त मालूम के।

काल रब्बेबमा अगवैतनी लऊजई यन्न-मल मुम फिल अर्ज़े वलउमव यन्नहुम् अज्-मईन इल्लाइबादक मिन हुमुल मुखलसीनं"।

अर्थात् कहा ऐ रब्ब मेरे व सबब इसके कि गुमराह किया तूने मुझको अलबत्ता जीवन दूंगा मैं वास्ते उनके बीच ज़मीन के, और अलबत्ता गुमराह करूंगा मैं उन सबको। उपरोक्त संवादसे, जो कुरानी खुदा और ब्रह्म वादियोंमें श्रेष्ट अर्थात्

शैतानकेबीच स्पष्ट हूआ, स्पष्ट प्रगटहै कि कुरानी खुदा वास्तवमें पाप फैलाकर सन्मार्ग भ्रष्ट करना चाहताथा, परन्तु वे डर और सच्चे पुरुष कभी भी अपने धर्मसे च्युत नहीं होते, इसलिये हजरत शैतान ब्रह्म वेत्ताओं में श्रेष्ट (शैतान) एक मेव द्वितीय ब्रह्म का विश्वासी बनारहा, और शेष सब फ़िरिश्ते मनुष्य पूजक बनगये। पाठकगण। कुरान के कर्ता को इस कहानीके लिखनेसे जो तात्पर्य है वह तो आप जानगये होंगे, परन्तु कुछ मित्रों को इस प्रकरण के लिखने का अभिप्राय कदाचित् ज्ञात नहो, इसलिये हम भी संक्षेप से कहे देते हैं। यह परस्पर का संवाद केवल इस लिये लिखा गयाहै कि लोग पैग़म्बरोंकी आज्ञापालनसे इन्कार न करें, और यह न कहने लगें क्योंकि खुदा और मनुष्योंके मध्य में तुम कौनहो? इसका पता इस-लाम के कलमेसे भी मिलजाताहै जहां लिखा है" मुहम्मदरसूलिल्लाह" क्याकवल मुहम्मद साहिब ही खुदाकी ओर से भेजेहुए थे? शेष जितने पैग़म्बर आये वे खुदाके भेजे हुए न थे? मुहम्मदसाहब का कुलपैगम्बरों को छोड़ कर, यहांतक कि आदम

को, जिसको, कुरान के कथनानुसार,
से सिजदा कराया, नितान्त छोड़कर, केवल
साहब को रसूल बताना स्पष्ट बता रहा है कि
वाक्य कोई विशेष स्वार्थ रखने वाले मनुष्यों
है। इस कलाम से सिवाय मुहम्मद साहब का अपना
स्वार्थ सिद्ध होने के और कोई आशय नहीं निकल
सकता है। हमारे मित्र मौलवी साहबान प्रायः
कह देते हैं कि यह लेख शिर्क को प्रगट नहीं
करता, किन्तु खुदा ने एक पुराना किस्सा वर्णन
किया है। यदि इस किस्से का वर्णन एक स्थल पर
होता, तो हम दुर्जन संतोष के न्याय से मान भी
लेते, परन्तु कुरान में इसकी चर्चा बहुत स्थानों
पर आई है इससे स्पष्ट है कि कुरान के बनाने
वाले की यह प्रबल इच्छा थी कि लोग इस किस्से
को भले प्रकार याद करलें जिससे रसूल की
अज्ञायों से इन्कार करने में शैतान के समान लानती
होने का भय लगा रहे। प्रथम ही इसका उल्लेख
सूरःबकर में आया है यथा—

वइज क़ाल रब्बोक लिल मलायकते
इन्नी जायलुन् फ़िल अर्ज़े ख़लीफा क़ाक

अत जल फ़ीहा मन् युफ़सदो फ़ीहा वयुसफ़े कुद्दिमाअ वन हनो सब्बेहो वेहम्देक वनुक़ेद्दसो लक क़ालइन्नी आलमो माला तआलमून्"

अर्थात्—जब कहा परवदिगार तेरे ने वास्ते फ़रिश्तों के तहक़ीक मैं बनाने वाला हूं बीच ज़मीन के नायब, कहा उन्होंने क्या बनाता है बीच उसके उस सख्त को कि फिसाद करे बीच उसके, और डालेगा लहू, हमया कि बयान करते हैं साथ तारीफ तेरीके और बाकी बयान करने वास्ते तेरे। कहा तहक़ीक़ मैं जानता हूं।

व अल्लमा आदमल् अस्माअ कुल्लहा सुम्मा अरद्दहुम् अलल् मलायक ते फ़क़ाल अम्बे ऊनी बे अस्माये हा उलाये इनकुन्तु स्वादेक़ीन्।

अर्थात् और सिखाये आदमको नामसारे, और सामने किया उसको ऊपर फरिश्तों के और

कहा उनको बताओ मुझको नाम उन के अगर हो तुम सच्चे।

"काल सुभानक लाइलमा लन इल्ला मा अल्लम् तन इन्नक अन्तुल् अलीमुल् हकीम"।

अर्थात् कहा उन्होंने पाक है तू, नहीं इल्म हमको मगर जो कुछ सिखाया तू ने हमको तह-क़ीक़ तू है जानने वाला हिक़मत वाला।

क़ाल या आदमो अम्बेहुम् बे अस्माये हुम् फ़लम्मा अम्बाहुम् बे अस्मायेहिम, काल अलम अक़ुल्लम्। इन्नी आलमो ग़ैबस्समा वातेवल् अर्दे व आलमो मातुद्दूना वमा कुन्तुम् वइज कुल्न लिल् मलायकातिज़ुदू ले आदम फ़सजदू इल्ला इबलीसा अवावस्त-क्बर वकान मिन् अल काफ़िरीन"।

कहा ऐ आदम! बताओ उनको नाम उनके पस जब बताये उनको नाम उनके। कहा क्या व

कहा था मैंने तुमको तहक़ीक़ मैं जानताहूं छिपी चीजें आसमानों और ज़मीन की और जो जानताहूं जो ज़ाहिर करतेहो और थे तुम छिपाते। और जब कहा हमने वास्ते फरिश्तों के सिजदः करो वास्ते आदम के पस सिजदः किया मगर शैतान ने न माना और तकब्बुर, किया और था वह क़ाफ़िरों से।

ऐ वहदत किल जात का दावा रखने वालो! सोचो कि जो आदमको सिजदः न करे वह काफिरहै। जब कि खुदा नहीं मानने वाले भी क़ाफ़िर हैं और आदमको सिजदाः न करने वाले भी काफिरथे, तो क्या अब भी वहदत किल जातके ढींग मारोगे? यही विषय कुरान मंज़िल २ सिपारः ७ सूररा रोरा।

"वलक़द् ख़लक़्नाकुम् सुम्म् सव्वरनकुम् सुम्म् क़ुल्नाल लिल् मलायकातिस्सजूदूले आदम फ़सजदू इल्ला इबलीसा लम्‌ यकुन् मिनस्साजदीन"।

अर्थात् और अलवत्ता तहक़ीक़ पैदा किया

हमने तुमको, फिर सूरतें बनाईं हमने
फिर कहा हमने वास्ते फरिश्तों के सिजदा करो
वास्ते आदम को सिजदः किया उन्होंने, मगर
इबलीस न हुआ सिजदः करने वालों में से—

"फालमा मनआक अल्लाह तस्जुद
ज़ेआ मर्त्तक काल अन खैरुम्मिहो खलक
तनी मिन्नारिन् वखलकतहू मिन्तीन।

अर्थात्—कहा किस चीज़ने मना किया
तुझको, न सिजदः किया तूने जब हुक्म किया
मैंने तुमको कहा मैं बेहतर हूं उससे पैदा किया
तूने मुझको आग से और पैदा किया उसको
मट्टी से।

"काल फह बित् मिन्हा फमा यकूनो
लक अन्त तकब्बुरो फीहा फखरुज इन्नक
मिन् मस्साबिरीन"।

कहा पस उतरा उसमें से पस नहीं लायक
वास्ते तेरे यह कि तकब्बुर करे तू बीच उसके
बस निकल तहकीक़ तू जलीलों से है।

"क़ालनज़ुर्नी इलायो मे युब्‌ असून"

अर्थात्—कहा ढील दे मुझ को कि उस दिन तक कि क़बरों से उठाये जावें।

"क़ाल इन्नक मिनल् मुनज़रीन"।

कहा तहक़ीक़ तू ढील दिये गयों में से है।

"क़ाल फ़बेमा अग़वैतनी लाक़ादन्न-लहुम् सिरातकल्ल मुस्तक़ीम्"।

अर्थात् कहा पस क़सम है उसकी गुमराह किया तूने मुझको अलबत्तः बैठूंगा वास्ते उसके राह तेरी सीधी पर।

पाठक गण! इसी विषय को क़ुरान सिपारः २३ मंज़िल ६ सूरते स्वाद में भी कहा है—

इज़क़ाल रब्बोक लिल् मलायकतेइन्नी खालेकुन् बशरिम्मिन्तीन।

अर्थात्—जिस वक्त कहा परवरदिगार ने वास्ते फ़रिश्तों के तहक़ीक़ मैं पैदा करने वाला हूं इन्सानों को मट्टी से।

"फ़इज़ा सव्वैतहू व नफ़ख़्तो फ़ीहे मिंरूही फ़क़ऊ लहू साजदीन" ।

अर्थात्--पस जिस समय दुरुस्त करूं उसको और फूंक बीच उसके रूह अपनी, ज़मीन में पस गिर पड़ो वास्ते उसके सिजदः करते हुये ।

"फ़सजदल् मलायकतो कुल्लहुम् अजमऊन" ।

पस सिजदः किया फरिश्तों ने सब इकट्ठे ।

"इल्ला इबलीस स्तकबरं व कान मिनल् काफ़िरीन"

मगर इबलीस ने तकब्बुर किया और था काफिरों से ।

पाठक वृन्द ! आगे वही विषय है जो पीछे तीन जगह दिखा चुके हैं। प्रथम तो इस पुनरुक्ति को, जो आदम को सिजदः के लिये है, देखकर कोई विद्वान नहीं मान सकता कि क़ुरान एक ही ईश्वर की पूजा बताता है जब कि आदमको सिजदः करने वाले काफिर हैं, मुहम्मदको र

बनाने वाले काफ़िर हैं। कहां तक कहें बहुत सी वस्तु हैं जिनको कुरान ने खुदाके साथ विश्वास में सम्मिलित कर लियाहै। हमने जहां तकपता लगाया है उससे यही परिणाम निकलता है कि कुरान केवल मुहम्मद साहब की आवश्यकता पूरा करने वाला वाक्य है। जब मुहम्मद साहबने कोई ऐसा कर्म किया जिसके कारण पबलिक ने उनको बुरा कहना आरम्भ किया, झट मुहम्मद साहब ने एक आयत गढ़दी, जैसा कि प्रायः कुरान में पाया जाताहै। उसका एक उदाहरण हम प्रस्तुत करतेहैं--हज़रत मुहम्मद साहब ने ज़ैद नामी एक मनुष्य को गोद ले लिया था, और उसका ज़ैनब नामी एक सुन्दर स्त्री से विवाह भी कर दिया था। एक दिन हज़रत ज़ैनब के घर अचानक चले गये। और ज़ैनब को बेपरदा देख लिया। हज़रत की तबियत भी आशिक मिज़ाज थी, जैसा उनका जीवनचरित्र पढ़ने से, और सारे मुसलमानों के लिये चार स्त्रियां और अपने

उन्होंने अन्दर पहुंच कर उसकी प्रशंसा की। ज़ैनबने जब यह हज़रत का विचार ज़ैद से कहा ज़ैद मुहम्मद साहब का सच्चा हितैषी था, उसने झट ज़ैनब को तलाक देदी और हज़रत ने बिना निकाह उसको अपनी स्त्री बनालिया। जब लोगों में इस बातकी चर्चा उठी और हज़रतकी निन्दा होने लगी क्योंकि यह बातही इस प्रकारकी थी। एकतो लेपालक की स्त्री ! दूसरे बिना निकाह उस को स्त्री बना लेना !! सर्व साधारण में हलचल क्यों न मचती ? जब हज़रत ने देखाकि लोग बहुत बदनामी करतेहैं तो एक आयत उतारदी— देखो कुरान २२ वां पारः सूरत एहज़ाब—

"वमाकानं लेमोमिनिंव वलामोमिनं तिन् इज़कदल्लाहो वरसूलहू अमरन् एँ यकून लहूमुल् खेयरतो मिन् अम्रेहिम वमैं या सिल्लाहा वरसूलहू फ़क़द्लाह दलालम् मोबीन्।

अर्थात और नहीं है लायक वास्ते कि

मर्द मुसलमान के और न औरत मुसलमान के जिस वक्त मुकरिर करे खुदा और रसूल उसका कोई काम यह कि होवे वास्ते उनके इख्तयार काम अपने से और जो कोई नाफ़रमानी करे अल्लाह की और रसूल उसके की पस तहकीक गुमराह हुआ गुमराही ज़ाहिर।

"वइज़ तकूलो लिल्लज़ी अन्नमल्लाहो अलैहेव अन अमत अलैहे अमसिक अलैक ज़ौजक वऽकिल्लाह वतुखफ़ी फ़ीनफ़सेकमल्लाहो मुब्दीहे व तख़ शन्ना संवल्ला हो अहक्को अन्तख़ शफ़लम्मा क़द ज़ैदुन्मिनहावतरन् जव्वज ना कहा ले कैला यकून अललमोमिमीन हरजुन् की अजवाजे अदए या एहिम् इज़ा क़दौमिन् हुन्ना वतर वकान अम् रुल्लालाहे मकूल"।

अर्थात् और जिस वक्त कि कहता था तू वास्ते उस शख्स के कि निअमत की है तू ने ऊपर उस के ऊपर थानरख ऊपर अपनी बीबी को और

डर खुदा से । और छिपाता था बीच जो के जो कुछ अल्लाह जाहिर करने वाला है। डरता था लोगों से और अल्लाह बहुत लायक है उसका कि डरे तू उस से पस जब पूरी करी ज़ैदने उस से हाजित व्याह दिया हमने तुझ से उसको तू कि न होवे ऊपर ईमान वालों के तंगी बीच बीबियों के बालकों उनके के जब रफा की उन से हाजित और है हुक्म खुदा किया गया।

इस के हाशिये पर शाह अबदुल क़ादर लिखते हैं—हज़रत ज़ैनब रसूल की फूफी की बेटी और क़ौम में अशराफ थीं। हजरत ने चाहा कि उनका निकाह करदें ज़ैद बिन हारिस से। ये ज़ैद असल अरब थे, पकड़ जालिम लेगयाथा। शहर मक्के में उनको हज़रतने मोल ले लिया। दस वर्ष की उम्र में इनके बाप भाई खबर पाकर मांगनेको आये। हज़रतके देने पर यह घरजानेको राजी नहीं हुए और हज़रतसे हुज्जतकी। इसलाम से पहिले के रिवाज के मुआफिक हज़रतने उस को बेटा बना लिया। हज़रत ज़ैनब और उनके

भाई राजी न हुए। यह आयत उतारी राजी होगये और निकाह कर दिया। और देखो हाशिया सुफा ५२३ हज़रत जैनब ज़ैद के निकाह में आईं तो वह उनकी निगाह में हकीर जचीं मिज़ाज की मुआफ़िकत न हुई तो लड़ाई हुई। ज़ैद हजरत से आकर शिकायत करते और कहते थे कि इसे छोड़ता हूं। हज़रत मना करते थे कि मेरी खातिर से तुझको .कुबूल किया है। अब छोड़ना दूसरी जिल्लत है। जब बार २ .काजिया हुआ। हज़रत के दिल में आया कि अगर नाचार .जैद छोड़देगा तो .जैनबकी दिलजोई बगैर इसके नहीं कि मैं उस से निकाह करूं। लेकिन मुनाफ़िकों की बदगोई से अन्देशा गया कि कहेंगे कि बेटेकी जोरू घरमें रक्खी, हालांकि लेपालकको हुक्म बेटे का नहीं। किसी बात में अल्लाह तालाने ह.जरत जैनबकी .खातिर रक्खी बाद तलाक के हज.रतके निकाह में देदिया। अल्लाह के .फरमाने ही से निकाह बंधगया। .जाहिर में निकाह की हाजित नहीं हुई। जैसे अब कोई मालिक अपने

लौंडी गुलाम को बांध दे, गरज पूरी होने पर छोड़दें"।

पाठक गण! इस घटना को नेक ध्यान से पढ़िये और शाह अबदुल क़ादिर के शब्दों को सोचिये तो क्या यह फल नहीं निकलता कि बिना निकाह मुहम्मद साहब ने अपने बेटे की जोरू को घर में रख लिया। शाह साहब का यह कहना कि हजरत ने "रिवाज के मुआफ़िक़ बेटा बनाया था दर असिल लेपालक को हुक्म बेटे का नहीं" किस प्रकार ठीक मान लिया जावे? क्योंकि यदि हजरत का गुप्त निकाह बंध जाने से पहिले ये आयतें उतरीं तो लोगों को यह विचार उत्पन्न होता कि मुहम्मद साहब ने जो कुछ किया ख़ुदा की आज्ञा से किया। परन्तु यहां पर बिल्कुल ही उलटा मामला है, क्योंकि शादी पहिले हुई और आयतें बाद को उतरी। ये सारी आयतें मुहम्मद साहब की इच्छा पूरी करने के अतिरिक्त और किसी काम की नहीं। ख़ुदा ने कहा और मुहम्मद साहब का निकाह बंधगया, इसका कोई प्रमाण

शाह साहबने नहीं दिया। यदि कोई मनुष्य निष्पक्ष होकर जिज्ञासु भाव से इन आयतों को पढ़ेगा, तो उसको अवश्य ही मानना पड़ेगा कि कुरान खुदाका वाक्य नहीं किन्तु मुहम्मद साहब को और कुछ उनकी प्रशंसा करने वालों की रचना है यहां पर इतने आक्षेप होते हैं—

१–खुदाने मुहम्मद साहब का, लोगोंके डरसे दिल में अपनी इच्छा अर्थात् ज़ैनब की शादी को छिपाना, प्रगट किया है। अब प्रश्न यह है कि जो मनुष्य पैगम्बर का दावा करे और लोगों के भय से डरे, उसकी बात के सत्य होने का क्या प्रमाण है ?

२–दूसरा प्रश्न यह है कि जब मुहम्मदसाहब की इच्छानुसार खुदाने ऐसा वाक्य भेजा था कि जिसके द्वारा ज़ैनब और उसका भाई, जो विवाह से असन्तुष्ट थे, सन्तुष्ट होगये, उस समय कुरानी खुदाको यह ज्ञात था या नहीं की ज़ैनबका ... मे सन्तुष्ट न होगा। यदी कहो कि

खुदा जानता था कि उस से ज़ैनब को तसल्ली नहीं होगी, और वह ज़ैदको, पैग़म्बर और खुदा के समझाने पर तुच्छ समझी गई, तो उसने क्यों हज़रत ज़ैनब से ज़ैदकी शादी कराकर अपनी दया की भी निन्दा कराई? यदि ये आयतें पहिले आतीं और बादको मुहम्मद साहब ज़ैनब को घर में रखते तबतो कहाजासकता था कि मुहम्मद साहब ने खुदाका हुक्म पूरा करने के लिये यह कर्म किया, लेकिन मुहम्मद साहब ने ज़ैनब को पहिले घर में डाला, जैसा कि मुहम्मद साहब के जीवन चरित्र और इन आयतों से विदित होता है, इस जगह पर स्पष्ट कहना पड़ता है कि ये सब आयतें, मुहम्मद साहब ने, उस बदनामी को जो उस घटना से सर्व साधारण कर रहेथे दूरकरने के लिये; स्वयं बनाईं, यदि खुदाकी यह इच्छा होती कि लेपालकों की स्त्रियों से विवाह न होतो कर लियाजाये तो वह तौरैत में जिसको मुसलमानों के कथनानुसार खुदाने पहिले उतारा था, इस बात की आज्ञा देता कि "लेप

स्त्री से ब्याह करना बुरा नहीं" इसके अ
यदि मुहम्मद साहब उससे निकाह करते जो सारी
बिरादरी में होता तो यह भी कहना कुछ
उचित होता कि लेपालकों की स्त्रियों से विवाह
करलेने के लिये ये आयतें उतरीं, परन्तु मुहम्मद
साहब ने तो बिना निकाह ही घर में डाललिया,
इससे निकाह किसी प्रकार भी धर्मानुकूल नहीं
होसकता, क्योंकि शरियत के अनुसार जो विवाह
होता है, प्रथम तो बहुतसे मनुष्यों के सामने पर-
स्परकी स्वीकारी होतीहै और फिर काज़ी निकाह
पढ़ाता है । अब यहां न तो परस्पर की स्वीकारी
का कोई प्रमाण मिलता है और न निकाह ही
पढ़ागया। यदि कहो कि निकाह खुदाने पढ़दिया,
तो इसमें प्रमाण क्या? जिस समय हज़रत आय-
शा पर व्यभिचार का दोष लगा उस समय दो चार
गवाह मांग लिये। वास्तव में व्यभिचार चोरी
आदि ऐसे कर्म हैं जो छुपकरही किये जाते हैं,
जिन के लिये चार साक्षियों की प्राप्ति बहुत ही
दुस्तर है। परन्तु विवाह एक धार्मिक कर्म है जो

सदैव जनसमूह के सामने होता है, परन्तु दो समयोंपर नितान्त नियम विरुद्ध कार्यवाही का होना अर्थात् व्यभिचारके लिये चार गवाहों को मांगना और निकाह को बिना गवाहों के ठीक समझना, पक्षपातियों के अतिरिक्त और लोग कैसे उचित समझ सकते हैं ?

यह कुरान मुहम्मद साहबका क़ानून है, और उसकी सारीही बातोंसे वह स्वयं पृथक् है। यदि खुदा का नियम होता तो कोई भी मनुष्य पृथक् नहीं समझा जा सकता। यह तो मुसलमान लोग भी मानेंगे कि मुहम्मद साहब के पास इलहाम लाते हुए फरिश्तोंको किसी ने नहीं देखा किन्तु इलहाम प्रायः रात्रि को आया करते थे और स्वप्न की अवस्था में आते थे। जब कि सारी ही कुरान की आज्ञाओं से मुहम्मद साहब पृथक् हैं तो कौन बुद्धिमान् मान सकता है, कि मुहम्मद साहब क्यों कुरान की आज्ञाओं से पृथक् समझे गये। प्रमाण यह है कि प्रथम तो सारे ही मुसल-मानोंके लिये चार स्त्रियें विदित हुई, परन्तु

हज़रत इस आज्ञासे पृथक् माने गये। दूसरे—सारे ही लोगों के बिना निकाह के किसी स्त्री को घर में डाललेना विदित नहीं, परन्तु मुहम्मद साहबने शरई निकाह के बिना ही ज़ैनब को घरमें डाल लिया. तीसरे और लोगों की स्त्रियों को तलाक उपरान्त विवाह करलेना अधिकार है, परन्तु मुहम्मद-साहब की स्त्रियों को यह अधिकार नहीं था, किन्तु मुहम्मदसाहब की स्त्रियों से निकाह करना कुरान में विदित नहीं बतलाया। हमारे बहुत से मुसलमान भाई कहदेंगे कि हज़रत की स्त्रियों से औरोंको निकाह करना इसलिये उचित नहीं कि वे सारे मुसलमानों की मा हैं, कारण यह कि मुहम्मद साहब रसूल हैं। और मा के साथ किसी प्रकार भी निकाह उचित नहीं। परन्तु उनका यह उत्तर ठीक नहीं, क्योंकि यदि हम मुहम्मदसाहब को पैग़म्बर होने के कारण सारे मुसलमानों और मुसलमानियों का पिता समझलें तो उन की स्त्रियों को मा मानना पड़ेगा।

ऐसी अवस्था में कुल मुसलमानियें कन्या का सम्बन्ध रक्खेंगीं, क्योंकि पैग़म्बर होनेके कारण

हज़रत उनके बापहैं। ऐसी अवस्थामें वे किसी से भी विवाह नहीं करसकते। परन्तु कैसा अन्यायहै कि वे अपनी स्त्रियोंको दूसरेकीस्त्री बनानेकी लज्जा से बचने के लिये अपने को मुसलमानों का बाप समझें, परन्तु मुसलमानियें बाप न समझें, क्या मुसलमानियें हज़रतके संप्रदायमें नहींहैं! यदि हैं-तो जिसप्रकार मुसलमान हज़रतके बेटे हैं तो मुसलमानियें हज़रतकी बेटियांहैं। यदि माके साथ निकाह नाजायज़है तो बेटी केसाथ कहां जायज़-है! परन्तु हज़रत तो क़ुरानकी प्रत्येक आज्ञा से पृथक् है, उनके लिये कोई नियमही नहीं ! वह जो कुछ करलें उसके वास्ते आयतें तैयार मिलेंगी। शोक इस बातका है कि इतनी मोटीबात को भी मुसलमान लोग नहीं समझ पाते कि जबसारे मुसलमान हज़रतके बेटे हैं तो मुसलमानियां बेटियां क्यों नहीं हुईं ? फिर हज़रतका किस से निकाह कराना किसप्रकार उचितहै। इसके अतिरिक्त और भी प्रमाण मिलते हैं कि क़ुरान में जो कुछ लिखा गया है। वह सब हज़रत की इच्छा के अनुकूल लिखा गया है। एक दिन हज़रतकी

स्त्रियों ने कहा कि खुदा जो कुछ आज्ञा देता है वह मनुष्योंको देता है स्त्रियोंके लिये कोई आज्ञा नहीं। उसीसमय हज़रतने ये आयतें उतारीं अर्थात् देखो कुरान सिपारः २२ सूरतुल एहज़ाब।

'या निसा अन्नबीये मैंयाते मिन् कुन्ना बे फ़ाहिशेतिम् मुबीनेतीं युज अफ़्अहल् अज़ाबो देफ़ैन वकान ज़ालेक अल्लाहे यसीर'।

अर्थात्—हे बीबियो नबी की। जोकोई आवे तुममें से साथ बेहयाई ज़ाहिरके दोचन्द किया जावेगा वास्ते उसके अज़ाब दो बराबर और है यें ऊपर अल्ला के आसान।

'वमैं यक़नुत मिन् कुन्ना लिल्लाहे व रसूलेही वत अमल सालेहन् नोतेहा अज़्रहा मर्रतैने व आतद्नलाहा रिज़्क़न् करीम"॥

अर्थात् और जो कोई फरमाबरदारी करे तुम से वास्ते अल्लाः के और रसूल उसके के और अमल करे अच्छे, देवेंगे हम उसको सवाब उसका दोबार और तैयार किया वास्ते उसके हमने रिज़्क़

अच्छा। पाठक गण! इसी प्रकार बहुतसी आ
इस प्रकार की आगे लिखी हैं जिन में स्त्रियों
और विशेषकर नबी की स्त्रियों को उपदेश कि
है। इन सारी आयतों के देखने से पता मिलता है
कि जिस समय मुहम्मद साहबको कोई आवश्य-
कता हुई झट उन्होंने खुदा के नाम से आयत
उतारली। बहुत से मुसलमान भाई हम से इसका
प्रमाण मांगेंगे कि मुहम्मद साहब से स्त्रियों ने कब
प्रश्न किया और मुहम्मद साहब ने ये आयतें
उतार लीं। इस के उत्तर में हम कहेंगे कि देखो
क़ुरान पृष्ठ ५२२ हाशिया छापाखाना नवल कि-
शोरी। "हज़रत की एक स्त्रीने कहाथा कि क़ुरान
में सब ज़िक्र है मर्दों का, औरतों का कहीं नहीं
उस पर यह आयत उतरी-नेक औरतों की खा-
तिर को नहीं तो जो हुक्म मरदों को कहा सो
औरतों पर ले आये दरबार, जुदा कहने की
हाजत नहीं। इस के अतिरिक्त प्रायः लोग मुह-
म्मद साहब के घर आते और देर तक बात करते
रहते जिससे हज़रत को बहुत कष्ट होता। और
वह उन को घरसे बाहर निकालना चाहते, परन्तु

संकोच से और असन्तुष्ट हो जाने के भय से कुछ नहीं कहते थे कि ऐसा न हो कि संप्रदाय में मत भेद हो जाये लोगों को अधिक देर तक बैठने से रोकने के लिये, मुहम्मद साहब ने ये आयतें उतारीं अर्थात् गढ़ीं—देखो .क़ुरान सिपारह २१ सूरतुल एहज़ाब—

या अइ योहल्लज़ीन आमनू लातदखुलू बयूतन्नबीये इल्ला एँ योज़न लकुम इलाता आमिन् वलाकिन् इज़ादो ईतुम् फ़दखलू फ़इज़ये इम् तुम् फ़न्तशेरू वलामुस्ता निसीना ले सदीस इन् ज़ाले कुम् कान लकुम् अन्ता ज़ूरसलल्लाहे वला अन्तन् केहू अजवाजेहू मिम्बादेही अबद इन्न ज़ाले कुम् कान इन्दल्लाहे अज़ीम क़ान योज़िन् नबीयाफ़यस्त सहा मिन्कुम् वल्लाहो ला यस्तहयी मिनल् हक्क़ वहज़ा स अल् तो मुहुन्न मताअन् फ़ा अलूहू

न वराअ हिजाब जालेकुम अतहरो ले
-कुम् वकुलूबे हिन्ना वक्ता ।

अर्थात्—अय लोगों जो ईमान लाये हो मत दाखिल हो घरोंमें पैगम्बरों के मगर यह अज़्न दिया जावे वास्ते तुम्हारे तर्क खाने के इन्तजार करने वास्ते पकने उसके के लेकिन जब बुलाये जाओ तुम, पस दाखिल हो, पस जब खाचुकाहो बस मुतफ़र्रिक होजाओ और मत बैठे रहो जी लगा रहने वास्ते २ बातोंके। तहकीक यह काम है ईज़ा देता नबीको। बस शरमाता है तुमसे और अल्लाह नहीं शरमाता हक़बातमें । और जिस वक्त मांगा चाहो उनसे कुछ असबाब; पस मांगलो उनसे पीछे परदेके से।यह बहुत पाक करने वालाहैवास्तेदिलों तुम्हारेकेओ। दिलोंउनकेके और नहीं लायक़ वास्ते तुम्हारे कि ईज़ादो रसूल खुदा को और न यह कि निकाह करो बीबियों उसकी को पीछे उसके। कहदे तहक़ीक ये हैं नज़दीक अल्ला बड़ा गुनाह। प्रिय पठाक गण! उपरोक्त आयतों और मुहम्मदसाहब के घरेलू झगड़ों के प्रकरण

को देखने से आपको भले प्रकार विदित हो जावेगा कि कुरानशरीफ़ सारेका साराही मुहम्मदसाहब की उपयोगी बातों का संग्रह है। उसमें जहां कहीं खुदाकी उपासना का थोड़ा बहुत प्रसंग आया है, वह इस बात के लिये कि लोग ये न कहें कि मुहम्मदसाहब ने सब कुछ अपने वास्ते गढ़ा है। जहां खुदाका हुक्म मानना कहा है, वहीं उसके रसूल मुहम्मद साहब का हुक्म मानना कहा है यह तो प्रत्येक मनुष्य जानता है कि कुरानशरीफ़ के अतिरिक्त मुसलमानलोग किसी दूसरी किताब को सत्य नहीं मानते, इसलिये खुदा के गौरव के स्थान में उसकी अत्यन्त निर्बलता प्रतीत होती है। मानो वह एक पुतला है जो मुहम्मद साहब के इशारों पर नाच रहा है। हम स्वयं आश्चर्य में हैं कि हमारे मुसलमान भाई नित्यप्रति पढ़ने परभी इस बातपर कभी विचार नहीं करते कि जहां हजरतकी बीबीने कहा खुदाने झट आयत नाज़िल करदी। जहां मुहम्मदसाहब लोगोंके घर बैठे रहनेसे असन्तुष्टहुए, झट आयतें उतरने लगीं। हमको इस बात पर अधिक वाद विवाद करने की

आवश्यकता नहीं है कि क़ुरानशरीफ़ मुहम्मद सा-
हब की उपयोगी आज्ञाओं का संग्रह है जिसमें अ-
रब के पोलिटिकल क़ानून का संग्रह भी सम्मिलित
है अथवा पुरानी घटनाएँ इसमें लिखी है। इसमें
ईश्वरीय ज्ञान होने का कोई गुण नहीं है किन्तु
एक इतिहास तो इसको कह सकते हैं। हमारे
इस लेख से कोई यह न समझे कि क़ुरानशरीफ़
में कोई बात भी अच्छी नहीं है किन्तु इसमें
जितनी बातें अच्छी हैं वे नई नहीं हैं केवल पुरानी
किताबों से ली हुई हैं। क़ुरान में क़िस्से कहा-
नियों का भण्डार तो बहुत ही है। इस के अति-
रिक्त क़ुरान में ऐसी बातें भी अधिकता से पाई
जाती हैं कि जो सारी की सारी ही विद्या और
बुद्धि के विरुद्ध हैं। सत्यासत्य के निर्णय के लिये
विद्या और बुद्धि के अतिरिक्त और क्या हो सकता-
है, अतः जो वाक्य विद्या और बुद्धि के विरुद्ध हो
उस के असत्य होने में कोई सन्देह नहीं। और
जिस वाक्य में झूठ हो वह ईश्वरीय वाक्य कभी
भी नहीं हो सकता। हमारे मुसलमान मित्र हम
से प्रश्न करेंगे कि क़ुरान में कौनसी बात विद्या

और बुद्धि के विरुद्ध है प्रथम तो यह कि .क़ुरान में आसमान के विषय में जो कुछ लिखा है वह विद्या और बुद्धि के कितना विरुद्ध है? एक स्थल पर तो .क़ुरान में आकाश को बुर्जों वाला लिखा है! देखो .क़ुरान सिपारह ३० सूरतअल बुरूज—

"वस्समाए ज़ातिल् बुरूजे"

अर्थात्--क़सम है आसमान बुर्जों वाले की। दूसरी जगह आकाश को छत के समान कहा है। यथा—देखो .क़ुरान सिपारह १ सूरतुल बक़र

"अल्लज़ी जाअ़ल लकुमुल् अर्दे फ़िराशऊँ वस्समाअ माअन् वअंज़ल मिनस्समाए फ़खरुज़वेही मिनस्समराते रिज़कल्ल कुम फ़लाते तज अ़लू लिल्लाहे अन्दादन् वअन्तुम तालमून"

अर्थात्—जिनके किया वास्ते तुम्हारे ज़मीन को बिछौना और आसमान को छत और उतारा आसमान से पानी, पस निकाला साथ उस के फूलों से रिज़क़ वास्ते तुम्हारे, बस, मुक़र्रिर करो ... ... जानते हो।

तीसरी जगह आसमानको जालीदार बतलायाहै, और कहीं आसमान की खाल उतारना लिखा है। देखो कुरान सिपारः ३० सूरत।

"वइअस्समऊन् शक्कत"

अर्थात् और जिस वक्त आसमानकी खाल उतारी जावेगी। और कहीं पर आसमान का फटजाना लिखा है। देखो कुरान सिपारह ३० सूरतुल।

"वइज़स्समऊन् फ़ितरत्"

अर्थात् जिस वक्त आसमान फटजावें। और कहीं पर आसमान का खोलना है। देखो कुरान सिपारह २६ सूरतुळ।

"फ़इजन्नजूमों तशातत्"

बस जिस वक्त कि तारे मिटाये जायेंगे। और "वइज़स्समारा फुरेजत" और जिस वक्त आसमान खोलाजावे। पाठक गण! कुरान में आकाशके विषयमें भिन्न २ प्रकारसे बातें लिखी हैं, परन्तु आकाश क्या वस्तुहै यह कहीं पर भी नहीं लिखा। जितने फिलासफर आजतक

हैं वे आकाशके होने से इन्कार करते हैं क्योंकि उसके अर्थ शून्य के हैं। अब यह प्रश्न उत्पन्न होताहै कि क्या आकाश कोई सजीव शरीर धारी वस्तु है? जिसकी खाल उतारी जावेगी, खालतो सजीवों के शरीर के ऊपर हुआ करती है। यदि कहो आकाश कोई सजीव चेतन वस्तुहै तो वह जालीदार और बहुत बुर्जों वाला कैसे हो सकताहै? क्योंकि ये तो सब निर्जीव वस्तुओं में होसकता है। यदि जीव रहित हैं तो उसकी खाल उतारने से क्या आशय? हमारे मुसलमान भाई कहेंगे कि तुम मनुष्यों की विद्याका परमेश्वर की विद्यासे मिलान करते हो इसका उत्तर यह है कि अभी तो यह बात साध्य कोटि में है कि कुरान ईश्वरीय पुस्तक है वा नहीं! जब तक मुसलमान लोग कुरान को विद्या और बुद्धि पूर्वक, ईश्वरीय वाक्य सिद्ध न करदें तब तक उनके केवल कथनमात्रसे, कुरान ईश्वरीय वाक्य सिद्ध नहीं होता अबतक जितने भी नियम ईश्वरीय ज्ञानके लिये नियत किये गये हैं, उनमें से कुरान में एक भी विद्यमान नहीं। हां कुरानमें प्रतिज्ञायें तो

बहुत की गई हैं परन्तु उनको सिद्ध करने के लिये कोई भी विद्या और बुद्धि पूर्वहेतु वा युक्ति नहीं दी गई। हां सौगन्धें (कसमें) तो बहुत खाई हैं जो इसके मनुष्य कृत होने का पूरा प्रमाण है। यदि कुरानी .खुदा सर्व शक्तिमान होता, तो प्रत्येक मनुष्य के चित्त में .कुरान की विद्या का प्रवेश कर देता, परन्तु .कुरानी .खुदा तो मुसलमानों को लड़ा कर अपना शासन जमाना चाहता है, या इधर उधर से ऋण लेकर दिन काट रहा है। उसमें अपने वाक्य को विद्या और बुद्धि के अनुसार सच्चा सिद्ध करने की शक्ति नहीं। यही कारण है कि अपनी बात को सची सिद्ध करने के लिये सौगन्धें खाता है या मुसलमानों को भड़काकर, तलवार के द्वारा उसको सच्चा ठहरवाता है, भला ऐसे मनुष्य को जो अपने कथन को विद्या और बुद्धि से सिद्ध न करके, और न लोगों को कोई बुद्धि की बात बताये, हां केवल कसमों से और तलवार से सच्चा सिद्ध करना चाहे, कोई बुद्धिमान् मनुष्य उसको ईश्वर कहने को तैयार नहीं होगा। ईश्वर में वह शक्ति है कि बिना खाये वा कठोरता किये ही अपने वाक्य को

सभ्यता प्रत्येकमें स्थिर कर सकता है। जैसे कि वेदोंके प्रकाशक परमात्माने अपना ज्ञान संसारी मनुष्यों की आत्माओं में प्रकाशित किया। अब भी जो लोग उसकी खोज करते हैं वे उस की विद्या के विषय की गम्भीरता को जान लेते हैं उसको ईश्वरीय ज्ञान मानने केलिये तैयार होजाते हैं। कारण इसका यह है कि वेदों की शिक्षा को प्रकाशित हुए एक अरब सत्तानवें करोड़ वर्ष बीत जाने परभी, आज तक उसमें घटाने बढ़ाने की आवश्यकता नहीं हुई। परन्तु मनुष्य कृत पुस्तकें तौरैत, जबूर, इन्जील और कुरान ३४सौ सालमें, इस्लाम के कथनानुसार, तीन तो कलाम मंसूख होगये और कुरान की भी बहुत सी आयतें जैसे पूर्व तो १० काफ़िरों से एक मुसलमान का मुका-बला कराया, फिर उसको मंसूख करके दोके मुका-बले में एकको ला जमाया मंसूख होगई। मानो पहिली आज्ञा तोड़ दी गई। अब इस अपूर्ण कथन को, जिसमें न तो ठीक २ जीवात्माके गुण का पता मिलता है और न ईश्वरके गुण कर्म स्व-भावही भले प्रकार बताये गये हैं, और नहीं यह

बताया कि मनुष्य किस प्रकार मुक्ति प्राप्त कर सकता है, और सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करने का कोई उपाय बताया गया है। ऐसी पुस्तक बिना सोचे समझे कैसे ईश्वरीय पुस्तक मान ली जावे? कुरान की आज्ञाओं में एक दूसरे का खण्डन पाया जाता है पहिले तो यह कहा कि जिधर चाहो उधर ही मुंह करके नमाज पढ़ो, फिर उसका खण्डन करके यह कि काबे की ओर को पढ़ो अन्त में यह कहना पड़ता है कि जिस गुण का होना ईश्वरीय ज्ञान में आवश्यक है, वह कुरान के भीतर नहीं पाया जाता। हम आश्चर्य में हैं कि हमारे मुसलमान मित्र बिना सोचे विचारे क्यों इसको इलहामी किताब मान बैठे?

परन्तु जब उस समय को याद किया जाता है जब इस कुरान का प्रचार अरब देश में हुआ तो चित्त को कुछ शान्ति होती है कि ऐसे लोगों में किसी किताब को इलहामी सिद्ध करदेना कौनसी बड़ी बात है। क्योंकि आज कल के चलते पुरजे भी मूर्खों में अपनी प्रतिष्ठा जमा ही लेते हैं। जिनको निश्चय नहीं वे मिरज़ा गुलाम

अहमद कादयानी को देखलें कि इस प्रकाश के समयभी, बहुतसी बातें झूठी होने परभी, मुसलमानोंके पैगम्बर बनही बैठे थे। जिस प्रकार मुहम्मद साहब की पैगम्बरी के कारण उनके साहायक ऊमर और अली आदिहुए, उसी प्रकार मिरजा जी के भी सहायक मौलवी नुरुद्दीन आदि होगये जो मिरजाजी के मरण के उपरान्त गद्दीके अधिकारी बने। जब कि ऐसे प्रकाश के समय में भी मिरज़ा साहब इस्लामी पैग़म्बर बनगये तो उस अन्धेरे समय में और अरब जैसे मूर्ख देश में जहां उस समय विद्या के सूर्य के प्रकाश का चिन्ह तक नथा, मुहम्मदसाहब जैसे समयानुभवी और उच्च कुलोत्पन्न मनुष्यका जो अपने समय के सब से उत्तम ललित भाषीथे, पैग़म्बर होजाना कौनसी बड़ी बात है? जब मुसलमानोंका एक बड़ा समूह लूटमार के कारण मुसलमान होगया, तो अन्य देश बलात (जबरन) मुसलमान बनायेगये इसलाम तलवार का मज़हब है, उस में विद्या और बुद्धि का कुछ भी काम नहीं

विद्याएँ पायी जाती हैं, फिर अरब वालों को मूर्ख समझाना कौनसी बुद्धिमानी है । परन्तु हमारे उन मित्रोंको ध्यान रखना चाहिये कि इससमय जो अरब में पुस्तकें पाई जाती हैं वे मुहम्मद साहब के उपरान्त दूसरी भाषाओं से अनुवाद होकर अरबीमें सम्मिलित हुई हैं। मुहम्मदसाहब से पूर्व अरब देश की बहुत ही बुरी अवस्था थी। लगभग सारे के सारे ही निवासी मूर्त्ति पूजकथे। और भी बहुत से मिथ्या विश्वास रखते थे, यहां तक कि मुहम्मद साहब के पिता भी स्वयं मूर्त्ति पूजक थे ओर मक्के के मन्दिरके पुजारीथे, और मक्का उस समय सारे देश की मूर्त्ति पूजा का अड्डा था। अन्ध विश्वास तो इतना फैला हुवा था कि जिनका प्रमाण कुरानके प्रत्येक पृष्ठ से मिलता है। जिन्न, भूत और फरिश्तोंके विषय में जो कुरानमें लिखा है, उस से समझा जासकता है कि उस समय अरब देश की क्या अवस्था थी ।

देखो कुरान सिपारह २२ सूरते फातिर

"अल हमद लिल्लाहे फातिरि स्समा

वाते वल अर्ज़ें जाइलिल मलायकतेही-
रुसुलन उली अजनि ह तिम् मसना व
सुलास व रुबाअ"।

अर्थात् सब तारीफ हैं वास्ते अल्लाहके मैं पैदा करने वाला आसमान और जमीनों का करने वाला फरिस्तों को पैगाम लाने वाला, बाजू वाले दो दो तीन तीन और चार चार। इस के हाशिये पर अबदुल कादर साहब फरमाते हैं कि जिबराईल के छ सौ पर हैं। मानों कुरानी फरिश्ते परन्द हैं, मनुष्य नहीं। परन्तु आश्चर्य इस बात का है कि छः सौ पर वाला जिबराईल फरिश्ता मुसलमानों के सामने मुहम्मदसाहब के पास बही लाता रहा, परन्तु किसी मुसलमानने उसको न देखा, मानो सारेके सारेही मुसलमान ऐसीमोटी वस्तुको नहीं देख सके, तो आवागमन और जीव प्रकृति के अनादित्य जैसे सूक्ष्म विषयको कैसेजान सकते हैं, फरिश्तों के पक्षी होनेका खण्डन इस बातसे होता कि जंग उहुदमें जो कुरानी खुदा ने मुहम्मद साहब को फरिश्तों कीफौज सहायताके लिये भेजी थी, उसमें फरिश्ते घोड़ो पर सवारथे।

परिन्दों को सवारी की कोई आवश्यकता नहीं होती, इस लिये या तो फ़रिश्तों के पर होना असत्य ठहरते हैं, या उनका घोड़ों की सवारी पर आना सिद्ध नहीं होता। सब से अधिक शोक की बात यह है कि .कुरानी .खुदा ने .कुरान के इलहामी होने में कोई ऐसी युक्ति नहीं दी कि जिससे .कुरान का इलहामी होना सिद्ध हो। प्रायः यह कहा है कि यदि तुम सच्चे हो तो ऐसी सूरत बना लाओ। अब विचार करने से यह विदित नहीं होता कि .कुरानी .खुदा का किस सूरत से आशय है? कौन सी सूरत के अनुसार फ़साहत चाहता है? या उसके विद्या सम्बन्धी विषय की तुलना चाहता है। क्योंकि .कुरान में केवल ऐसा लिखा है-देखो .कुरान पारः २ सूरत बक़र--

"वइन् कुन्तुम् फ़ी रैबीम्मिम न ज़ल्न अ ला अब्दिन फ़तू बिसूरतिमिमिस्ले ही वदऊ शुहदअकुम् मिन्दू निल्लाहे इन् कुन्तुम् स्वादिक़ीन्"

अर्थात् और अगर हो तुम बीच शक के उस चीज

से कि उतारा हमने ऊपर बन्दे के अपने, पस ले आओ एक सूरत मानिन्द उसकी के और पुकारो शाहिदों अपनों को वास्ते अल्लाह के अगरहो तुम सचे। इस आयत से इस बात का कुछ पता नहीं मिलता कि .कुरानी .खुदा किस सूरत की तुलना की आयत वा सूरत बनवाना चाहता है। और किस गुण की तुलना कराना चाहता है। यदि इस बात को खोल दिया होता तो आज तक सैकड़ों किताबें .कुरान से अच्छा दिखलाई जातीं परन्तु यह वाक्य इस प्रकार का है। जिस से कोई परिणाम नहीं निकलता कि यदि मुसल्मान कहैं कि कुरान के समान फ़साहत (लालित्य) किसी किताब में नहीं है तो कालिदास और शेक्सपियर के नाटक और नावल, और वारिस शाह व हीरा रांझा पढ़ना चाहिये। तुलसीदास जी की रामायण जितनी फ़सीह है उसके समान तो .कुरान में फसाहत नहीं दीखती। परन्तु कठिनता तो यह है कि हमारे मुसलमान मित्र संस्कृत विद्या से अनभिज्ञ हैं, नहीं तो कुरान से अधिक फ़सीह पुस्तकें संस्कृत में उनको दीख पड़ती। यदि

कहें कि अरबी भाषामें नहीं तो फैज़ी का बेनुकत कुरानदेखें, परन्तुकेवल अरबी|भाषाकी फ़साहत इलहामी होने का हेतु नहीं। विदित होता है कि अरबी भाषा के कुरान की फसाहत का दावा केवल अरब वालों के लिये ही किया गया है नहीं तो संसारमें इससे अधिक फसीह पुस्तकें विद्यमान हैं। अगर कुरान खुदा का बनाया हुआ होता तो अरब वालों के ही लिये नहीं कहता कि ऐसी सूरत बना लाओ, किन्तु दूसरे देश वासियों से-भी तुलना करने के लिये कहता। यदि यह कहा जावे कि "मज़मून की खूबी" के विषय में परीक्षा करनेके लिये "दावा', किया गया है तो बहुत से लोग यह कहतेहैं कि यह दावा केवल सूरते फा-... के लिये है, क्योंकि ऐसा मजमून दुनियांकी किसी किताब में नही हैं।

परन्तु उनका यह कहना ठीक नहीं क्योंकि प्रथम तो जो कुछ कथन है कुरानके कर्ता का नहीं किन्तु यह सारा का सारा प्रकरण यजुर्वेद के ४० वें अध्याय के मन्त्रों का आशय रूप है जो ईशोपनिषद् के नाम से प्रसिद्ध है, जिसका उर्दू

अनुवाद भी छप चुका है यदि आप लोग पढ़ें तो पता लग जायगा कि कुरान ईश्वर के विषय में कुछ भी नहीं जानता, यदि वेदोंमें यह विषय न होता तो कुरान इतने से भी कोरा रहता ।

वेद,कुरान,इन्जील, ज़बूर और तौरैत से सिद्ध हो चुका है, इस लिये वह मजमून जो पहिले से ही वेद में विद्यमान हो, कुरानके कर्ता का नहीं हो सकता, अतः वह इलहामी भी नहीं हो सकता ।

कुरान में कोई ऐसा विषय नहीं जो कुरानसे पूर्व विद्यमान नहीं इसको छोड़ कर कि "मुहम्मद साहब खुदाके रसूल हैं और इसकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिये"। और स्त्रियोंकी कलह और झंझट को छोड़कर सब कुछ किस्से कहानी तौरेत, ज़ुबूर और इंजीलमें विद्यमानहैं वहीं से सबके सब लिये गये हैं, परन्तु तौरैत ज़ुबूर और कुरान के क़िस्सोंमें परस्पर बहुत विरोध हैं। हम बड़े आश्चर्य में हैं कि खुदा ने जो कुछ तौरेत में कहा है वह सत्य है वा कुरान का कहा सत्यहै हमारे मुसलमान मित्र कहेंगे कि जब ये सारी

किताबें कुरान के आनेसे मंसूख होगई तो उनकी तुलना कुरान से किस प्रकार हो सकती है ?

कुरान प्रचलित नियमहै, और तौरैत आदि मन्सूख हुए नियम हैं।

परन्तु प्रश्न तो यह है कि कानून मंसूख हो सकतेहैं वा ऐतिहासिक घटनायें भी मंसूखहोजाया करतीहैं। इस बात को सब मानते हैं कि प्रत्येक मनुष्य अपनी आज्ञा को बदल सकता है परन्तु किसी घटना के विषयमें जिसमें उसने साक्षादी हो, इन्कार नहीं कर सकता जब तक वह यह सिद्ध न करदे कि साक्षी देते समय पागल था। इससे यह सिद्ध होताहै कि या तो वह झूठाहै उसने पहले सत्य लिखवाया था, परन्तु अब उसने अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये दूसरा झूठा बयान लिखवाया है।

परन्तु नये बयान से पिछला बयान झूठा सिद्ध नहीं हो सकता। यदि हमारे मुसलमान मित्र नेक भी न्याय पर कटिबद्ध हो जावें तो दुनियांसे वह अन्धकार, जो असत्य विचारोंसे फैल रहा है सारे का साराही दूर होजावे। यद्यपि अरब देशकी अस्त

व्यसनश्रौर का ६

लाभ पहुंचा हो, परन्तु और देशोंके लिये तो अत्य-न्त ही हानिकारक हुआ है। और कुछ नहीं तो झग-ड़ा तो होता ही रहेगा। परन्तु मुसलमानों को यह तो विचारना चाहिये कि कुरान खुदाको एकदेशी बताता है, और एक देशी ईश्वर हो नहीं सकता। कुरान छः दिन में सृष्टि की उत्पत्ति बतलाता है और सातवें दिन खुदा को अर्शपर बिठाता है। कहीं पर 'कुन' कहनेसे दुनियां की उत्पत्ति बताता है। चाहे सर्व साधारण इसको एक तुच्छ बात समझें विद्वान लोग इसको विद्या के विरुद्ध समझते हैं, और खुदाको भी सातवें दिन विश्रा-मकी आवश्यकता होने से विकारी सिद्धकरदिया।

इसके अतिरिक्त कुरान ने यह नहीं दिख-लाया कि उन छः दिनोंमें प्रथम दिन क्या बनाया। यदि कहो ये बातें तौरेत में आचुकीं हैं। यह हिस्सा वहींसे लेलेना चाहिये। तो तौरेतमें अर्श पर चढ़ने की चर्चा नहीं है, और कुरान में है। ये बात कोई खुदाकी आज्ञा नहीं जो कि मन्-सूख होगई हो किन्तु यह तो एक घटना का

बयान है इसमें विरोध होना दोनों में से एक झूठा सिद्ध करता है। दूसरे इञ्जील वालों सब्त (विश्राम का दिन) रविवार है, .कुरान के मानने वाले विश्राम का दिन शुक्र (जुमा) ठहराते हैं। अब प्रश्न यह है कि दोनों में से ठीक २ विश्राम का दिन कौनसा है? अन्ततः प्रत्येक घटनायें, जो .कुरान ने पुरानी किताबों से ली हैं, कुछ न कुछ अन्तर अवश्य है, जिस से सिद्ध होता है कि .कुरान के कर्त्ता ने जो पुराने क़िस्से सुने थे वे सब लिख दिये. और अपनी योग्यता जतलाने को कुछ बातों में भेद भी कर दिया परन्तु यह न सोचा कि दो विरुद्ध बातें सत्य नहीं हो सकतीं, प्रत्युत उससमय सत्य होसकती हैं कि जब उसके साथी एकसाही वर्णन करें।

जहांतक खोज कीगई वहांतक यही सिद्ध हुआ कि न तो कुरानकी आवश्यकता ही प्रतीत हुई, और न उस में इलहामी होने के गुण ही पाये जाते हैं। केवल मुसलमान भाइयोंने पहिले तो तलवार और लालच से स्वीकार किया था, क्योंकि मुहम्मद साहब के जीवन से, और उस

म्मद साहब के समयमें हुए,इस बातका पूरा पता मिलता है कि उस समय जितने लोग लूट मार के वास्ते मुसलमान हुए, उसका दशवां भाग भी तो धर्म के तत्त्व को जानकर नहीं हुए।

अब बहुत काल तक मुसलमानी मतमें रहने से, हमारे मुसलमान भाइयों को ऐसा पक्षपातने जकड़ लिया है कि .कुरान और पैग़म्बरों की सिद्धि के लिये .खुदा तक पर दोषारोपण करने को तैयार हैं। यहां तक कि .कुरान में जो .कुरान के कर्त्ता ने हज़ारों क़समें खाई हैं और .कुरान की सच्चाई को सिद्ध करनेका यत्न किया है। उन क़समोंके खाने काभी दोष परमेश्वरके पवित्र नाम पर लगा दिया। और यह नहीं सोचा कि जिस .खुदाने सूर्यकी उत्पत्ति और उसके प्रकाश का ज्ञान बिना किसी क़सम खाये करदिया, जिस ने मृत्यु का भय प्रत्येक प्राणी के चित्त में उत्पन्न करके उनके अभिमानको तोड़ दिया, जिस की शक्ति के आधीन रहकर प्रत्येक परमाणु अपना २ कार्य कर रहा है, ऐसे सर्व शक्तिमान् को अपने

श्यकता होती, अपने कथन की सत्यता को संसारी मनुष्यों में न जमा सकता। उसको मुसलमानों को लड़ाकर अपना काम चलाना पड़ा। । सर्व स्वामी को ऋण लेनेकी आवश्यकता बतलाने वाला क्या बुद्धिमान् हो सकता है? .खुदा पर "मक्र" का दोष लगाना। यहां तक कि वह कौन से दोष हैं जो .कुरान ने .खुदा पर न लगाये। इसलिये मुसलमान मित्रों यदि सचमुच एक .खुदा की उपासना का विचार रखते हो, यह मुख्य उद्देश्य है कि वे मनुष्य पूरा और मनुष्यघात के भण्डार से हाथ उठाकर, विद्या और बुद्धि से जो मनुष्य के सुधार के लिये दी हैं सत्यधर्म को ग्रहण करें।

सद्धर्म का सम्बन्ध, केवल मनुष्यों की आत्मा-हृदय और ईश्वर से है उस में किसी दूसरे मनुष्य की सहायता की आवश्यकता नहीं। न उस में किसी सांसारिक वस्तु की आवश्यकता है हज्ज आदि की जितनी बात हैं वे सब मनुष्यों के बनाये ढकोसले हैं ईश्वर सब जगह और सब ओर विद्यमान है। जहां सच्चे जीसे उसकी उपासना

होगी नहीं कृत कृत्यता होगी। झूंटे दिलसे पैग़म्बरों को मानकर काबेकीओर बैठकर नमाज पढ़ने से कोई लाभ न होगा यदि ईश्वर की सृष्टि के साथ सद् व्यवहार किया जावे और उस के दिल को हाथमें लिया जावे तोउससे जितना पुण्यहोता है वह जहाद के करनेसे, जिससे संसार नष्ट होता है, लाख जगह अच्छा है। जब कि खुदानेही उन के दिल पर मुहर करदी हो तो आपके कह देनेसे और जहाद के करने से वे किस प्रकार धर्मात्मा बनसकते हैं। क़ुरान के अनुसार मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र नहीं है और जो कर्म करने में स्वतन्त्र नहीं। वह किस प्रकार पुण्य और पाप का भागी हो सकता है। देखो क़ुरान सिपारह १ सूरतुल बक़र।

"इन्नल्लजीन कफ़रूसवाऊन् अलैहिम अअज़्ज़र तहुम् अम् लम् तुम ज़िर हुम् ल योमिनून"

अर्थात्—तहक़ीक़ जो लोग कि काफ़िर हुए ऊपर उनके क्या डराया तूने उनको

"खत मल्लाहो कुलूबे हिम् वअला समेआहिम व अला अब्स्वारोहिम् गिशावः प लहुम् अज़ाबुन् अज़ीम ।"

अर्थात् मुहर की अल्लाह ने ऊपर दिलों उनके के और ऊपर कानों उनके और ऊपर आखों उन के के परदह है, और वास्ते उनके अज़ाव हैं बड़ा हे मुसलमानो! नेक विचारो कि जिनको .खुदाने काफिर बनाया और उनके दिलपर .खुदाने मुहर करदी, अब वो किस प्रकार कुफ्र. को छोड़ सकता है? क्योंकि उनका तो अपने दिलपर कोई अधि-कार ही नहीं जैसा .खुदा ने बना दिया है वैसेबन गये। यदि वे स्वतन्त्र होकर कुफ्र. करते तो किसी प्रकार दोषी भी हो सकते थे, परन्तु .खुदा ने उन ने काफिर बनाया, स्वयं ही मुहर भी लगा दी, स्वयं ही उनके मारने की आज्ञा मुसलमानों को दे दी ! क्या कोई न्याय प्रिय इसको .खुदा का कलाम मान सकता है ? कभी नहीं । ईश्वर ऐसा अन्यायी नहीं कि स्वयं ही मनु-ष्य को कुकर्म करने के लिये मनुष्य के हृदय को बुरा बनादे और स्वयं ही दण्ड दे। आज कल

के अनुसार तो उन्हें .खुदा ने बनाया है। देखो कुरानी खुदा लोगों से ठट्ठा भी करता है। देखो .कुरान सिपारः १ सूरतुल बक़र—

अल्लाः ईसमान् लअसम व मद्दाहम मन अलनिसारहम यई समून

अर्थात्—अल्लाः ठठ्ठा करता है उनको और खैंचता है उनको बीच सरकशी उनकी के। प्रिय मित्र गण ! .कुरान के उपरोक्त लेख से आपको विदित होगया होगा कि .कुरान ऐसे मनुष्य का कथन है कि जो-ठठ्ठा करताहै, मक्र करता है ऋण मांगताहै, क़समें खाताहै, प्रतिज्ञा करता है, मुसलमानों को लड़ाकर लाभ उठाता है और पशु पक्षी आदि और मनुष्योंको मार डालने की आज्ञा देता है। ऐसे को हमारे मुसलमान भाई खुदा समझें तो उनकी इच्छाहै मृत्यु सर पर सवारहै, संसार की सारी वस्तु अनित्य हैं केवल धर्म ही काम आने वाला है यदि हम अपनी अज्ञानतासे इस धर्म पथसे भटक गये तो हमसे अधिक अभागा कौन होगा ? उठो प्यारे मुसलमान भाइयो ! सोचो, विचारो, विद्या और बुद्धि से सत्यताकी खोज करो। परमात्मा

के नित्य नियम की जांच करो, उनके अनुकूल चलने के लिये संसारी रुकावटों का भय मत करो। सत्यता परमात्माको प्यारी है। दयालु उसका नाम है। पक्ष और सत्यता मनुष्यकी उन्नति का कारण है। धर्म से मनुष्यों को यदि हानि पहुंचे तो वह धर्म मनुष्यका बनाया हुआ है।

ईश्वर की आज्ञा वही है जिसमें सारे प्राणियों पर दया हो। दूसरोंको दुःख देकर स्वयं अपना पालन करना मनुष्यता से गिराने वाला कर्म है। ईश्वर सर्व व्यापक और सर्वान्तर्यामी है, उस को सभा में न साक्षियों की आवश्यकता है न बही खाते की, किन्तु सारा भेद स्वयं ही जानता है। इसलिये उसके कामों में किसी मनुष्य को या फरिश्ते को सम्मिलित करना उचित नहीं है वह अपनी शक्ति और स्वभाव से न्यायकर्ता दयालु है। उसके कार्य्य में हस्तक्षेप करना है। न वह क्रूर है। न वह क्रोधी है किन्तु न्यायमूर्ति है। उसके आश्रय से मनुष्य अपने अभीष्ट को सिद्ध कर सकता है। किसीसंसारी मनुष्य को उद्धारक बनना ईश्वर के न्याय का नाश करना है जो असम्भव है।

तर्क इस्लाम =)॥ यवनमतादर्श १) ईसाई विद्वानों से
श्न)। भोंदूजाट और पादरी साहिबका मुवाहसा =) ईसाई
त परीक्षा)। स्वर्ग में सवजेक्ट कुमेटी -)॥ स्वर्ग मे महा
भा ।) भारतीय शिष्य ईसा =)॥ जीवन शिक्षा ॥) नीति-
तक ।) मुक्ती और पुनरावृत्ति -)। विचित्रब्रह्मचारी)॥
सांख्यदर्शन ॥।) स्वामी वृजानन्दजी का जीवन-
चरित्र -)॥ वैदिक विवाहादर्श १) ध्यानयोग प्रकाश १।)
न्यायदर्शन भाषानुवाद १।) वैशेषिक दर्शन भाषानुवाद वैदिक
फिलासफी का (पुस्तक) यह महर्षि कणाद रचित ग्रन्थ
है । संस्कृत से अनभिज्ञ पुरुष भी इसको पढ़कर मालूम कर
सकते हैं कि वैदिक और पश्चिमीय फिलासफी में कितना
अधिक अन्तर है और कौनसी उत्तम है मूल्य १। रु० ।

योगीराज कृष्णका जीवनचरित्र ॥।) श्रीशिवाजी महाराज
का जीवन चरित्र ॥) इन दोनों पुस्तकोंके लेखक देशभक्त श्री
ला० लाजपतरायजी हैं अवश्य पढ़िये। दृष्टान्त समुच्चय
मूल्य १=) इस पुस्तक में प्रत्येक तरह के दृष्टान्त हैं जोकि
व्याख्यान तथा कथाओंमें कहेजाते हैं । हकीकतरायधर्मी =)

शुद्धबालमनुस्मृति ।)॥ आर्य्यबालकों के योग्य है

बाल सत्यार्थप्रकाश =) यहपुस्तक बच्चों के लिये अमृत
है प्रत्येक ग्रहस्थीके लिये खरीदकर अपने घरमें रखना चाहिये

हिन्दुओं की छाती पे जहरीली छुरी -) चंचलकुमारी
मूल्य -)॥

अनुरागरत्न श्री पं० नाथूराम शंकरशर्मा कृत १)
स्त्री ज्ञानमंजरी तीनों भाग =)॥ तेजसिंह शतक